शब्द
जिन्होंने प्रेरित किया

पं० गोविन्द बल्लभ पंत के भाषणों का संकलन

1935-1937

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश का प्रकाशन

शब्द
जिन्होंने प्रेरित किया

पं० गोविन्द बल्लभ पंत के भाषणों का संकलन

1935-1937

भाग – 2



सम्पादक :
जगदीश चन्द्र दीक्षित
सभापति, उ० प्र० विधान परिषद्

सूचना एवं जन-सम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश का प्रकाशन

पं० गोविन्द बल्लभ पंत की शताब्दी समारोह के अवसर पर प्रकाशित

प्रथम संस्करण

सितम्बर, 88

प्रकाशक :

अशोक प्रियदर्शी

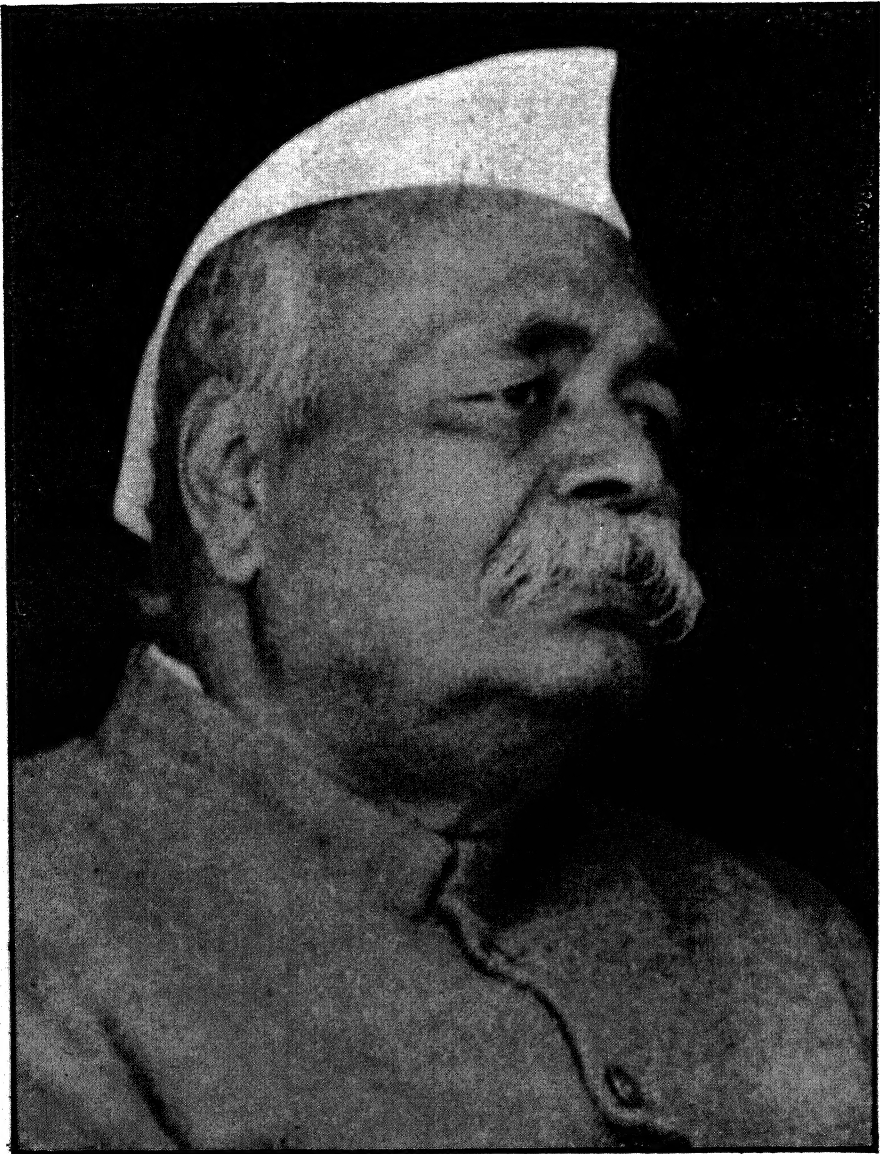
निदेशक, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ० प्र०

मुद्रक :

रोहिताश्व प्रिंटर्स

268, ऐशबाग रोड, लखनऊ – 226004

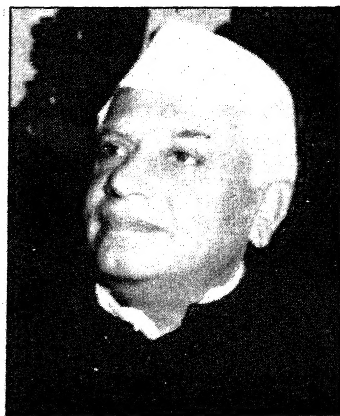
फोन : 43973



'हिमालय-पुत्र' पं० गोविन्द बल्लभ पंत



मुख्य मंत्री
उत्तर प्रदेश



प्रस्तावना

हिमालय-पुत्र पं० गोविन्द बल्लभ पंत के भाषण-संग्रह 'शब्द : जिन्होंने प्रेरित किया' का यह दूसरा भाग है । इस शताब्दी के तीसरे दशक में कुमायूँ परिषद् से जुड़कर पंत जी ने अपना राजनीतिक जीवन प्रारम्भ किया और उत्तरोत्तर नयी-नयी ऊँचाइयों को स्पर्श करते गये । प्रारंभिक दिनों में, उन्होंने पर्वतांचल में प्रचलित कुली बेगार प्रथा, शोषण, भीषण गरीबी आदि को देखा था, स्वाधीनता के लिए जनमानस की छटपटाहट को महसूस किया था । इसीलिए वे देश में स्वाधीनता के लिए चलाये जा रहे विभिन्न आंदोलनों के सहृदय दर्शक और प्रबल पक्षधर ही नहीं बल्कि सक्रिय भागीदार और समर्पित सेनानी हुए । स्वाभाविक था कि संयुक्त प्रान्त विधान परिषद् के सदस्य के नाते 1924 से 1929 की अवधि में उन्होंने इन घटनाओं को ओजस्वी व प्रखर वाणी प्रदान की और एक जनप्रतिनिधि की हैसियत से ब्रिटिश साम्राज्यवाद की छल-छद्मपूर्ण नीति का पर्दाफाश किया ।

प्रस्तुत संकलन में वे भाषण संकलित हैं जो पंत जी ने केन्द्रीय विधानसभा में विरोधी दल के उपनेता की हैसियत से 1935 से 1937 के बीच दिये थे । ये भाषण बताते हैं कि पंत जी इतिहास और राजनीति के ही नहीं बल्कि आर्थिक विषयों के भी पंडित थे और छोटी-बड़ी हर प्रकार की सामाजिक समस्याओं पर उनकी पैनी नजर थी । उन्होंने विभिन्न राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय गतिविधियों का विशद् अध्ययन भी किया था । इन भाषणों में जहाँ एक ओर ब्रिटिश शासन की दोषपूर्ण नीतियों के

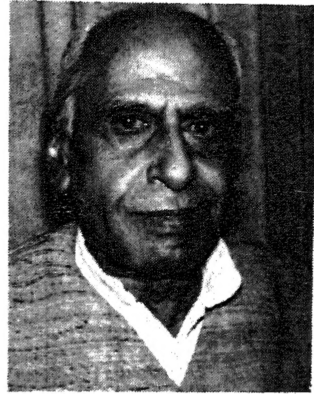
कारण विपन्न होते जा रहे भारत की दीनदशा पर पंत जी की अंतर्वेदना व्यंजित है, वहीं दूसरी ओर उनका यह प्रबल आशावाद भी मुखरित है कि आजादी का शुभ दिन निकट आ रहा है ।

शताब्दी वर्ष में, उनके ही प्रेरक शब्दों के इस महत्वपूर्ण संकलन के साथ हम उनके प्रति आदरपूर्वक अपने श्रद्धा-सुमन समर्पित करते हैं ।

— नारायण दत्त तिवारी

मुख्यमंत्री,

उत्तर प्रदेश



भूमिका

'शब्द : जिन्होंने प्रेरित किया' पुस्तक माला का यह दूसरा खण्ड है । इसमें पंडित गोविन्द बल्लभ पंत के वाक्पटुतायुक्त कुछ भाषणों को सम्मिलित किया गया है जो उन्होंने कांग्रेस पार्टी के उपनेता के रूप में 1935 और 1937 के बीच केन्द्रीय विधान सभा में दिये थे, जो अब लोक सभा के नाम से जानी जाती है । उस महान सभा-भवन में पंत जी के मुख से निकले प्रेरक वाक्यों ने उन्हें आर्थिक-न्याय के दिव्य वक्ता के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया था । जब भी कभी किसी अवसर पर पंत जी ने देखा कि विदेशी शासन की दमनशील नीति के अधीन भारत की अर्थनीति और उसकी आर्थिक संस्थाओं को हानि पहुँचाने की चेष्टा हो रही है ताकि विदेशी हितों को लाभ पहुँचे, तभी उनकी वक्तृता ने भीषण संहारक रूप ग्रहण कर लिया था। जब भी कभी भारतीय कम्पनियों तथा भारतीय उद्योगों की सुरक्षा के लिए कष्टकारी कानून बनाने और भारतीय निर्माताओं तथा भारत के विदेश-व्यापार पर उत्पादन कर लगाने के प्रयास किये गये, उन्होंने एक चतुर वकील की भाँति तर्क प्रस्तुत करते हुए उन छिपे तथ्यों का पर्दाफाश कर दिया जिनका उद्देश्य भारतीय आर्थिक प्रगति को निष्प्राण कर देना था । भारत की नवजात उद्यमी साहसिकता को ब्रिटिश सरकार द्वारा अशक्त बनाने हेतु छलपूर्वक कम्पनी कानून में संशोधन करने का प्रयास उनकी पारखी आंखों को धोखा दे सका; तभी संशोधन के कुप्रभाव से उन्हें बचाने के लिए उन्होंने भीम रूप धारण कर लिया ।

एक दशक तक संयुक्त प्रांत की लेजिस्लेटिव काउंसिल में विदेशी शासकों के विरुद्ध संघर्ष में भारतीय पक्ष का नेतृत्व करने वाले पंडित गोविन्द बल्लभ पंत ने वर्ष

1935 के प्रारम्भ में केन्द्रीय विधान सभा (सेंट्रल लेजिस्लेटिव असेम्बली) में प्रवेश किया । यह विधान सभा भारत सरकार के अधिनियम 1919 के परिणामस्वरूप गठित हुई थी । केन्द्रीय विधान सभा में प्रवेश करते ही उनका सामना ब्रिटिश पार्लियामेंट के दोनों सदनों की संयुक्त संसदीय समिति द्वारा तैयार की गयी रिपोर्ट से हुआ । इस रिपोर्ट में भावी भारतीय संवैधानिक सुधारों की रूपरेखा भी निहित थी । ये सुधार साइमन कमीशन और तीन गोलमेज सम्मेलनों के प्रतिवेदनों के आधार पर तैयार किये गये और केन्द्रीय विधान सभा में बहस के लिए पेश थे । रिपोर्ट में छिपे मायाजाल और छद्मावरण के ताने-बाने को, इसके अदृश्य बंधनों और डंकों को उन्होंने अपनी ओजस्वी वाणी द्वारा इस प्रकार क्षत-विक्षत कर दिया कि उसके रचयिताओं और समर्थकों दोनों में अतिशय व्याकुलता उत्पन्न हुई । कालांतर में जब विधान सभा के बसन्त अधिवेशन में बजट प्रस्ताव तथा अन्य प्रस्ताव पेश हुए तो पंत जी ने जिस तरह के प्रलयंकारी भाषण दिये थे उनसे वित्त सदस्य व्याकुल हो उठे । वित्त सदस्य से पंत जी के एकाधिक बार दो-दो हाथ हुए जिससे अन्ततोगत्वा वित्त सदस्य हतप्रभ तथा किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये ।

अंत में मैं कहना चाहता हूँ कि स्वराज्य पार्टी के नेता के रूप में संयुक्त प्रांत लेजिस्लेटिव काउंसिल में पंडित गोविन्द बल्लभ पंत राजनीतिक-न्याय हेतु संघर्षरत वीर योद्धा के रूप में प्रकट हुए जबकि केन्द्रीय विधान सभा में उन्होंने ब्रिटिश शासन काल की संसदीय व्यवस्था में आर्थिक न्याय हेतु संघर्षरत व्यक्तियों में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त किया ।

अल्पावधि में इस पुस्तक का प्रकाशन करने में सूचना निदेशक श्री अशोक प्रियदर्शी के नेतृत्व में श्री राजेश शर्मा तथा श्री राधेश्याम उपाध्याय ने जिस श्रम एवं मनोयोग से कार्य किया वह विशेष रूप से उल्लेखनीय है ।

– जगदीश चन्द्र दीक्षित

9 अगस्त, 1988

सम्पादक

सभापति, उ०प्र० विधान परिषद्

निवेदन

पं० गोविन्द बल्लभ पंत शताब्दी समारोह समिति ने पंत जी के महत्वपूर्ण भाषणों का संकलन प्रकाशित करने का जो निर्णय लिया था, उस क्रम में 1924 से 1929 के बीच विधान परिषद् में दिये गये उनके कुछ महत्वपूर्ण भाषणों का संकलन सूचना विभाग ने नवम्बर, 1987 में प्रकाशित किया था । इसका जैसा हार्दिक स्वागत हुआ, उसके लिये मैं गुणग्राही पाठकों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ ।

पंत जी द्वारा 1935-37 की अवधि में उपनेता विरोधी दल की हैसियत से सेंट्रल लेजिस्लेटिव असेम्बली में दिये गये महत्वपूर्ण भाषणों का प्रकाशन 'शब्द : जिन्होंने प्रेरित किया' के दूसरे खण्ड में किया जा रहा है । ये भाषण मूलतः अंग्रेजी में दिये गये थे ।

समयाभाव के कारण संभव है कि सावधानी के बावजूद कतिपय त्रुटियाँ रह गयी हों । फिर भी प्रयास यही रहा है कि इसको अपेक्षित स्तर प्रदान किया जाय । मुझे विश्वास है कि यह संकलन भी सुविज्ञ पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा और स्वतंत्रता-संग्राम के महान सेनानी पं० गोविन्द बल्लभ पंत के संघर्षशील व्यक्तित्व तथा उनकी बहुआयामी संसदीय प्रतिभा की एक झलक उन्हें मिल सकेगी ।

– अशोक प्रियदर्शी
निदेशक
सूचना एवं जन-सम्पर्क विभाग,
उत्तर प्रदेश

अनुक्रमणिका

परिशिष्ट

ग्रामोद्योग : गांधी जी का दृष्टिकोण

मान्यवर, मैंने गृह सदस्य का पूरा भाषण ध्यानपूर्वक सुना । यह इस सदन की पहली बैठक थी अतः मैं सरकार के दृष्टिकोण को समझने के लिए स्वाभाविक रूप से आतुर था और मैं और भी अधिक आतुरता के साथ इस विषय पर निसंग रूप से विचार करना चाहता हूँ । मैं जानना चाहता था कि गृह सदस्य ने वास्तव में किस बात को अपने परिपत्र का आधार बनाया है । मैं समझता हूँ, कुछ समाचार पत्रों में उद्धृत ऐसे अंशों के अलावा उनके पास कोई अधिक उत्तम आधार नहीं है जिन्हें विकृत तथा असम्बद्ध रूप से पेश किया गया है ।

माननीय हेनरी क्रेक – मैं 'विकृत' शब्द को स्वीकार नहीं कर सकता । मैंने कुछ भी विकृत नहीं किया है । जिस प्रलेख से मैं पढ़ रहा हूँ उसमें जो कुछ प्रकाशित हुआ है, उसी के शब्दों को मैं यथावत् दोहरा रहा हूँ । माननीय सदस्य को कोई अधिकार नहीं है कि वह मुझे विकृति का दोषी ठहरायें ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – माननीय सदस्य ने सम्पूर्ण मूल पाठ को हमें बताये बिना समाचार पत्रों में उद्धृत अंशों का उल्लेख किया है । यदि आप पूरा लेख पढ़ें तो आपके मस्तिष्क पर, जो भाग पढ़ा गया है, उससे बिल्कुल अलग प्रभाव पड़ेगा ।

माननीय सर हैनरी क्रेक – मान्यवर, व्यवस्था के प्रश्न पर मेरा कहना है कि माननीय सदस्य से कहा जाय कि वह 'विकृत' शब्द को वापस लें । मुझे इस बात पर सख्त एतराज है कि मुझे समाचार को विकृत रूप में पेश करने का दोषी ठहराया जाय ।

यह भाषण पं० गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा 21 जनवरी, 1935 को बम्बई कांग्रेस द्वारा लिये गये निर्णयों, विशेष तौर पर ग्रामीण उद्योग संगठन सम्बन्धी निर्णयों के सम्बन्ध में भारत सरकार के गृह विभाग द्वारा जारी किये गये एक प्रपत्र पर विचार करने के लिए श्री एम० सत्यमूर्ति द्वारा सदन में प्रस्तुत काम रोको प्रस्ताव पर दिया गया था । लेजिस्लेटिव असेम्बली में पंत जी का यह पहला भाषण था । यहाँ और आगे की पाद टिप्पणियों में प्रयुक्त शब्द 'लेजिस्लेटिव असेम्बली' का आशय सेण्ट्रल लेजिस्लेटिव असेम्बली (केन्द्रीय विधान सभा) से है ।

अध्यक्ष (ले० कर्नल सर हैनरी गिडनी) – माननीय सदस्य ने 'विकृत' शब्द का जो प्रयोग किया है, क्या उससे उनका आशय यह है कि माननीय गृह सदस्य ने (परिपत्र को) जानबूझ कर विकृत रूप में पेश किया है? यदि ऐसा है तो उन्हें यह शब्द वापस लेना चाहिए ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैंने यह नहीं कहा कि ऐसा ज़ानबूझकर किया गया है । मैंने केवल 'विकृत' शब्द का प्रयोग किया है, इससे कुछ और अधिक नहीं ।

अध्यक्ष (ले० कर्नल सर हैनरी गिडनी) – माननीय सदस्य को यह महसूस रहना चाहिए कि 'विकृत' शब्द का यह अर्थ भी लगाया जा सकता है कि वास्तव में यह सत्य नहीं है । अनेक संदर्भों में इसका आशय 'असत्य' होता है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, मेरा कहना है पूरे लेख को नहीं पढ़ा गया है । केवल कुछ अंशों को उद्धृत किया गया है ।

माननीय सर हैनरी क्रेक – मैं उन्हें सदन-पटल पर रखने पर सहमत हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – उन्हें सदन पटल पर रखा जा सकता है, लेकिन मेरा कहना यह है कि यहाँ पढ़कर सुनाये गये अंशों से जो प्रभाव उत्पन्न होता है वह पूरे लेख पढ़ने पर होने वाले प्रभाव के अनुरूप नहीं हैं । मैंने इनमें से कुछ लेख पढ़े हैं और उनका मुझ पर उद्धृत किये गये लघु अंशों से होने वाले प्रभाव की बनिस्बत, बिल्कुल भिन्न प्रभाव हुआ है । मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मेरा यह जाहिर करने का कोई इरादा नहीं है कि माननीय गृह सदस्य जानबूझकर हम पर गलत प्रभाव छोड़ना चाहते हैं । फिर भी यह एक तथ्य है कि उनके भाषण का दूषित प्रभाव पड़ता है । (हँसी)

माननीय सर हैनरी क्रेक – व्यवस्था के प्रश्न पर, माननीय सदस्य ने मुझे समाचार को विकृत रूप में पेश करने का दोषी ठहराया फिर यह आरोप वापस ले लिया । मेरा निवेदन है कि उनका यह कहना कि मैंने लेख को विकृत रूप में पेश किया है, व्यवस्था के प्रतिकूल है । मैंने (लेख के) सही शब्दों को यहां उद्धृत किया है और मैंने सदन पर न तो ऐसा प्रभाव छोड़ा है और न मेरा ऐसा प्रभाव छोड़ने का इरादा है जो पूरा लेख पढ़ने पर मुझ पर हुआ है, उसके विपरीत हो ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं आगे जो कुछ कहूँगा, मुझे आशा है कि उससे मैं स्थिति को और अधिक स्पष्ट कर सकूँगा । लेकिन मुझे इस बात ने बहुत अधिक प्रभावित किया है वह यह है कि भारत सरकार ने भारतीय प्रेस के प्रति बहुत सम्मान प्रदर्शित किया है । मैं जानना चाहूँगा कि इस प्रकार का परिवर्तन कब से आरम्भ हुआ और निश्चित रूप से कब से ऐसे पथ प्रदर्शन का अनुसरण किया गया है और प्रेस से तथा विशेष कर इसकी भारतीय शाखा से उत्प्रेरित होना आरम्भ किया गया है? ऐसी उत्पन्न सुमति के लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ । मुझे कौतूहल है कि क्या यह मात्र स्वाभाविक घटना है या यह इस बात का संकेत है कि सरकार विश्व शक्तियों के और इस देश के जनमत को स्वीकारती है । मुझे आशा है कि अब गृह विभाग भारतीय प्रेस पर लगे प्रतिबंध वापस ले लेगा और भारत में लागू प्रेस-विधानों को निरस्त कर देगा या उनमें आमूल परिवर्तन कर देगा । यदि इसका ऐसा अंतिम परिणाम होता है तो ऐसी अप्रत्याशित सफलता के लिए ग्राम्य उद्योग संघ सकारण अपने को बधाई दे सकता है, और वह सरकार को भी उसकी नवोदित सद्बुद्धि के लिए बधाई देने को सहमत होगा जोकि सरकार ने उसके साथ असहयोग करने की स्पष्ट आतुरता प्रदर्शित की है । एक बात और भी है जिसने मुझे प्रभावित किया है । माननीय गृह सदस्य ने प्रेस में प्रकाशित इधर-उधर के अनेक समाचारों का उल्लेख किया है लेकिन अभी तक प्रेस में जो बहुत महत्वपूर्ण घटना प्रकाशित हुई उसका उल्लेख न करने में उन्होंने बड़ी सजगता बरती है । (वह यह है कि संघ के सम्बन्ध में) महात्मा गांधी ने स्वयं क्या कहा है और इस संगठन के नियम स्वयं क्या स्पष्ट करते हैं?

माननीय सर हैनरी क्रेक – ऐसा विवरण देने के लिए मेरे पास क्या नहीं था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – ऐसी स्थिति में मैं माननीय सदस्य के कथन की अनुपूर्ति करना चाहूँगा और माननीय सदस्य ने जो समय लिया है उसमें यह समय जोड़ दिया जाय । मान्यवर, माननीय सदस्य ने हमें यह नहीं बताया कि इस परिपत्र के जारी होने पर महात्मा गांधी ने स्वयं कहा था कि इस मामले में यदि सरकार उनसे सहयोग करे तो वह ग्रामीण क्षेत्रों में जादुई परिवर्तन ला सकते हैं । यह किस प्रकार के मानसिक दृष्टिकोण का परिचायक है? आंखिरकार राजनीति क्या है और अर्थनीति क्या है? माननीय गृह सदस्य और इंडियन सिविल सर्विस – जो उतनी ही आस्थावान इंडियन है जितनी सर्विस है – के प्रति पूर्णरूपेण निष्ठावान (श्री गिरिजा शंकर बाजपेयी) का, जो इंडियन सिविल सर्विस में उनके फरमाबरदार भारतीय

कामरेड है, आशय क्या है? उन्होंने इस देश में सरकार की आश्चर्यजनक उपलब्धियों की एक विवरण-माला हमें दी है। मुझे नहीं मालुम कि सरकार से उनका क्या आशय है? क्या इससे उनका आशय 'मिण्टो-मार्ले सुधार' के पहले की सरकार है या उनका आशय माण्टफोर्ड शासनावधि की सरकार से है जो 1920 से स्थापित है। मैं श्री बाजपेई से अनुरोध करूंगा कि वह ईस्ट इंडिया कम्पनी के समय से आरम्भ कर सरकार की उपलब्धियों का विवरण प्रस्तुत करें। मै श्री बाजपेई से यह भी मांग करूंगा कि सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर उद्योगों के सिलसिले में क्या सुधार और क्या बिगाड़ किया, इसका संयोजित और सम्पूर्ण विवरण भी हमारे सम्मुख प्रस्तुत करें। क्या उनको स्मरण है कि (कुटीर उद्योगों में लगे कारीगरों के) अंगूठे काट दिये गये थे, शरीर को अपंग बना दिया गया था और अमानवीय अत्याचार किये गये थे? उन्हें यह सब ज्ञात है? मैं आज उस दुःखात्मक इतिहास का उल्लेख नहीं करना चाहता। अब जहां तक राजनीति और अर्थनीति के अन्तर की बात है, आज की दुनिया इन दोनों के बीच अन्तर की बात स्वीकार नहीं करती। और आखिरकार राजनीति है क्या? ....

श्री गि०शं० बाजपेई– मान्यवर, एक व्यवस्था के प्रश्न पर मुझे कहना है कि मेरे माननीय मित्र ने जो वीभत्सतापूर्ण वक्तव्य दिया है वह पूर्णरूपेण अनुपयुक्त और सत्य से परे है...

एक अन्य माननीय सदस्य – इसमें व्यवस्था की क्या बात है?

श्री गि०शं० बाजपेई – जहां तक अ–भारतीय उद्योगों को प्रोत्साहन देने हेतु हाथ काटने सम्बन्धी वक्तव्य है का सवाल है, मैं जानता हूँ कि वह वक्तव्य दिया गया है।

श्री एस० सत्यमूर्ति – मान्यवर, व्यवस्था का प्रश्न है...

अध्यक्ष (ले० कर्नल सर हैनरी गिडनी) – एक ही समय में व्यवस्था के दो प्रश्न नहीं उठाये जा सकते। अध्यक्षव्यवस्थाके एक प्रश्न पर विचार कर रहा है और जब तक वह इस एक प्रश्न पर अपना निर्णय न दे दे तब तक व्यवस्था का कोई अन्य प्रश्न नहीं उठाया जा सकता।

श्री गि०शं० बाजपेई – मैं कह रहा था कि मैं उक्त प्रकार के वक्तव्य से अपरिचित नहीं हूँ....

अध्यक्ष (ले० कर्नल सर हैनरी गिडनी) – शान्त! शान्त!! । मैं समझता हूँ कि माननीय सदस्य व्यवस्था के प्रश्न से बाहर जा रहे हैं । वह व्यवस्था का प्रश्न नहीं उठा रहे हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, अब मैं इस बात पर आता हूँ कि राजनीति और अर्थनीति में क्या अन्तर है । मैं इसे नहीं जानता, मैं इसे भलीभाँति नहीं समझता । क्या बिहार में आये भूकम्प के सिलसिले में सहायता कार्य करना एक आर्थिक तथा मानवतावादी कार्य है या ऐसा व्यापक राजनीतिक कार्य है जिसका उद्देश्य लोगों को कांग्रेस में मिलाना या फांसना है ताकि देश में कांग्रेस को सत्ता प्राप्त हो सके? यदि मानव सेवा को इसलिये अपराध समझा जाय कि इसके फलस्वरूप देश में कांग्रेस की शक्ति में वृद्धि होगी तो बताया जाय कि वास्तव में कौन दुराग्रही है और राजनीतिक मनोभावना से परिचालित है? ये हम लोग हैं जो जनता की सेवा करना चाहते हैं या वे लोग हैं जो इस भय से जनसेवा के मार्ग में व्यवधान उत्पन्न करना चाहते हैं कि कहीं इसके फलस्वरूप हमारे प्रभाव में इतनी अधिक वृद्धि न हो जाय कि जिसकी परिणति एक दिन देश की वर्तमान दुष्ट व्यवस्था के अंत के रूप में हो । यही विवाद का असली मुद्दा है । यह उस सरकार की राजनीतिक मनोग्रस्ति का एक और उदाहरण है जो इस देश में घटित अनेक विनाशकारी दुर्घटनाओं के लिए उत्तरदायी रही है, और इसी पक्ष की ओर मैं सदन के आदरणीय सदस्यों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करना चाहता हूँ ।

एक अन्य मुद्दा भी शामिल है और यह पुनः महत्व का मुद्दा है । हमें बताया गया है और बार-बार बताया गया है कि सेवाओं को स्वतंत्र होना चाहिए और कार्यकारिणी के सदस्यों का निर्लिप्त दृष्टिकोण होना चाहिए; यह कि कभी उनके राजनीतिक आका कांग्रेसजन भी हो सकते हैं । सेवाओं में मेरे अनेक मित्र हैं और मेरे उनसे मधुर सम्बन्ध हैं । उनका हमेशा यही कहना रहा है कि यदि उन्हें कांग्रेस जनों के अधीन कार्यरत होना पड़ेगा तो वह इसे बुरा नहीं समझेंगे । अब मै पूछता हूँ कि क्या यह किसी रूप में स्वस्थ, हितकारी और गम्भीर सिद्धांत हो सकता है कि इस देश की कार्यकारिणी के स्थायी सदस्यों से यह कहा जाय कि वे किसी दिन सरकार बनाने की क्षमता रखनेवाले जन-प्रतिनिधियों के खिलाफ नौकरशाही का पक्ष ग्रहण करें? संयुक्त संसदीय प्रवर समिति की रिपोर्ट में इतने अधिक अनर्थक प्रस्तावों के औचित्य के सम्बन्ध में सरकारी पक्ष का क्या कहना है? क्या उन्होंने बारम्बार यह नहीं कहा है कि ऐसे उपाय खोजने होंगे ताकि सेवाएँ राजनीतिक प्रभाव से प्रभावित न हों सकें, और ताकि वे सार्वजनिक प्रश्नों के प्रति अनासक्तिपूर्ण तथा स्वतंत्र

दृष्टिकोण अपना सकें? क्या हमसे बारम्बार यह नहीं कहा गया है कि भारतीय यह नहीं जानते कि राजनीतिक मामलों और जनसेवा के बीच क्या अन्तर होता है? अतः मैं दूसरी ओर बैठे सदस्यों से पुनः यह प्रश्न करना चाहता हूँ कि क्या वे जन–सेवा के समर्थक हैं या वे आज तक के अपने रवैये के अनुसार विदेशी प्रभुत्व तथा इस देश के शोषण को इस कदर स्थायी बनाये रखना चाहते हैं, ताकि इस देश के सार्वजनिक नेताओं ने सेवा का जो मार्ग निर्धारित किया है, चाहे वह कितना ही स्वस्थ तथा आशाजनक हो, उसका विरोध किया जाय तथा उसकी उपेक्षा की जाय और वे इसकी प्रगति में अवरोध उत्पन्न करें, अन्यथा इसके परिणामस्वरूप जो जनसेवा कर सकते हैं उनकी स्थिति मजबूत हो जायगी । एक पुरानी कहावत के अनुसार नौकरशाही अपना ध्यान घोड़े की देखरेख तक सीमित रखना चाहती है किन्तु चारा स्वयं हड़प कर लेती है । जहां तक हमारा सम्बन्ध है, हम घोड़े को चारा देना चाहते हैं और दिखावटी देखरेख का अंत कर देना चाहते हैं, लेकिन वे हमें ऐसा अवसर नहीं देना चाहते । मैं उनसे अनुरोध करूंगा कि वे स्थिति पर विचार करें और समझें कि उन्होंने जो रुख अपनाया है क्या उसे शिष्ट कहा जा सकता है ?

जो परिपत्र जारी किया गया है उसके बारे में एक गम्भीर आपत्ति और है । ग्रामोद्योग उद्योग का एक अंग है और वर्तमान भारत सरकार अधिनियम की माण्ट–फोर्ड स्कीम के तहत उद्योग हस्तान्तरित विषय है । तो क्या ऐसे निर्देश जारी करके कि वे ग्रामीण पुनर्गठन सम्बन्धी कार्य में कांग्रेसजनों से सहयोग तथा सहकार न करें, सरकार ने भारत सरकार अधिनियम की भावना के विपरीत मंत्रियों के स्वविवेक से हस्तक्षेप नहीं किया है? यदि ऐसा है तो हमें संयुक्त संसदीय समिति के संविधान और संरक्षित अधिकारों के प्रति सावधान रहना है, हमें स्पष्ट रूप से यह समझ लेना चाहिए कि उनका क्या लक्ष्य है और हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि किसी विदेशी सरकार की सदैव एक ही खास मंशा होती है और वह मंशा होती है विदेशी शासन को सदव बनाये रखना । सामने की कतार में बैठे दो ख्याति प्राप्त भारतीयों से क्या मैं यह पूछ सकता हूँ कि जो संगठन, उन सभी के अनुसार जिनका इस देश से जरा सा भी सम्बन्ध है, उन लोगों की स्थिति में सुधार हेतु जुटा है, जो कल्पनातीत भारी गरीबी में डूबे हैं, उस (संगठन) के प्रति विरोध का जो सरकारी रुख है, उसकी बाबत वे क्या सोचते हैं? जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में नंगे–भूखे की स्थिति में सुधार का सवाल सामने हो तो राजनीतिक प्रतिस्पर्धा का अवसर ही कहाँ पैदा होता है? मैं केवल दो वाक्य और पढूँगा– कदाचित् मेरा समय भी समाप्त हो गया हो ।

अध्यक्ष (ले० कर्नल सर हैनरी गिडनी) – यह लगभग समाप्त हो गया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – एक (वाक्य) में ग्रामीण उद्योग संघ के उद्देश्य को परिभाषित किया गया है :

"संघ का उद्देश्य ग्रामीण उद्योगों को पुनर्जीवित, प्रोत्साहित तथा विकसित करना और भारत के ग्रामीणों के नैतिक तथा शारीरिक विकास सहित ग्रामीण क्षेत्रों का पुनर्गठन एवं पुनर्निर्माण करना होगा ।"

मैं गृह सदस्य से जानना चाहूँगा कि क्या वह संघ के ऐसे उद्देश्य से किसी भांति असहमत हैं?

माननीय सर हैनरी क्रेक – बिल्कुल नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – तब ठीक है । मेरे पास कुछ मुद्रित सामग्री है । उसका एक सुसंगत अंश भी मैं उनके सम्मुख पेश करूंगा और उनसे जानना चाहूँगा कि क्या उन्हें प्रतिज्ञा में, जो निम्न भांति है, कुछ बढ़ाना या जोड़ना या घटाना या संशोधित करना है:

"अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ का विधान और उसके नियम पढ़ लेने के बाद मैं उनका एक सदस्य बनना चाहूँगा और प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं भारतीय गांवों के सर्वांगीण विकास के, इसके उद्देश्यों को आगे बढ़ाने हेतु अपनी पूर्ण शक्ति तथा योग्यता के साथ कार्य करता रहूँगा । जब तक मैं संघ का सदस्य बना रहूँगा तब तक सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भाग नहीं लूँगा अपने कार्य –निर्वाह में मैं उन सबसे सहयोग और सहायता लेना चाहूँगा जो इसे देना चाहें, चाहे उनके साथ राजनीतिक मतभेद ही क्यों न हो । मैं अपनी पूर्ण क्षमता के साथ संघ के आदर्शों के अनुकूल जीवनयापन का प्रयास करूंगा और किसी अन्य वस्तु की बजाय ग्राम्य उत्पादों के उपयोग को वरीयता प्रदान करूंगा । ग्रामीणों के प्रति अपने दायित्वों का निर्वाह करते हुए मैं मनुष्य-मनुष्य के बीच किसी प्रदार का अन्तर नहीं करूंगा ।"

माननीय गृह सदस्य या दूसरी ओर बैठे किसी अन्य माननीय सदस्य को इस पर क्या आपत्ति हो सकती है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – बहुत प्रशंसनीय विचार है ।

अध्यक्ष (ले० कर्नल सर हैनरी गिडनी) – यह किस तिथि को जारी हुआ है

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं निश्चित तिथि तो नहीं बता सकता लेकिन तभी ग्रामीण उद्योग संघ की स्थापना हुई थी.....

अध्यक्ष (ले० कर्नल सर हैनरी गिडनी) – ऐसा कब हुआ था?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मेरे ख्याल में कांग्रेस के बम्बई अधिवेशन के बाद । मान्यवर, यह स्वीकार करते हैं कि उन्हें (संघ के) इन मौलिक और निर्धारक तत्वों पर किसी प्रकार की आपत्ति नहीं है । उस परिपत्र के दो काले शब्दों को मैं भारत सरकार के रुख की कुंजी समझता हूँ और वे हैं जहां महात्मा गांधी को सयाना (एस्च्यूट) राजनीतिज्ञ बताया गया है । महोदय, सरकारी पक्ष 'एस्च्यूट' शब्द के अर्थ को समझता है और उसे भली भाँति महसूस करता है । 'एस्च्यूट' का अर्थ होता है 'क्रेफ्टी' (धूर्त या कपटी) । दुनिया भले ही महात्मा जी को साधु-संत समझे लेकिन जो लोग कपटीपन और धूर्तता की कला में प्रवीण हैं उन्हें अपने चारों ओर धूर्तता नजर आती है ।

●

भारत ब्रिटिश व्यापार समझौता

मैंने माननीय वाणिज्य सदस्य के भाषण को कल साफ-साफ सुना। उन्होंने सदन से कहा कि इस मामले पर, भावावेश और दुराग्रह से ऊपर उठकर कठोर तर्क के आधार पर विचार किया जाय। मैं समझता हूँ कि उनके शब्दों को सही-सही दोहरा रहा हूँ। वह चाहते हैं कि जिस प्रकार एक शल्य-चिकित्सक मृत शरीर का विच्छेदन करता है उसी प्रकार इस विषय पर विचार किया जाय। मैं उनकी इच्छापूर्ति को तैयार हूँ। मान्यवर, प्रारम्भ में ही मैं उन्हें बता दूँ कि मैं स्वयं इस मामले में किसी प्रकार के दुराग्रह का समावेश नहीं चाहता और न किसी व्यापार-समझौते सम्बन्धी सुझावों पर उसके गुणादगुणों के आधार पर विचार करना, अपने स्वतंत्रता प्राप्ति के लक्ष्य के प्रयासों से विसंगत ही मानता हूँ। वास्तव में आयरलैंड की स्वतंत्रता के निडर सेनानी श्री डी० वैलरा ने हाल ही में ब्रिटेन के साथ कोयला और पशुओं के मामले में एक संधि की है। दूसरी ओर ओटावा समझौते को लेकर आस्ट्रेलिया और कनाडा में काफी संकट है। अतः राजनीतिक प्रश्नों को इस मामले में शामिल करने का प्रश्न ही नहीं है। यह प्रश्न तो (समझौते के) गुण-अवगुण के आधार पर आसानी से तय हो सकता है।

सर्वप्रथम मैं यह समझता हूँ कि श्री मूडी चाहें जो कहें, माननीय वाणिज्य सदस्य और भारत सरकार को इस मामले में देश के वाणिज्य संगठनों की राय से परिचालित होना चाहिए। मेरे पास देश के प्रमुख वाणिज्य एवं व्यावसायिक संगठनों से प्राप्त हुए प्रतिवेदनों और तारों का एक बंडल है। इनमें भारतीय वाणिज्य एवं उद्योग संघ से लेकर अनेक वाणिज्य संगठन यथा बरार, बड़ौदा, बंगाल, कानपुर तथा देश के अन्य प्रमुख वाणिज्य-केन्द्र सम्मिलित हैं। यह स्पष्टतया अनुचित है कि सरकार वाणिज्य-क्षेत्र की राय के लिए बिना इन प्रश्नों पर विचार करे। मान्यवर, यदि मुझे ठीक से स्मरण है तो इस प्रकार का चार्ज लगाने वाले पर माननीय वाणिज्य सदस्य ने अपने उत्तर में कहा था कि वह इन वाणिज्य संगठनों की राय से अवगत हैं। अतः उनसे सलाह-मशविरा करना आवश्यक नहीं है। तो इस टिप्पणी का क्या यह अर्थ लगाया जाना चाहिए कि सभी भारतीय वाणिज्य एवं

लेजिस्लेटिव असेम्बली में 20 जनवरी, 1935 को माननीय सर जोसेफ भोर द्वारा भारत ब्रिटिश व्यापार समझौते के सम्बन्ध में रखे गये प्रस्ताव पर पं० गोविन्द बल्लभ पंत ने 30 जनवरी, 1935 को यह भाषण दिया था।

व्यापारिक तत्व इस प्रकार के समझौते के घोर विरोधी थे? क्या ऐसी जानकारी होने के कारण ही सरकार ने ऐसी व्यवस्था करने की जल्दबाजी की जबकि इस प्रश्न को प्रभावित करने वाली महत्व की अनेक बातें अभी तक अनिर्णीत हैं? क्या ऐसा करना सही और उचित था? मान्यवर, यदि वाणिज्य सदस्य, जो भारत के वाणिज्य व्यवसाय क्षेत्र की राय से परिचित होने का दावा करते हैं, किसी गलतफहमी के अधीन कार्य कर रहे थे, तो क्या इस समझौते का सर्वसम्मति से विरोध होने पर वह अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन करेंगे और इसके वापस लेने का प्रस्ताव करेंगे? मैं उत्तर का इंतजार करूंगा और चाहूंगा कि सरकार इस मुद्दे के प्रत्येक पहलू पर प्रकाश डाले । एक दो मामले और भी हैं जिन पर मैं चाहूंगा कि माननीय वाणिज्य-सदस्य प्रकाश डालें । वाणिज्य संघ के अध्यक्ष ने इस सम्बंध में एक तार भेजा और एक प्रतिवेदन द्वारा भारत सरकार से 15 दिसम्बर या उसके आस-पास भेंट के लिए समय मांगा और उसके बाद भी एक प्रतिवेदन अग्रसारित किया । सरकार ने उसे भेंट का अवसर प्रदान नहीं किया, उन्होंने उन्हें अपने सम्मुख उपस्थित होने की अनुमति नहीं दी । लगभग इसी समय इंग्लैण्ड में सरकार क्या कर रही थी? वहां मेरे ख्याल में 13 दिसम्बर को माननीय स्टर्टन ने माननीय रंसीमैन से पूछा कि क्या (इस मामले में) वह लंकाशायर की वाणिज्य संस्थाओं की राय लेंगे? रंसीमैन का उत्तर था कि वह लंकाशायर के प्रतिनिधियों से सम्पर्क बनाये हुए हैं और उसी दिन प्रातः उनके साथ उनकी एक कांफ्रेंस हुई । मैं उन्हीं की भाषा दोहरा रहा हूँ । इस प्रकार इंग्लैण्ड की सरकार तो वहां के वाणिज्य क्षेत्र के निरन्तर सम्पर्क में थी । अब यदि स्वतः समझौते पर दृष्टि डाली जाय तो स्पष्ट हो जाता है कि जहां तक ग्रेट ब्रिटेन का सम्बंध है, समझौते में वहां के वाणिज्य हितों का बार-बार उल्लेख हुआ है । उदाहरणार्थ अनुच्छेद चार में आप देखेंगे कि यूनाइटेड किंगडम (ग्रेट ब्रिटेन) में सरकार वाणिज्य-हितों से प्रभावित होने को थी । अनुच्छेद पांच में आप फिर देखेंगे कि वहां वाणिज्य-हितों के सहयोग से सरकार को कुछ विशेष प्रयास करने थे । आगे आप यह भी देखेंगे कि वहां वाणिज्य-हित सरकार को उत्प्रेरित और प्रभावित करने वाले तथा कदाचित् उसके दृष्टिकोण को निर्धारित करने वाले थे । उसकी तुलना में यहां की सरकार का कैसा रवैया था? समझौते के मूलपाठ पर ध्यान दीजिए । इसके द्वारा भारत सरकार ने विदेशी वाणिज्य-हितों को, सम्पर्क स्थापित करने और प्रतिवेदन प्रस्तुत करने की गारंटी तथा स्थायी और निर्बाध अधिकार देने की व्यवस्था की है । लेकिन यहां के मान्यताप्राप्त व्यापारिक लोगों द्वारा बार-बार अपील करने के बावजूद उन्हें भेंट करने या उनकी बात सुनने की अनुमति प्रदान नहीं की जाती । केवल इतना ही नहीं है । शोचनीय भेदभाव इतने में ही समाप्त नहीं हो जाता । लगभग इसी समय एक अन्य घटना भी हुई । महामहिम वायसराय ने

विगत 17 दिसम्बर को एसोसिएटेड चैम्बर आफ कामर्स के वार्षिक अधिवेशन का कलकत्ते में उद्घाटन किया और कहा :

"मैं कहना चाहता हूँ कि जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मुझे, एसोसिएटेड चैम्बर्स के सदस्यों से एक बार फिर भेंट करने का अवसर प्राप्त कर, प्रसन्नता हुई है ।"

आगे उन्होंने कहा –"मैं कलकत्ते की अपनी यात्रा के दौरान प्रति वर्ष वाणिज्य- व्यापार के अनेक पक्षों पर आप महोदयों से सीधे-सीधे सूचनायें प्राप्त करने की आशा करता हूं ।"

इस मामले पर और टिप्पणी की आवश्यकता नहीं ।

भारत सरकार का मुखिया कलकत्ता आता है और एसोसिएटेड चैम्बर आफ कामर्स के वार्षिक अधिवेशन के उद्घाटन का अवसर प्राप्त करता है, या मैं कहूंगा स्वागत करता है, सदस्यों से भेंट करने पर प्रसन्नता जाहिर करता है और खुले तौर पर घोषित करता है कि वाणिज्य-व्यापार के मामलों में वह उनसे रोशनी तथा पथ–प्रदर्शन प्राप्त करने की अपेक्षा करता है । ये तारीखें 13, 15 और 17 दिसम्बर करीब-करीब हैं । यहां आप इसी देश के दो वाणिज्य-व्यापार संगठनों, यथा भारतीयों से भिन्न यूरोपियन संगठनों के प्रति भारत सरकार के स्पष्ट पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण का अवलोकन करते हैं और यही भारत-ब्रिटिश व्यापार समझौते को समझने की कुंजी प्रदान करता है, और मैं स्वीकार करता हूं कि समझौता ऊपरी तौर पर जैसा दिखाई पड़ता है मुझे यह (अंदरूनी तौर पर) इससे कहीं भिन्न प्रतीत होता है । मैं माननीय वाणिज्य-सदस्य के भाग्य से किसी प्रकार का द्वेष नहीं रखता । उनकी सूरत देखकर ही विपक्ष निस्तेज हो जाता है । उनके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है लेकिन जब हम एक-दूसरे के विपरीत बैंचों में बैठे हैं, उनमें और मेरे बीच किसी प्रकार की समानता नहीं है । वहां इंग्लैण्ड में माननीय रंसीमैन, प्रेसीडेण्ट बोर्ड आफ ट्रेड, जिसमें ब्रिटेन के विविध उद्योगों एवं व्यवसायों के विशेषज्ञ हैं, के साथ सलाह-मशविरा करना आवश्यक समझते हैं ताकि वह इस समझौते के सम्बन्ध में अपना स्पष्ट निर्णय ले सकें । वह जनता के द्वारा चुने व्यक्ति हैं और अनुभवहीन भी नहीं हैं । मेरा ख्याल है कि वह 1915 में भी बोर्ड आफ ट्रेड के अध्यक्ष थे । ग्रेट ब्रिटेन के उद्योगों के व्यापक अनुभवों के बावजूद वह इस समझौते के सिलसिले में वहां के उद्योगों और वाणिज्य संस्थानों के प्रतिनिधियों से सलाह-

मशविरा करना आवश्यक समझते हैं; जब कि यहां सर जोजफ भोर यह समझते हैं कि इसमें (सलाह-मशविरे में) कोई सारतत्व नहीं है और बेकार का हल्लागुल्ला मचाया जा रहा है । इसका कारण भी स्पष्ट है । वाणिज्य सदस्य इस देश में किसी का भी प्रतिनिधित्व नहीं करता । क्या वह एक वोट के अधिकारी होने का भी दावा कर सकता है और इस देश में क्या वह किसी के प्रति भी उत्तरदायी है? वास्तविकता यह है कि भारत सरकार नाममात्र की सरकार है और इनायत पर टिकी है । केवल संक्षेप में अपना उद्देश्य स्पष्ट करने के लिए आप इसे 'सरकार' नाम से सम्बोधित कर सकते हैं अन्यथा, सही आशय प्रकट करने के लिये अनेक शब्दों की आवश्यकता पड़ेगी । यह दिल्ली (कमिश्नरी की) सरकार के समान है, जहां चीफ कमिश्नर को स्थानीय सरकार कहा जाता है । लेकिन वास्तव में यह (सरकार) है क्या? यदि आप इसे सही प्रकार से परिभाषित करना चाहें तो कहा जा सकता है कि भारत सरकार ईस्ट इंडीज के शोषण हेतु यूनाइटेड किंगडम (ब्रिटेन) के साहसिकों, नव उद्यमियों और पूंजीपतियों के अनलिमिटेड कम्बाइन की अढ़तिया (मैनेजिंग एजेंट) है । मैं इस कौतूहलपूर्ण समझौते के विषय में कुछ शब्द कहूंगा । हमने चीन के गुजरे जमाने के एक रिवाज की बाबत सुना है जबकि किसी बच्ची के पांव निर्बल बनाकर लोहे के जूते में ठूंस दिये जाते थे । तब सिर और पांव में एक समझौता हो जाता था और परिणामस्वरूप पांव सदैव के लिए लोहे के ताबूत में रख दिए जाते थे, तथापि सिर को हिलने-डुलने की आजादी रहती थी । हमारे देश में भी कुछ घुमक्कड़ साधु-सन्यासियों के निर्बल बना दिये गये अवयवों और सिर के बीच समझौता हो जाता है । हमारे देश में कलकत्ता जैसे स्थानों के गोपालकों की कुछ श्रेणियों में भी ऐसे समझौते का रिवाज है, जबकि गाय का बच्चा पैदा होते ही स्वर्ग रवाना कर दिया जाता है ताकि इस विश्व के दु:ख-दैन्य से उसे मुक्ति मिल सके, इसके बदले में गोपालकों को गाय से प्राप्त होने वाले सभी दूध का लाभ प्राप्त होता है, यह गाय और गोपालक के बीच समझौते का एक दृष्टांत है । मुझे आश्चर्य होता है कि ग्वाले के मामले में गाय की या चीनी बच्चे के मामले में पांव की या घुमक्कड़ साधु-संत के मामले में लुंजपुंज अवयव की संबंधित समझौते के संबंध में क्या आवाज हो सकती है? इसी प्रकार का यह व्यापार समझौता भी है । महोदय, इस परिप्रेक्ष्य में मैं इस समझौते को ऐसा ही समझौता कहने को तैयार हूं जैसा मैं इस प्रशासन को भारत सरकार कहता हूँ । किन्तु वास्तव में दोनों ही प्रियोक्तियां और अधिरोपण हैं ।

अब, मान्यवर, मैं बहुत ही संक्षेप में समझौते के मूल पाठ और इसके निहितार्थों पर टिप्पणी करूंगा । अपने भाषण के दौरान मेरे मित्र श्री मूडी ने

सोवियत रूस से लेकर बम्बई के समुद्र तट तक का ब्यौरा दे डाला और उसमें उस दिल्ली को भी जोड़ दिया है जिसे अनेक साम्राज्यों के उत्थान और पतन के अवलोकन का श्रेय प्राप्त है । मैं इन सब क्षेत्रों का ब्यौरा देकर उनका साथ नहीं देना चाहूंगा । लेकिन मैं उनसे एक-दो प्रश्न अवश्य पूछूंगा । क्या इस समझौते का आशय यह नहीं है कि इम्पीरियल अथवा ब्रिटिश प्रिफरेंस को इस देश की राजकोषीय नीति का एकीकृत अंग बना दिया जाय और इसके क्षेत्र का और अधिक विस्तार किया जाय? मेरे आदरणीय मित्र सर जोजफ भोर (नकारने की मुद्रा में) अपना सिर हिला रहे हैं । मैं उनसे कह सकता हूं कि अन्य लोग इसका भिन्न अर्थ निकाल सकते हैं, और कुछ ही महीनों बाद वह अपने कार्यभार से मुक्त भी होने वाले हैं । वास्तव में इस पर बहुत समय बर्बाद हो चुका है और उस गरीब प्राणी पर, जिसे उपभोक्ता कहा जाता है, बहुत अरुचिकर सहानुभूति थोप दी गयी है । मैं चाहता हूं कि इन महानुभावों को यह अनुभूति हो जानी चाहिए थी कि इम्पीरियल प्रिफरेंस के साथ भेदपूर्ण संरक्षण की जो नीति, आंशिक रूप में भी, जुड़ी हुई है, वह उपभोक्ता के लिए क्या अर्थ रखती है । इस सम्बन्ध में मैं एक छोटा सा दृष्टांत प्रस्तुत करूंगा । मान लिया कि उचित मूल्य निर्धारण हेतु सभी संगतिपूर्ण तथ्यों का लेखाजोखा कर आप इस देश में कोई वस्तु 70 रु० प्रति मन के भाव पर तैयार करते हैं और दूसरे देशों में वह वस्तु 50 रु० प्रति मन के भाव पर तैयार की जाती है, अब आप उस माल पर 20 रु० का शुल्क लगा देते हैं ताकि उत्पादक उचित मूल्य प्राप्त कर सके । मैं समझता हूं कि मैं मामले को सही तरीके से पेश कर रहा हूं । यदि मैं गलती पर हूं तो माननीय वाणिज्य सदस्य से उस गलती को दुरुस्त करने का अनुरोध करूंगा । मैं समझता हूं कि मैं सही हूं । अब वह इस माल पर प्रायः सभी देशों के सम्बन्ध में 20 रु० प्रशुल्क (टेरिफ ड्यूटी) लगा देते हैं लेकिन इंग्लैण्ड के सम्बन्ध में वह कहते हैं कि इस माल पर भिन्न प्रशुल्क लगाया जायेगा ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य अपना भाषण दो मिनट में अवश्य समाप्त कर दें ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मुझे खेद है कि मैं इस मुद्दे पर अधिक नहीं बोल सकता क्योंकि मुझे अपना भाषण समाप्त करना है । मुझे आशा है कि बाद को किसी समय इस विषय पर वाद–विवाद होगा तब मैं अपनी बात कह सकूंगा । यह बात मुझे एक अन्य मुद्दे का स्मरण दिलाती है । यदि मेरी स्मरण शक्ति सही है तो एसेम्बली के पिछले अधिवेशन में सरकार ने यह वायदा किया था कि वह ओटावा समझौते की कर्यान्वयन सम्बन्धी समिति की रिपोर्ट पर बहस करने का हमें अवसर प्रदान

करेगी । वायदे के अनुसार बहस का अवसर देने से पहले ही सरकार ने यह अनुपूरक समझौता देश के मत्थे मढ़ दिया है । (यदि वायदा पूरा किया गया होता तो) हम इस विषय पर पूरी तरह विचार-विमर्श कर सकते थे । यह पूर्णरूपेण सत्य है कि इम्पीरियल प्रिफरेंस की नीति उपभोक्ता पर अतिरिक्त भार डालने वाली है तथा उसके भाग्य को और भी अधिक खराब बनाने वाली है । महोदय, भारत को इस समझौते से कैसे लाभ पहुंचता है? हमें बताया गया है कि भारत से इंग्लैण्ड को निर्यात होने वाले माल में वृद्धि हुई है – मैं इस कथन की सत्यता को स्वीकार करता हूं । इस वृद्धि के अनेक कारण हैं जिनके जिक्र का फिलहाल मुझे समय प्राप्त नहीं है, लेकिन यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है और मुझे आशा है कि सदन यह बात अपने दिमाग में रखेगा कि प्रिफरेंशियल सामग्री के सम्बन्ध में जहां 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई है वहीं गैर प्रिफरेंशियल माल के मामले में यह वृद्धि लगभग 50 प्रतिशत रही है । यह साफ तौर पर सिद्ध करता है कि इस वृद्धि से प्रिफरेंस का कोई लेना देना नहीं है। जिनमें इंग्लैण्ड को प्रिफरेंस प्राप्त है, ऐसे यूनाइटेड किंगडम के सामान का भारत में आयात कई करोड़ रुपये बढ़ गया है ।

अंत में मुझे एक शब्द कहना है । दूसरी ओर बैठे माननीय सदस्य, वाणिज्य विभाग के संयुक्त सचिव ने कल अपने भाषण के दौरान कहा था कि वह (मामला) चूहे से बड़ा नहीं था जिसे पहाड़ बनाकर पेश कर दिया गया है । कदाचित् वह इस पशु के दुष्टतापूर्ण गुणों को विस्मृत कर बैठे हैं । मांन्यवर, चूहा और विशेषकर बड़े आकार का चूहा प्लेग के रोगाणुओं का अनुकूल निवास-स्थल और प्रजनन-क्षेत्र होता है और इसने यहां अन्य अनेक संक्रामक रोगों और महामारियों से संयुक्त रूप से पहुंची हानियों से भी अधिक विनाशकारी प्रभाव छोड़ा है । यदि आप प्लेग के रोगाणुओं को फैलाने वाले इस माध्यम से देश को मुक्ति दिलाना चाहते हैं तो आपको इसे मार डालना ही नहीं चाहिए वरन् इस पर (मिट्टी का) तेल छिड़क कर इसे दियासलाई दिखा देनी चाहिए । (करतल ध्वनि)

●

भारतीय संवैधानिक सुधारों पर संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट

मान्यवर, यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि मैं उस संशोधन के समर्थन में बोलने खड़ा हुआ हूँ जिसे विगत दिवस मेरी पार्टी के नेता ने अपने ओजस्वी भाषण के दौरान पेश किया था । मैं समस्या के महत्व से भलीभाँति अवगत हूँ और इस सदन के माननीय सदस्यों को आश्वस्त करना चाहता हूँ कि मैं इस सम्बन्ध में अपेक्षित जिम्मेदारी के साथ अपनी बात कहूँगा । मैं उन्हें यह भी विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं गहन विनम्रता के साथ ऐसा करूँगा । मैं अपनी सीमित सीमाओं और समस्या-निहित व्यापक प्रश्नों से अवगत हूँ ।

मान्यवर, विशेषकर हमारे लिए यह प्रश्न शास्त्रीय दिलचस्पी से कहीं अधिक महत्व का है । अन्य सब बातों को छोड़ हमने अनेक वर्षों तक इस पर अपना ध्यान केन्द्रित रखा है और यहां बैठे मेरे कुछ मित्रों तथा सदन से बाहर के अनेक मित्रों ने उस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया जिसे अनुमानतः संयुक्त संसदीय समिति की स्कीम में सम्मिलित किया जाना था । मान्यवर, कुछ व्यक्ति तो वर्तमान व्यवस्था में फलफूल रहे हैं, लेकिन हमारे लिए संघर्ष लम्बा चलने का अर्थ परीक्षा की अवधि और अधिक लम्बी होना और तपस्या-काल में और अधिक वृद्धि होना है । जैसी कि मनुष्य को प्रकृति है हम, स्व-विषयक मूल प्रवृत्तियों से प्रभावित हो, स्कीम के अधीन किसी भी ऐसे प्रस्ताव को, जो हमारे उद्देश्यों की सम्पूर्ति करने वाला हो, स्वीकार करने को उत्प्रेरित होंगे । मान्यवर, हमें इस स्कीम को अस्वीकार करना पड़ रहा है, इसका हमें दुःख है । पार्लियामेंट के हाउस आफ कामन्स में अपने पिछले भाषण में माननीय सेक्रेटरी आफ स्टेट ने जो कुछ कहा था उसे पढ़ने का मुझे आज प्रातः सुअवसर प्राप्त हुआ और दोपहर के भोजन से पूर्व आदरणीय गृह सदस्य तथा श्री जेम्स ने (यहाँ) जो बयान दिये उन्हें भी सुनने का अवसर मिला । मान्यवर, यदि फिर भी हम अपनी बात पर अटल रहते हैं तो ऐसा किसी हठधर्मिता के कारण नहीं है । मैंने जो तर्क सुने उनसे मेरे विश्वासों को और

यह भाषण 6 फरवरी 1935 को लेजिस्लेटिव असेम्बली में दिया था । उस समय सदन के सम्मुख प्रस्तुत विचारणीय विषय था :–"भारतीय संविधान में सुधारों से सम्बन्धित संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट लागू की जाय ।"

अधिक दृढ़ता प्राप्त हुई है । हमारा विश्वास है कि वर्तमान परिस्थितियों में और कुछ हो पाना सम्भव नहीं है और हमें संघर्ष को चालू रखना होगा । जैसा कि मैंने अभी कहा हम अपने उत्तरदायित्वों के प्रति सजग हैं । मान्यवर, हमें नहीं मालूम कि हमारे मत यहाँ सरकार को और ब्रिटेन में पार्लियामेंट को कितना प्रभावित करेंगे लेकिन मैं यह जानता हूँ कि हमारे निर्णय का देश की दूर-दूर झोपड़ियों पर अवश्य असर पड़ेगा । लेकिन हम निश्चिंत हैं कि यह आगामी कुछ वर्षों तक घटनाक्रम तथा इतिहास-क्रम को प्रभावित करने वाला होगा । आज भी यह हमारे लिए कितने दुःख की बात है कि हमारे साथीगण और जवाहरलाल नेहरू जैसे हमारे सम्मानित नेता जेलों में बंद हैं जबकि उनकी (नेहरू की) पत्नी क्षय रोग से ग्रस्त हैं और उनकी वृद्धा माता जी पक्षाघात से पीड़ित हैं । क्या हम उनकी रिहाई नहीं चाहेंगे जो रोगियों के लिए रामबाण सिद्ध हो सके? मान्यवर, हमें मालूम है कि संघर्ष जारी रखने की दशा में ऐसे सब कष्ट झेलने पड़ेंगे, किन्तु हमारे आत्मसम्मान, देश की वर्तमान परिस्थितियों और विश्व की वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए हमारे पास कोई अन्य विकल्प शेष नहीं है । मान्यवर, कुछ ऐसे भी लोग हैं, सौभाग्यवश जिनके अन्तःकरण और विचार (ऐसे समय में) अधिक आराम, अधिक सुविधाएँ और अधिक लाभ प्राप्त करने हेतु उद्यत हैं । कुछ सौभाग्यशाली लोगों के लिए लाभ अर्जित करने का मार्ग, समृद्धि का मार्ग, सुख-सुविधा का मार्ग और खिताब हासिल करने का मार्ग ही कर्तव्य- मार्ग है । लेकिन कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं जिनकी अन्तर-आत्मा इन बातों की ओर ध्यान नहीं देती । मान्यवर, मेरे समीप बैठे दो मित्रों ने विगत दिवस कहा कि इस प्रकार का (हमारा) नकारात्मक दृष्टिकोण गलत है । मैं नहीं जानता कि नकारात्मक दृष्टिकोण, से उनका वास्तव में क्या आशय था । जहां तक बम्बई के माननीय 'बैरोनेट' (लघु सामंत) का प्रश्न है मैं समझता हूँ कि वह लिबरल फेडरेशन का प्रतिनिधित्व करते हैं और मेरा विश्वास है कि इस लिबरल फेडरेशन में अपने भारी समर्थन के साथ हाल ही में एक प्रस्ताव पारित कर इंग्लैंड की सरकार से अनुरोध किया है कि संसदीय समिति की रिपोर्ट में जिस स्कीम को चित्रित किया गया है वह उससे अपना हाथ खींच ले और उसके आधार पर किसी प्रकार का कानून बनाने सम्बन्धी आगे की कार्यवाही न करे । जहां तक बम्बई मिल ओनर्स एसोसियेशन के माननीय प्रतिनिधि का प्रश्न है, मुझे विश्वास के साथ यह कहना है कि एक किनारे से लेकर दूसरे किनारे तक देश के सभी वाणिज्य-व्यापार संगठनों और संस्थाओं ने इस स्कीम को पूर्णतः अस्वीकार करने सम्बन्धी प्रस्ताव पारित किये हैं । अतः इन व्यक्तियों के बजाय यदि हम संगठनों की राय को वरीयता प्रदान करते हैं तो हमें दोषी नहीं ठहराया जा सकता । यदि इन महानुभावों के बजाय हम अपने को इनकी पार्टी के नेता से सहमत पाते हैं तो हमें

अफसोस नहीं है ।

मान्यवर, जैसा मैंने पहले कहा, कल मुझे माननीय वाणिज्य सदस्य का भाषण सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था — वरन् मैं यह कहूँगा कि सर जौजफ भोर का भाषण सुनने को मिला था क्योंकि उन्होंने सरकारी सदस्य की हैसियत से बोलने का दावा नहीं किया था । मैं उनकी वाक्पटुता की प्रशंसा करता हूँ और उनकी स्पष्टवादिता को पसन्द करता हूँ । लेकिन यदि वह मुझे अनुमति दें तो मैं कहूँगा कि उनका भाषण मुझे छोटे-मोटे कानूनी मुद्दों पर छल-कपट करने वाले वकील (के तर्क) की भाँति प्रतीत हुआ । यह उनके उपयुक्त नहीं था और न यह उस महान अवसर के उपयुक्त था जिस पर वह बोल रहे थे । उन्होंने महान व्यक्ति अब्राहम लिंकन के भाषण के कुछ अंश उद्धृत किये थे किन्तु उनके वाक्य का एक अंश छोड़ दिया था । मान्यवर, उन्होंने हमसे कुछ प्रश्न किये थे जिनका उत्तर देने में प्रसन्नता होगी । उन्होंने हमसे पूछा था कि "यदि आप इस स्कीम को नामंजूर कर देते हैं तो आप क्या करेंगे ?" अब्राहम लिंकन के संदर्भ में उनकी ऐसी पराजयवादी मनोवृत्ति और निराशावादी भावना सही नहीं ठहरती । मान्यवर, अब्राहम लिंकन का कथन ही इस प्रश्न का उत्तर दे देता है । (लिंकन ने कहा था) "सत्य के लिए, स्वतन्त्रता के लिए, जो उचित है उसके लिए, जो उच्च है उसके लिए, निरंकुशता के जुए में दबी प्रताड़ित मानवता के उत्थान के लिए अनेक लड़ाइयां लड़ने हेतु मनुष्य पैदा होता है ।" महोदय, यही उस संदेश का सार तत्व है जो अब्राहम लिंकन ने हम सबके लिए छोड़ा है और यही उस प्रश्न का उत्तर भी है जो उन्होंने हमसे पूछा है । लेकिन क्या मैं माननीय वाणिज्य सदस्य से एक अन्य प्रश्न पूछ सकता हूँ ? क्या उन्हें स्मरण नहीं कि साइमन कमीशन की रिपोर्ट पेश होने पर इस देश ने क्या किया था ? तब क्या वह रिपोर्ट ठुकरा नहीं दी गयी थी और क्या वह नकारात्मक दृष्टिकोण नहीं था? अब मैं उनसे यह पूछना चाहूँगा कि क्या राष्ट्रों के इतिहास में उसका विरोध करना, जो हानिकारक और विनाशकारक है, आवश्यक कदम नहीं है? यदि ब्रिटिश पार्लियामेंट किसी ऐसी स्कीम को, जो वास्तव में प्रतिक्रियावादी और हानिकारक हो, हमारे ऊपर थोप दे अथवा उसकी बाबत विचार करे तो ऐसी स्थिति में वह हमें क्या करने की सलाह देंगे? तब वह हमें इसे मंजूर करने की सलाह देंगे या नामंजूर करने की ? जब हम यह महसूस करें कि ऐसी स्कीम विनाशकारी सिद्ध होगी, यह देश को और पीछे ले जाने वाली होगी और स्वराज्य के हमारे लक्ष्य की ओर बढ़ने में बाधक होगी तब हमारे पास इसको पूर्णतः अस्वीकार करने के अलावा विकल्प ही क्या शेष रहता है? उन्होंने अब्राहम लिंकन के कथन का एक उद्धरण दिया था जो अधूरा था, मैं एक उद्धरण पेश कर उस कमी की पूर्ति करना चाहूँगा:

"तुम कुछ लोगों को सदैव के लिए और सभी को कुछ समय के लिए तो मूर्ख बना सकते हो किन्तु सभी को सदैव के लिए मूर्ख नहीं बना सकते ।"

मान्यवर, माननीय वाणिज्य सदस्य ने कल जो कुछ कहा था उसे ही माननीय गृह सदस्य ने आज फिर दोहराया । उन्होंने कहा कि काँग्रेस के रवैये के कारण ही इस प्रकार के रक्षा कवचों (संरक्षण) की व्यवस्था बनायी गयी है । सरकार की स्थिति मेरी समझ में नहीं आती । क्या वह स्वीकार करती है कि इस देश की कुंजी कांग्रेस के पास है? क्या वह स्वीकार करती है कि कांग्रेस के समर्थन और सहयोग के विना यहाँ कोई स्कीम सफल नहीं हो सकती? यदि ऐसा नहीं है तो फिर अनावश्यक तथा शरारतपूर्ण तरीके से कांग्रेस का नाम इस प्रकार क्यों घसीटा जाता है? मान्यवर, मैं यह कहने का साहस कर सकता हूँ कि माननीय गृह–सदस्य का बयान गलत है, घटनाक्रमों के परिप्रेक्ष्य में यह गलत सिद्ध हो जाता है तथा इतिहासगत तथ्यों के विरूद्ध है । कांग्रेस ने सर्वप्रथम 1920 और 1921 में असहयोग की नीति अपनायी । वर्ष 1930 में कांग्रेस ने फिर सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ किया जो इस वर्ष अपने पूर्ण उत्कर्ष और चरमसीमा तक पहुँच गया था । इसके ही तुरन्त बाद गोलमेज़ सम्मेलन हुआ । इसी के तुरन्त बाद (ब्रिटेन के) प्रधान मंत्री ने, जो आज भी भले ही वास्तव में नहीं तो नाम के प्रधानमंत्री हैं, घोषणा की थी कि इस देश में डोमीनियन स्टेट्स (औपनिवेशिक राज्य) तो कार्यरत है ही, और यदि इसमें किसी प्रकार की कमी रह गयी है तो वह इसे दूर करने के लिए कृतसंकल्प हैं ताकि भारत एक पूर्ण स्वतंन्त्र डोमीनियन स्टेट बन सके । मान्यवर, यहां से जो लोग गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने गये थे उनमें से अनेक ने इंग्लैंड से वापस लौटने पर सार्वजनिक रूप से यह स्वीकार किया था कि वहां पर (डोमीनियन स्टेट्स के सम्बन्ध में) जो कुछ प्रगति हुई वह यहां आरम्भ किये गये सविनय अवज्ञा आन्दोलन का ही परिणाम है । सत्य का अन्य भिन्न पहलू यह है कि जिस सीमा तक सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा आंदोलन में ढिलाई आयी उस सीमा तक सरकार का रुख कड़ा हुआ । जैसे ही सविनय अवज्ञा आन्दोलन कमजोर पड़ा वे अपने वायदों से पीछे हट गये और उन्होंने अपनी मूल स्कीम में अनेक प्रकार के संशोधन कर दिये ताकि इसमें जो कुछ वास्तविकता थी उसे वापस ले लिया जाय और (डोमीनियन स्टेट्स का) केवल मुखौटा शेष रह जाय । माननीय गृह सदस्य ने (इस पर) कहा था कि कांग्रेस ने अपने उत्तरदायित्वों को वहन करना अस्वीकार कर दिया था । क्या यह सही नहीं है कि कांग्रेस ने तब यह कहा था कि वह दायित्वों पर विचार-विमर्श करेगी और जायज देय की पाई-पाई चुकता करेगी? (वास्तविकता यह है कि)

कांग्रेस ने उन दावों को अस्वीकार कर दिया था जिनका कोई नैतिक आधार नहीं था और जिनके लिए किसी देश या राष्ट्र को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता । मैं गृह सदस्य से पूछ सकता हूँ कि क्या आज अनेक ऐसे देश नहीं हैं जिन्होंने अपना उत्तरदायित्व वहन करने से इंकार कर दिया? क्या इंग्लैंड अमेरिका को देय धन अदा करने में पूर्णतः असफल नहीं रहा है और क्या अन्य देश भी इसी प्रकार असफल नहीं रहे हैं ? मान्यवर, माननीय गृह सदस्य ने कहा है कि कांग्रेस के कारण ही इस प्रकार के संरक्षण (रक्षा कवच) अपनाये गये हैं । क्या मैं पूछ सकता हूँ कि मिस्र में संरक्षण की नीति क्यों अपनायी गयी? क्या मैं उनका ध्यान इस ओर दिला सकता हूँ कि इंग्लैंड के इतिहास में 'अति विलम्ब' बड़े चमकदार अक्षरों में अंकित है । जब कभी उत्तरदायी सरकार या स्वराज्य की ओर प्रगति सम्बन्धी प्रश्न उत्पन्न होता है तो ब्रिटिश लोग प्राणघाती सुस्त नीति अपना लेते हैं । विगत काल में भी उन्होंने यही किया । यदि उन्होंने स्टाम्प ऐक्ट और टी-सैस ऐक्ट के मामले में क्वेकर्स (अमेरिकी) के प्रतिनिधियों की बात सुनी होती तो कदाचित् विश्व का इतिहास भी भिन्न होता और अमेरिका से उनके सम्बन्धों का आधार ही कुछ भिन्न होता । (अमेरिका में) स्वतन्त्रता का युद्ध ही न लड़ा गया होता यदि उन्होंने ग्लेडस्टन की राय सुनी होती,और पारनेल के प्रस्तावों को ग्रहण कर लिया होता तो आयरलैंड का आज जैसा चिड़चिड़ा मूड न होता । यदि उन्होंने बोअर युद्ध से पहले यूनियन आफ साउथ अफ्रीका को स्वशासन दे दिया होता तो वहां जनसंहार न हुआ होता । यदि उन्होंने कनाडा में स्थिति बिगड़ने न दी होती और (वहां) ब्रिटिश और फ्रेंचों के बीच मतभेद और अलगाव को अधिक व्यापक एवं गहरा न होने दिया होता तो वहां किसी प्रकार का विद्रोह न हुआ होता । इतिहास क्या यह सिद्ध नहीं करता कि ब्रिटिशवासियों ने हर मामले में आखिरी क्षणों तक स्वशासन के विकास में बाधा खड़ी की और विरोध किया और जब स्थिति उनके काबू से बाहर हो गयी तभी अनिवार्यता के सम्मुख उन्हें झुकना पड़ा?

हमें हमारे साम्प्रदायिक भेदभावों का स्मरण दिलाया जाता है । दिग्भ्रमित करने के लिए साम्प्रदायिकता का हौआ हमारे सामने खड़ा किया जाता है । क्या यह एक ऐतिहासिक तथ्य नहीं है कि विदेशी शासन की विशेषता के कारण ही प्रत्येक देश में इस प्रकार के मतभेद पैदा हो जाते हैं? कनाडा को स्वशासन दिये जाने के अवसर पर लार्ड डरहम ने अपनी रिपोर्ट में जो कुछ कहा था उसकी मैं, मेरे दूसरी ओर बैठे हुए माननीय सदस्यों को याद दिलाना चाहूँगा । हत्या और उपद्रव होने की आशंका से फ्रांसीसी और ब्रिटिश (कनाडा में) फुटबाल मैच न खेल पाये । हमें ज्ञात है कि यूनियन आफ साउथ अफ्रीका का संविधान तैयार होने से पूर्व वहां ब्रिटिश

और डच कुत्ते – बिल्लियों की भांति लड़ रहे थे । हमें यह भी ज्ञात है कि (अमेरिका में) स्वतंत्रता की लड़ाई से पहले उत्तर और दक्षिण की कांउट्रीज सदैव आपस में संघर्षरत थीं । इतिहास बताता है कि विदेशी शासन ने हर स्थान पर भेदभाव को भड़काया है । इस सम्बन्ध में मैं अधिक और कुछ नहीं कहूँगा । जहां तक हमारे देश का सम्बन्ध है, मैं केवल उसी का हवाला दूँगा जैसा कि जिम्मेदार राजनयिक वेजवुड वैन ने 1930 में कहा था और सैलेसबरी के अर्ल ने जिसका उल्लेख इसी रिपोर्ट में किया है । इस सम्बन्ध में कोई भी अनेक बातें उद्धृत कर सकता है लेकिन ऐसा करने का यह उपयुक्त अवसर नहीं है । लेकिन माननीय गृह सदस्य को एक सुझाव देना चाहूँगा, मैं उनसे अनुरोध करूँगा कि वह इस स्कीम को वापस ले लें और इस देश के स्वशासन की स्कीम तैयार करने की जिम्मेदारी इस एसेम्बली पर छोड़ दें । उसे इस देश के सभी महत्वपूर्ण सम्प्रदायों का समर्थन प्राप्त रहेगा और साथ ही इस सदन के पूर्ण बहुमत का भी समर्थन मिलेगा । क्या वह प्रत्येक महत्वपूर्ण सम्प्रदाय के बहुमत की सहमति और निर्णय पर तथा इस सदन के पूर्ण बहुमत पर यह मामला छोड़ने को तैयार हैं? यदि वह तैयार हैं तो मेरा और कोई अनुरोध नहीं है । यदि वह इसे नहीं मानते तो मैं अन्य 'रचनात्मक सुझाव' पेश करूँगा ।

माननीय सर हेनरी क्रेक — यह कैसे सम्भव है कि मैं इस विधेयक को वापस ले लूँ ?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — इसे वापस लेने हेतु आप संस्तुति कर सकते हैं । मैं आपकी सहायता चाहता हूँ ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) — माननीय सदस्य ने निर्धारित समय से अधिक समय ले लिया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — निर्धारित समय में विषय के साथ न्याय करना कठिन है । इसके अतिरिक्त मैं अपनी पार्टी का एक मात्र सदस्य हूँ जो अभी तक बोला है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) — लेकिन अभी अनेक अन्य सदस्यगण बोलने को शेष हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — मान्यवर, सदन की कार्यवाही आपको नियमित करनी है । इस रिपोर्ट में अर्ललिटन ने एक स्कीम पेश की है और मैं सरकार से इस स्कीम को स्वीकार करने का अनुरोध करूँगा और इसे इस देश में प्रतिनिधि तथा उत्तरदायी सरकार के विकास का आधार बनाने को कहूँगा । यह स्कीम रिपोर्ट के भाग दो के 302 से 308 पृष्ठों में दी गयी है । वह यह नहीं चाहते कि कोई विषय रिजर्व (सुरक्षित) हो और वह चाहते हैं कि केन्द्रीय संघ एसेम्बली (सेंट्रल फेडरल)

एसेम्बली) विभिन्न प्रान्तीय सरकारों के प्रतिनिधियों की ही हो । इस मामले में मेरी परख का आधार बहुत सीधा-सादा है । क्या संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट जनसाधारण के आत्मसम्मान और राष्ट्रीय गर्व की पूर्ति करने वाली है ? हम इसे विस्मृत नहीं कर सकते कि अतीत में भारत ने विश्व कौ वह आधारशिला प्रदान की है जिस पर वर्तमान सभ्यता स्थापित है । तो हम विश्व समुदाय में जाति-वहिष्कृत व्यक्ति का स्थान ग्रहण करना कैसे स्वीकार कर सकते हैं? ब्रिटिश साम्राज्य के जिस क्षेत्र में भी भारतीय जाते हैं उनके साथ निम्नतम मानव की भांति व्यवहार किया जाता है; हमें निन्दा, हास्य और घृणा की दृष्टि से देखा जाता है । धनलोलुपता तथा भौतिक मामलों में भले ही समझौता हो जाय किन्तु आध्यात्मिक तथा आत्म-सम्मान के मामलों में किसी प्रकार का समझौता नहीं हो सकता । मैं केवल स्वतंत्र भारत ही नहीं वरन् विश्व के अन्य राष्ट्रों के स्वतंत्र नागरिकों की भांति होने का दावा और अधिकार प्रस्तुत करता हूं । जब तक (सरकार का) वर्तमान प्रकार का दृष्टिकोण रहेगा किसी प्रकार की प्रगति नहीं हो सकती । श्री जेम्स ने विश्व परिस्थिति का हवाला दिया है । यही वह विषय है जिसके सम्बन्ध में मैं कुछ कहूंगा । मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि सेक्रेटरी आफ स्टेट और उसके साथीगण अपने स्वभाववश तथा संवैधानिक ढंग से इन विशाल समस्याओं से निपटने में असमर्थ हैं । वे संकुचित दृष्टिकोण से इन पर विचार करते हैं । उनका नजरिया रोगग्रस्त है और वे चीजों को उल्टी प्रकार से तथा मंद बुद्धि के साथ देखते हैं । मान्यवर, मेरा कहना है कि विश्व के ऐसे मसलों के निबटारे के लिए व्यापक दृष्टि होनी चाहिए । सर सैम्युअल होर एक सज्जन व ईमानदार अंग्रेज हैं और इस नाते उनका दृढ़ विश्वास है कि अन्य देशों के मूर्तिपूजकों का पथप्रदर्शन प्रभु के प्रियजन अंग्रेज ही कर सकते हैं । हठवादिता की ऐसी भावना ही ऐसे व्यापक मसलों को हल करने के मार्ग में बाधक होती है । महाशक्तिशाली को भी ठीक तथ्यों तथा वास्तविकताओं को स्वीकार करना चाहिए । साम्राज्यवाद के भी कभी दिन थे लेकिन आज इसके लिए कोई स्थान नहीं है । गतिशील विश्व बड़ी तेजी से आगे बढ़ रहा है और प्रलयपूर्व युग के मानदंड आज की रहनुमाई नहीं कर सकते । और लोगों की महती समस्याओं को नवीन भावना के साथ देखने-समझने का दृष्टिकोण अपनाना चाहिए, यदि वे ऐसा नहीं करते तो ठोस परिणाम भी नहीं प्राप्त कर सकते । संयुक्त संसदीय समिति की इस रिपोर्ट में जरा सी भी प्रगति दृष्टिगोचर नहीं होती । वास्तव में इसने पुराने सब वायदों को भी ठुकरा दिया है । हमसे उनकी नेकनीयती पर आस्था बनाये रखने के लिए कहा गया है जो इस अधिनियम को कार्यान्वित करेंगे । यदि हम यह मान लें कि कायदे के आदमी सदैव ही कायदे की बात करेंगे तब तो सरकार के अस्तित्व की आवश्यकता ही समाप्त हो जायगी । यदि आदमी सदैव कायदे से चलने वाले हो

सकते तब किसी प्रकार के प्रतिबन्धों की आवश्यकता ही न होती और संगठित सरकार की तो और भी कम आवश्यकता होती । लेकिन रक्षा कवचों (संरक्षणताओं) का क्या इतिहास है? इस सम्बन्ध में केवल एक देश का उल्लेख करूंगा ।

माननीय सदस्यों को अवश्य ज्ञात होगा कि मिस्र को 1922 में संप्रभुता सम्पन्न राज्य घोषित कर दिया था और कुछ थोड़े से ही रक्षा कवच (संरक्षण) उसके लिए निर्धारित किये गये थे और उनमें से एक के अनुसार मिस्र के शाह फौद के ब्रिटिश सलाहकार की संस्तुति पर संविधान निलम्बित किया जा सकता था । इसका क्या परिणाम हुआ? वहां विगत चौदह वर्षों के दौरान संविधान व्यवहारतः निलम्बित रहा । वर्ष 1928 में यह तीन वर्षों के लिए निलम्बित किया गया था और आगे वह पुनः निलम्बित कर दिया गया । यह है रक्षा कवचों (संरक्षणों) का इतिहास । हम देखते हैं कि वर्तमान अधिनियम में पुराने वायदों को पूरी तरह नकार दिया गया है, सभी पावन प्रतिज्ञाओं को ठुकरा दिया गया है । वर्ष 1917 में पार्लियामेण्ट ने घोषणा की थी कि ब्रिटेन की नीति ब्रिटिश भारत को क्रमशः स्वशासन उपलब्ध कराना है । यह घोषणा 1919 के अधिनियम में शामिल थी । इसे अनुदेश पत्र में भी सम्मिलित किया गया था तथापि संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट का कहना है कि मैं पृष्ठ 14...15 पैरा 35 का हवाला दे रहा हूं– ब्रिटिश भारत को उत्तरदायी सरकार प्रदान करने की प्रस्तावना असम्भव है, आज ही के लिए नहीं वरन् सर्वदा के लिए । ऐसा कहा गया है रिपोर्ट में । एक सर्व प्रभुता-सम्पंन्न देश तथा पार्लियामेण्ट ने जिस पावन 'प्रतिज्ञा' शब्द का प्रयोग किया था, आप उस (शब्द) के ईमानदार, स्पष्टतावादी तथा विश्वसनीयतापूर्ण स्वरूप को देख रहे हैं । मैं रक्षा कवचों (संरक्षण) की बात छोड़े देता हूं । जिनका हवाला दिया गया है, उनमें से भी अनेक की बाबत कुछ नहीं कहूंगा ।

मैं एक या दो और मुद्दों का जिक्र करूंगा और उसके बाद अपना भाषण समाप्त कर दूंगा । संविधान में पश्चगामी संशोधन किए जाने के बावजूद; प्रान्तीय विधान मंडलों के द्विसदनीय होने के बावजूद; केन्द्र तथा प्रान्तों में दूसरे सदन को अब अधिकार दिये जाने के बावजूद; और निम्न सदन में 30 प्रतिशत तथा उच्च सदन में 40 प्रतिशत सीटों को रियासती शासकों को देने और यह कि इन दोनों सदनों में तथाकथित प्रतिनिधि किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं होंगे, के बावजूद, सेवाएं सेक्रेटरी आफ स्टेट के अधीन बनी रहेंगी, के बावजूद; अखिल भारतीय सेवाओं में नियुक्ति के मामले में मंत्रियों को परामर्श देने का कोई अधिकार न होने के

बावजूद; पुलिस नियमों में परिवर्तन हेतु उनकी (मंत्रियों) कोई आवाज न होने के बावजूद; मैं यह पूछना चाहता हूं कि इसके बाद विधान मण्डलों को जितने अधिकार हस्तान्तरित किये जायेंगे क्या उनसे भारतीयों की स्थिति में कोई परिवर्तन आने की सम्भावना है? आज भारत सरकार में तीन भारतीय सम्मिलित हैं । सेना, वैदेशिक सम्बन्ध, चर्च-व्यवस्था आदि के प्रशासन तथा नियंत्रण में उनका प्रभाव भी है । वर्तमान संविधान के अनुसार, तीन भारतीयों सहित गवर्नर- जनरल-इन-काउंसिल को इस देश में सैनिक तथा नागरिक प्रशासन की देखभाल और नियंत्रण का अधिकार प्राप्त है । विधि निर्माण, वित्त तथा अन्य विषयों पर भी उनकी आवाज रहेगी । लेकिन इस प्रस्तावित परिवर्तन का क्या प्रभाव होगा? पहले हम प्रशासन के क्षेत्र को ही लें । अन्य बातों सहित जहां तक सेना, जहां तक विदेशी मामले और जहां तक चर्च सम्बन्धी विषय है, इनके सिलसिले में जहां तक गवर्नर जनरल के स्वविवेकी अधिकारी का प्रश्न है, किसी भारतीय को किसी प्रकार का या कुछ कहने का अधिकार नहीं होगा, और यह किसी राष्ट्रीय तानाशाह (के अधिकारों) का मामला नहीं होगा; लेकिन हमारे संदर्भ में एक ऐसे डिक्टेटर का मामला होगा जो एक ऐसी विदेशी जनता, एक ऐसी विदेशी सरकार तथा एक ऐसी विदेशी पार्लियामेण्ट के अधीन और उसके प्रति उत्तरदायी होगा जिनके हित हमारे हितों से टकराते हैं ।

इसके बाद विधिनिर्माण के मामले पर विचार कीजिए । इस सम्बन्ध में आज क्या स्थिति है? इस एसेम्बली को निर्माण के सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त हैं । यह कोई भी कानून बना सकती है, कोई भी विधेयक पारित कर सकती है, यह जो विषय चाहे उस पर विचार कर सकती है; लेकिन बाद को अनेक विषय इस विधायिका के सीमा-क्षेत्र के बाहर हो जायेंगे । पुनः मान्यवर, वर्तमान में गवर्नर जनरल का विधि निर्माण का अधिकार शांति एवं स्थिरता सम्बन्धी मामलों तक ही सीमित है, गवर्नर जनरल वास्तव में, तब तक कोई कानून नहीं बना सकता जब तक कि हिज मैजेस्टी इन काउंसिल (ब्रिटिश सरकार) की स्वीकृति न मिल जाय । (लेकिन नयी व्यवस्था के अधीन) बाद को गवर्नर-जनरल सुरक्षित विषयों से सम्बन्धित, स्वविवेकी अधिकारों से सम्बन्धित, उसके व्यापक विशेषाधिकारों के क्षेत्र में आने वाले मामलों से सम्बन्धित विषयों पर प्रायः बिना किसी विरोध के कानून बनाने को स्वतंत्र होगा ।

वित्तीय व्यवस्थाओं पर विचार किया जाय । वर्तमान में यह एसेम्बली सेना, विदेशी सम्बन्धों और चर्च सम्बन्धी मामलों को छोड़ अन्य सभी विभागों के अनुदानों

की मांगों पर वोट दे या न दे सकती है । लेकिन बाद में, एसेम्बली को इन मामलों में केवल कोई अधिकार ही नहीं प्राप्त होगा वरन् अन्य अनेक मामले भी उसके कार्यक्षेत्र के बाहर निकाल दिये जायेंगे ।

इसी प्रकार प्रान्तीय क्षेत्रों में जहां तक माण्ट-फोर्ड स्कीम का संबंध है, वह हस्तान्तरित और सुरक्षित विभागों के बीच स्पष्ट विभेद करने वाली है। हस्तान्तरित विभागों के सम्बन्ध में गवर्नर को न तो कानून बनाने का अधिकार है और न प्रमाणित करने का, न सेवाओं पर नियंत्रण का । लेकिन बाद को सभी विभागों तक उसके अधिकारों का विस्तार हो जायेगा । प्रान्तों में दोहरा शासन है किन्तु अन्तर यह है कि माण्ट-फोर्ड रिपोर्ट ने प्रशासन को अनेक विभागों में विभाजित कर दिया है और उसके बीच मोटी दीवारें खड़ी कर दी गयी हैं और मंत्रियों के अधीन हस्तान्तरित विभागों को कुछ स्वतंत्रता प्राप्त है और शेष को एक्जीक्यूटिव काउंसिलर्स के अधीन सुरक्षित विभाग बना दिया गया है । बाद को भी वर्तमान की भांति ये दीवारें बनी रहेंगी, केवल प्लास्टर उखाड़ दिया जायेगा, और प्रत्येक कमरे का समस्तरीय विभाजन हो जायेगा, ऊपर का खण्ड सुरक्षित रखा जायेगा, ऊपरी कमरों वाला एक अन्य खण्ड निर्मित किया जायेगा और सीढ़ियों युक्त खण्ड को महामहिम गवर्नर को दे दिया जायेगा जिसके हर कमरे से नीचे के कमरे में सीढ़ी होगी । यदि अभी तक दोहरे शासन का लम्बस्तरीय स्वरूप था तो बाद में यह लम्बस्तरीय के साथ समस्तरीय भी हो जायेगा ।

चाहे जिस कोण से देखें यह दानवी स्कीम है, और मैं यह कहना चाहता हूं कि किसी देश में संवैधानिक प्रगति के नाम पर ऐसा अकल्पनीय फरेब कभी भी नहीं किया गया था ।

मान्यवर, मैं और अधिक नहीं, केवल इतना ही कहूंगा । महाशय, लोग हमसे पूछते हैं कि हम क्या करेंगे । मैं कहता हूं कि राष्ट्रों का स्वयं निर्माण होता है । मैं कहता हूं कि स्वशासन के अधिकार पर डटे रहना होगा, उसे प्राप्त करना होगा और पूर्ण बनाना होगा, यह एक देश द्वारा दूसरे को दी गयी सौगात नहीं हो सकता । हम हर सम्भव मार्गों को उसकी प्राप्ति हेतु अपनायेंगे जो मानवकृत विधान तथा ईश्वरीय विधान के अनुसार हमारी वस्तु है । मुझे आशा है कि हम कुछ वर्षों में सफलता प्राप्त कर लेंगे । मान्यवर, हमसे कहा गया कि सर सैमुअल होर इस देश के हितों के प्रति बड़े उत्सुक हैं । उन्होंने वर्ष 1933 में चेल्सी के अपने चुनाव क्षेत्र के मतदाताओं के सम्मुख जो भाषण दिया था, मेरे सामने है । तब उन्होंने कहा था कि

वह अपनी योजना को इसलिए आगे बढ़ा रहे हैं ताकि ब्रिटिश हितों को सुरक्षित रखा जा सके, ताकि सत्ता में आने पर समाजवादी सरकार उनको खो न बैठे । यही वर्तमान ब्रिटिश सरकार द्वारा हमारे हितों के प्रति प्रदर्शित उत्कंठा का मूल भाव है । मान्यवर, सेक्रेटरी आफ स्टेट को हमारी राय की न तो कोई चिन्ता है और न परवाह । हम अच्छी प्रकार जानते हैं कि वह हमारी बाबत क्या सोचते हैं लेकिन मेरा कहना है...

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य अभी तक 35 मिनट समय ले चुके हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – (लेकिन मेरा कहना है कि) उन्होंने जो गाड़ी अपने काफिले से जोड़ रखी है वह रास्ते में ही टूट जायेगी और यदि यह नहीं टूटती तो काफिले से जुड़े खच्चर इसे और इसके साथ काफिले को गहरे खड्ड में गिरा देंगे ।

●

श्रमिकों को संरक्षण

जहां देश का प्लेट वाले कांच का एकमात्र उद्योग स्थापित है, वह बहजोई (मुरादाबाद) मेरे चुनाव क्षेत्र में है और इसी नाते मैं सदन के सम्मुख खड़ा हुआ हूं । मैंने संयुक्त प्रान्त के उन कांच उद्योगों के सम्बन्ध में कुछ प्रश्नों का नोटिस भी दिया था जिनका मुख्य कार्यालय बहजोई में है लेकिन मुझे अभी तक कोई उत्तर नहीं प्राप्त हुआ है । फिर भी मैं माननीय सदस्य को प्रारम्भ में ही इस बात से अवगत करा दूं कि मैं कम्पनी या भागीदारों (शेयर होल्डर्स) या श्रमिकों की ओर से बोलने का दावा नहीं करता । मैं यहां जो कुछ भी व्यक्त करूंगा वह मुख्यतः और पूर्णतः मेरी अपनी राय है ।

मान्यवर, इस प्रश्न के गुण-अवगुण पर विचार करने से पूर्व मैं उन विचारों को व्यक्त करना चाहूंगा जो मेरे मस्तिष्क में सर्वाधिक छाये हुए हैं । भारत लीग आफ नेशंस का मूल सदस्य तथा समान अधिकार प्राप्त सदस्य है और भारत उन राज्यों में एक प्रमुख राज्य है जिन्हें अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन में प्रतिनिधित्व प्राप्त है । अब, मान्यवर, सवाल है कि इन अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की सदस्यता का क्या अभिप्राय है? इसका क्या अर्थ है और इसकी क्या विशेषता है? मुझे ज्ञात नहीं कि भारत की वहां क्या स्थिति है । लेकिन मैं जानता हूं कि जहां तक भारतीयों का सम्बन्ध है, इस साम्राज्य में हमारी स्थिति (स्पार्टन काल के) हैलट्स (दासों) और अपने ही देश में सर्फ्स (दास किसानों) से अच्छी नहीं है । क्या यह एक स्वांग और छल नहीं है कि जब हमें इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का सदस्य बताया जाता है, भारतीय 'प्रतिनिधिगण' वहां किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के बजाय अपने मालिकों के प्रशस्ति-गान गाया करते हैं और उन्हीं के विचारों को प्रतिध्वनित करते हैं । जब मैंने यह प्रस्ताव देखा तो मुझे एक फिल्म का स्मरण हो आया जो हाल ही में

आटोमैटिक शीट ग्लास वर्क्स में काम के घण्टे निर्धारित करने के लिए आयोजित इण्टरनेशनल लेबर कांफ्रेस के ड्राफ्ट अधिवेशन के सम्बन्ध में माननीय सर फ्रेंक नोएस, सदस्य, उद्योग व श्रम द्वारा रखे गये एक प्रस्ताव पर 13 फरवरी, 1935 को पं० गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा लेजिस्लेटिव असेम्बली में दिया भाषण ।

अमरीका में निर्मित हुई । इण्डिया स्पीक्स (भारत का स्वर) नाम की इस फिल्म का निर्माण हालीवुड ने किया है और जहां तक भारत का सम्बन्ध है, इण्डिया स्पीक्स से अधिक अपमानजनक तथा सत्यहीन अन्य कोई फिल्म कभी नहीं दिखलायी गयी । भारत सरकार के माध्यम से जो स्वर विदेशों में सुनाई देते हैं वे "इण्डिया स्पीक्स" के चरित्रों के स्वर से बेहतर नहीं होते । इस सम्बन्ध में मैं और अधिक नहीं कहूंगा । परिस्थितिजन्य व्यंग और त्रासदी दोनों ही स्वतः स्पष्ट हैं । मैं यही आशा करता हूं कि माननीय श्रम एवं उद्योग सदस्य अपने मन में कोई ऐसी दुर्भावनापूर्ण, अशिष्ट और क्षुद्र बात छिपाये नहीं बैठे हैं जिसे वह वाद-विवाद की समाप्ति के बाद के अपने भाषण के अन्त में प्रकट करने वाले हों । किसी सरकारी सदस्य में यदि किसी व्यक्ति या सदन के किसी अंग के सम्बन्ध में किसी प्रकार की अपमानजनक बात कहने का दुःसाहस हो तो उसे अपने भाषण के प्रारम्भ में ही ऐसा कहने की हिम्मत करनी चाहिए, न कि उसे अंतिम क्षणों के लिए छिपाये रखना चाहिए जबकि विशेष रूप से दोषारोपण ऐसे असंगत, असम्बद्ध तथा अतथ्यात्मक हों जिनकी बाबत कोई भी पहले से संदेह भी न कर सकता हो और न अनुमान लगा सकता हो । फिर भी, ये सब उन प्रश्नों से बहुत ताल्लुक नहीं रखते जिनसे फिलहाल मेरा सीधा सम्बन्ध है ।

मान्यवर, मैं व्यक्तिगत रूप से यह महसूस करता हूं कि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ द्वारा निर्मित यह कन्वेंशन उस 56 घंटे वाले वाशिंगटन कन्वेंशन से उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास है जिसे कि दुर्बलता की घड़ियों में स्वीकार कर लिया गया था । मान्यवर, अन्य प्रश्नों की भांति इसके दो पक्षों पर विचार किया जाना चाहिए । उद्योग की आवश्यकताओं और मानव समुदाय की मांगों के बीच तालमेल बैठाया जाना चाहिए और मुझे इन दोनों के बीच किसी प्रकार का अपरिहार्य संघर्ष नजर नहीं आता । आखिरकार समाज कल्याण, समुचित विश्राम, श्रमिकों का व्यवस्थित जीवन, इन सभी का उनकी कार्यकुशलता पर प्रभाव पड़ता है । ये सब सुविधायें उन्हें अधिक और सुघड़ कार्य-निष्पादन हेतु समर्थ बनाती हैं । उत्पादन की गुणात्मक तथा मात्रात्मक, दोनों ही प्रकार की वृद्धि में इनके बेहतर परिणाम निकलते हैं । अतः इस प्रश्न पर किसी प्रकार के पूर्वाग्रह या पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण से विचार नहीं किया जाना चाहिए, और मैं यह भी अधिक पसन्द नहीं करता कि यहां बैठे व्यक्तियों को समाजवादी या पूंजीवादी शब्द से अलंकृत किया जाय । सर्फ (कृषकदास) होते हुए भी हम विविध प्रकार के अधिकारों की मांगों के बीच संतुलन स्थापित करने तथा न्याय करने हेतु प्राचीन रोमनों की भांति यहां एकत्र हैं, और हम इस या उस पार्टी से अपने को नहीं जोड़ सकते । फिर प्रत्येक

वात इस पर निर्भर करती है कि आप किसी चीज को किसी कोण से देख रहे हैं, जो चीज किसी समूह या समाज के वास्तविक लाभ की दिखती है वह अन्ततोगत्वा अनिवार्यतः सभी के लिए हितकारी होती है । मुख्य बात यह है कि समस्या पर आप किस भांति विचार करते हैं । या मैं कहूं कि क्या आप में नाक से आगे तक देख सकने की क्षमता है । जहां तक इस फैक्ट्री विशेष का सम्बन्ध है यह अनेक वर्षों से भारी कठिनाइयों में फंसी हुई है । यू०पी० ग्लास वर्क्स ने ग्लास-प्लेट और खिड़कियों के शीशे बनाने का प्रथम प्रयोग 1923 में किया था । (उस समय), कम्पनी को यू०पी० सरकार से एक लाख रुपये का ऋण भी प्राप्त हुआ था किन्तु कम्पनी अपने प्रयोग में विफल रही और धन बर्बाद हो गया । लेकिन विफलता से न घबड़ाकर कम्पनी ने पुनः एक प्रयास किया, इसका उत्पादन 1929 में आरम्भ हुआ । प्रसन्नता की बात है कि वह अभी भी जारी है और तब से उसका दैनिक उत्पादन क्रमशः अधिक होता गया है । लेकिन अन्य अनेक कम्पनियों की भाँति इसे भी घोर जापानी प्रतियोगिता का सामना करना पड़ा है । पिछले तीन वर्षो में जापानी माल की आयात-मात्रा और मूल्य में लगभग पाँच सौ प्रतिशत की वृद्धि हुई है । ऐसे परिणाम पर पहुँचने सम्बन्धी आँकड़े देकर मैं सदन को परेशानी में नहीं डालूँगा । वर्तमान में कांच सामग्री के आयात बाजार के 52 प्रतिशत पर जापान का कब्जा है, इसका अर्थ हुआ कि अन्य सभी देशों से जो प्लेट-ग्लास आयात होता है वह जापान से होने वाले आयात से, कम होता है । मान्यवर, जापान इस देश की बाजार को सस्ते माल से पाट रहा है और जिस प्लेट-ग्लास को जापान इस देश में भेजता है वह कलकत्ता और बम्बई की बाजार में पाँच रुपये प्रति 100 घन फुट की दर से प्राप्त है । तीन वर्ष पहले तक यही माल आठ या नौ रुपये प्रति 100 घन फुट की दर से प्राप्त था । परिणामस्वरूप कठिनाइयों में भारी वृद्धि हो गयी है और जब तक शासन सहायता नहीं करता, जो उसे करनी चाहिए, यू०पी० ग्लास वर्क्स सम्भवतः अपने उद्योग को जारी नहीं रख सकता है । भारत सरकार, जिसे मैं सम्भवतः अपनी या हमारी सरकार नहीं कह सकता, विदेशियों की सरकार जिसे भारत सरकार कहा जाता है, ने यह मामला 1931 में प्रशुल्क (टैरिफ) बोर्ड को भेजा था । उसे बोर्ड की रिपोर्ट 1932 में प्राप्त हो गयी थी । अब हम 1935 में पहुँच गये हैं लेकिन सरकार अभी तक उसका मनन ही कर रही है । मुझे ज्ञात नहीं कि वह इस सिलसिले में क्या करना चाहती है । माननीय वाणिज्य सदस्य सदन में उपस्थित नहीं हैं, मेरी किसी रूप में भी यह शिकायत नहीं है कि उनमें विनम्रता का अभाव है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – किसी आवश्यक कार्यवश उन्हें सदन में जाना पड़ा है और मेरा विश्वास है कि वह किसी क्षण भी वापस आ सकते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – यह बात दुर्भाग्यपूर्ण है कि कोई अन्य आवश्यक कार्य

उनकी यहाँ उपस्थिति में बाधक सिद्ध हुआ किन्तु यह तथ्य अपनी जगह पर कायम है कि वाणिज्य विभाग इस उद्योग को सहायता प्रदान करने में अभी तक असमर्थ रहा है ।

अब मैं सरकार से जानना चाहता हूँ कि उसकी योजना क्या है? ऐसा कहना तो व्यर्थ है कि उस उद्योग को कन्वेंशन अंगीकार नहीं करना चाहिए । मान्यवर, कन्वेंशन के सम्बन्ध में भी मैं यह जानना चाहूँगा कि इसकी वास्तविक संवैधानिक स्थिति क्या है? हमें हाल ही में इण्डो-ब्रिटिश (ट्रेड) समझौता और संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट पर सरकार द्वारा पेश किए गए प्रस्तावों पर लम्बे और पूर्णतः बेकार के वाद-विवाद का परेशानी में डालने वाला स्वांग देखने को मिला था । सदन ने इण्डो–ब्रिटिश समझौते को नामंजूर कर दिया था । सरकार ने अपनी पहल पर सदन का निर्णय चाहा था और जब सदन ने उसकी पूर्व कल्पना के विपरीत निर्णय दिया तो उसने इसकी पूर्णरूपेण उपेक्षा कर दी । तब फिर सरकार ने संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट पर विचार करने का प्रस्ताव रखा । सदन ने सुनिश्चित रूप से अपनी सुस्पष्ट राय निर्धारित की । ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार उसकी रत्ती भर भी परवाह नहीं करती जैसा कि हाउस आफ कामन्स में पेश बिल की प्रगति से आभासित है । मैं नहीं जानता, सरकार इस कन्वेंशन सम्बन्धी प्रस्ताव के सिलसिले में क्या करना चाहती है । मैं उद्योग तथा श्रम सदस्य से यह जानना चाहता हूँ कि (इस मामले में भी) सदन की राय के साथ वैसा ही शिष्ट व्यवहार प्रदर्शित किया जायेगा जैसा कि इण्डो-ब्रिटिश समझौते या संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट के सिलसिले में किया गया था? इसमें केवल विनम्रता का अभाव ही नहीं वरन् शिष्टता का अभाव भी लक्षित होता है । इस प्रकार इरादतन नहीं तो इस बोध के साथ जानबूझकर चपत लगाया गया है कि जिसे चपत लगा है उसको अपमानित और आहत किया जा सके । यदि हमारी राय का कोई मूल्य ही नहीं तो फिर सदन के सम्मुख ऐसे प्रस्ताव लाने का मतलब ही क्या है? यदि हमारी राय पर गौर नहीं किया जाना है तो सदन का समय क्यों बरबाद किया जाय? मैं माननीय उद्योग तथा श्रम सदस्य तथा सरकारी पक्ष के अन्य सदस्यों से सम्मान तथा आदरपूर्वक पूछना चाहता हूँ; मैं सदन के नेता से पूछना चाहता हूँ कि वह इस विषय में क्या सोचते हैं; कि क्या हमारे निर्णयों पर कार्यवाही की जायेगी या फिर यदि यह सरकारी दृष्टिकोण से मेल नहीं खाता तो क्या इसे भी उठाकर फेंक दिया जायगा?

मान्यवर, जहाँ तक प्रस्ताव का सम्बन्ध है, मेरी स्थिति स्पष्ट है । यू०पी०

ग्लास वर्क्स के आरम्भ, विकास, कठिनाइयों तथा व्याकुलता की रूपरेखा मैं प्रस्तुत कर चुका हूँ । अपने श्रम की प्रक्रिया के दौरान श्रमिकों द्वारा 56 घंटे तक श्रम करने की बात हमारी समझ में नहीं आती । मेरे माननीय मित्र श्री क्लो इसे केवल गणित का प्रश्न मानते हैं जो वैज्ञानिक विलगता, उदासीनता और भावना से मनन योग्य है और कदाचित् गणित की भाँति तिरस्कार की....

श्री ए०जी० क्लो – क्या मैं एक व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दे सकता हूँ? मैं समझता हूँ कि यह अनुचित आलोचना है । मैंने कहा था कि 56 घंटे और 42 घंटे की बात अंकगणित का सवाल है और आपको 56 घंटे और 42 घंटे के बीच में चुनना है । मैंने यह सुझाव नहीं दिया कि इस बात का सम्बन्ध गणित से है और न मैं इसे तिरस्कार या किसी अन्य प्रकार की दृष्टि से देखता हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – हम जिस पर विचार कर रहे हैं उसका एक प्रकार से संबंध काम करने के घंटों की संख्या से है और संख्या का सम्बन्ध निश्चित रूप से गणित से है । उन्होंने अभी दुहराया है कि उन्होंने इससे अधिक कुछ नहीं कहा कि 42, 48 और 52 का गणित से संबंध है । मैं केवल यही कहना चाहता हूँ कि गणित सम्बन्धी इन प्रतीक अंकों और संख्याओं का क्या आशय है, उन्होंने इसकी अवहेलना कर दी ।(हर्षध्वनि) यह मानवता का प्रश्न है, यह उचित बर्ताव का प्रश्न है, यह शक्तिशाली के विरुद्ध निर्बल की रक्षा करने का प्रश्न है, यह श्रमिकों के शोषण और उत्पीड़न को रोकने का प्रश्न है । मान्यवर, ऐसे दृष्टिकोण से इस प्रश्न पर विचार किया जाना चाहिए क्योंकि इस प्रक्रिया में कुछ संख्याएँ सम्मिलित हैं इसीलिए यह शुष्क गणित की पहेली बनकर नहीं रह जाता । मान्यवर, मैं चाहूँगा कि सदन को जो बात समझनी चाहिए वह यह है : जिस भट्ठी का तापमान शायद ही कभी 200 सेंटीग्रेड से नीचे होता हो, उसके पास निरन्तर कांच का फूँकना स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले प्रश्न से सम्बद्ध है....

माननीय सर फ्रेंक नाइस – माननीय सदस्य दो भिन्न प्रक्रियाओं के मामले में गड़बड़ा रहे हैं । हम स्वचालित ढंग से निर्मित होने वाले ग्लास शीट पर विचार कर रहे हैं । काँच का फूँकना एक बिल्कुल अन्य प्रकार की प्रक्रिया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं इस तथ्य से अनभिज्ञ नहीं हूँ । मैं तो यह कह रहा था कि जिस खास फैक्ट्री का मैं उल्लेख कर रहा हूँ वहाँ ग्लास शीटों का निर्माण काँच की अन्य वस्तुओं के निर्माण स्थल पर ही होता है क्योंकि यह कम्पनी केवल प्लेट-ग्लास पर ही ध्यान केन्द्रित नहीं करती वरन् काँच के पोले सामान भी निर्मित करती है । अत: अन्तर की कोई बात पैदा नहीं होती । यदि माननीय श्रम एवं उद्योग सदस्य के पास कोई ऐसी सूचना है जो मेरे कथन के विपरीत हो तो मैं स्वागत करूँगा और उन्हें मेरी गलती सुधारने का अवसर प्रदान करूँगा ।

माननीय सर फ्रेक नाइस – चाहे तथ्य वैसे ही हों जैसे मेरे माननीय मित्र ने बताये–और उनकी सत्यता पर मुझे जरा भी सन्देह नहीं है–लेकिन जिस कन्वेंशन की हम बात कर रहे हैं वह उद्योग के शीटग्लास अंग पर ही लागू होता है । यदि हम कन्वेंशन की सम्पुष्टि करते हैं तो कोई भी बात ऐसी नहीं जो हमें फैक्ट्री के अन्य उत्पादन कार्यों पर भी इसे लागू करने पर बाध्य करे । मैं समझता हूँ कि स्थिति यह है कि फैक्ट्री के जिस काम में सबसे कम कठिनाई होती है अर्थात् आटोमेटिक ग्लास शीट उसमें 42 घंटे के सप्ताह का नियम और कांच फूँकने तथा अन्य कार्यों के मामले में सप्ताह में 56 घंटे काम करने का नियम लागू होगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – यदि माननीय सदस्य इस सिद्धांत को काँच–उद्योग के अन्य विभागों पर भी लागू करने सम्बन्धी कोई प्रस्ताव प्रस्तुत करते हैं तो मेरी उनसे कोई कलह नहीं है और मैं उन्हें ऐसा करने के लिए आमंत्रित करता हूँ । अतः इस मुद्दे पर मेरे उनके बीच कोई मसला नहीं । उद्योग के लिए जिस विशेष अंग पर हम विचार कर रहे हैं यदि उसके सम्बन्ध में वह हमारे सुझाव को स्वीकार कर लेते हैं तो अन्य मामलों में हम किसी प्रकार का विवाद खड़ा नहीं करेंगे । इस हालत में भी जबकि वह कुछ उत्तेजित दिखलाई देते हैं, मैं उनके साथ समझौता करने को तैयार हूँ–मुझे आशा है कि अब वह उत्तेजित नहीं है ।

मान्यवर, मैं आपसे कह रहा था कि इस मामले में श्रमिकों को सुरक्षा प्रदान करने का प्रश्न महत्व का है और मैंने आपके सम्मुख जो तथ्य प्रस्तुत किए हैं उनसे आपको आश्वस्त हो जाना चाहिए कि जब तक कि सेवायोजकों पर किसी प्रकार के प्रतिबन्ध नहीं लगाये जाते, परिस्थितिजन्य आवश्यकता तथा तथ्यों की कठोर तार्किकता उन्हें अवसर देगी कि वे श्रमिकों से यथासम्भव लाभ उठा सकें । मेरे ख्याल से इसका स्पष्ट तरीका है और वह यह है कि सरकार को सेफगार्डिंग एक्ट के अधीन या अन्य प्रकार से कार्यवाही करनी चाहिए, लेकिन उन्हें इस फैक्ट्री को उचित सहायता भी प्रदान करनी चाहिए अन्यथा इसका खात्मा सुनिश्चित है । ऐसा एक सुझाव उद्योग एवं श्रम सचिव – मेरा ख्याल है कि श्री क्लो का यही पदनाम है– ने पेश किया था जिसमें उन्होंने कहा था कि श्रमिकों को संरक्षण प्रदान करने का विचार उद्योग को संरक्षण देने के विचारों से मिला दिया जाय तो यह राज्यकोषीय अर्थ-व्यवस्था के लिए अनिष्टकारी होगा । मैं नहीं जानता कि वह इस प्रकार कैसे सोचते हैं । मेरा तो अपना यह विचार है कि सरकार का मुख्य कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह जब कभी किसी उद्योग को किसी प्रकार की सहायता प्रदान करे तो इस बात पर ध्यान रखे कि उद्योग में लगे श्रमिकों को पसीना-पसीना नहीं किया जाता है तथा कल्याणकारी नियमों को पूर्णरूपेण लागू किया जाता है । उपभोक्ताओं की

कीमत पर मुनाफा कमाने के लिए—तथा मैं यह भी कह सकता हूँ कि— श्रम शक्तियों के साथ दुराचार करने के लिए राज्य सहायता प्रदान नहीं कर सकता । सरकार का तात्पर्य ऐसे उद्देश्य से नहीं है । उसे एक नैतिक उद्देश्य के लिए समर्पित होना चाहिए और उद्योग को सुरक्षा प्रदान करने के साथ इसे श्रमिकों के आचरणों, स्वास्थ्य और कल्याण के साथ-साथ उनकी शारीरिक कुशलता को सुरक्षा भी प्रदान करनी चाहिए । अतः मेरा विनम्र निवेदन है कि प्रस्तुत समस्या का हल इस भाँति निकल सकता है कि इस उद्योग को यथेष्ट सहायता प्रदान की जाय और इसी के साथ प्रबन्धकों तथा कम्पनी पर यह शर्त लागू की जाय कि वे श्रमिकों से सप्ताह में 48 घंटे से अधिक काम नहीं ले सकेंगे । मान्यवर, मैं समझता हूँ कि गणित-पहेली भी हल हो सकती है । यदि इच्छा है तो उपाय भी प्राप्त हैं और यह कोई असाध्य स्थिति नहीं है । मान्यवर, मैं कुछ अधिक नहीं कहूँगा । मैं आशा करता हूँ कि सरकार इस कम्पनी को यथेष्ट सहायता प्रदान करेगी और यहां कार्यरत श्रमिकों की सुरक्षा के लिए आवश्यक उपाय अपनायेगी ।

माननीय सर फ्रेंक नाइस – मान्यवर, यदि मैंने क्षण भर के लिए भी वाद-विवाद में काँच फूँकने वाले कारखाने के तापमान का समावेश किया हो तो मैं अपने माननीय मित्र पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त से अवश्य क्षमा-याचना करूँगा । जो उनकी (पंडित पंत की) अपेक्षा मुझे ज्यादा अच्छी तरह जानते हैं । उन्हें ज्ञात है कि मेरे काम करने का ऐसा ढ़ंग नहीं है, लेकिन आज मैं डाक्टर के निर्देशों की अवहेलना करते हुए भी सदन में उपस्थित हुआ हूँ, इतना ही कारण मैं पेश कर सकता हूँ ।

मैं नहीं समझता कि जो कुछ मैं अपने भाषण के आरम्भ में ही कह चुका हूँ या माननीय मित्र श्री क्लो ने कन्वेंशन की सम्पुष्टि के विरुद्ध जो व्याख्या की है उसमें मुझे और कुछ जोड़ना है । फिर भी वाद विवाद के दौरान एक या दो मुद्दे उठे हैं, जिन पर मैं टिप्पणी करना चाहूँगा । एक श्री जोशी का वह वक्तव्य है जिसमें उन्होंने कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय, इसके कन्वेंशनों और संस्तुतियों के प्रति 1929 से हमारे दृष्टिकोण में परिवर्तन आ गया है । मैं सुनिश्चयात्मक रूप से कह सकता हूँ कि इस प्रकार के तर्क का जरा सा भी आधार नहीं है । हुआ यह है कि जब अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय ने श्रम क्षेत्र की समस्याओं से उलझना आरम्भ किया था तो उन दिनों के जो मोटे-मोटे सिद्धांत स्पष्टतः प्रकट थे वे सब बाद को कमोवेश हल हो गये । अब श्रम कार्यालय—यदि मुझे ऐसा कहने की अनुमति हो— अनेक क्षेत्रों में ऐसे शोधन कार्यों में व्यस्त हैं जो भारतीय स्थिति की बजाय पश्चिमी देशों के लिए अधिक उपयुक्त है । यदि मैंने यही सुना है तो मेरे मित्र माननीय पंडित गोविन्द

बल्लभ पंत ने हमें अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय में हैलोट के समान बताया गया था या उन्होंने ऐसा लीग आफ नेशंस के सिलसिले में कहा था?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – आप नहीं, हम भारतीय हैलोट्स ।

माननीय सर फ्रेंक नाइस – मैं उन्हें इंगित करना चाहूँगा कि जहाँ तक अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय का सम्बन्ध है भारत के प्रतिनिधि अन्य देशों के ब्रिटिश राष्ट्र मंडल के अन्य सदस्य देशों के साथ पूर्ण रूप से समान आधार पर मिलते हैं और मैं अपने तर्क के सम्बन्ध में एक उदाहरण दूँगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – जहां तक भारत सरकार के प्रतिनिधियों का प्रश्न है मैंने कोई विपरीत बात नहीं कही । मेरा मुद्दा भिन्न था ।

रेलवे और उसका प्रबन्धतंत्र

मान्यवर, मैं प्रस्ताव करता हूं कि "विविध-व्यय शीर्षक के अधीन प्रस्तुत मांग में दस रुपये की कटौती कर दी जाय ।"

मान्यवर, मैं रेलवे प्रशासन के कतिपय प्रधान पहलुओं पर बोलूंगा । मेरा इरादा अपने को वित्तीय प्रश्नों तक ही सीमित रखने का है और मैं यथासम्भव प्रस्तुत मुद्दों पर आर्थिक आधार पर हर तर्क प्रस्तुत करूंगा । इस मामले में किसी प्रकार का दुराग्रह या आवेश समाविष्ट करने का भी मेरा कोई इरादा नहीं है । मैं आशा करता हूं कि इस सदन के प्रत्येक माननीय सदस्य इस प्रश्न पर आवेशरहित हो विचार करेंगे और जिस प्रस्ताव को पेश करने का मुझे अवसर मिला है उसका समर्थन करेंगे । मैं सर्वप्रथम इस बात पर बल देना चाहता हूं कि रेलवे प्रशासन युक्तिसंगत और लाभकर होना चाहिए । मेरा मत है कि वर्तमान व्यवस्था संतोषजनक नहीं है और इसके विभाग का जैसा प्रबन्ध तथा विनियमन है उसे सुदृढ़ अथवा वित्तीय और व्यावसायिक अर्थनीति के नियमों के अनुकूल चलने वाला नहीं माना जा सकता । मान्यवर, रेलवे व्यवस्था के दो प्रमुख अंग हैं—एक ओर टिकट दर और माल भाड़ा है दूसरी ओर कार्यचालन व्यय है । रेलवे इन्हीं दो पहियों पर टिकी है, और ये दोनों ही बाजार भाव के सामान्य स्तर पर टिके होते हैं । एक प्रकार से ये दो नौकाएं हैं, एक का सम्बन्ध टैरिफ रेट, टिकट रेट और माल भाड़ा रेट से है तो दूसरी का सम्बन्ध खर्च से है, और दोनों को बाजार भाव के स्तर पर ही तैरते रहना चाहिए । तुल्यभारता बनाये रखने के उद्देश्य से जब कभी बाजार भाव का स्तर ऊपर उठे, इन्हें भी अवश्य ऊपर उठ जाना चाहिए और जब बाजार भाव नीचे गिरे, इन्हें भी नीचे आ जाना चाहिए । यह एक मूल मुख्य सिद्धांत है जिस पर रेलवे प्रशासन को चलना चाहिए, लेकिन विगत 5 वर्षों का इतिहास इंगित करता है कि रेलवे प्रशासन इस मार्ग पर नहीं चला है । मान्यवर, मैं जो कुछ कह रहा हूं वह अकेले एक उदाहरण से स्पष्ट हो सकता है । जब गेहूँ पांच रुपये बिक रहा हो तो लाहौर से करांची या कलकत्ते तक माल भाड़ा एक रुपया प्रतिमन उचित माना जा

"31 मार्च,1935 को समाप्त होने वाले वर्ष के दौरान गवर्नर जनरल इन काउंसिल को विविध व्यय की मद में भुगतान करने के लिए अधिकतम 12,50,000 की धनराशि स्वीकृत की जाय" प्रस्ताव पर 23 फरवरी. 1935 को दिया गया भाषण ।

सकता है लेकिन जब गेहूं दो रुपये बिकता हो तब उसी दर को कायम रखना या उसमें वृद्धि करना विनाशकारी हो सकता है । मान्यवर, प्रश्न केवल टिकट दर और मालभाड़ा का ही नहीं है वरन् इससे सम्बद्ध प्रश्न रेलवे कार्यों पर किये गये या सम्मिलित किये गये व्यय का भी है । कुछ समय पूर्व जैसी स्थिति थी उस पर विचार करने से पूर्व मैं कुछ वर्ष पहले का सर्वेक्षण प्रस्तुत करना चाहूंगा ताकि सदन के सम्मुख यह सिद्ध कर सकूं कि रेलवे प्रशासन ने रेलवे प्रबन्ध के सिलसिले में जो कदम उठाये थे वे तर्कसंगत और व्यवसाय के जानेमाने सिद्धांतों के अनुरूप नहीं थे ।

मान्यवर, यह स्वीकार है कि पिछले पांच वर्षों से रेलवे हानि पर चल रही है । हानि 72 करोड़ की है । मैं इससे अनुबंधित वह अदत्त राशि भी जोड़ लेता हूं जिसे सामान्य राजस्व के खाते में जमा होना था । इस मद में रेलवे को अभी भी 20 करोड़ रु० अदा करने हैं । इसके अतिरिक्त मूल्यह्रास कोष में कमी हो गयी है, रेलवे बजट को खर्च कर दिया गया है और स्टोर बैलेंसों की धनराशि जो कुछ वर्ष पहले काफी अधिक थी, अब समाप्त हो गयी है । यह रेलवे के पिछले पांच वर्षों के कार्य-सम्पादन का परिणाम है । जहां तक बजट वर्ष का सम्बन्ध है, बजट लगभग दो करोड़ रुपये के घाटे का इंगित करता है । लेकिन वास्तविक घाटा लगभग आठ करोड़ रुपये से कम न होगा क्योंकि यदि बजट में प्रदर्शित वास्तविक घाटे में वह धनराशि भी सम्मिलत कर दी जाय तो सामान्य राजस्व के खाते में अंशदान के रूप में दी जानी है तो हम देखते हैं कि घाटा आठ करोड़ से कम न होगा । यदि मूल्यह्रास कोष के सिलसिले में नयी प्रणाली न अपनायी जाती तो घाटा और भी अधिक बढ़ जाता । जो धन पिछले वर्ष ह्रास–मूल्य कोष में जमा किया गया था और जितना इस वर्ष जमा करने का प्रस्ताव है उसके बीच 45 लाख रु० का अन्तर है । यदि इस कोष की गणना के लिए पुरानी प्रणाली को अगले वर्ष के बजट के लिए भी अपनाया जाता तो घाटा और भी अधिक होता । मैं समझता हूं मैंने जो टिप्पणी की है उससे, भाषण के प्रारम्भ के मेरे पूर्व कथन के सम्बन्ध में कोई सन्देह शेष नहीं रह जायेगा । संक्षेप में, पिछले पांच वर्षों में रेलवे 72 करोड़ रुपये के शुद्ध घाटे पर चल रही थी और रेलवे द्वारा सामान्य राजस्व को 26 करोड़ रु० का ऋण अदा करना है, तथा बजट वर्ष का घाटा आठ करोड़ रुपये से कम न होगा । ये निर्विवाद तथ्य है । माननीय रेलवे सदस्य ने कहा है कि अब स्थिति में सुधार हो रहा है । उन्होंने अपने भाषण के दौरान जो कहा और हमारे सम्मुख जो कागजात रखे गये हैं उनका उद्देश्य ऐसा प्रभाव डालना है कि उन्होंने हालात पर काबू पा लिया है और स्थिति में परिवर्तन आ गया है । वास्तव में यह भी सत्य बात नहीं है । इसका

आधारभूत सिद्धांत क्या है? यदि हम पांच वर्ष और पीछे चले जायें तो हमें ज्ञात होगा कि दस वर्ष पहले जो वित्तीय स्थिति थी आज उससे भी अधिक खराब है । मैं 1924-25 से अधिक पीछे नहीं जाऊंगा क्योंकि इसी वर्ष में लेखे की नयी प्रणाली और सामान्य बजट से रेलवे बजट को अलग करने की व्यवस्था लागू की गयी थी । अतः 1924-25 से पहले के समय से तुलना करना ठीक नहीं होगा । जब से नयी लेखा-प्रणाली आरम्भ हुई थी उस 1924-25 को आधार वर्ष मान लिया जाय तो हमें क्या ज्ञात होता है? हम देखते हैं कि जब कि रेल-पथों का विस्तार हुआ रेलप्राप्तियों (आय) में कमी आयी है, लाभ राशि घाटे में परिवर्तित हो गयी है, प्रति करोड़ रुपये की ब्याज देय पूंजी पर शुद्ध आय में कमी आ गयी है और प्रतिमील आय में भी कमी हुई है । तुलना को केवल प्राप्त धनराशियों तक ही सीमित रखना उचित नहीं है जैसा कि माननीय वित्त सदस्य ने किया है । हमें इस सम्बन्ध में विभिन्न वर्षों की ब्याज देय पूंजी और सरकार के स्वामित्व वाले रेलवे मार्गों की लम्बाई पर भी ध्यान देना होगा, चाहे इनका प्रबन्ध स्वयं सरकार के हाथों में हो या कम्पनियों के । वास्तव में हम देखते हैं कि ब्याज देय पूंजी में लगभग 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई और 1924-25 तथा बजट वर्ष के बीच की अवधि में रेलवे लाइनों की लम्बाई में भी लगभग इतनी ही वृद्धि हुई है, किन्तु प्राप्तियों में लगभग दस प्रतिशत की कमी आ गयी है । वर्ष 1924-25 में यह (प्राप्तियां) लगभग 100 करोड़ रुपये थी जब कि बजट वर्ष में इनके 90 करोड़ रुपये के आसपास होने का अनुमान है । दूसरी ओर हम देखते हैं कि कार्यचालन-व्यय वास्तव में 1924-25 से अधिक हो गया है, इसमें ह्रास मूल्य प्रभार को सम्मिलित कर लिया जाय तो पता चलता है इस वर्ष कार्यचालन-व्यय में 1924-25 की अपेक्षा लगभग पांच प्रतिशत की वृद्धि हो जायेगी । इसके अतिरिक्त हमें एक अन्य महत्वपूर्ण तथा आवश्यक मुद्दे पर भी विचार करना चाहिए और इस पर समुचित जोर दिया जाना चाहिए । वर्ष 1924-25 में सामान्य बाजार भाव सूचकांक 230 था जब कि चालू वर्ष में सामान्य बाजार भाव सूचकांक 130 है । कीमतों में जो भारी कमी आयी है उसे ध्यान में रखते हुए, मैंने जो कुछ कहा है वह और भी शोचनीय, प्रभावकारी और महत्वपूर्ण हो जाता है और इस देश में रेलवे की अमितव्ययी, अवैज्ञानिक और विचार रहित प्रशासन प्रणाली को भलीभाति प्रदर्शित करने वाला है । मान्यवर, जब बाजार भावों में 50 प्रतिशत की कमी आ गयी थी तब रेलवे प्रशासन को अपने व्यय में तदनुरूप कमी करनी चाहिए थी । इसके अनेक उपाय थे, यथा समामेलन और समूहण, मानकीकरण, स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहन, उत्पादन तथा स्टोर्स और अन्य कार्य, लेकिन इस समय मैं समस्या के इन पहलुओं पर कुछ नहीं कहूंगा । यहां मेरा सम्बन्ध एक खास पहलू से है और वह है वेतन बिल में कमी सम्बन्धी । कम वेतन

भोगियों के प्रति सहानुभूति को मैं समझ सकता हूं, जो 200 रु० या 300 रु० से अधिक वेतनभोगी नहीं हैं उनको सहायता देने की बात तो समझ में आती है लेकिन वर्तमान दिवालियापने की स्थिति में कोई भी स्वस्थचित्त व्यक्ति हजारों रुपये पाने वालों के वेतनों की पुनर्स्थापना के प्रस्ताव को और साथ ही 'ली' आयोग द्वारा प्रस्तावित सुविधाओं, समुद्र पार वेतन और यात्रा-व्यय को कैसे उचित ठहरा सकता है? जो सरकार या प्रशासन विगत पांच वर्षों में 72 करोड़ रुपये का घाटा उठा चुका है और जिसे बजट वर्ष में लगभग आठ करोड़ रुपये का घाटा उठाना हो वह कैसे व्यक्तियों के वेतनों को बहाल करने या की गयी कटौतियों को समाप्त करने को उचित सिद्ध कर सकता है जो हजारों रुपये प्रतिवर्ष और किन्हीं मामलों में प्रतिमाह पाते हैं । मान्यवर, मैं समझता हूं कि आपको ज्ञात है कि इंग्लैण्ड में लोक सेवकों को कितना वेतन मिलता है । प्रधानमंत्री को भी 4000 पौंड से अधिक नहीं मिलता ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग (वित्त सदस्य) – नहीं, यह राशि 4,500 पौंड है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – प्रारम्भ में उनका वेतन 5,000 पौंड था और कटौती किये जाने के उपरान्त कुछ माह पहले तक यह 4,000 पौंड था और जब आधी कटौती को समाप्त कर दिया गया तो यह 4,500 पौंड हो गया था । वर्तमान विनिमय दर के आधार पर 4,000 पौंड का मूल्य लगभग 4,400 रुपये प्रति माह के समतुल्य है । इंग्लैण्ड के यातायात मंत्री का कितना वेतन है? यह 1,700 पौंड है । यातायात विभाग के संसदीय सचिव को 1,080 पौंड मिलता है । ये वे वेतन दरें हैं जो इंग्लैण्ड जैसे धनी देश के, सभी प्रकार की विशाल मशीनों, यातायात के साधनों एवं माध्यमों के इंचार्ज व्यक्तियों को प्राप्त हैं । मान्यवर, यह भी ध्यान में रखा जाय कि यद्यपि पिछले बजट में लाभ दिखाया गया, फिर भी कटौती में 50 प्रतिशत से अधिक की बहाली नहीं की गयी । लेकिन यहां मेरे माननीय मित्र रेलवे सदस्य ऐसी भारी घाटे की स्वीकारोक्ति, जिसे सत्य मानना ही पड़ता है, के बाद भी ऐसा प्रस्ताव पेश कर रहे हैं कि वेतन में की गयी पूरी कटौती राशि को बहाल कर दिया जाय । जिन 47,000 लोगों को नौकरियों से हटा दिया गया है और जिन्हें फिलहाल जीवनयापन के कोई साधन प्राप्त नहीं हैं, उनकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं है । वह उन उच्च दरों व टैरिफों की बाबत नहीं सोचते जो व्यापार के अनुकूल नहीं तथा इस देश के वाणिज्य एवं व्यापार में अवरोध उत्पन्न करते हैं, लेकिन वह प्रस्ताव रखते हैं कि उन लोगों के वेतन जो हमारे अधिकार क्षेत्र के बाहर हैं और जिनके वेतन तोड़-मरोड़ कर बजट के पृष्ठों में दिये गये हैं, बढ़ा दिये जायं, और जो कटौतियां की गयी

नहीं हो सकती । मान्यवर, मेरा निवेदन है कि इससे अधिक मूर्खतापूर्ण और कोई बात नहीं हो सकती । मेरा निवेदन है कि इससे अधिक गैरजिम्मेदाराना और कोई बात नहीं हो सकती ।

श्री एम०एस० अणे – हृदयहीनता.....

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मेरे एक मित्र कहते हैं कि यह हृदयहीनता है । हाँ मान्यवर, औसत आय और राष्ट्रीय आय के संदर्भ में देखने पर यह बहुत ही क्रूर प्रकार की निर्दयता से कुछ कम नहीं है । मान्यवर, दुष्टता का यहीं अंत नहीं हो जाता । वस्तुत: उनकी (रेलवे की) सारी नीति अवैज्ञानिक और व्यवसाय प्रबन्ध के मान्य सिद्धांतों के विपरीत है । ऐसी हालत में कोई भी व्यापारी क्या करेगा । यातायात रोजगार में लगा कोई भी व्यक्ति आज क्या कर रहा है? एक स्थान से दूसरे स्थान तक भाड़े पर सामान ले जाने वाला व्यक्ति चाहे वह इसे पीठ पर या ऊंट पर या घोड़े पर रखकर ले जाता हो—क्या भाड़ा उसी रेट से चार्ज कर सकता है जिस रेट से पांच या दस वर्ष पहले करता था? क्या रेट हर जगह कम नहीं हो गये हैं? क्या जहाजरानी उद्योग के रेट हर स्थान पर कम नहीं हो गये हैं? क्या पी०एण्ड ओ० तथा अन्य जहाजी कम्पनियों के रेट घट नहीं गये हैं? इसके विपरीत सरकारी क्षेत्र की कैसी स्थिति है? मैं इसकी व्यापक व्याख्या नहीं करूंगा लेकिन मैं इतना कह सकता हूं कि आज प्रति मील प्रति यात्री जो किराया और प्रति मील प्रति टन जो माल भाड़ा वसूल किया जा रहा है वह इससे पांच छ: वर्ष पहले की दरों से अधिक है । मेरे पास इसके आंकड़े हैं लेकिन उनका विस्तृत ब्योरा देकर मैं सदन को कष्ट नहीं देने चाहता । माननीय वाणिज्य सदस्य ने कहा कि आज कल रेट कम हैं । मुझे उनके उस वक्तव्य पर आश्चर्य हुआ । मैं 'निर्लज्जता' शब्द का इस्तेमाल नहीं करूंगा । मैं आपके सम्मुख 1931-32 की रेलवे रिपोर्ट के पृष्ठ 19 के कुछ अंश पढ़कर सुनाऊंगा :

"आम व्यापार में मंदी के फलस्वरूप उनकी ट्रैफिक आय में जो कमी आयी है उसके यथासम्भव निराकरण हेतु प्रमुख रेलों ने अपना किराया और भाड़ा बढ़ा दिया है ।"
कोचिंग ट्रैफिक – पैसेन्जर ट्रेनों द्वारा यात्रियों को ले जाने की दशा में वृद्धि की गयी :–

(I) अनेक रेलवेज में सभी श्रेणियों में और कुछ अन्य में तृतीय श्रेणी में,

(II) लगेज और पार्सलों के संबंध में पहले से लागू दरों की तुलना में 15 प्रतिशत की वृद्धि की गयी ।

कुछ रेलवेज ने अपनी दी जाने वाली सुविधाओं में से भी कुछ उदाहरणार्थ सप्ताहान्त, अवकाश अवधि तथा अन्य रिजर्व टिकट सुविधाओं को वापस ले लिया ।

माल ट्रैफिक – माल गाड़ियों द्वारा ट्रैफिक ले जाने की दशा में अनेक प्रमुख रेलवेज ने 15 प्रतिशत अधिभार लागू कर माल-भाड़ा बढ़ा दिया । इसके अतिरिक्त रेलवेज ने अपनी-अपनी स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखकर ट्रैफिक की जांच-पड़ताल करने के बाद ऐसी अनेक अन्य सुविधाओं का भी भाड़ा बढ़ा दिया जिसे बढ़ी दर वहन करने में सक्षम समझा गया ।"

मान्यवर, कोई निष्पक्ष जज यह मानेगा कि सरकार द्वारा अपनाया गया तरीका देश के व्यापक हितों के विरुद्ध नहीं था? परिस्थितिजन्य आवश्यकताओं की क्या मांग थी? कीमतों में लगभग 50 प्रतिशत की कमी आ गयी थी, सभी व्यापार, सभी ट्रैफिक, सभी वाणिज्य सम्बन्धी कार्यकलाप व्यावहारिक रूप में जाम हो गये थे, देश में निष्क्रियता उत्पन्न हो गयी थी और राष्ट्रीय आय लगभग 50 प्रतिशत संकुचित हो गयी थी । ऐसे समय में सरकार ने कौन से उपाय बरते? ऐसे समय में कोई भी राष्ट्रीय सरकार क्या करती? ऐसी परिस्थितियों में सरकार का यह कर्तव्य था कि नहीं कि वह चार्ज किये जाने वाले माल भाड़े और यात्री-किराये दर में कमी करती? टैरिफ दर बढ़ाने से क्या वस्तुओं के आवागमन और वाणिज्य एवं व्यवसाय की प्रगति में अवरोध उत्पन्न नहीं होता? क्या यह औद्योगिक विकास के मार्ग में बाधक नहीं होता और जब मूल्यों में 50 प्रतिशत की गिरावट आ गयी हो और किराया-भाड़ा दरें बढ़ा दी गयी हों तो क्या यह स्वतः स्पष्ट नहीं है कि यह विकारयुक्त उलट-पुलट तथा मूर्खतापूर्ण व्यवस्था के अलावा और कुछ भी नहीं है? मान्यवर, मेरा निवेदन है कि सरकार इससे अधिक बिगाड़ का कोई अन्य कार्य नहीं कर सकती थी, ऐसी परिस्थितियों में वाणिज्य विभाग ने जो कुछ किया वैसा कोई शत्रु भी नहीं कर सकता था । पिछले दिन माननीय वाणिज्य सदस्य ने जो कुछ कहा था उससे सिद्ध होता है कि वर्तमान दरें निषेधात्मक हैं । उन्होंने बताया कि उन्होंने नार्थ वेस्टर्न रेलवे (उत्तर पश्चिमी रेलवे) की दरों में कुछ कमी कर दी थी परिणामस्वरूप तीसरी श्रेणी के यात्रियों की संख्या में 11 प्रतिशत की वृद्धि हो गयी थी । यह क्या दर्शाता है? यह सिद्ध करता है कि वर्तमान दरें भारतीय जनता की

सामर्थ्य से बाहर हैं । जब कभी भी माल-भाड़े में कमी की गयी, ट्रैफिक की मात्रा में वृद्धि हुई और एक स्थान से दूसरे स्थान को अधिक माल लाया-ले जाया गया । यह सिद्ध करता है कि वर्तमान दरें निषेधात्मक हैं और जब तक इन्हें कम नहीं किया जाता, घाटे में कमी नहीं आ सकती । हमारे सामने एक विशाल समस्या उपस्थित है । एक ओर तो बेरोजगारी हमारी ओर घूर रही है और दूसरी ओर औद्योगिक क्षेत्र की अस्तव्यस्तता है । और इस समस्या का सामना करने के–लिए हमारे शक्तिशाली शासक कौन से उपाय अपना रहे हैं? यहां मेरे मित्र माननीय वित्त सचिव बैठे हैं जिनका इंग्लैण्ड से आगमन ताजी घटना है, वह सरकार को यह बता सकेंगे कि ब्रिटेन में सरकार वहां के बेरोजगारों की सहायता, वृद्धावस्था पेंशन तथा ऐसे ही अन्य कार्यों हेतु प्रति वर्ष कितने लाख पौंड व्यय करती है । इस देश में वाणिज्य एवं व्यवसाय के प्रोत्साहन हेतु और किराये-भाड़े को सामान्य बाजार भाव के समतुल्य बनाये रखने के लिए सरकार क्या कर रही है? मैं चाहता था कि माननीय वाणिज्य सदस्य माननीय वित्त सदस्य से यह जानने के लिए कुछ समय निकाल पाते कि इस सम्बन्ध में अन्य देशों में क्या किया जा रहा है और इसके विपरीत यहां क्या किया जा रहा है?

श्री डी०के० लाहिड़ी चौधरी – वेतनों की भी तुलना की जाय ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मेरे माननीय मित्र लाहिड़ी चौधरी चाहते हैं कि मैं वेतनों की तुलनात्मकता प्रस्तुत करूं । मैं इसके लिए तैयार हूं । मान्यवर, मैंने अभी बताया था कि इंग्लैण्ड में यातायात मंत्री का वेतन लगभग 1700 पौंड है जो लगभग 2,000 रु० प्रतिमाह के समतुल्य है । मैं यह नहीं कहूंगा कि यहां वाणिज्य सदस्य का वेतन कितना है । मैं केवल रेलवे के प्रमुख अधिकारियों की चर्चा करूंगा । रेलवे कमिश्नर का वेतन 5,000 रु० है, रेलवे बोर्ड के प्रत्येक सदस्य का 4,000 रु० है, प्रत्येक एजेण्ट का लगभग 3,500 रु० । महोदय, ध्यान रखें यह वार्षिक नहीं, वरन प्रति माह वेतन है । मैं समझता हूं कि माननीय वाणिज्य सदस्य यह जानते हैं कि यहां का आम नागरिक इंग्लैण्ड के नागरिक की अपेक्षा 20 नहीं तो 10 प्रतिशत अधिक गरीब है और कदाचित् उन्हें यह भी ज्ञात है कि वह अमरीकी नागरिक की तुलना में अधिक नहीं तो 30 गुना गरीब है । वाणिज्य सदस्य जनता के हैं और उससे सम्बन्धित हैं, यही स्पष्ट कारण है कि वह वर्तमान पद पर आसीन हैं–लेकिन उन्होंने जो उपाय सुझाया है वह आश्चर्यजनक है । जिनके पास कुछ भी नहीं है या इस देशवासियों के पास जो कुछ भी थोड़ा-बहुत है उसे लेकर वह उन्हें अधिक वेतन देना चाहते हैं जिनके पास पहले से ही बहुत-कुछ है । वह उन गरीबों, और उन

क्लेशग्रस्त तथा क्षुधा-पीड़ितों की मुक्ति के रूप में कार्य करेगा? मान्यवर, यह है वर्तमान स्थिति । और सरकार ने नौकरियों में कमी और व्यय में कमी के कौन से तरीके अपनाये? उन्होंने उन सब कर्मचारियों के वेतन में जो 50 रु० या इससे अधिक पा रहे थे, दस प्रतिशत की कटौती कर दी । उनके ख्याल से सात या आठ हजार रु० वेतन 50 रु० वेतन के समतुल्य ही है । दुर्भाग्यवश जिसका कम आयु में ही विवाह हो गया हो, जिसके आधे दर्जन या एक दर्जन बच्चे हों, जो 20 वर्ष में भी एक कोट खरीद सकने में असमर्थ हो, ऐसे सबसे निचली श्रेणी के लिपिक के अल्प वेतन में भी उसी समानुपात में कटौती करना कहां तक उचित है जितनी उच्चतम स्थान पर आसीन हजारों रुपये प्रतिमाह पाने वाला कर्मचारी के वेतन में की जाये। इंग्लैण्ड में सरकार ने क्या किया था ? चार हजार पौंड या इससे अधिक वेतन पाने वालों के सम्बन्ध में 20 प्रतिशत कटौती कर दी गयी थी और इसके अतिरिक्त यह व्यवस्था भी की गयी थी कि यदि 20 प्रतिशत के बाद भी वेतन चार हजार पौंड से अधिक रहता है तो इतनी कटौती और कर दी जायेगी कि वह चार हजार ही रह जाय । दो हजार से चार हजार पौंड के बीच के वेतन पाने वालों के मामले में कटौती 15 प्रतिशत की गयी थी। एक हजार से दो हजार पौंड पाने वालों के वेतन में 10 प्रतिशत और दो सौ से एक हजार पौंड पाने वालों के वेतन में पांच प्रतिशत की कटौती की गयी थी और 200 पौंड से कम वेतन में किसी प्रकार की कटौती नहीं की गयी थी । वहां उन्होंने विभिन्न वर्गों की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं, संसाधनों और उपायों के बीच भेद रखा । जब अक्षमताओं का गट्ठर लादना होता है तो इसके लिए हमें ही चुना जाता है । शस्त्र अधिनियम केवल हमी पर लागू होता है । लेकिन जब रुपये पैसों में कटौती का अवसर आता है तो लोगों में विभेद किए बिना सबके साथ एक-रूपता और समानता का व्यवहार किया जाता है । यदि वेतन कटौतियों को बहाल करने के मामले में भेदभाव बरता जाता तो मुझे कोई शिकायत न होती यदि इस देश में घटाने-बढ़ाने की समान नीति अपनायी जाती तो वास्तव में कोई शिकायत न होती । जो लोग 200 रु० या 250 रु० या 300 रु० पा रहे थे उनके वेतनों में की गयी कटौतियों का कुछ अंश यदि बहाल कर दिया जाता तो मुझे कोई शिकायत न होती । जिन्हें पहले ही हजारों रुपये वेतन में मिल रहे थे और जिन्हें वस्तुओं के मूल्य के रूप में अब कम अदा करना पड़ेगा, उनकी कटौतियों को बहाल करने की सरकारी नीति का कौन समर्थन कर सकता है ? मुझे यकीन है कि सदन के माननीय सदस्यों ने 'ली आयोग' के प्रतिवेदन को देखा होगा । ली आयोग ने किन बातों पर अपनी संस्तुतियां आधारित की है । इसने वेतन वृद्धि की सिफारिश क्यों की है ? मेरे पास यह रिपोर्ट हैं, ये सिफारिशें विशेषत: और सारत: वर्ष 1919 और

1923 के बीच की मूल्य वृद्धि के एक मात्र मुद्दे पर आधारित हैं । कीमतें बढ़ने से मुद्रा के मूल्य में कमी आ गयी और फलतः आयोग और सरकार ने वेतनों में परिवर्तन करना आवश्यक समझा ताकि मूल्यवृद्धि से होने वाली क्षति की पूर्ति की जा सके । लेकिन अब जबकि कीमतों में अभूतपूर्व गिरावट आयी है तो हमसे बड़े निराले ढंग से कहा जाता है कि "हम एक पावन प्रतिज्ञा से बंधे हैं और हमें इसे पूरा करना है ।" वह पावन प्रतिज्ञा क्या है? मैं नहीं जानता...

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य ने आधा घंटे से अधिक का समय ले लिया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – तब मैं अपना भाषण समाप्त करता हूं । मुझे प्रदान किये गये अवसर के लिए मैं आभारी हूं । मेरा निवेदन है कि रेलवे प्रशासन विचारशून्य, राष्ट्रविरोधी और स्वयं रेलवे के व्यापक हितों के लिए हानिकारक है और सरकार ने विगत कुछ वर्षों में जो तरीका अपनाया है वह अविचारपूर्ण, मूर्खतापूर्ण और हानिकारक है ।

●

यातायात व्यवस्था का राष्ट्रीयकरण

वाद-विवाद के दौरान मुझे अनुभूति हुई कि कहीं हमें गलत न समझा जाय या (हमारी चुप्पी के) गलत अर्थ न लगाये जायं इसलिए आवश्यक है कि कुछ विचार प्रकट करूं । यदि अनुमति दी जाय तो मैं प्रस्तावक को उनके प्रभावशाली व्याख्यान के लिए बधाई देना चाहूंगा । यदि टैरिफ रेट और भाड़े में कमी लाने के उद्देश्य से यह प्रस्ताव सामान्य पुनरीक्षण हेतु पेश किया गया होता तो मैं इसका समर्थन करता क्योंकि इस मसले पर मेरी कुछ विशेष भावना है ।

बाबू बैजनाथ बाजोरिया – यह मेरी मांग है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – लेकिन यह आपका प्रस्ताव नहीं है । मेरे विचार से प्रस्तावक की शिकायत का आधार यह है कि देश के अन्दर बन्दरगाह से बन्दरगाह तक माल भाड़े की दरों में कमी कर दी गयी है और ये बन्दरगाह समुद्री मार्गों से जुड़े हैं । प्रतीत होता है कि यही उनके चार्ज का गम्भीर अंश है । मेरा ख्याल है कि मैंने उनकी बात का सही अर्थ लगाया है । वह समर्थन में सिर हिला रहे हैं इसलिए मैं मान लेता हूं कि उनके दोषारोपण का संक्षेप में यह तात्पर्य है । मैं प्रारम्भ में ही बता दूं कि इस सम्बन्ध में मेरा दृष्टिकोण न तो किसी दुराग्रह और न किसी प्रकार के लालच से ही प्रभावित है । मैं जानना चाहूँगा कि माननीय प्रस्तावक रेलवे की नीति के क्यों विरोधी हैं और उनकी असली शिकायत क्या है? क्या दरों में कमी होने से कच्चे माल के उत्पादकों को हानि पहुँची है । क्या दरों में की गयी इस कमी से व्यापारियों को हानि हुई है? क्या दरों में कमी से निर्यातकों को हानि पहुंची है ।...

श्री लालचन्द नवल राय – करांची (पोर्ट ट्रस्ट) का कहना है कि उसे हानि उठानी पड़ी है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – इनका कहना है कि करांची पोर्ट ट्रस्ट को अधिक मात्रा में माल प्राप्त होता तो वह अधिक आय अर्जित कर सकता था । लेकिन भारतीय

यह भाषण लेजिस्लेटिव असेम्बली में रेलवे बजट की मांगों की सूची पर बहस के दौरान 25 फरवरी 1935 को दिया गया था । पंत जी का प्रस्ताव था कि "विविध व्यय के मद में प्रस्तावित मांग को घटाकर 10 रुपये कर दिया जाना चाहिए ।"

जनता बन्दरगाहों के अनुरक्षण के निमित्त नहीं है । जनता की हित वृद्धि के लिए बन्दरगाह हैं । इन दोनों में किसे वरीयता दी जाय?

मान्यवर, मुझे यह मामला बड़ा सरल प्रतीत होता है । वास्तव में प्रतीत होता है कि प्रस्तावक की शिकायत यह है कि दरों को इस भांति नहीं तय किया गया है जिससे कि मालवाही जहाज उद्योग को संरक्षण मिलता । यदि यही दोषारोपण है तो दुर्भाग्यवश मैं उनसे सहमत नहीं हूं । वह एक निश्चित व्यवसाय के हित में और उस व्यवसाय में लगे व्यक्ति की हितपूर्ति हेतु एक राष्ट्रीय संगठन के विरुद्ध दरों का निर्धारण चाहते हैं । यदि मैंने उनके प्रस्ताव का सही अर्थ लगाया है, तो उन्हें अपनी स्थिति के सम्वन्ध में सफाई पेश करनी चाहिए ।

श्री एफ०ई०जेम्स – नहीं (आपने सही अर्थ नहीं लगाया) ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत– मैं आशा करता हूं कि वह और अधिक प्रकाश डालेंगे और मेरी गलती सुधारेंगे और अपने दिमाग को खुला रखने में मुझे प्रसन्नता होगी । लेकिन उन्हें मुझे संतुष्ट करना पड़ेगा कि मैं गलती पर हूं । मान्यवर, क्या प्रतिस्पर्धा में रेलवे द्वारा किसी को हानि पहुंचाने का यह पहला अवसर है? जब इस देश में पहली बार रेलें बिछायी गयीं थीं तब से अब तक का (40 वर्षों का) इतिहास क्या कहता है? क्या ऐसे लाखों व्यक्तियों को विस्थापित नहीं किया गया जो सामान लाने-ले जाने वाले उद्योग में लगे थे? रेलगाड़ी चालू होने से पहले स्थिति क्या थी? तब लोग बैलगाड़ियों, लद्दू घोड़ों तथा अन्य प्रकार के देशी साधनों व तरीकों से एक स्थान से दूसरे स्थान को माल ले जाते थे । उनमें से कितने उजड़ नहीं गये? उनमें कितने व्यावहारिक रूप में मर-खप नहीं गये । रेलों का व्यापक जाल बिछ जाने पर, इस देश में पहले से ट्रांसपोर्ट के काम में लगे लाखों लोग आर्थिक रूप में बरबाद हो गये । मैं इस मुद्दे पर और अधिक जोर नहीं देना चाहता क्योंकि ऐसा होना अनिवार्य था । दुर्भाग्यवश यातायात और उत्पादन का मशीनीकरण एक स्थायी वस्तु बन चुका है और उसका प्रभाव पड़ना भी अवश्यम्भावी है । क्या उधर बैठे माननीय सदस्यों को कभी यह भी महसूस हुआ कि भाड़े और किराये की स्पर्धा ने ही इस देश के विपन्न व्यक्तियों को और अधिक विपन्न बना दिया है और पूंजी निवेश पर व्याज के रूप में तथा रेलवे का साज-सामान क्रय करने में भारी धनराशि अनेक वर्षों से विदेश चली जाती रही है । प्रतिस्पर्धात्मक दरों से उत्पंन्न होने वाली कठिनाइयों का अनुमान पहले ही लगा लिया जाना चाहिए था । जिस प्रतियोगिता की शिकायत की गयी है वास्तव में वह सही प्रकार की (प्रतिस्पर्धा) है । एक

प्राइवेट कारपोरेशन के विरुद्ध राज्य के हितार्थ इस प्रकार की स्वस्थ प्रतियोगिता देश के व्यापक हित में लाभकारी और उचित है । मान्यवर, यह मत कि राज्य को निजी उद्योग के संघर्ष में नहीं आना चाहिए, पुराने युग के उन सिद्धांतों में से एक है जिनकी विश्वसनीयता वर्तमान में समाप्त हो गयी है । एक समय था जब कि अर्थविदों ने इस प्रकार की प्रस्थापनाएं पेश की थी लेकिन पिछले 30 वर्षों में, जब से जोजफ चेम्बरलेन ने बालफोर मंत्रिमंडल से अपना सम्पर्क तोड़ा, स्थिति में भारी परिवर्तन आ गया है । अब उनके पुत्र नेबिल चैम्बरलेन संरक्षण और इम्पीरियल प्रिफरेंस की नीति चला रहे हैं । आज राज्य सत्ता जनता के आर्थिक हितों की प्रतिनिधि (समझी जाती) है और राज्य सत्ता का यह सर्वप्रथम कर्तव्य है कि वह समस्त जनता के कल्याण को महत्ता प्रदान करे । ऐसी स्थिति में मान्यवर, मैं अनुरोध करूंगा कि माननीय सदस्यगण अ-हस्तक्षेप और प्राइवेट उद्योग को उन्मुक्त रखने की नीति के पुराने नारे से प्रभावित न हों । वास्तव में जब तक लाभ कमाने की भावना पर अंकुश नहीं लगाया जाता तब तक आज की दुनिया में प्रगति की कोई आशा नहीं की जा सकती ।

श्री एफ०ई० जेम्स – मुझे आशा है कि मेरे माननीय मित्र मुझे एक क्षण के लिए बाधा डालने की अनुमति देंगे । मैं समझता हूं कि वह अनजाने में ही मेरे माननीय मित्र श्री होसेक की बात का कुछ गलत अर्थ लगा रहे हैं और मैं पूर्णतः सुनिश्चित हूं–

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं समझता हूं कि श्री होसेक मेरी भूल का निवारण अधिक अच्छी प्रकार कर सकेंगे । आप उनकी बात का गलत अर्थ लगा सकते हैं ।

श्री एफ०ई० जेम्स – माननीय सदस्य की अपेक्षा मैं उनके विचार को अधिक अच्छी तरह समझता हूं ।

श्री एम०ए० जिन्ना – मान्यवर, क्या यह वास्तव में व्यवस्थानुकूल है–कोई अन्य सदस्य व्याख्या करे ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – नहीं । माननीय सदस्य (श्री होसेक) स्वयं व्याख्या कर सकते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – वास्तव में आज राज्य यातायात साधनों के

राष्ट्रीयकरण का पक्षधर है । यह एक ऐसा सर्वाधिक महत्व का कार्य है जिसका कोई भी सभ्य सरकार निर्वाह करती है, जिससे वाणिज्य एवं व्यापार को प्रोत्साहित किया जा सकता है । उसका प्रमुख तरीका यह है कि यातायात साधनों का राष्ट्रीयकरण कर दिया जाय । दूसरी ओर बैठे माननीय सदस्य यदि समुद्र व्यापार की उन्नति के लिए जहाजरानी उद्योग के राष्ट्रीयकरण हेतु तैयार हैं, तो मैं सरकार से अनुरोध करूंगा कि उसका अधिग्रहण कर लिया जाय ताकि इस देश में रेलवे और जहाजरानी उद्योग के बीच प्रतिस्पर्धा और संघर्ष एक दो दिन के लिए नहीं वरन् सदैव के लिए समाप्त हो जाय । मुझे आशा है कि वे इस सुझाव पर विचार करेंगे और विलम्ब हो जाने से पूर्व ही इस अस्थिरतापूर्ण व्यवस्था को समाप्त कर देंगे । आज दुनिया जनहित- उत्पादक और उपभोक्ता हित के अलावा किसी अन्य हित को नहीं स्वीकारती । यदि इन सब बातों को ध्यान में रखा जाय तो रेलवे को इस देश में ऐसी तर्कसंगत नीति अपनानी चाहिए जिससे उत्पादन आयात-निर्यात व्यापार को बढ़ावा मिल सके और यदि रेलवे ने ऐसी दरें लागू की हैं जिनसे देश के अन्दरूनी भागों से बन्दरगाहों तक, या बन्दरगाहों से देश के अन्दरूनी मांगों तक या एक बन्दरगाह से दूसरे बन्दरगाह तक सामग्रियों का लाना-ले जाना अधिक सुविधाजनक होता हो, तो उनकी नीति सही है और मुझे ऐसा कोई कारण नजर नहीं आता कि कोई भी सही ढंग से सोचने वाला व्यक्ति ऐसी ठोस तथा सही नीति के विरुद्ध शिकायत करे ।

मान्यवर, मैं सदन का और अधिक समय नहीं लूंगा । मैं दूसरी ओर बैठे माननीय सदस्यों को आश्वस्त करना चाहता हूँ कि हम रंगभेद की वजह से सही मार्ग से नहीं हटेंगे । वास्तव में हम द्वेष भावना उत्पन्न करने वाले सभी भेदभावों को इस देश से समाप्त कर देना चाहते हैं । यदि हमें जातिमूलक भेदभाव का प्रश्न उठाना होता है तो ऐसा हम रंगभेद के पक्षपातपूर्ण प्रश्न से बेजा लाभ उठाने के लिए नहीं करते हैं क्योंकि इस मामले में पासा हमारे खिलाफ है और हम ही इसके शिकार हैं । हमारे अन्दर किसी प्रकार की क्षुद्र भावना भी नहीं है और मैं प्रस्तावक तथा उनके ग्रुप को सलाह दूंगा कि यदि वह इस पुरातन देश के सच्चे नागरिकों की हैसियत प्राप्त करना चाहते हैं तो वे अपने समूह के स्वार्थों को इस देश की जनता के स्वार्थों में निहित कर दें ।

•

प्रमुख उद्योगों का राष्ट्रीयकरण

मान्यवर, इच्छा थी कि अपने को पूरी तौर से बजट तक ही सीमित रखूँ। परन्तु यह दुर्भाग्य की बात है कि माननीय विधि सदस्य ने कुछ ऐसी अभ्युक्तियां कीं, और अभ्युक्तियां ही नहीं कीं बल्कि कुछ इस ढंग से और इस उच्छृंखलता के साथ उन्हें कहा है कि उनकी अनदेखी नहीं की जा सकती। जब उनकी स्थिति का एक माननीय सदस्य, जो इस विधान सभा में सबसे अधिक जिम्मेदार पद पर है, इस प्रकार आक्रोश दिखलाता है तो मेरे विचार से हम जैसे साधारण व्यक्ति उससे प्रार्थना ही कर सकते हैं कि वह कुछ अधिक सहनशीलता और संयम दिखलाये। मान्यवर, माननीय विधि सदस्य मुझे याद दिलाते हैं लार्ड कारसन की जो ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में ठीक उसी पद पर थे जिस पद पर माननीय विधि सदस्य इस सभा में हैं। वह हर तरह से इस पद के योग्य भी है और सक्षम भी, परन्तु सम्भवतः उनमें व्यंग्य की वह शालीनता नहीं है जो ऐसे उच्च पदों की गरिमा को बनाये रखती है। मान्यवर, माननीय विधि सदस्य के साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। मैं जानता हूं कि उन्हें एक प्रौढ़ व्यक्ति के रूप में जनता के सम्पर्क में आने का अवसर नहीं मिला। इसके विपरीत मुझे मालूम है कि उन्हें उन कटूक्तियों का सामना नहीं करना पड़ता है, जिनका सामना उन जैसे स्वभाव के-नारी सुलभ स्वभाव के तो मैं नहीं कहूंगा-जनसेवकों को करना पड़ता है (सदन में ठहाके की हंसी)। दोनों असामान्य वर्गों में से किसी एक में भी नहीं रखे जा सकते। मैं किसी जीव वैज्ञानिक उपमा का प्रयोग नहीं करूंगा, परन्तु इतना तो है ही कि वह अक्सर असहाय क्रोध का प्रदर्शन करते हैं, जो उन्हें शोभा नहीं देता (बहुत ठीक, बहुत ठीक)। मान्यवर, कुछ भी हो, क्या माननीय विधि सदस्य या सामने बैठे हुए उनके सहयोगी इस बात का दावा करते हैं और जोरदार शब्दों में कह सकते हैं कि सरकारी सेवा के विभिन्न वर्ग भ्रष्टाचार से पूरी तरह से मुक्त हैं? ऐसा कहने का साहस माननीय विधि सदस्य भी नहीं कर सकेंगे।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – हां, मैं कहता हूँ कि वह पूरी तरह से मुक्त हैं।

यह भाषण पं० गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा लेजिस्लेटिव असेम्बली में 6 मार्च 1935 को आम बजट पर हुई सामान्य चर्चा के दौरान दिया गया था।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – वह भ्रष्टाचार की बात मानने को तैयार नहीं । तब क्या उनकी धारणा है कि भ्रष्टाचार का भोंड़ा स्वरूप ही भ्रष्टाचार है? क्या भ्रष्टाचार के कपटी रूप नहीं हैं? मान्यवर, अभी हाल ही में लार्ड कारसन की जीवनी पढ़ रहा था और मैं उसमें उल्लिखित इस तथ्य को पढ़कर हतप्रभ हो गया कि ब्रिटिश हाउस–आफ–कामन्स के तीस आयरिश सदस्य, जो अनिवार्य रूप से ब्रिटिश शासन के पक्ष में ही अपना मत देते थे, लगभग एक वर्ष के भीतर ही उच्च पदों पर नियुक्त कर दिये गये । क्या यह भ्रष्टाचार का एक चतुराईभरा रूप नहीं है? इसलिए माननीय विधि सदस्य को इन मामलों में अपने मत पर अभिमान करने की जरूरत नहीं । उन्हें इन मामलों को उचित तथा यथार्थ दृष्टि से देखना चाहिए । और फिर, मान्यवर, इस झगड़े को आरम्भ किसने किया? क्या माननीय विधि सदस्य को याद नहीं है कि अभी कुछ ही दिन पूर्व उन्होंने बिना विवेक के कांग्रेस के प्रत्येक सदस्य पर निकृष्टतम भ्रष्टाचार का आरोप लगाया? एक अवसर पर अपने मुख्य विषय से हट कर उन्होंने बिल्कुल असंगत बातें कहीं । उन्होंने कहा कि कांग्रेस के लोगों ने 'तिलक स्वराज्य निधि' से एक करोड़ रुपये का गबन कर लिया है ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार– मान्यवर, इस विषय में मैं अपनी व्यक्तिगत सफाई देना चाहूँगा । यदि मेरे माननीय मित्र मुझ पर अभियोग लगाना चाहते हैं तो मुझे इस बात की बिल्कुल चिन्ता नहीं, परन्तु मैं उनसे इस बात की आशा अवश्य करूंगा कि वह मेरे कथन को यथार्थ रूप में उद्धृत करेंगे । मैं इस बात से इन्कार करता हूँ कि मैंने सभी कांग्रेसजनों को भ्रष्ट कहा और उनको इन सब मामलों से सम्बद्ध बतलाया । मैंने इस तरह की कोई बात नहीं कही ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – किसी भी व्यक्ति को गलत रूप में उद्धृत करने का मेरा उद्देश्य नहीं और माननीय विधि सदस्य को तो और भी नहीं, जिनके प्रति जैसा कि मैं कह चुका हूँ, यदि मेरी सम्मान की भावना नहीं तो सहानुभूति की भावना तो है ही । मान्यवर, माननीय विधि सदस्य इस बात से इन्कार नहीं करते कि उन्होंने कांग्रेसजनों को भ्रष्ट कहा । मेरे ख्याल से मुझे याद है कि उन्होंने क्या कहा था : उन्होंने कहा था कि कांग्रेसजनों ने एक करोड़ रुपये का गबन किया है, निधि का कोई हिंसाब-किताब प्रकाशित नहीं किया गया, कांग्रेसी लोग दूसरों से बेजा फायदा उठा रहे हैं, अच्छे कपड़े पहन रहे हैं, मोटर-कार आदि का इस्तेमाल कर रहे हैं, और इसी तरह की बातें । उनके प्रति मेरी शिकायत बिल्कुल ठीक है । उनका यह बयान पूर्ण रूप से गलत है क्योंकि 'तिलक स्वराज्य निधि' के कोषाध्यक्ष कोई साधारण

व्यक्ति नहीं बल्कि सेठ जमना लाल बजाज थे और हिसाब-किताब बिल्कुल सही ढंग से रखे गये, उनका लेखा-परीक्षण हुआ और उचित रूप से प्रकाशित किये गये ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मान्यवर, मैं अपने माननीय मित्र की भूल का फिर सुधार करना चाहूँगा । मैं इस बात से इन्कार करता हूँ कि मैंने यह कहा था कि 'तिलक स्वराज्य निधि' का हिसाब-किताब या निधि की कार्यवाही प्रकाशित नहीं की गयी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – ठीक है, यदि माननीय विधि सदस्य अपने इन्कार पर इतना अधिक जोर देते हैं तो मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ कि उन्होंने जो भारी भूल की है उनका उन्हें अहसास हो रहा है (हँसी) । मान्यवर, मैं बड़ी विनम्रता के साथ उनसे कहना चाहूँगा कि वह अवसर एक बहुत ही नाजुक अवसर था । ज्वाएण्ट पार्लियामेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट पर हुई बहस पर इंग्लैण्ड में ध्यान दिया जाना निश्चित था । भारतीयों का चरित्र कसौटी पर था, और इस महत्वपूर्ण अवसर पर, जबकि इतने नाजुक और अहम मसले दांव पर थे, उनका इस प्रकार का अविवेकपूर्ण और गैरजिम्मेदाराना – और अगर वह मुझे ऐसा कहने की अनुमति दें तो– बिल्कुल ही गलत और निराधार कथन निश्चित रूप से एक अपराध ही था । (मेजों की थपथपाहट)

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – जो कभी किया ही नहीं गया ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – चलिये उनका मेरा हिसाब तय हो गया । अब मुझे अपने सामने बैठे हुए उन माननीय सदस्य के साथ मामला तय करना है जिनके निकट सम्पर्क में मैं इस सदन से बाहर एक से अधिक बार आ चुका हूँ ।

मान्यवर, जो बजट पेश किया गया है उससे मुझे वास्तव में बड़ी ही निराशा हुई । परन्तु मैं यहां अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए नहीं बल्कि बजट पर ठंडे दिमाग से तर्कसंगत विचार व्यक्त करने के लिए खड़ा हुआ हूँ । मान्यवर, माननीय वित्त सदस्य ने अपने भाषण का आरम्भ इस टिप्पणी के साथ किया कि इस देश में बजट सम्बन्धी गणनायें या तखमीने बहुत जटिल हैं क्योंकि उनका सम्बन्ध तीन वर्षों से होता है – एक तो पिछले वर्ष के वास्तविक आंकड़ों से, दूसरे वर्तमान वर्ष के संशोधित तखमीनों से, और तीसरे अगले वर्ष के अनुमानित तखमीनों से । मैं

उनकी इस बात से सहमत हूँ । मान्यवर, मेरा विचार है कि यदि हमारी गणनाओं को दो वर्षों तक ही सीमित कर दिया जाय – यानी एक तो पिछले वर्ष के वास्तविक आंकड़ों और दूसरे आने वाले वर्ष के सम्भावित तखमीनों तक – तो हमारे बजट के आंकड़े सही उतरेंगे, उनमें अनिश्चितता और अनुमान की गुंजाइश बहुत ही कम हो जायगी, और किन्हीं परिस्थितियों में बहुत काफी हद तक हम पर अनावश्यक करों का बोझ पड़ने से बच जायगा । यहां मैं एक उदाहरण दे दूं, 1933-34 के वर्ष में वास्तविक आंकड़ों से 272 लाख की बचत का पता चलता है जबकि संशोधित तखमीनों में 129 लाख ही दिखलाया गया था । यदि माननीय वित्त सदस्य के सामने वर्ष 1934-35 का बजट बनाते समय वर्ष 1933-34 के वास्तविक आंकड़े होते तो सम्भवतः जो कर उन्होंने उस समय प्रस्तावित किये थे उनमें से कुछ कर वह प्रस्तावित न करते। अन्य अनेक दृष्टिकोणों से भी यह तरीका अधिक अच्छा और वित्तीय दृष्टि से अधिक ठोस है । मान्यवर, हमारे देश की परिस्थितियों को देखते हुए यदि हमारा वित्तीय वर्ष एक अक्तूबर या एक नवम्बर से आरम्भ हो तो अधिक उपयुक्त रहेगा । हम लोग मुख्य रूप से खेती करने वाले लोग हैं । हमारे देश के साहूकार अपने खाते या तो दीवाली पर बदलते हैं या दशहरे पर, फिर हमारे लिए मानसून एक महत्वपूर्ण कारक है । यह बार-बार दोहराया जा चुका है कि हमारे देश में बजट मानसून के हाथ का जुआ है । इसलिए यदि हमारे बजट का वर्ष बरसात के बाद एक अक्तूबर या एक नवम्बर से शुरू हो तो वह हमारे देश के लिए अधिक सुविधाजनक होगा । मेरा विचार है कि वास्तव में ऐसा सुझाव वेल्बी कमीशन भी दे चुका है । मैं नहीं जानता कि माननीय वित्त सदस्य इस मामले पर कुछ विचार करेंगे या नहीं । जैसी हमारी स्थिति है, हम अंग्रेजों की इस रीति की श्रृंखला से बंधे हुए हैं जिसके अनुसार वित्तीय वर्ष का आरम्भ 'मूर्ख दिवस' (1 अप्रैल) से होता है । मेरा ऐसा मत है कि वित्तीय वर्ष का जन्म –दिवस बजाय मूर्ख दिवस के भारतीय पंचांग के अनुसार बदल कर 'प्रबुद्ध' दिवस कर दिया जाय । मान्यवर, मेरी ऐसी धारणा है कि माननीय वित्त सदस्य ने व्यय को बहुत ही अधिक आंका है और आय को निश्चित रूप से कम । रिकवरी के संकेत मौजूद हैं । विशेषज्ञ इस शुभ परिवर्तन को प्रमाणित भी करते हैं । निर्यात और आयात का परिमाण बढ़ा है । रेलों द्वारा माल-असबाब का यातायात बढ़ रहा है । ये सब बातें आने वाले वर्ष में पिछले वर्ष या इस वर्ष की अपेक्षा अधिक बचत होने का संकेत देती हैं । वास्तविकता तो यह है कि हमारी बचत की मात्रा लगातार बढ़ती जा रही है । पिछले वर्ष यह बचत 272 लाख थी जबकि इस वर्ष यह 350 लाख के करीब जा पहुँची है । मेरे विचार से यह अधिक अच्छा होता कि माननीय वित्त सदस्य अधिक बचत का हिसाब बिठलाते । मैं जानता हूँ कि वित्त-वेत्ताओं में कम आय आंकने की

कमजोरी होती है क्योंकि उन्हें करों से बचने के दावों का सामना करना पड़ता है । इसी प्रकार उनमें व्यय को अधिक आंकने की भी कमजोरी होती है क्योंकि उन्हें व्यय में कटौती करने के दावों का भी सामना करना पड़ता है । इसलिए माननीय वित्त सदस्य द्वारा अपनाये गये दृष्टिकोण पर मुझे आश्चर्य नहीं है । इसी प्रकार मेरा ऐसा भी विचार है कि बचत का भी निपटारा ठीक तरह से नहीं किया गया है । मैं बचत को नागरिक उड्डयन में या पूसा इन्स्टीट्यूट के विस्थापन में लगाने के पूरी तौर से खिलाफ हूँ । (लंबी हर्षध्वनि) मेरी सम्मति में वर्तमान वर्ष की सारी बचत को ग्राम पुनर्गठन विधि में हस्तान्तरित कर दिया जाना चाहिए था । (लंबी हर्षध्वनि) यह उन विषयों में से एक है जो बराबर मेरे ध्यान में बने रहे हैं और एक अन्य अवसर पर मैंने ग्राम पुनर्गठन निधि की स्थापना पर बार-बार जोर भी दिया है । मुझे इस बात की हार्दिक प्रसन्नता है कि उसका आरम्भ किया जा रहा है । मैं आशा करता हूँ कि माननीय विधि सदस्य यह एक नियम बना लेंगे कि जितनी भी बचत हो वह सब अपने आप ग्राम पुनर्गठन निधि में हस्तान्तरित कर दी जाय । मैं जो प्रस्ताव रख रहा हूं उसके एक से अधिक कारण हैं । मान्यवर, जैसा कि मैंने कहा, वित्त-वेत्ताओं की यह आदत होती है कि वह हमेशा आय को कम आंकते हैं और व्यय को बढ़ा-चढ़ाकर आंकते हैं । परन्तु यदि उन्हें मालूम रहे कि सारी बचत एक स्थायी एकीकृत निधि में हस्तान्तरित कर दी जा सकती है तो यह उन पर रोक जैसा काम करती है । बचत साधारणतया दान जैसी अनेक दुष्प्रवृत्तियों पर परदा डाल देती है और मैं नहीं चाहता कि माननीय वित्त सदस्य के लिए कोई ऐसी सन्धि या प्रलोभन शेष रहे कि वह बजट को इस दक्षता से बनायें जिसमें बचत छिपा ली गयी हो, और वही बचत वर्ष के अन्त में प्रस्तुत किये जाने वाले संशोधित बजट में विवादपूर्ण विविध खर्चों के रूप में हमारे सामने सहसा प्रकट हो ।

मान्यवर, मैं अनेक अन्य विषयों को जिन पर कि अन्य वक्ता बोल चुके हैं, नहीं उठाऊंगा, विशेषकर इसलिए भी कि इन पर बहस करने का हमें बाद में अवसर मिलेगा । परन्तु मैं इस बात की ओर ध्यान दिलाना चाहूँगा कि माननीय वित्त सदस्य का सैनिक बजट सम्बन्धी बयान, जहां तक वास्तविक वृद्धि का सम्बन्ध है, निश्चिय ही भुलावे में डालने वाला है । उन्होने हमें बतलाया है कि वेतन वृद्धि की व्यवस्था के बाद केवल दो लाख रुपयों की ही वृद्धि की गयी है । परन्तु वास्तव में मैंने पाया कि वर्तमान वर्ष के वास्तविक आंकड़ों की तुलना में वृद्धि लगभग 160 लाख है । उन्होंने उस धनराशि की गणना नहीं आंकी जो कि इस वर्ष सैन्य प्रतिरक्षा रक्षित कोष में हस्तान्तरित की जानी है और न उस धनराशि को ही गिना है जो कि बजट वर्ष में हस्तान्तरित की जानी है । स्पष्ट है कि हमें इन धनराशियों को भी

ब्यौरे में लाना है और ऐसा करने पर हम पाते हैं कि वर्तमान वर्ष की तुलना में वास्तविक वृद्धि 58 या 60 लाख नहीं, जैसा कि उन्होंने दिखलाने का प्रयत्न किया है बल्कि लगभग 160 लाख है । मैं आशा करता हूँ कि वे मेरे कथन को स्वीकार करेंगे । मुझे वास्तव में यह देखकर दुःख हुआ है कि बजट में वास्तविक स्थिति सच्चे रूप में नहीं दिखलायी गयी है । मान्यवर, मैं इस समय बजट की अन्य पदों को नहीं उठाऊंगा क्योंकि मुझे मौलिक नीति सम्बन्धी प्रश्नों की ओर ध्यान देना है– यह देखना है कि भारत सरकार की वास्तविक वित्त नीति क्या है, उसका उद्देश्य क्या है? आखिरकार बजट बनाने का मामला एक तरह से अंकगणित का ही मामला तो है और एक ऐसे देश में जो गुलामी में जकड़ा हुआ हो, एक ऐसे शासन के मातहत हो जो संगीनों और राइफलों के बल पर चलता हो तथा जिसकी जनता के सारे हथियार जब्त कर लिए गये हों, कोई भी वित्त सदस्य कैसे भी बजट को संतुलित कर सकता है, आय और व्यय के आंकड़ों में समझा जा सकता है क्योंकि वह जनता पर करों का जितना भी चाहे बोझ लाद सकता है । परन्तु वास्तव में आर्थिक स्थिति के आधुनिक अर्थ में तथा उस अर्थ में जिसमें कि प्रबुद्ध वित्त विशेषज्ञ इसे लेते हैं, बजट बनाने के यह अर्थ नहीं । तथ्य तो यह है कि हमारे बजट का जो एक सर्वप्रमुख लक्षण है वह है साम्राज्याभिमान । बजट अपने सभी प्रमुख लक्षणों द्वारा हमें साम्राज्यवादी शासन के होने का अहसास दिलाता है । उस साम्राज्यवादी शासन का जिसके हम अधीन हैं और जिसके अधीन रहकर हम सांस ले रहे और जी रहे हैं । प्रशासन में उच्च पदों का भारी बोझ, उच्चपदस्थ लोगों के कल्पनातीत वेतन तथा परिलाभ और साथ ही निम्न पदों पर कार्यरत लोगों के दयनीय वेतन, वेतनों में कटौती होते रहना, सोना ढो ले जाने की प्रक्रिया, व्यवस्था व्यय तथा अन्य अनेक तरीकों से निरन्तर अपहरण साम्राज्यवादी फांसी की ओर संकेत करते हैं । इन सबके साथ मैं दो बातें और भी जोड़ देना चाहूँगा : एक तो दूसरे का सम्बन्ध स्वर्ण प्रामाणिकता से नहीं बल्कि कागजी मुद्रा के साथ जोड़ना और दूसरे स्थायी स्वर्ण–निधि को लन्दन में रखना ।

हमें बतलाया जाता है कि माननीय वित्त सदस्य ने अपने बजट को संतुलित कर दिया है, परन्तु इसका अर्थ क्या है । उन्होंने ऐसा किस तरह किया है? मुझे अपने बचपन में संस्कृत की किसी पाठ्य पुस्तक में पढ़ा हुआ एक श्लोक याद आता है जिसके अर्थ हैं कि वर्षा के देवता इन्द्र की ही भांति राजा फालतू और अधिक मात्रा में उपस्थित नमी को सूखी हुई धरती को सींचने के लिए सोख लेता है, जिससे खूब लहलहाती हुई ताजी फसल हो सके । परन्तु यहां शासक द्वारा क्या किया गया? पिछले पांच वर्षों में क्या हुआ है यह हम सभी जानते हैं । चीजों के मूल्यों में लगभग 50 प्रतिशत की कमी आयी है । मेरे पास इसके सूचक आंकड़े हैं । हम देखते हैं कि

बजट में दिखलाया गया इस वर्ष का राजस्व वर्ष 1921-22 से लेकर अब तक, 1933 को छोड़कर, प्रत्येक वर्ष के राजस्व से अधिक है । स्मरणीय है कि लेखा तैयार करने की यह विधि 1921-22 में ही आरम्भ की गयी थी । हम देखते हैं कि उगाही पर हुआ व्यय वर्ष 1921-22 के उगाही व्यय से लगभग 25 प्रतिशत अधिक तथा वर्ष 1923-24 के उगाही व्यय से 50 प्रतिशत अधिक है; ध्यान दीजिए कि यह तब है जब कि वस्तुओं के मूल्यों में भारी और अभूतपूर्व गिरावट आयी है । फिर हम यह भी देखते हैं कि पिछले पांच वर्षों में भारत सरकार ने समय-समय पर करों के नये-नये उपाय प्रस्तावित किये हैं जिससे राजस्व में 48 करोड़ रुपयों की वृद्धि की जा सके । यह एक दुखद इतिहास है । हमने रोटी मांगी और हमें पत्थर मिले । एक ओर जनता भूखों मर रही थी, दूसरी ओर सरकार उसका बोझ बढ़ाती जा रही थी, इससे शासन की मानसिकता का पता चलता है; उस भावना का, उस दृष्टिकोण का पता चलता है जिससे कि वह इस देश की व्यवस्था को देखते हैं । उन्होंने ऐसे उपाय अपनाये जिसके परिणामस्वरूप पांच वर्षों के भीतर करों में 48 करोड़ रुपयों की वृद्धि हो गयी । करों का यह बोझ उस समय बढ़ाया गया जब देश कठिनतम तनाव की स्थिति तथा अभूतपूर्व आर्थिक संकट के दौर से होकर गुजर रहा था । मुझे इस समय याद आता है कि किस तरह कुछ लोग अपनी डेयरी यानी दुग्धशाला की व्यवस्था करते हैं । मैं शिकागो की किसी पशुशाला या किसी कसाईबाड़े का उदाहरण नहीं दूंगा क्योंकि उससे एक दुर्गन्धिपूर्ण घृणा का ही वातावरण बनेगा, लिहाजा मैं डेयरी का ही उदाहरण दे रहा हूँ । मान लीजिए कि एक आदमी के पास एक डेयरी है जिससे उसे प्रति वर्ष एक निश्चित धनराशि का लाभ होता है । वह वेतन तथा अन्य परिलाभों के रूप में कर्मचारियों पर एक निश्चित धनराशि व्यय करता है । दूध की विक्रय दर 4 सेर प्रति रुपये है । अब मान लीजिए कि दूध की विक्रय दर 4 सेर प्रति रुपये के बजाय 8 सेर प्रति रुपये कर दी जाती है । फिर भी डेयरी का मालिक–या कम्पनी कह लीजिये जो उस डेयरी को चलाता है, मैं सुविधा के लिये कम्पनी ही कहूँगा–हां तो फिर भी कम्पनी निश्चित करती है कि डेयरी के कर्मचारियों तथा नौकरों को वही तनख्वाह दी जाती रहेगी जो वे अभी तक पा रहे थे, परन्तु मवेशियों को जो चारा अब तक मिलता रहा है वह घटाकर आधा कर दिया जायेगा तथा बछड़ी–बछड़ों को एक बूंद दूध न दिया जायेगा, बल्कि उन्हें खत्म कर दिया जायेगा, तो कैसा रहेगा? एक डेयरी इस तरह चलाई जा सकती है, लाभ भी उतना ही बनाये रखा जा सकता है परन्तु मवेशियों की क्या दशा होगी? मान्यवर, मैं यहां पर वही बात फिर दोहरा रहा हूं जो मैंने पिछले सप्ताह रेलवे बजट के सिलसिले में कही थी । मैंने कहा था कि सरकार की यह सर्वसाधारण वित्त नीति उसी प्रकार उलटी है, उतनी ही राष्ट्र विरोधी है और इस देश के हितों के

लिए उतनी ही घातक है ।

एक बात और, हम जो चाहते हैं, और जो सोचते हैं वह किया जा सकता है? मान्यवर, मेरा विश्वास है कि यह वह अवसर नहीं है जब यहां-वहां छोटे-मोटे पैबन्द लगाकर नीतियों को सुधारा जा सकता हो । आज दुनिया को नये विचार चाहिए, नये आदर्श चाहिए । उसने नये उपाय निकाले हैं, नये मानदण्डों की स्थापना की है । यह समय मलिन दृष्टिकोण या घिसे-पिटे तरीकों के इस्तेमाल का नहीं है । मेरे माननीय मित्र, वित्त सदस्य महोदय यद्यपि अभी जवान हैं, जेलों को हौवा समझते हैं, मैं वहां एक से अधिक बार जा चुका हूं और मुझे उसका भय भी नहीं है । मैं माननीय वित्त सदस्य को राय दूंगा कि वह जेलों का भय छोड़ दें, ठीक रास्ते पर चल पड़ें, इस देश की सम्पत्ति और उत्पादनशीलता बढ़ाने का निश्चय लेकर आगे बढ़ें, जन साधारण के जीवन-स्तर को ऊपर उठाने का प्रयत्न करें, और करों की जिन दरों को उन्होंने यह पद सम्हालने पर पाया था उन्हें अपेक्षाकृत आसान करें । मान्यवर, इसके लिए सबसे पहले साम्राज्यवादी दृष्टिकोण छोड़ना पड़ेगा । आधुनिक विज्ञान तथा आधुनिक अर्थशास्त्र ने यह सिद्ध कर दिया है कि उन दकियानूसी रीति-नीतियों में, जो हमारी पिछड़ी पीढ़ियों को प्रेतों की तरह पकड़े हुए थीं, न कोई सार है और न कोई वास्तविकता । ज्यामितीय प्रगति के ढंग पर बढ़ती हुई आबादी, धीरे-धीरे समाप्त हो जाने वाले साधनों से घटती हुई आय, इन दो भयों का आधुनिक अर्थशास्त्र द्वारा पूरी तौर से प्रयोग किया गया है । जब लोग बढ़ती हुई आबादी ओर घटती हुई आय की बात से भय खाते थे उस समय साम्राज्यवादी नीति के लिए कोई जीवशास्त्रीय बहाना हो सकता था, परन्तु आज हम देखते हैं कि इंग्लैण्ड के सामने यह समस्या नहीं है कि बढ़ती हुई आबादी को किस प्रकार रोका जाय बल्कि यह है कि उसका पालन-पोषण किस प्रकार किया जाय । विश्व के सामने आज यह समस्या नहीं है कि किस तरह अधिक उत्पादन किया जाय बल्कि यह कि उत्पादन को किस प्रकार सीमित किया जाय ।

आज की हमारी दरिद्रता हमारा ही वरण है, हमने स्वयं उसे अपने लिए चुना है । आज विज्ञान ने प्रकृति की उदारता में और भी वृद्धि कर दी है और यदि मनुष्य मूर्ख और संकीर्ण विचारों वाला होना छोड़ दे तथा अपने को अहंकार, दुराग्रह तथा भय के वशीभूत हो, ज्ञान तथा आनन्द के साम्राज्यों से अलग न कर ले तो प्रत्येक व्यक्ति सुखी रहने लगे । मैं माननीय वित्त सदस्य से बड़ी ईमानदारी के साथ निवेदन कर रहा हूँ कि वह सद्भावनापूर्ण दृष्टिकोण से सभी बातों पर विचार करें और इस आश्चर्यमय देश के लिए यान्त्रिकीकरण, औद्योगीकरण तथा ग्राम पुनर्गठन

से सम्वन्धित एक विस्तृत योजना तैयार करें । ऐसा अब राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखते हुए ही किया जा सकता है । इस समय हम पर जो कर लगे हैं वह अधिकांशत: अप्रत्यक्ष हैं और उनमें से 75 प्रतिशत की वसूली भी अप्रत्यक्ष ढंग से की जाती है । उनकी प्रतिक्रिया हमारी उत्पादन-क्षमता पर होती है । वह व्यापार के विकास में रोड़े अटकाते हैं और उद्योगों की प्रगति में बाधक बनते हैं । अब प्रश्न उठता है कि इसका उपचार क्या है? उपचार केवल मुख्य उद्योगों के राष्ट्रीयकरण में ही है, उपचार देश के आर्थिक जीवन के पुनर्निर्माण में शासन के सक्रिय रूप में भाग लेने में है । अगर देश में 'स्वराज सरकार' होती तो मैं सरकार से बड़ी ही विनम्रता के साथ निवेदन करता कि वह एक सौ करोड़ रुपये का ऋण जारी करे जिससे कि इस देश के आर्थिक जीवन का ढांचा सुधारा जा सके ।(हर्षध्वनि) दुर्भाग्य से ऐसा नहीं है । हम विदेशी शासन के अधीन रह रहे हैं । इसलिए यह अभी एक स्वप्न ही है । और हमारे मित्र हमें हमारे इन नकारात्मक दृष्टिकोण के लिए कितना ही दोष क्यों न दें, जब तक हम इस महान संकट और इस भारी अड़चन को दूर नहीं कर लेते तब तक हमारे लिए किसी भी तरह की प्रगति कर सकना सम्भव नहीं ।(हर्षध्वनि)

●

पुराने आर्थिक सिद्धांतों पर पुनर्विचार

मान्यवर, गत 5-6 दिनों की तरह मैंने आज भी माननीय वित्त सदस्य का भाषण बहुत ध्यान से सुना । आशा है मैं उनके भाषण में उठाये गये तमाम मुद्दों पर बात करने का समय पा सकूंगा । मान्यवर, मैं माननीय वित्त सदस्य की सहज और गरिमामय मुद्रा में अभिभूत हुआ हूं । वे अपने बटन में लगे गुलाब की तरह हमेशा ताजा दिखते हैं । यह मेरे लिए रहस्यपूर्ण मामला है कि एक तरफ विवादास्पद आंकड़ों और करोड़ों रुपयों के भार को ढोने वाला और दूसरी ओर करोड़ों निर्धन बुभुक्षित व्यक्तियों की जिम्मेदारी उठाने वाला व्यक्ति कैसे हमेशा इतना उत्फुल्ल रह सकता है? मैं वाकई आश्चर्यचकित था । लेकिन पिछले दिन के उनके भाषण ने मुझे उत्तर दे दिया और मैं तो यूरेका चीखने के करीब की मन:स्थिति में आ गया था । मुझे मालूम पड़ा कि वे किसी भी आर्थिक सिद्धांत, अवधारणा या मान्यता पर निर्भर नहीं हैं । वस्तुत: मैं आसानी से यह नहीं समझ सका कि पांच को छह में कैसे बदला जा सकता है । लेकिन मुझे स्थायी वित्त समिति की कार्रवाई याद आयी और मैंने पाया कि माननीय सर जेम्स ग्रिग जहां सत्य चरन मुखर्जी, सेठ भागचन्द सोनी, कैप्टन लालचंद और मेजर नवाब अहमद नवाब खान आदि के साथ जुड़कर छह बन जाते थे और हम पांच निर्वाचित प्रतिनिधियों के विरुद्ध रहते थे, और इस तरह मुझे मालूम पड़ा कि किस तरह पांच छह के बराबर हो सकता है ! वे एक श्रेष्ठ मण्डली में थे । इसके बावजूद यह पर्याप्त नहीं था । मेरे विचार से मान्यवर, माननीय सर जेम्स ग्रिग जैसे महानुभाव भी दो तरह के विचार रख सकते हैं— एक इंग्लैण्ड में और दूसरा भारत में । इग्लैण्ड में सोने का आयात प्रतिबन्धित है । नियोजन लगभग नियमित प्रक्रिया हो गयी है ।

एक माननीय सदस्य – नहीं, नहीं ....

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत - मैं इसे प्रदर्शित करूंगा । कृपया थोड़ा धैर्य रखें । यहां तो वे उपरोक्त दोनों से सांप या बिच्छू की तरह बिदकते हैं और सोने के आयात को प्रोत्साहित करना तथा योजना को समाप्त करना चाहते हैं । या मेरे विचार से सर जेम्स ग्रिग दो तरह के विचार रख सकते हैं – एक व्यक्तिगत गैरसरकारी भद्र पुरुष

लेजिस्लेटिव असेम्बली द्वारा इण्डियन फाइनेंस बिल पर विचार के दौरान 13 मार्च, 1935 को पं० गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा दिया गया भाषण ।

की तरह से, और दूसरा विचार इंग्लैण्ड से आयातित सदस्य की तरह से ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग - बिना किसी तटकर के आयातित व्यक्ति की तरह . . .

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – इस देश के मामलों की व्यवस्था हेतु एक दूसरी आर्थिक व्यवस्था में . . . .। उस देश के लाभ के लिए जिसमें (माननीय वित्त सदस्य की) सर्वोच्च और प्राथमिक निष्ठा है । इसलिए पूर्व के चार विचारों के साथ माननीय वित्त सदस्य के दो और विचार हैं तो इनका योग छह हो जाता है । लेकिन मान्यवर, मुझे उनके इस कथन पर और अधिक आश्चर्य हुआ कि इस देश में खास तौर पर पांच अर्थशास्त्रियों के साठ विचार होते हैं । यह तो और अधिक अबूझ पहेली लगती हैं । सौभाग्य से जब मैंने इधर देखा तो मुझे यह उतनी कठिन नहीं दिखी । माननीय सर जेम्स ग्रिग अब अर्थशास्त्रियों की पूरी बिरादरी को अगर तिरस्कार नहीं तो उपेक्षा के भाव से अवश्य देखते हैं । वे ऐसे लोग हैं जिन्हें महत्वहीन मानना चाहिए और मुझे इस पर कोई आश्चर्य नहीं है । वे तो सर जार्ज शुस्टर को नहीं मानते, वे राबर्टसन और बाउली की बातों को नहीं मानते । यहाँ तक कि वे सर आर्थर शेल्टर की बातों को भी नहीं स्वीकार करते जैसा कि मैंने आज सुबह एक अखबार में पढ़ा है, उन्होंने उनकी सभी रिपोर्टों को कूड़े में फेंक दिया है । यही उनके भाषण का भी मंतव्य है । मैंने छात्र जीवन में पढ़ा था कि लोगों का एक वर्ग सीढ़ी पर चढ़ने के बाद उसकी ओर पीठ कर लेता है, लेकिन यहां और अधिक साहसी और खतरनाक काम करने वाले लोग हैं जो न केवल सीढ़ी की तरफ अपनी पीठ कर लेते हैं, बल्कि उसे चकनाचूर करने के लिए लात भी मारते हैं । माननीय सर जेम्स ग्रिग के अर्थशास्त्र के दिन पूरे हो गये, उन्होंने सफलता पाई और अब वे उसे कुचलने के लिए तैयार हैं । वे अब उससे और देर तक सम्बन्ध नहीं बनाये रखना चाहते । उसका उनके लिए कोई उपयोग नहीं है । आखिर समय क्यों नष्ट किया जाय ? अर्थशास्त्र का उस समय चाहे कोई अर्थ रहा भी हो जब वे इंग्लैण्ड में डेस्क पर बैठा करते थे, लेकिन अब जब वे इन भूरे और शायद काले लोगों के मुल्क में आये हैं तो आखिर इस अर्थशास्त्रीय सूक्ष्मता का उनके लिए क्या महत्व है? मैं इसे अच्छी तरह समझ सकता हूं । लेकिन यथार्थ इसके एकदम विपरीत है । आज पुराने समय की अपेक्षा आर्थिक चिन्तन में आवश्यक और आधारभूत विषयों पर अधिक विचार-साम्य है ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग — नहीं मान्यवर ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – 'नहीं' कहना आसान है लेकिन इसे सिद्ध कर पाना

आसान नहीं है । मैं अपने सकारात्मक विचार को सिद्ध करने के लिए तैयार हूं । मान्यवर, आज क्या स्थिति है? मैं यह मानने को तैयार हूं कि अर्थशास्त्र के कुछ पुराने सिद्धांत जिन्हें आज निरर्थक बौद्धिकता माना जा सकता है, आज महत्वहीन हो गये हैं । कुछ मान्यताएं अभी हाल में निरस्त हुई हैं लेकिन मानवता अपने विकास के प्रगतिशील रास्ते पर आगे बढ़ रही है और यह उचित बात होगी कि व्यक्ति अपने अनुभवों से सीखे और वह अपनी पुरानी आदतों से अलग हो और उस तरह विकसित हो जैसे पेड़ के तने के साथ उसकी छालें बढ़ती हैं । इसलिए मैं आर्थिक क्षेत्रों में भी मानवीय चिन्तन के विस्तार और विकास पर आश्चर्यचकित नहीं हूं । लेकिन मान्यवर, जहां सब कुछ बदल गया है, वहीं माननीय वित्त सदस्य अभी भी विशाल आर्थिक महासागर में राबिन्सन क्रूसो द्वीप के लिए अपनी छोटी नैया खेते जा रहे हैं । वे एडमस्मिथ के बाद के किसी भी विकास को उसी तरह मानने से इन्कार करते जा रहे हैं मानों जैसे सामान्य क्षेत्र में आदम और हौवा के बाद कुछ हुआ ही न हो । वे केवल आर्थिक व्यक्तिवाद को ही समझ सकते हैं, वे आर्थिक व्यक्तिवाद में खो गये हैं ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग — हां, उससे क्या हुआ ?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – क्या आप अपने देश में आर्थिक व्यक्तिवाद का पालन करते हैं ? फिर कृपया उत्तर दीजिये : इंग्लैण्ड में कितने करोड़ की सब्सिडी दी जाती है? कितने करोड़ का इंग्लैण्ड में संरचनात्मक तट–कर लगाया जाता है? जहाजरानी उद्योग को कितने करोड़ की सब्सिडी दी जाती है? पशुपालन उद्योग को कितने करोड़ की सब्सिडी मिलती है? गेंहू उत्पादकों को कितने करोड़ का लाभ दिया जाता है? उत्पादकों को कितने करोड़ का लाभ दिया जाता है? किसके विरुद्ध प्रोत्साहनपरक कर लगाया जाता है? किस उद्देश्य से कोटा और एग्रीमेंट किस उद्देश्य के लिए हैं ? आर्थिक परिषद का क्या उद्देश्य है? विकास परिषद का क्या लक्ष्य हैं? व्यापार परिषद का क्या संविधान है? मान्यवर, मैं उत्तर की प्रतीक्षा करूंगा और मैं आशा करता हूं कि माननीय वित्त सदस्य मुझे इन विषयों पर जानकारी देंगे और बतायेंगे कि किस प्रकार से यह दृष्टिकोण आर्थिक व्यक्तिवाद के आधारभूत नियमों के अनुकूल है? इतना ही नहीं बल्कि श्रमिक नियंत्रण, श्रमिक वेतन, सामाजिक उपयोगिताओं और सामाजिक सुविधाओं के नियंत्रण और जीवन की सभी महत्वपूर्ण चीजों की इससे क्या संगति है? उन्हें आर्थिक अहस्तक्षेपवाद की बात करने दीजिए । यह वह टूटी हुई चीज है जिसको उठाने पर ही खून बहने लगता है । इसके बावजूद वे उससे आलिंगनबद्ध हैं । यह इस देश के लिए खतरनाक है । उनको देखने पर

लगता है कि मैं वाकई एक क्रांतिकारी जैसा हो गया हूं । मैं परिवर्तन और आगे की ओर वास्तविक विकास चाहता हूँ और जब कोई व्यक्ति ठहरे पानी और कीचड़ में फंस जाता है तो मुझे उस स्थिति से आगे बढ़ने की कोई आशा, कोई सम्भावना नहीं दिखती । मैं वाकई दु:खी और निराश हूँ । मान्यवर, आज के अर्थशास्त्र के आधारभूत नियम क्या हैं? मैं माननीय वित्त सदस्य से पूछूंगा कि योजना के बारे में मि० कीन्स के क्या विचार हैं? वे रूजवेल्ट के विचारों से अच्छी तरह परिचित हैं, लायड जार्ज के न्यू डील से अच्छी तरह परिचित हैं और वे यह अच्छी तरह जानते हैं कि सर जार्ज शूस्टर ने—यह विडम्बना देखिए—अपने उत्तराधिकारी को दायित्व सौंपने के बाद क्या कहा था? वे सर आर्थर साल्टर द्वारा बनायी गयी योजना के बारे में भी जानते हैं और मुझे विश्वास हैं कि उन्होंने उनकी पुस्तक 'रिकवरी' पढ़ी होगी । मुझे विश्वास है कि उन्होंने सर विश्वेश्वरैया की पुस्तक दस वर्षीय योजना को भी अवश्य देखा होगा । मुझे नहीं मालूम कि उनको अरुचिपूर्ण लगने वाले शब्द 'यो-ज-ना' नाम वाला शीर्षक उनकी सहनशीलता की सीमा के भीतर है या बाहर । मान्यवर, हमें यह आशा करनी चाहिए कि यद्यपि इस पुस्तक का विषय 'योजना' से जुड़ा है फिर भी उनकी वैज्ञानिक शिक्षा ने उन्हें वह मन:स्थिति दी होगी कि इसे पढ़ें, और क्या उन्होंने भारतीय प्रशासनिक सेवा के मि० डार्लिंग की किताब पढ़ी है जो कि वितण्डावादी न होकर अपने संवर्ग के दीक्षा प्राप्त सदस्य हैं । वे हमारे विचारों और वक्तव्यों को गम्भीरता से न लें क्योंकि आखिरकार क्यों हम लोग यहां.......

माननीय सर जेम्स ग्रिग – मैंने मि० डार्लिंग से परामर्श लिया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत– तब तो मुझे मानना होगा कि उनके लिए कोई आशा नहीं की जा सकती और वे कभी नहीं सुधरेंगे । मैंने सोचा था कि उनके यहां कभी नये प्रकाश की गुंजाइश है और उनकी खिड़कियां खुली हैं । लेकिन मुझे मालुम हुआ कि ताजी हवा की कितनी भी मात्रा उनके रक्त को ऊष्मा नहीं दे सकती या उनके रक्त को नसों में वैसे नहीं दौड़ा सकती जैसा किसी जीवित शरीर में होता है । मान्यवर, क्या उन्हें लास्की के विचारों के बारे में मालूम है? क्या उन्हें मालूम है कि लार्ड एलेन क्या सोचते हैं? मेरे पास उनकी किताब है ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग – मेरे पास भी है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं सोचता हूँ कि उन्हें लार्ड पासफील्ड की इच्छा मालूम

है और मेरे विचार से उन्हें उनके जैसे अन्य व्यक्तियों के विचारों की जानकारी है । मैं चाहूँगा कि वे एक ऐसे व्यक्ति का नाम बतायें जो योजना के विरुद्ध हो ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग – हां, प्रोफेसर लियोनेल राबिन्स ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत– मुझे संदेह है कि वे इतने अधिक नामों के विरुद्ध खड़े हो सकते हैं । माननीय वित्त सदस्य के साथ खड़े होकर वे थोड़ा वजनी अवश्य हो सकते हैं, लेकिन अपने-आप में वे अकेले हैं और ज्यादा वजनी नहीं हो सकते । लेकिन मान्यवर, मैं उनकी इस पंक्ति में थोड़ा भटक गया हूँ कि पांच व्यक्ति छः के, बल्कि साठ के बराबर हैं । माननीय वित्त सदस्य के विचार इस समय लगभग पूरी आर्थिक दुनिया के ही विरुद्ध हैं । इसलिए इस साठ को पूरा करने के लिएं उनके विचार को 59 की मात्रा मिलनी चाहिए और एकमत होने के नाते पूरे विश्व के विचार को केवल एक गिना जाना चाहिए । इसलिए एक के विरुद्ध 59 की संख्या हैं तो अंक उलटने में ही सुरक्षा है और अपने असाधारण विचारों को महत्व देने के लिए माननीय वित्त सदस्य को दोषी नहीं ठहराया जा सकता । समाधान विचित्र दिख सकता है और गणना की पद्धति मौलिक मालूम हो सकती है लेकिन चूंकि मूल्यांकन के मानक व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों के अनुकूल परिवर्तित होते रहते हैं, इसलिए मैं माननीय वित्त सदस्य के मूल्यांकन से आश्चर्यचकित नहीं हुआ हूँ ।

मान्यवर, माननीय वित्त सदस्य ने एक टिप्पणी और की है और वह कहीं अधिक मनोरंजक है । उन्होंने कहा कि इस देश में अर्थशास्त्र में राजनीति मिल गयी है । मैं नहीं जानता कि यह भयंकर मूल्यह्रास है या नहीं । अपनी छात्रावस्था में हम लोग अर्थ विज्ञान को राजनैतिक अर्थशास्त्र कहते थे और मुझे लगता था कि राजनीति का अर्थशास्त्र से कोई सम्बन्ध अवश्य है । लेकिन माननीय वित्त सदस्य की सोच है कि दोनों में कुछ भी साम्य नहीं है । उस समय भी मुझे लगता था, जैसा कि आज भी लगता है, कि राज्य का सर्वोच्च उद्देश्य जनता की आर्थिक भलाई और भौतिक सुख की व्यवस्था करना है । मैं शब्द को राजनैतिक अर्थ में प्रयुक्त नहीं कर रहा हूँ । लेकिन उनके अनुसार राजनीति को अर्थशास्त्र से अलग रखना चाहिए । जहां तक मेरे देश का मामला है, मैं उनसे सहमत हूँ और अगर वे इस देश के राजनीतिक दलदल से अर्थ–शास्त्र को बाहर निकाल सकेंगे तो मैं उन्हें बधाई दूंगा । यह हमारे लिए बहुत बड़े लाभ की घटना होगी । आखिरकार मान्यवर, आपके शब्दों में यह मिश्रण, या यदि आप कहना चाहें तो विचित्र सम्मिश्रण जिसमें

राजनीति और अर्थशास्त्र शामिल हैं, किस तरह यहां प्रभावी हुआ है? क्या वे शुद्ध आर्थिक आधारों पर रुपये को कागजी स्टर्लिंग से सम्बद्ध करने का औचित्य बता सकते हैं? ऐसे समय में जब दामों में भारी गिरावट आ रही हो, जब पुरानी कीमतें नीचे गिर गयी हों और पुरानी व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गयी हो, क्या कोई भी देश अपनी मुद्रा को दूसरे देश की मुद्रा की दुम से जकड़ने की सोच सकता है? क्या वे इसका आर्थिक औचित्य बता सकते हैं? क्या इसका कोई आर्थिक तर्क हो सकता है कि रुपये को मार्क, डालर या फ्रांक की जगह कागजी स्टर्लिंग में ही जोड़ा जाय और क्या इससे माननीय वित्त सदस्य और उनके देश को आज लगभग 40 प्रतिशत के वरीयता लाभ के साथ अपना सामान इस देश में पाटने की सुविधा नहीं मिल जाती है? और स्टर्लिंग का मूल्य जितना भी गिरता हैं, उन्हें उतना ही अधिक लाभ मिलता है ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग – अगर रुपया इससे सम्बद्ध है तो ऐसा लाभ बिल्कुल नहीं मिलेगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – निश्चित रूप से जैसे स्टर्लिंग नीचे गिरता है, रुपया भी नीचे गिरता है और कम से कम उसी सीमा तक दूसरे देशों में भी रुपये की कीमत गिरती है जब कि दूसरे देशों की मुद्राओं की कीमतें बढ़ती हैं । मेरे ख्याल से यहां कुछ महानुभावों के रिश्तेदार और बच्चे फ्रांस या जर्मनी में हैं । क्या उन्हें यह नहीं मालूम है कि उन देशों में अपने बच्चों के पोषण के लिए पहले उन्हें जितना भेजना पड़ता था, रुपये को कागजी स्टर्लिंग से सम्बद्ध किये जाने के बाद अब उन्हें पहले से कम से कम 50 प्रतिशत अधिक भेजना पड़ता है? क्या इससे उनको सन्तुष्टि नहीं होती है? यह आर्थिक सूक्ष्मताओं में जाने का उपयुक्त स्थान नहीं है लेकिन मैं माननीय वित्त सदस्य से इतनी स्पष्ट चीज को स्वीकार करने की अपेक्षा करता हूँ । वे उसे नकार सकते हैं जो इतना स्पष्ट नहीं है, लेकिन जब एक चीज इतनी स्पष्ट है तो उन्हें मेरे पक्ष में एक रियायत देने की उदारता का प्रदर्शन करना चाहिए । मान्यवर, हम यहां खड़े हैं—यह हमारे देश में अर्थशास्त्र को व्यापक राजनैतिक आधारों पर खड़ा करने का एक नतीजा है । फिर मान्यवर, क्या इंग्लैण्ड से ऊंची दरों पर स्टर्लिंग ऋण लेने का कोई आर्थिक औचित्य हो सकता है जबकि हम अपने देश में ही कम दर पर 'रुपये' में ऋण प्राप्त कर सकते थे? क्या यह भी कोई आर्थिक अवधारणा है? क्या उनके पास इस बात की कोई आर्थिक व्याख्या है कि जब हम दूसरे देशों में काफी सस्ती कीमत पर भंडारण वस्तुएं प्राप्त कर सकते हैं तो फिर हम

उसे महंगे दामों पर इंग्लैण्ड से क्यों खरीद रहे हैं? मान्यवर, क्या आपने कभी सुना है कि एक देश का आरक्षित स्वर्ण लाखों मील दूर दूसरे देश में रखा जाता हो, जबकि वह देश स्वयं बुभुक्षित हो और काफी ऊंचे ब्याज पर पैसा मांग रहा हो? क्या आपने कभी सुना है कि हमारे देश के अलावा कहीं और स्वर्ण प्रतिबन्धित किया गया हो और स्वर्ण के निर्यात को प्रोत्साहित केवल यहीं किया जाता हो? क्या यह भी युद्ध आर्थिक कार्य है? और मान्यवर, मुझे एकदम स्पष्ट और दोटूक बात कहने के लिए क्षमा किया जाय, और मुझे विश्वास है कि वे इसका बुरा नहीं मानेंगे ।

यदि यह देश आजाद होता, और यदि यह अर्थशास्त्र से राजनीति शास्त्र के बिलगाव मात्र का प्रश्न होता तो क्या यह देश अपने 35 करोड़ नागरिकों के आर्थिक प्रबन्धन के लिए 4,000 मील दूर से लोगों को आयातित करवाता? सर एम० विश्वेश्वरैया एक अनुभवी वरिष्ठ व्यक्ति हैं । इसी तरह कोयाजी शाह और अन्य लोग भी हैं । और मेरे विचार से माननीय वित्त सदस्य को भी और कई नाम याद आ सकते हैं । क्या ये लोग उनकी जगह पर नियुक्त न किये जाते? क्या उन्होंने कभी सुना है कि समान प्रकृति के काम करने पर भी विदेशियों को देशी व्यक्तियों से ऊंचा वेतन और ऊंचा भुगतान होता हो? और क्या सामने की बेंचों पर बैठे सदस्यगण – जिनका मैं अत्यधिक लिहाज करता हूँ – स्वयं ही अर्थसंगत वेतन से अधिक नहीं पा रहे हैं? क्या हम उन्हें, अपने व्यक्तियों को जितना वेतन देना पड़ता, उससे कहीं बहुत अधिक वेतन नहीं दे रहे हैं? क्या हमने और कहीं भी यह होते हुए देखा है कि एक ओर तो उस देश की सरकार द्वारा लिये गये ऋणों और प्रतिभूतियों पर ब्याज की राशि दूसरे देश को जा रही हो और उसके बावजूद इस देश में जहां से यह निर्गत हुआ था, उसे आयकर से मुक्त कर दिया गया हो? क्या उन्होंने कहीं और सुना है कि सरकारी कर्मचारियों की पेंशन दूसरे देश में भेजी जाती हो, फिर भी उसका भुगतान करने वाले देश में उसे आयकर से मुक्त कर दिया गया हो? क्या उन्होंने कहीं और सुना है कि अवकाश पर गये कर्मचारियों का वेतन एक देश से दूसरे देश को भेजा जाता हो और फिर भी भुगतान करने वाले देश में उस पर आयकर न पड़ता हो? उन्हें इस देश में अर्थशास्त्र और राजनीति का घालमेल करके नहीं बोलना चाहिए । कांच के घर में रहने वाले को सदैव सचेत रहना ही होगा और उसे यह नेक सलाह दी जानी चाहिए कि वह दूसरों को अनावश्यक रूप से उत्तेजित न करें । अपनी ओर से मेरी तो यह इच्छा ही है कि हमारे देश में अर्थशास्त्र शुद्ध और क्रिस्टल जैसा साफ हो । लेकिन फिर हम कैसे इतना भारी–भरकम सैनिक बजट बना सकेंगे? फिर हम कैसे शीश पर इतना भार रखने वाली व्यवस्था चला सकेंगे? फिर हम इन परिस्थितियों में वेतन कटौती को कैसे पुनर्स्थापित कर सकेंगे? हमारे देश में

अर्थशास्त्र एक फुटबाल है जिसे इस देश को अधीन रखने वाला वर्ग ही लात मार सकता है और खेल सकता है, जो कि चाहे पहुँच से बाहर हो या हवा में हो, हमेशा ही उनके मनोरंजन के लिए आयोजित होता है ।

मान्यवर, कल सैनिक बजट पर बहस हुई थी और माननीय सेना-सचिव ने वाद–विवाद का उत्तर दिया था । मैं पूरे समय यही सोचता रहा कि क्या किसी ने उस व्यक्ति के सामर्थ्य के दृष्टिकोण से भी सोचा है जिसे आखिरकार इन खर्चों का भुगतान करना है? आज मेरे माननीय मित्र कहते हैं, "आत्मरक्षण सर्वोच्च विधि है । आत्मरक्षण जीवन का प्रभुत्वपूर्ण उद्देश्य है ।" किसलिए? दासता के लिए? दूसरे लोगों के अधीन रहने के लिए? क्या केवल साम्राज्य के सेवक बनकर रहने के लिए? किसलिए? इस आत्मरक्षण का क्या उद्देश्य है? और किसलिए यह स्तर है? क्या मेरे सामने के महानुभावों ने इस पर भी कभी सोचा है? मैं कहता हूँ कि यदि कोई नैतिक उद्देश्य नहीं है तो आत्मरक्षण का कोई उपयोग नहीं हो सकता और यदि राज्य यह सोचता और विश्वास करता है कि व्यक्ति को जीवन का अधिकार देकर उसका उद्देश्य पूरा हो गया है, जबकि वास्तविकता में व्यक्ति टुकड़ों में मरता है, तो ऐसी स्थिति में मानना चाहिए कि राज्य सभ्यता के पैमाने पर बहुत नीचे खिसक आया है । यहां यही हो रहा है । अपनी ओर से मैं महसूस करता था और आज भी महसूस करता हूँ कि मेरे लिए यह अकल्पनीय है कि मैं ऐसे किसी कोष के आवंटन और राजस्व की प्राप्ति में सहभागी बनूं जिसका उद्देश्य इस देश में विदेशी शासन को प्रभुत्वपूर्ण या स्थायी बनाना है । क्या आपने कभी आर्थिक आधार पर यह तर्क सुना है कि देशी मार्का व्यक्तियों की तुलना में चौगुनी तनख्वाह पर विदेशी सैनिकों को नियुक्त किया गया है? मैं इस तरह की शब्दावली इसलिए प्रयुक्त कर रहा हूँ क्योंकि सेना-सचिव के अनुसार भारतीय सैनिक और मोटर गाड़ियां एक श्रेणी से सम्बन्धित हैं–वे सभी यहां उपस्थित भद्र पुरुषों की शब्दावली में 'चीजें' हैं । लेकिन क्या आपने ऐसी बातें और भी कहीं सुनी हैं? मैं कहता हूँ, सदन में अर्थशास्त्र के बारे में न कहिए, अन्यथा यह आपको परेशानी में डाल देगी ।

यह माननीय वित्त सदस्य के पिछले भाषण का केवल प्रारम्भिक सर्वेक्षण ही है । मैं आज के उनके भाषण का केवल थोड़ा संदर्भ दूंगा । उन्होंने पिछले दिन माननीय नेता विपक्षी दल द्वारा की गई टिप्पणी का सन्दर्भ दिया है । उन्होंने उन्हें सटीक शब्दों में अभियोजन सलाहकार कहा है और अपने को आरोपित अपराधी बताया है । उन्होंने व्यवहारतः उन तथ्यों को स्वीकार कर लिया है जिन पर

अभियोजन पक्ष ने अपने आरोप लगाये थे । मैं अब उनसे पूछंता हूँ कि उनका फैसला क्या है? वे दुर्भाग्य से यहां जूरी भी हैं; और क्या जूरी मामले का पक्षपात विहीन, न्यायिक और तटस्थ निर्णय करेगी? यदि वे ऐसा करते हैं तो यह अभियोजन के मुकदमे की अभियुक्त द्वारा स्वीकृति होगी । माना जायगा कि तथ्य सही हैं, जहां तक केन्द्रीय राजस्व की बात है, वे मुख्यतः तथाकथित सुरक्षा के लिए अधिकृत हैं । आखिरकार, आप सेना किसलिए चाहते हैं? मेरे पास कतिपय प्रख्यात जनरलों के वक्तव्य थे और आज भी हैं जो यह बताते हैं कि इस विशाल सेना का और इस देश में कमीशन प्राप्त संवर्गों में ब्रिटिश सिपाहियों और अधिकारियों को रखने का क्या उद्देश्य है? लेकिन मैं इस पर अभी बात नहीं करना चाहता : मैं अपने को केवल अर्थशास्त्र तक सीमित रखना चाहता हूँ, हालांकि माननीय वित्त सदस्य को इससे अरुचि हो सकती है : क्योंकि आखिरकार, यही उनका अप्रिय कार्य और कर्तव्य भी है ।

मैं दूसरे प्रश्न पर आऊंगा और वह अधिक महत्वपूर्ण है । हम वर्तमान दुर्व्यवस्था से कैसे बाहर आ सकते हैं, हम इस देश के करोड़ों भूखे लोगों की परेशानी कैसे दूर कर सकते हैं । यही सवाल है; और मुझे आशा है कि मानवीय आधारों पर जिस सीमा तक उनके राजनैतिक मूल्यों की अपंगता और उनके अपने देश के प्रति उनकी निष्ठा पर आंच नहीं आती वे उस सीमा तक हमारी इच्छा में भागीदारी करते होंगे । वर्तमान स्थिति के कुछ महत्वपूर्ण आयाम हैं जिन्हें किसी निष्कर्ष पर पहुँचने के पहले अवश्य देखना होगा । भारत मुख्यतः एक खेतिहर देश माना जा सकता है : मैं मानता हूँ कि हमारी जनसंख्या का 80 प्रतिशत हिस्सा कृषि के द्वारा ही प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तरीके से पोषित है । मैं मानता हूँ कि वैज्ञानिक तकनीक और मशीनीकरण के द्वारा मानवीय श्रम की अपेक्षा कहीं अधिक उत्पादन हो सकता है । मैं यह भी मानता हूँ कि वर्तमान समय में कई देशों में आत्मनिर्भरता की प्रवृत्ति पनपी है । प्रत्येक देश आत्मनिर्भर और आत्मस्थ होना चाहता है । मैं यह सब मानता हूँ । मान्यवर, मैं यह भी मानता हूँ कि, जैसा कि एडम स्मिथ ने कहा था, व्यक्ति का पेट सीमित है और अगर आप प्राचीन रोमन सम्राटों की अतिभक्षी पद्धतियों को अपना लें तो भी इसकी बहुत अधिक वृद्धि नहीं होगी । यह सम्भव है, कोई व्यक्ति 20 साल तक एक वस्त्र की अपेक्षा एक दिन में ही दस कपड़े, दस या बीस नये कपड़े पहनना पसन्द करे लेकिन यह सम्भव नहीं है कि वह 24 घंटों में अगर एक या दो बार की जगह 20 बार भी भोजन करे तो वह अपनी भूख से अधिक खा सकता है । इसलिए मैं कहना चाहता हूँ कि खेतिहर उत्पादनों के उपयोग की एक दृढ़ सीमा है, जब कि यान्त्रिक साधनों से उत्पादित वस्तुओं के विस्तार की

असीमित सम्भावना होती है । इससे मेरे मित्र को क्या सहायता मिलती है? वे कहते हैं कि खेती की सीमित सम्भावना है; वे हमसे कहते हैं कि प्रायः प्रत्येक देश के पास अपने भर को पर्याप्त है; वे हमसे कहते हैं कि वे ग्रामीणों की सहायता करेंगे । क्या मैं जान सकता हूँ कि वे उन्हें अधिक उत्पादन करने में सहयोग देंगे? यह अतिरिक्त उत्पादन कैसे सम्भव होगा? क्या वह मेस्टन हल से होगा? या किसी नये हल में होगा जिसे आगे ग्रिग हल के नाम से जाना जायगा? क्या इससे किसान को कई देशों में बड़े पैमाने पर लागू मशीनीकृत तकनीकी क्षमता और विकसित पद्धतियो की अपेक्षा उत्पादन में अधिक सहायता मिलेगी? यह वांछनीय है, वह ऐसा कर सकेंगे? क्या अकेले उससे काम चल जायगा? भूमि की उत्पादकता बढ़ सकती है । भूमि को पहले से अधिक उत्पादन के योग्य बनाया जा सकता है । लेकिन हम यह भी जानते हैं कि दामों में भारी कमी आयी है । और यदि हम सूचकांक देखें तो पायेंगे कि दामों में लगभग 46 प्रतिशत की गिरावट आयी है । हम यह भी जानते हैं कि आज संसार में उपभोग से बहुत ज्यादा उत्पादन हो रहा है । हम यह भी जानते हैं कि पेट्रोल पर आधारित यातायात के आधुनिक साधनों ने भारवाही पशुओं को बाहर कर दिया है । हमारे देश में अभी भी लाखों भूखे तथा साधनविहीन व्यक्ति हैं । लेकिन यहां कृषि उत्पादनों के निर्यात की सीमित सम्भावना ही है और लाभप्रद दर पर इसके निर्यात की सम्भावना तो और भी कम है । मेरे विचार से यह बुनियादी बात है और माननीय वित्त सदस्य को इसे स्वीकार करना चाहिए । मैं उनसे जानना चाहूँगा कि उन्हें हमारी व्याख्या से किसी तरह की आपत्ति है या नहीं? और अगर हां, तो कैसे?

मान्यवर, दूसरी बात इस प्रकार है । आज अधिक उत्पादन के लिए इस सीमा तक उत्पादन और मशीनीकरण के आधुनिक साधनों का प्रयोग हो रहा है कि सभी उत्पादों का उपभोग कठिन हो गया है । वस्तुतः युद्ध के बाद से संसार भर में विनिमय योग्य वस्तुओं के दामों में लगभग 100 प्रतिशत की वृद्धि हुई है । 1925 तक इसमें 40 प्रतिशत की वृद्धि हो गयी थी और 1925 से 1929 के बीच उत्पादन और तेजी से बढ़ा और यही अधिकांश देशों में समृद्धि के बीच आर्थिक मंदी, अशान्ति और निर्धनता का मूल कारण है ।

मान्यवर, हम एक दूसरी परेशानी का सामना कर रहे हैं । आप एक लघु उद्योग शुरू कर सकते हैं । मैं लघु उद्योग की उपयोगिता पर विवाद नहीं करना चाहता । उनका एक स्थान है लेकिन यदि आज उन्हें लगाने के लिए बाकी सब को छोड़ देंगे, अगर आप उन्हीं पर सारा ध्यान केंद्रित कर देंगे, और अगर आप खासकर

भारी उद्योगों के लिए मशीनीकरण की किसी परिष्कृत पद्धति का प्रयोग नहीं करेंगे तो आप इस दुनियां में किस तरह प्रतिस्पर्धा कर पायेंगे । आप उस व्यक्ति से कैसे प्रतियोगिता कर पायेंगे, जिसने आधुनिक यंत्रों से विशाल पैमाने पर सस्ता सामान पैदा किया है ? यह साफ है कि आप प्रतियोगिता नहीं कर पायेंगे । फिर वर्तमान स्थिति से निपटने का क्या रास्ता है? निःसंदेह आधारभूत सत्य सामने है । जब तक आप अधिक उत्पादन नहीं करेंगे तब तक आप इस देश के औसत व्यक्ति को अधिक क्रय करने में समर्थ नहीं बना पायेंगे । जब तक अधिक उपभोग नहीं करेंगे तब तक आप अधिक उत्पादन नहीं कर पायेंगे । इस तरह आप एक दुष्चक्र में हैं । आप इससे कैसे बाहर निकल सकेंगे? इससे बाहर निकल पाना बहुत आसान नहीं है । लेकिन यदि आप अपने सामने की जिम्मेदारियों के अनुरूप नहीं हैं तो आप बाहर चले जाइये और दूसरों को रास्ता दीजिए । आपको अपनी जिम्मेदारी के अनुरूप होना ही होगा । आप यहां राष्ट्र के न्यासी की तरह हैं । आप यहां एक बहुत अच्छा वेतन, बोनस और काफी अच्छा समुद्र पार वेतन पा रहे हैं ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग – नहीं, मैं समुद्र पार वेतन नहीं पा रहा हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – यदि आप इस पर मतदान करवा दें तो मैं इस पर अपना मत दूंगा । आपका यह कहना उचित नहीं है कि आप कार्य के योग्य नहीं हैं । प्रत्येक व्यक्ति को अपनी जिम्मेदारी के समकक्ष होना चाहिए और यदि ऐसा नहीं है तो उसे अपनी अहसाय स्थिति को स्वीकार करके चले जाना चाहिए । मान्यवर, मैं माननीय वित्त सदस्य के दृष्टिकोण से आश्चर्यचकित हूँ । इस संकट के समय इन विषयों पर उनकी सुविधाप्रिय 'कार्य-प्रणाली' समझ के बाहर है ।

मान्यवर, दो बातों का सन्दर्भ देने के बाद अब मैं तीसरी का सन्दर्भ दूंगा जो कि वर्तमान अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण आयाम है । हम अपने देश के उद्योगों के प्रोत्साहन के लिए संरक्षणवादी नीति पर चल रहे हैं । आप इसे विभेदक संरक्षण की नीति कह सकते हैं । मैं यह कहकर यहां उपस्थित कुछ महानुभावों को राहत पहुँचा सकता हूँ कि मैं इस तरह की संरक्षणवादी नीति के विरुद्ध नहीं हूँ । बशर्ते इसमें कुछ चीजें और जोड़ दी जाएँ क्योंकि अपने आप में संरक्षण की नीति निर्दोष नहीं है । यह प्रतिगामी प्रकार का करारोपण है, अर्थात् इसमें धन का प्रवाह निर्धनों से धनिकों की ओर होता है जो कि अप्राकृतिक है । दूसरी चीज यह है कि इससे अक्षमता को प्रोत्साहन मिलता है । तीसरी बुराई यह है कि यह राज्य को राष्ट्रीय कोष का

दुरुपयोग करने का अवसर देती है जिसमें संरक्षण अफीम की तरह काम आता है; संरक्षण के नाम पर सरकार दुरुपयोग और वैभव के लिए काफी धन प्राप्त कर लेती है । संरक्षण और क्षमता की देश के भीतर उपस्थिति और दूसरे देशों से प्रतियोगिता न कर पाने की परवर्ती अयोग्यता की चौथी बुराई यह है कि जब भी कभी इन कृत्रिम बैसाखियों को हटाया जाता है, पूरी सरचना चरमराकर गिर जाती है । इस प्रकार संरक्षण की नीति की कतिपय अपरिहार्य हानियाँ हैं । इसके अतिरिक्त इस नीति से राज्य के भीतर एक सीमा तक भ्रष्टाचार भी पनपता है । चूँकि तमाम उद्योग माननीय वित्त सदस्य का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं...

एक माननीय सदस्य-आप वाणिज्य-सदस्य की ओर संकेत कर रहे हैं?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत—हाँ, वाणिज्य सदस्य की ओर ही । लेकिन अभद्र तरीके से नहीं । मैं देखता हूँ कि वाणिज्य सदस्य यहां नहीं हैं । मुझे आशा है कि जब वे मेरी बात सुनेंगे, तो इसका बुरा नहीं मानेंगे । मान्यवर, इन प्रतिकूल तथ्यों को स्वीकार करने के बाद भी हमें कोई सन्देह नहीं है कि औद्योगिक विकास की शैशवावस्था में हम बिना अपने देश में एक सीमा तक संरक्षण और सुरक्षा-कवच प्रदान किए कोई विकास नहीं कर सकते हैं । हम देशी वस्तुओं का उत्पादन नहीं कर सकते और इसके बिना हम दुनिया से प्रतियोगिता नहीं कर सकते । नवजात उद्योगों को संरक्षण मिलना ही चाहिए । इसी के साथ यह भी याद रखना चाहिए कि हमारे देशवासी अकल्पनीय रूप से निर्धन हैं और संरक्षण से उनके ऊपर अतिरिक्त भार पड़ता है क्योंकि उनको खरीदी हुई चीज पर अतिरिक्त खर्च करना पड़ता है । इन वजहों को हमें ध्यान में रखना चाहिए । मान्यवर, आप संरक्षण समाप्त करके स्थिति में सुधार नहीं ला सकते । और अधिक सामान आएगा, जितनी भी धातु बची है वह भी चली जाएगी और देश की क्रय करने की अन्तर्निहित शक्ति तथा अपने को पोषित करने की शक्ति समाप्त हो जायेगी । उद्योग की वर्तमान स्थिति की एक विशेषता और है जिसे ध्यान में रखना चाहिए । यदि संयोजन का अभाव है तो सामान्यतया यंत्रीकरण से बेरोजगारी ही बढ़ती है, विचित्र लग सकता है, लेकिन यह सत्य है कि यन्त्रीकृत साधनों के विस्तार की तात्कालिक परिणति बेरोजगारी की वृद्धि में होती है । शक्कर उद्योग का ही उदाहरण देखिए । आधुनिकीकृत शक्कर उद्योग ने सम्भवतः कुछ हजार श्रमिकों का उपयोग कर लिया है लेकिन इसने खाण्डसारी में लगे लाखों ग्रामवासियों को बाहर फेंक दिया है । रेलवे की भी यही कहानी है । रेलवे ज्यादा बड़ी मात्रा में ज्यादा सुविधा के साथ जिन्स पहुँचा सकती है लेकिन उसका देश की सामान्य आर्थिक

स्थिति पर दुष्प्रभाव भी पड़ता है और इसने यातायात-क्षेत्र के लाखों श्रमिकों को बेरोजगार कर दिया है । इसलिए समन्वय के अभाव में बड़े उद्योग बेरोजगारी बढ़ाते हैं । हम परिस्थितियों को फिर से याद कर सकते हैं । अपने-आप से खेती हमारे देश देशवासियों का पोषण नहीं कर सकती और देश की वर्तमान स्थिति में खेती को लाभप्रद नहीं बनाया जा सकता है । यह पहली समस्या है । छोटे उद्योग बड़े उद्योगों से प्रतियोगिता नहीं कर सकते और हाथ या पुराने तरीकों से पैदा की गयी वस्तुयें किसी प्रतिस्पर्धा में टिक नहीं सकती । यह दूसरी समस्या है । अपने अनियंत्रित रूप में संरक्षण कतिपय निश्चित परिस्थितियों को पैदा करता है, जो कि क्षतिकारक हैं । यह तीसरी समस्या है । चौथी बात यह है कि हमारे देश में इतनी निर्धनता है कि हमें देशवासियों के जीवन–स्तर को ऊपर उठाने का हर सम्भव प्रयास करना है । इन चार आधारभूत सिद्धांतों को सदैव ध्यान में रखना चाहिए । और इसका समाधान क्या है? मेरे मस्तिष्क में कोई सन्देह नहीं है कि इसका समाधान, सम्भव समाधान, एकमात्र असरदार समाधान, एकमात्र सक्षम समाधान राजकीय योजना में ही है-आप इसे न्यूडील कह सकते हैं या कोई भी मनचाहा नाम दे सकते हैं । मुझे नाम से कोई शिकायत नहीं है ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग– रूस !

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – अगर आप मुझसे सहमत हों तो 'रूस' बेहतर है : यहां मेरा मतलब है हिंसा और नास्तिकता-जिसका विरोध मैं इस आधुनिक युग में भी करता हूं – को हटाने के बाद बचा हुआ रूस । इन चीजों को हटा दीजिए और वैवाहिक मामलों में थोड़ी कट्टरता जोड़ दीजिए, फिर मुझे रूस से शिकायत नहीं है और मैं आपसे सहमत हो जाऊँगा । मुझे राष्ट्रीय समाजवाद शब्द से भी कोई आपत्ति नहीं है । मैं इसे शाब्दिक अर्थ में लेता हूं । ऐसा लगता है कि माननीय वित्त सदस्य को इस शब्द से अरुचि है । वे इससे भयभीत क्यों हैं? यदि इससे समाधान सम्भव है तो इसका उपयोग क्यों न किया जाय? मैं न तो पूँजीवादी हूँ, न ही साम्यवादी और न ही समाजवादी; मुझे एक टेलीफोन आपरेटर का उत्तर याद आ रहा है जो उसने एक बार प्रान्त के माननीय वित्त सदस्य को दिया था । माननीय सदस्य ने एक बार एक्सचेंज फोन करके एक नम्बर मांगा और आपरेटर ने भी प्रयास किया । लेकिन फिर भी विलम्ब हो रहा था । थोड़ा खीझकर माननीय सदस्य ने उससे पूछाव "क्या आप नान कोआपरेटर है? इतनी देर क्यों हो रही है?" उस व्यक्ति ने उत्तर दिया "मै न तो नान कोआपरेटर हूँ और न कोआपरेटर; मै तो सिर्फ एक आपरेटर हूँ–" (हंसी) जहां तक मेरा मामला है, न तो मै आदर्शवादी हूँ

और न भौतिकवादी; मैं यथार्थवादी हूँ । मैं स्थिति का आकलन करता हूँ, मैं अपने सामने के तथ्यों का मूल्यांकन करता हूँ और उनकी जांच-पड़ताल करने, मापने और पहचानने का प्रयास करता हूँ । मैं किसी समाधान पर पहुंचने और परेशानी से पार पाने की योजना पर विचार कर रहा हूँ । मैं इससे भागने पर विश्वास नहीं करता । आखिर समाधान क्या है? समाधान साफ है । आज मुद्रा सस्ती है । मेरी तरह भारत सरकार को भी यह अच्छी तरह मालूम है कि उसे बड़ी सरलता से धन मिल जायगा । वस्तुतः इस वर्ष भी उन्होंने 50 करोड़ रुपये की प्राप्ति का प्राविधान रखा है । मैं जानता हूं कि उन्होंने बचत बैंक में लगभग 55 करोड़ रुपया जमा किया है । उनके नगद प्रमाणपत्रों में 15 करोड़ और हैं, इसलिए अगर वे चाहते तो उनके पास रास्ता था । रेलवे का इस देश में कैसे विकास हुआ? यदि अहस्तक्षेप की नीति का पालन किया जाता तो क्या इस देश में एक मील पटरी भी बिछ सकती थी? क्या मेरे माननीय मित्र वित्त सदस्य को मालूम नहीं है कि कैसे साधन इसमें काम आए थे? इसमें गारंटी, विशेष लाभ, सब्सिडी और सभी सम्भव सहायता दी गई थी । क्या इंग्लैण्ड में इस समय भी इसी तरह के तरीके काम में नहीं लाये जा रहे हैं? वे विद्युत परिषद के बारे में क्या सोचते हैं? क्या इसमें शासक और जनता के प्रतिनिधि सम्मिलित नहीं हैं? प्रसारण समिति के बारे में क्या सोचते हैं? क्या यह आखिरकार एक राजकीय सहायता प्राप्त उद्योग नहीं है? क्या इस तरह की अन्य बहुत सी संस्थाएं नहीं हैं? तब फिर समस्याओं से क्यों भागते हैं? आज पूरे विश्व में चल रही उद्योगवाद पर केन्द्रित राज्यों की प्रतियोगिता के मध्य अविकसित देश केवल राजकीय नियंत्रण के माध्यम से ही अपना अस्तित्व सुरक्षित रख सकते हैं । (कांग्रेस दल की बेंचों में तालियां) इसमें कोई सन्देह नहीं हो सकता । एक ओर सरल शर्त पर मुद्रा उपलब्ध है, दूसरी ओर कतिपय उद्योग हैं जिनका विकास किया जा सकता है । हमारे संसाधन असीमित हैं । हमारे देश में लोहा है, कोयला है, खानें हैं, हमारे पास तांबा है, हमारे पास आखिर किस चीज की कमी है और हम क्या नहीं कर सकते? लेकिन मैं आपको बताता हूँ कि हम एक 'स्वराज सरकार' चाहते हैं । माननीय वित्त सदस्य ने मेरे प्रति थोड़ा अन्याय किया मैंने उनसे आज 100 करोड़ रुपये के ऋण माँगने की अपेक्षा नहीं की थी । मैने कहा था कि यदि हमारे यहां इस समय 'स्वराज' शासन होता तो मैं इस शासन से विनम्रतापूर्वक अनुरोध करता कि वह हमारे देश के पुनरुत्थान के लिए राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की एक विशाल योजना प्रारम्भ करे और उसके लिए 100 करोड़ रुपये का—वे प्रतिवर्ष कहते हैं और मैं स्वीकार करता हूं – ऋण हमें प्रति वर्ष उस समय तक देती रहे जब तक हमारी योजना पूरी नहीं हो जाती । जब योजना पूरी हो जाय तो हमें ऋण लेना रोक देना चाहिए । वित्त सदस्य के क्या विचार हैं? एक करोड़ रुपये उन्होंने

ग्रामीण पुनर्निर्माण के लिए दिये हैं । क्या उन्हें भारत के गांवों की संख्या मालुम है? वे अभी नये हैं और सम्भव है अभी उन्हें जानकारी न हो । लेकिन यदि वे यह जानते हैं तो मैं उन्हें श्रेय देता हूं । यदि उन्होंने यह तर्क दिया होता कि बहुत ऐसी बाते हैं, जो इस देश के सामान्य जीवन–स्तर को उठाने के उद्देश्य से लागू की गयी किसी विशाल रचनात्मक योजना से जुड़ने के पहले हमें मालूम होनी चाहिए, तो इसके आधार पर परिवीक्षा के एक निश्चित समय का आधार बनेगा । उन्होंने तो अभी ही साल्टर रिपोर्ट को निरस्त कर दिया है । जैसा कि वह निश्चित तौर पर जानते हैं; सर आर्थर साल्टर चौदह वर्षों तक राष्ट्र संघ के आर्थिक सलाहकार रहे हैं । इतने व्यापक अनुभव वाले व्यक्ति को इस देश में बुलाया गया और उन्होंने एक योजना बनायी लेकिन वित्त सदस्य ने, जो कि अभी बहुत नये हैं, बम्बई उतरने के कुछ समय बाद ही उसे निरस्त कर दिया । उसके बाद हमारे पास मेसर्स बाउली और राबर्टसन जैसे विशेषज्ञ भी थे जिनके ऊपर भी शासन ने पर्याप्त धन खर्च किया था । लेकिन मेरे मित्र ने, जो अभी हाल ही में इंग्लैण्ड से आये हैं और इस देश की समस्याओं से – मैं उन्हें मूर्ख नहीं कहूंगा –अपरिचित हैं और जैसा कि स्टेट्समैन ने आज सुबह लिखा है, उन्होंने इस रिपोर्ट को नाली में फेंक दिया । योजना का यह विचार और यह योजना नयी नहीं है । इसकी लगभग सार्वभौम लोकप्रियता है और "स्टेट्समैन" 'दि हिन्दुस्तान टाइम्स' और ' दि हिन्दू' समेत सभी प्रकार की विचारधाराएं इस मामले में एकमत हैं । इन दिनों मैं देखता हूं कि सरकार इस देश के सार्वजनिक प्रेस को बहुत सम्मान दे रही है– खास तौर पर वित्त सदस्य के दायें बैठे हुए माननीय सदस्य तो बहुत सचेत रहते हैं ।

श्री एम०एस० अणे – वे पढ़ते नहीं हैं । वे कहते हैं कि वे कभी भी नहीं पढ़ते । (हंसी)

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – वाकई ! खैर इस मुद्दे पर पूरा देश एकमत है । संसाधन पर्याप्त हैं । एक शुरुआत की जा सकती है । इस कंठिनाई का कोई अन्य प्रभावकारी समाधान नहीं है । मैं जानता हूं कि इसके बावजूद आप इसलिए सक्रिय नहीं हैं क्योंकि इससे इंग्लैण्ड के उद्योगों पर प्रहार होगा । यदि हम अपने देश में उद्योग को यंत्रीकृत करेंगे तो विदेशों से आयात होने वाली वस्तुओं पर प्रहार तो होगा ही । वर्तमान विश्व की मूर्खता को देखिए – माननीय वित्त सदस्य ने कल इस बात की आलोचना की और वे नि:संदेह इस बात से व्यथित दिख रहे थे कि दुनिया के लोग सस्ता सामान खरीदना चाहते हैं और उसे खरीद भी लेते हैं । आखिरकार क्या सामान का सस्ता होना वाकई दुर्भाग्यपूर्ण है? दरअसल, वर्तमान स्थिति रहस्यमय

है । क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है कि हम लोग जापानी सामान के सस्ते मिलने की शिकायत करें ? क्या यह वाकई मूर्खतापूर्ण और अनुचित नहीं कि एक ओर तो विश्व में उपभोग की सीमा से अधिक उत्पादन हो रहा है और फिर भी लोग भूखे हों जबकि सामान समुद्र और आग के हवाले किया जा रहा है? यह दानवी और अक्षम्य कृत्य है। हमें सचेत हो जाना चाहिए। अर्थशास्त्र के नियम अकाट्य हैं ।

अब मैं वित्त विधेयक के बारे में कुछ शब्द कहूँगा । वित्त विधेयक में तीन प्रकार के कर प्रस्तावित हैं—नमककर, आयकर और डाक प्राप्तियाँ । मैं यह तुरन्त कह सकता हूँ कि जहां तक मेरा मामला है, मुझे यह विधेयक नहीं चाहिए– यदि ऐसा करके मैं स्वराज्य के दिन समीप ला सकूं । जैसा मैंने कहा, मैं इस सरकार को चलाने के लिए एक पाई भी खर्च नहीं करना चाहता, जो यहां हमारी दासता को स्थायी बनाने और विदेशी प्रभुत्व को बनाये रखने के लिए स्थापित हुई है । लेकिन यदि सरकार इस सदन की इच्छाओं के अनुकूल रहती है तो मैं प्रतीक्षा करूंगा, देखूंगा और फिर फैसला करूंगा । जैसा मैंने कहा, विधेयक में तीन प्रस्ताव हैं, मैं स्पष्ट घोषित करना चाहता हूं कि इस देश में विदेशी लोगों के वर्चस्व को बनाये रखने के लिए धन स्वीकृत करने के विचार से ही मेरी आत्मा विद्रोह कर बैठती है । यह मुझे अनैतिक लगता है और पुराने ख्याल का होने के नाते मैं अभी भी नैतिकता के शाश्वत सिद्धांतों को महत्वपूर्ण मानता हूँ । लेकिन मान्यवर, अपनी समस्त वेदना और अन्तरात्मा के अवसाद के बावजूद मैं अपने को व्यावहारिक व्यक्ति बनाकर नियंत्रित कर सकता था, यदि सरकार ने निर्धन व्यक्तियों को राहत पहुंचाने के उद्देश्य से कोई नीति बनायी होती । मैं अकेले इसी मानदण्ड का प्रयोग करता हूँ । जहां तक वित्तविधेयक का प्रश्न है, जैसा मैंने संकेत दिया है, इसमें दो या तीन मुख्य बातें हैं । पहला मामला नमक का है । माननीय मित्र यह जानते हैं कि इस देश में अप्रत्यक्ष कराधान वैसे ही बहुत अधिक है और इसे कम किया जाना आवश्यक है । नमक निर्धनतम व्यक्तियों की भी अनिवार्य आवश्यकता है । माननीय वित्त सदस्य आत्म–संरक्षण के नियमों को लागू करना चाहते हैं । नमक से श्रेष्ठ संरक्षक ढूढ़ना कठिन है और मुझे उनको याद करवाना चाहिए कि मानवीय नियति के निर्माताओं और मानवता के संरक्षकों को पृथ्वी का नमक कहा जाता है और यदि माननीय वित्त सदस्य इस देश के नमक के प्रति निष्ठावान हैं तो उन्हें निर्धनों की परेशानी को दूर करना चाहिए । इसलिए मेरा अनुरोध है कि यदि वे इसे पूरी तरह समाप्त न कर सकें तो इसे कम तो अवश्य कर दें । मैं उनसे आयकर की न्यूनतम सीमा को ऊपर करने का अनुरोध करता हूं क्योंकि दूसरे कई कारणों के अलावा यह अनार्थिक

कर भी है । 1,000 से 2,000 के समूह में 2,75,000 मूल्यांकित व्यक्तियों से आप केवल 50 लाख की अपेक्षा करते हैं जबकि बाकी मूल्यांकित व्यक्तियों से, जिनकी संख्या भी कुल इतनी ही है, आप 17 करोड़ की अपेक्षा रखते हैं । मेरे विचार में उन्हें यह मालूम है कि इस कर की वसूलयाबी पर प्रतिवर्ष 10 लाख का खर्च आता है । उन्होंने इस वर्ष के बजट में इस मद में 9 लाख रुपये की वृद्धि इसी वर्ग से छोट-छोटी राशि एकत्रित करने के उद्देश्य से की है, जिसे दे पाना इस वर्ग के लिए कठिन है । मैं उनसे आयकर से छूट की निचली सीमा 2,000 रु० करने की मांग करता हूँ । वे जानते हैं कि इस देश में विवाहित व्यक्तियों, बच्चों इत्यादि के लिए कोई राहत नहीं दी गयी है । इसलिए उन्हें कम से कम करारोपण की सीमा 2,000 रुपये तक कर देनी चाहिए । उनसे मेरा तीसरा अनुरोध है कि लिफाफे और पोस्ट कार्ड का मूल्य कम किया जाय, । निर्धन व्यक्ति को सम्पर्क, संस्कृति और शिक्षा के लिए इसकी आवश्यकता होती है । मैं सरकार की नीति नहीं समझ पा रहा हूँ । वे जनता के घोषित लाभ के उद्देश्य के लिए प्रसारण की महंगी योजनाएं लागू कर रहे हैं लेकिन पोस्ट कार्ड और लिफाफे के प्रतिबन्धात्मक मूल्य रख रहे हैं । शहर तथा गांवों के बीच संचार का सरलतम साधन पोस्टकार्ड ही है । प्रसारण में लाखों लगाने का क्या औचित्य हो सकता है जबकि डाक की दरें प्रतिबन्धात्मक हैं? यदि आप डाक–प्रतिवेदन के साथ संलग्न चार्ट को देखें तो पायेंगे कि लिफाफे और पोस्टकार्ड का प्रयोग लगातार कम होता जा रहा है क्योंकि लोग इसे खरीदने में परेशानी महसूस करते हैं । वस्तुत: कई स्थानों पर मोटर–बसें यातायात के लोकप्रिय साधन हो गये हैं । आपको औरों से भी प्रतियोगिता करनी है । आप दरें कम कर दें और निर्धन व्यक्तियों का कुछ ख्याल रखें तो मुझे पूरा विश्वास है कि इन परिवर्तनों का राजस्व पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा । जैसा मैंने कहा है, मैं उससे अधिक राजस्व की अपेक्षा करता हूँ जितने का प्रावधान माननीय वित्त सदस्य ने किया है । इसके अलावा उन्होंने कुछ ऐसी प्राप्तियों को छोड़ दिया है जिसकी सम्भावना थी । हम गणना कर सकते हैं और हमें करनी भी चाहिए । हम रेलवे से प्रतिवर्ष छह करोड़ की आशा करते हैं । इसे केवल स्थगित किया जा रहा है और कोई कारण नहीं है जिसके आधार पर हम इसे राजस्व में न जोड़ें । तीसरी चीज, जिसे हमें भूलना नहीं चाहिए, यह है कि हमने अभी तक रेलवे के 27 करोड़ रुपयों के आरक्षित धन को निकाला नहीं है । राज्य की आय में वृद्धि करने के अन्य भी कई उपाय हैं । उदाहरण के लिए मेरा सुझाव है कि बचत–बैंक में निक्षेप की सीमा बढ़ाई जाय । मेरा विश्वास है कि यदि जनता को बिना किसी प्रतिबन्ध के बचत-बैंक में निक्षेप की अनुमति मिले तो करोड़ों रुपये की वृद्धि होगी, और आप इस तरह काफी बचत कर सकेंगे । आप नीची दरों पर प्राप्त धन की सहायता से ऊँचे ब्याज-दरों वाले

ऋणों को चुका सकते हैं और इस तरह बचत कर सकते हैं, और जहां तक मेरा मामला है, मुझे खेद नहीं होगा यदि आप आयकर अनुसूची को संशोधित करके अनार्जित आय–जैसे ब्याज की आय–पर अधिक कर लगा देते हैं और अगर आप एक निश्चित न्यूनतम से ऊपर का लाभ उठाने वाली कम्पनियों पर ऊँची दर से करारोपण करते है (जैसे 6 प्रतिशत से अधिक लाभ पाने वाली कम्पनियाँ) तो यह भी उपयोगी होगा । मैं सोचता हूं कि कराधान का अतिरिक्त भार डाले बिना भी कई अन्य साधनों से वित्तीय स्थिति सुदृढ़ की जा सकती है । मैं इस स्तर पर वित्त-विधेयक की विषय-वस्तु पर और अधिक नहीं कहूँगा ।

मान्यवर, मैं आपकी अनुमति से दो पुस्तकों के उद्धरण के बाद अपना भाषण समाप्त करूंगा । प्रथम पुस्तक 'विजडम एण्ड वेस्ट इन दि पंजाब विलेज' मि० डार्लिंग द्वारा लिखित है और पुनर्रचना के लिए ऋण द्वारा वित्त व्यवस्थापन की समर्थक है । मि० डार्लिंग लिखते हैं:

"पुनर्रचना ऋण के प्रस्ताव की निन्दा की सम्भावना इसलिए है क्योंकि यह नया और दृष्टान्त विहीन है । लेकिन भारत की स्थिति भी दृष्टान्त विहीन है : 36 करोड़ जनसंख्या और 10 प्रतिशत से भी कम साक्षर जनता का देश भारत जनतन्त्र और स्वशासन के खतरनाक पथ की ओर अग्रसर है और इस बीच मन्दी ने ऋण भार को दुगुना कर दिया है तथा जीवन-स्तर को युद्धपूर्व की स्थिति में पहुंचा दिया है । इस अर्थ में दृष्टान्त का अस्तित्व माना जा सकता है । युद्ध के समय भारत ने 10 करोड़ पौण्ड का योगदान बिना यह सोचे किया था कि कैसे और कब इसका भुगतान होगा । आज का समय भी निर्विघ्न नहीं है क्योंकि विश्व विस्फोटक वस्तुओं से भरा है और लोगों का हृदय असाधारण रूप से अशान्त है । पुनर्रचना ऋण युद्ध-ऋणों से कई मायनों में श्रेष्ठ रहेगा । प्रथम तो वह उत्पादक है । दूसरे यह आन्तरिक ऋण होगा और देश में ही मुख्यतः खर्च होगा । तीसरे यह 4 प्रतिशत से भी कम पर प्राप्त हो सकेगा; और अन्तिम बात यह कि इससे कई मैट्रिक्युलेटों और स्नातकों को रोजगार मिल सकेगा । (हंसी) और एक अन्य तर्क भी दिया जा सकता है । यह समय विशाल रचनात्मक प्रयास के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है । राजनैतिक क्षेत्रों में परिवर्तन के पहले इसके संगत सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में परिवर्तन होना चाहिए, और यदि नेतृत्व गुणवान है तो इससे आवश्यक गति प्राप्त हो सकेगी ।"

निश्चित रूप से मि० डार्लिंग के विचार मुझसे बहुत अलग हैं, फिर भी इस मामले में माननीय सदस्य को इन पर विशेष ध्यान देना चाहिए ।

मान्यवर, मैं साल्टर का एक उद्धरण देना चाहता हूं जो उनकी पुस्तक 'रिकवरी' का उपसंहार है और मैं माननीय वित्त सदस्य से इस मुद्दे पर विचार

करने का अनुरोध करूंगा :

"अपने सामने के कार्यों की विशालता को देखकर मानव की आत्मा एक बार तो संकोच-ग्रस्त हुई और उसकी दृष्टि संकुचित हुई । जन चेतना को जहां साहसी होना था, वहां सशंकित हैं, और जहाँ व्यापक और उदात्त नीति की आवश्यकता है, वहां वह रक्षात्मक है । भयभीत चूहे जिस तरह अपनी बिलों की ओर भागते हैं, उसी तरह लोग तटकरों, प्रतिबन्धों, राष्ट्रवादी नीतियों, घरेलू मुद्राओं, स्थानीय क्रयों और निजी निक्षेपों की ओर भागते हैं । निश्चित रूप से यह क्षणिक ही है । इधर के कुछ वर्षों को छोड़ दें तो किस देश ने इससे महान आवश्यकता और योग्य उद्देश्य के लिए साहस, व्यक्तिगत समर्पण , औद्योगिक और वित्तीय नेतृत्व और लोक-निर्देशन के उन गुणों का प्रदर्शन नहीं किया है, जिनकी आज हमें आवश्यकता है । हम यदि अपने भाग्य को टटोलें तो पायेंगे कि हम बहुत अधिक सौभाग्यशाली पीढ़ी के मनुष्य हैं । एक जीवन-काल में ही अभी तक के अभिलिखित इतिहास से कहीं ज्यादा, विज्ञान ने हमें प्रकृति पर अधिक शक्ति दी है और अन्वेषक मस्तिष्क का व्यापक विस्तार किया है । आज और केवल आज ही हमारी भौतिक सम्पदा, तकनीकी ज्ञान और औद्योगिक दक्षता इतनी सक्षम हो सकी है कि संसार की विशाल जनसंख्या में प्रत्येक को भौतिक सुविधा, पर्याप्त अवकाश और सभ्यता के समृद्ध उत्तराधिकार में सहभागिता दी जा सके । हमें अपनी विशिष्ट गतिविधियों और अपनी वर्गगत और स्वार्थी इच्छाओं की प्रबल ऊर्जा को नियंत्रित करने वाली मनीषा की आवश्यकता है । अपने सामने आई कठिनाइयों से निपटने के लिए साहस और सदाशयता का वह गुण इस सशंकित और रक्षात्मक विश्व के लिए आवश्यक है जो उसने इस समय छोड़ दिया

नमक-कर और निर्धन भारतीय

मान्यवर, आपकी अनुमति और सर कावसजी जहाँगीर' की स्वीकृति से मुझे इस संशोधन संख्या 4 को प्रस्तुत करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है : "कि विधेयक की धारा 2 में निम्न प्रतिस्थापन किया जाए :

"2 अप्रैल 1935 को प्रारम्भ होने वाले वर्ष में भारतीय नमक कर 1882 की धारा 7 के प्रावधानों के होते हुए भी सपरिषद–महाराज्यपाल बर्मा और अदिव के अतिरिक्त ब्रिटिश भारत में उत्पादित अथवा आयातित नमक पर कोई कर नहीं लगायेंगे ।"

सर कावसजी जहाँगीर – यदि मैं चाहूँ तो आपत्ति कर सकता हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – इसीलिए मैंने कहा था 'आपकी अनुमति से' मेरे द्वारा सदन में प्रस्तुत प्रस्ताव पूर्ववर्ती संशोधन के प्रस्तुतकर्ता के उद्देश्य को पूरा करने के लिए ही है, और हम लोगों में पूर्ण सामंजस्य है । इसमें केवल स्वरूप का अन्तर है । मैंने इसी उद्देश्य को अधिक वैधानिक और एक निश्चित सीमा तक अधिक कारगर तरीके से प्राप्त करने का प्रयास किया है और यदि जबलपुर के माननीय सदस्य का प्रस्ताव सदन में पारित भी हो जायगा, तो भी उसमें एक पेंच बना रहेगा । मैं यह नहीं कहता कि सपरिषद महाराज्यपाल उस पेंच का प्रयोग करेंगे, लेकिन फिर भी यह इस समस्या से निपटने का अपरिष्कृत तरीका है । यदि हम वास्तव में नमक–कर हटाना चाहते हैं तो हमें यह बात स्पष्ट शब्दों में कहनी चाहिए और प्रस्ताव के स्वरूप के कारण किसी तरह के भ्रम की गुंजाइश नहीं छोड़नी चाहिए । मान्यवर, मुझे अपने देश के ऐसे प्रत्येक कर पर तरस आता है जिसके अन्तर्गत एक नगण्य राशि की वसूली लाखों लोगों से होती है । इस अराजकता के युग में भी यदि कोई अमेरिका में इस तरह के कर की बात करेगा तो वहाँ के लोग आश्चर्यचकित हो जायेंगे ।

यह भाषण पंतजी ने 1 अप्रैल, 1935 को नमक-कर पर हुई बहस के दौरान अपना संशोधन पेश करते हुए दिया था । उनका प्रस्ताव था कि प्रस्तावित बिल के अनुच्छेद में संशोधन कर उसके स्थान पर "भारतीय नमक अधिनियम, 1882 की धारा 7 के प्रावधान के बावजूद गवर्नर जनरल इन कांउसिल को, 1 अप्रैल, 1935 को आरम्भ होने वाले वर्ष के दौरान, बर्मा और अदिव को छोड़कर ब्रिटिश भारत में बनाये गये या उसमें बाहर से आयात किये गये नमक पर कोई शुल्क नहीं लगाना चाहिए" कर दिया जाय ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग – योजना....... ?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त एक-दो दिन में योजना के विषय पर मेरे भाषण की बारी आयेगी और मैं आशा करता हूँ कि मेरे माननीय मित्र इस बात की प्रशंसा करेंगे कि मैं इस समय विषय से अलग नहीं जा रहा हूँ । अपने सामने आये इस सवाल पर मैं महसूस करता हूँ कि नमक-कर हमारे देशवासियों की अकल्पनीय निर्धनता से जुड़ा हुआ है और ठीक इसी कारण से हम इस कर का और इसे बरकरार रखने का विरोध करते हैं । यदि हम धनी होते तो किसी सरकार ने ऐसा कोई कर न लगाया होता जिसमें – स्वयं सरकार की गणनानुसार – 28 करोड़ लोगों से औसतन चार आना प्रति व्यक्ति की वसूली होती है । दूसरी तरफ यदि हम धनी होते तो हम उस कर का ख्याल न करते जिससे, जैसा कि अभी मि० लॉयड ने बताया, प्रति व्यक्ति केवल तीन आने या दस पैसे का भार पड़ता । मान्यवर, यह (कर) आर्थिक पतन के उस स्तर पर केवल एक टिप्पणी है, जहाँ यह देश गिराया जा चुका है । तीन-चार साल पहले मैं रेलगाड़ी से यात्रा कर रहा था और कुछ सचेत अमेरिकी यात्रियों से मिला जो भारत के शहरों की यात्रा कर रहे थे और कई गांवों को भी देख चुके थे । मैंने उनसे पूछा कि इस देश में किस चीज ने उन्हें सबसे अधिक प्रभावित किया? उन सभी ने एकमत से यही कहा कि उन्हें इस देश के निवासियों की भयंकर निर्धनता ने सबसे अधिक चकित किया । उन्होंने कहा कि उनके लिए तो यह सोच पाना भी सम्भव नहीं है कि इस दुनिया की कोई भी दोपाया जाति इस तरह से कैसे अपना जीवनयापन कर सकती है जैसे इस विशाल देश के नर-नारी कर रहे हैं । मान्यवर, इसी पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर मैंने आपके सम्मुख यह तस्वीर पेश की है और नमक-कर के बोझ को समझने के लिए यही पृष्ठभूमि आपको भी अपने सामने रखनी चाहिए । जैसा मैंने कहा, अन्य विकसित देशों में इस तरह के कर का विरोध शायद न हो लेकिन दुर्भाग्य से हम जैसी स्थिति में हैं, हमें अपने देश की दयनीय हालत का सामना करना ही होगा । यहाँ तक कि माननीय वित्त सदस्य भी क्या यह नहीं मानते कि यह कर जनता पर बहुत भारी पड़ेगा? यदि नहीं, तो क्या मैं यह जान सकता हूँ कि वे विदेशों से आयातित नमक पर आयात कर क्यों हटाना चाहते हैं? वह इससे बहुत कम है—यह प्रति मन मात्र दो आना या छह पैसे है । वह सोचते हैं कि आयात-कर हटाकर वे बिहार, बंगाल और अन्य स्थानों के लोगों को बहुत विशेष रियायत दे रहे हैं? मान्यवर, दूसरे मुद्दों पर चाहे हमारे जो मतभेद रहे हों, मैं सोचता हूँ कि वित्त सदस्य यह तो मानेंगे ही कि रुपया 1-9-0 बिला शक दो आना 6 पाई से तो ज्यादा ही है । यहाँ शायद वे यह बात मान लें । इसलिए मान्यवर, यदि प्रति मन दो आने या छः पैसे की राहत काफी राहत दे सकती है तो रुपया 1-9-0 की राहत का तो और अच्छा प्रभाव पड़ेगा ।

मान्यवर, यह कहना सही नहीं है कि इस कर का बोझ अमीरों और निर्धनों पर बराबर पड़ता है । दरअसल मान्यवर, इस कर का बोझ गरीबों पर अमीरों की अपेक्षा अधिक पड़ता है और गरीब परिवारों में, उनके लिए संभव रहे तो, नमक की खपत अधिक होती है ।

मान्यवर, नमक मानव जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं में एक है । धनी लोग फलों, सब्जियों और कई वस्तुओं, जिनमें नमक होता है, के उपयोग से अपनी आवश्यकता भर का नमक प्राप्त कर लेते है; लेकिन जहाँ तक गरीब लोगों की बात है, उनके सामने इसके अलावा और कोई विकल्प नहीं है कि वे अपने जीवन को चलाये रखने के लिए नमक की न्यूनतम खुराक प्राकृतिक नमक से ही प्राप्त करें । इसलिए मान्यवर, यह सच्चाई है कि यदि गरीब लोगों से सम्भव होता है तो वे अमीरों के मुकाबले अधिक नमक का प्रयोग करते हैं, और इस तरह नमक-कर का प्रति व्यक्ति बोझ धनिकों की अपेक्षा निर्धनों पर अधिक पड़ता है ।

मान्यवर, इस मामले की गहराई तक जाने वाले विशेषज्ञों के अनुसार यह कर इस देश में दमनकारी है और फॉसेट के समय से ही इस कर को एक अवांछित किस्म का कर माना जाता था । मैं सोचता हूँ कि माननीय वित्त सदस्य को फॉसेट का वह वाक्य याद होगा कि "पानी, हवा और नमक को कर मुक्त होना चाहिए ।" उन्होंने यह निर्धारित किया था कि ताजी हवा, ताजे पानी और नमक के लिए किसी को कर नहीं देना पड़ेगा । यह लाभ प्रकृति ने हर आदमी को दिये हैं और इनसे किसी को वंचित रखना ईश्वर तथा व्यक्ति के प्रति एक अपराध है । इन परिस्थितियों में नमक को एक ऐसी सामग्री माना जाना चाहिए, जो राज्य द्वारा हर व्यक्ति को प्रदान की जाय और जिसके लिए किसी को पीड़ित न होना पड़े । मान्यवर, यह बार-बार सिद्ध किया जा चुका है कि नमक-कर में कमी उसके अधिक उपयोग को प्रेरित करती है । मैं मि० लायड से पूछता हूँ कि क्या वे इससे सहमत हैं, और यदि हाँ तो मैं कुछ समय पहले के उनके ही वक्तव्य की याद दिला रहा हूँ । मान्यवर, 17 मार्च, 1925 को मि० लॉयड ने कहा था, जिसे वह आज भुलाना चाह रहे हैं :

"जब 1902-03 में नमक-कर रुपया 2-8-0 था, तब प्रति व्यक्ति इसका उपयोग पांच सेर था । जब दस वर्ष बाद यह एक रुपया प्रति मन हुआ तो औसत उपयोग छह सेर था-यह मात्रा कुछ ज्यादा भी हो सकती है ।"

मुझे आशा है कि वे अपने वक्तव्य को संशोधित करेंगे और यह स्वीकार करेंगे कि उन्होंने भ्रामक धारणाओं के आधार पर ऐसी टिप्पणियाँ की हैं जो उनके पहले के वक्तव्य के विचार से ही नहीं, बल्कि तथ्य से भी बेमेल हैं । मैं सोंचता हूँ कि शासन के माननीय सदस्यों की स्मरण-शक्ति ठीक होनी चाहिए थी । मान्यवर, हमारी तरफ के सदस्यों को सफलता पूर्वक अकारण ही कमजोर स्मरण-शक्ति के नाम पर व्यंग्य और प्रताड़ना मिल सकती है; लेकिन सत्ता पक्ष से उम्मीद करते हैं कि कम से कम तथ्यों के मामले में हमारा दिशा निर्देशन करें; और मैं मानता हूँ कि एक सीमा तक हमारा उनको तथ्यों के लिए सन्दर्भित करना स्वाभाविक है, और एक सीमा तक वे हमें तथ्यों को स्वीकार करने के लिए कह सकते हैं; लेकिन यदि सत्ता-पक्ष से इस तरह की त्रुटियाँ होती हैं तो उनके तथ्य सम्बन्धी वक्तव्य अपना वह मूल्य और महत्व खो देते हैं जो उन्हें अन्यथा सहज ही प्राप्त होता ।

मान्यवर, मेरे पास एक विवरण 1899 से 1925 तक की अवधि के नमक–कर के बारे में तथा दूसरा उसके बाद की अवधि के बारे में उपलब्ध है, और दोनों एक ही निष्कर्ष पर पहुँचते हैं । समग्र राजस्व, व्यय, शुद्ध राजस्व और उपभोग के बारे में दिलचस्प सबूत मिलता है कि करों की निम्न दर उपभोग को, और इस तरह कुल राजस्व को बढ़ाती है । मान्यवर, यहीं निष्कर्ष अन्य तथ्यों से भी पुष्ट होता है । इंग्लैण्ड में प्रति व्यक्ति 40 पौंड नमक का उपभोग होता है जबकि हमारे देश में यह केवल 10 सेर है । जाहिर है, हमारे देशवासियों को वांछित नमक की मात्रा नहीं मिल पाती । मैं यह मानने को तैयार हूँ कि इंग्लैण्ड में दूसरे प्रयोजनों के लिए भी इस्तेमाल किये गये नमक को इसमें जोड़ने के कारण इसकी औसत मात्रा बढ़ जाती है, लेकिन हम लोग भी अपने पशु–धन, औद्योगिक विकास, उर्वरक और अन्य लाभप्रद कार्यों के लिए इसका इस्तेमाल कर सकते हैं । हम यह करने में समर्थ नहीं हैं ।

मि० ए०एच० लॉयड – मान्यवर, क्या मैं यह सूचित कर सकता हूँ कि सरकारी कारखानों से इन उद्देश्यों के लिए काफी नमक प्रदान किया जाता है । मैंने अपने आंकड़ों से इन राशियों को निकाल दिया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त –मैं इस तथ्य से अपरिचित नहीं हूँ, लेकिन यह सुविधा दिखावटी है । यह आशा करना हास्यास्पद होगा कि देश के किसी दूरवर्ती कोने में बसा गरीब आदमी नमक विभाग या केन्द्रीय राजस्व विभाग से कर–मुक्त नमक प्राप्त करने के लिए सीधे सम्पर्क कर सकेगा । इस कागजी कानून से उसे क्या लाभ मिलेगा? यह व्यवस्था पूरी तरह बेअसर और बेकार है । मान्यवर, मैं जिस निर्धन वर्ग की ओर से इस सदन में प्रस्ताव रख रहा हूँ, उस वर्ग को हर तोला नमक पर कर

देना पड़ता है । इस नतीजे पर कई दूसरे रास्तों से भी पहुँचा जा सकता है । इस देश में फी-आदमी नमक के उपयोग का जो औसत है उससे ज्यादा सेना में है, उससे ज्यादा जेल में है । यह तुलना किस नतीजे पर ले जाती है? कारागारों के लिए भी यह मात्रा अधिक है और सेना के लिए तो काफी अधिक है । इसमें क्या दिखता है? क्या इससे अन्तिम रूप से यह नहीं सिद्ध होता है कि अपनी तात्कालिक आवश्यकताओं के लिए एक आम आदमी नमक की जितनी मात्रा प्राप्त कर पाता है, वह उसके शरीर की सहज माँग से बहुत कम होती है, मुझे एक तथ्य की याद आती है जिसे यहाँ बैठे माननीय सदस्य शायद न जानते हों। कारागारों में हम लोगों को नमक आवंटित होता था, और जैसा मैंने आप लोगों को बताया, यह मात्रा एक भारतीय के औसत उपभोग से कहीं अधिक होती थी, लेकिन यह भी पर्याप्त नहीं होता था और हम लोग अपने लिए आवश्यक नमक बाहर से मंगवाने में अपनी जेब से कुछ आने प्रति माह खर्च करते थे, और मान्यवर, कारागार के अन्दर नमक वरदान माना जाता था । साधारण कैदी हमेशा ही नमक के लिए परेशान रहते हैं । ये सारी परिस्थितियाँ यह सिद्ध करती हैं कि इस कर के कारण लोग अपने जीवन की एक बुनियादी आवश्यकता से भी वंचित रह जाते हैं । इन परिस्थितियों में नमक-कर निश्चय ही आर्थिक पहुँच से बाहर है । यह निश्चय ही असामाजिक है । यह कर दमनकारी है ।

मान्यवर, कराधन जाँच समिति की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि कम से कम हम सदस्यों में एक डा० परांजपे इस विचार के थे कि नमक पर प्रति मन आठ आने से अधिक कर नहीं लगना चाहिए, और वर्तमान स्थिति के एक अन्य महत्वपूर्ण मसले पर भी हमारा ध्यान जाना चाहिए । गत पाँच वर्षों में कृषि उत्पादों के मूल्यों में लगभग 50 प्रतिशत की गिरावट आयी है । पांच रुपये में बिकने वाली फसलें अब सामान्यतया दो रुपये से अधिक नहीं ला पाती है; जब सब चीजों का मूल्य गिर गया है, इस रेगिस्तान में नमक का ही ऐसा नखलिस्तान बचा है जो अपने पुराने सूचकांक पर टिका हुआ है और अब भी उतना ही मंहगा है जितना तब था जब सभी कृषि उत्पादों का मूल्य (आज से) दुगुना था । आज पानी से ऊपर केवल एक टापू है यानी सरकारी कर्मचारियों के वेतनों का सुरक्षित द्वीप और उस रेगिस्तान में जहाँ सब कुछ बालू में समा गया है, केवल एक नखलिस्तान, नमक का नखलिस्तान बचा हुआ है । मान्यवर, सामान्य वर्षों में चाहे जो भी रहा हो, आज क्या यह वाकई अजीब नहीं है कि नमक, जिस पर सरकार का एकाधिकार है, पांच साल पुरानी कीमत के मुकाबले दुगुना मंहगा हो गया है । नमक आज भी रुपये में दस या ग्यारह सेर है । एक ग्रामीण पहले पांच सेर गेहूँ के बदले ग्यारह सेर नमक पाता था लेकिन

अब उसे इतने ही नमक के लिए 14 सेर गेहूँ देना पड़ रहा है । इससे साफ दिखता है कि इस मामले में सरकार कितनी निर्ममता से काम कर रही है । कोई दूसरी सरकार हर मामले में मन्दी आने पर वही पुरानी दर बनाये रखने की हिम्मत नहीं कर सकती थी । आखिरकार मोटे तौर पर प्रत्येक वस्तु की कीमत का तालमेल प्रत्येक वस्तु के मूल्य, और खास तौर पर खाद्यान्नों के मूल्य के साथ रखा जाता है । इसलिए, जब सभी अन्य स्थानीय उत्पादन की वस्तुओं की कीमतें घट रही हों, और खासकर जब नमक पर सरकार का एकाधिकार हो और उस समय नमक पाँच वर्ष पुरानी स्थिति पर खड़ा हो, तो फिर इसके पक्ष में कोई तर्क नहीं हो सकता । नमक कर 'पोल-टैक्स' से किसी मायने में कम नहीं है और यह कर भी आय में कमी के हिसाब से बढ़ता है; यानी जितनी कम आय, उतना अधिक कर । मि० लॉयड ने बताया है कि इस देश में प्रत्यक्ष कर का अनुपात काफी बढ़ा है । मैं नहीं जानता कि वे इस नतीजे पर कैसे पहुंचे हैं? उन्हें यह अवश्य याद रखना चाहिए कि 1916 से इंग्लैण्ड में अब तक प्रत्यक्ष करों में 700 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जबकि अप्रत्यक्ष करों में 100 प्रतिशत की भी नहीं हुई । अगर आपको याद हो, हमारे देश में 1916 तक कस्टम की आय लगभग शून्य थी । हमारे यहाँ अधिक से अधिक पाँच से दस प्रतिशत का राजस्व टैरिफ था लेकिन गत 10 वर्षों में जहाँ अप्रत्यक्ष कर बहुत थोड़ा बढ़े हैं, अप्रत्यक्ष कर बेतहाशा बढ़े हैं जिसके फलस्वरूप भारत सरकार के राजस्व में अप्रत्यक्ष करों का योगदान 77 प्रतिशत के करीब पहुँच गया है । इंग्लैण्ड में अप्रत्यक्ष करों का योगदान 40 प्रतिशत से ज्यादा नहीं हो सकता । दूसरे देशों में भी यह इतना ही कम है । इसलिए इन परिस्थितियों में मि० लॉयड ने यह थोड़ा गैरजिम्मेदाराना वक्तव्य दिया और मैं कहना चाहता हूँ कि अनुसूची और कराधान व्यवस्था को संशोधित करने के लिए यह बहुत उपयुक्त अवसर है । मुझे विश्वास है कि इस विषय पर माननीय वित्त-सदस्य की सहानुभूति मेरे साथ है ।

एक माननीय सदस्य – किस अनुसूची को संशोधित किया जाय और कैसे?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – अनुसूची को ऐसे संशोधित किया जाय ताकि अप्रत्यक्ष-कर कम हो जाएं और (संशोधन का) प्रारम्भ आज नमक-कर के समापन से किया जाय । यह प्रश्न पूछा गया था और यह एकदम अप्रासंगिक भी नहीं है कि यदि यह कर हटाया जाये तो फिर इसकी पूर्ति कैसे होगी । मैं वह उत्तर दे सकता हूँ, जो अपने समय के प्रधान मंत्री को मि० एसक्विथ ने दिया था– "यह बताना मेरा काम नहीं है" : लेकिन अपनी "उत्सवधर्मी उन्मुक्तता" के बावजूद इस मुहावरे के लिए वे इस सदन में सदैव वैसे ही याद किये जायेंगे जैसे दूसरे सदस्य 'सजातीय मूर्खता' के लिए याद किये जायेंगे, और वे दोनों इस सदन की गरिमा में अपने योगदान के कारण अमर हो गये हैं। मैं माननीय वित्त–सदस्य को उत्तर देकर उपकृत

करूंगा । मैं तो चाय भी नहीं पीता हूँ, शाकाहारी भी हूँ और मैंने सोमरस के देवता के मन्दिर में न तो कभी पूजा की है और न ही कभी उसके फव्वारे से अपनी प्यास बुझाई है । इसी तरह मैं कभी मछली खरीदने के लिए बिलिंग्सगेट के बाजार में भी नहीं गया । इसलिए मैं तो निरानन्द जीवन जी रहा हूँ । लेकिन हमें सदन में सामने की बेंचों से कई चीजें जानने का अद्भुत अवसर मिल रहा है, जिसमें वे निष्णात और हम मूर्ख हैं । इसलिए मैं सामने की बेंचों से ये शब्द, ये अभिव्यक्तियाँ और ये सुन्दर जुमले सीखने के लिए तैयार हूँ । मान्यवर, मैंने कहा था कि मैं राजस्व की इस कमी को पूरा करने के लिए कतिपय सुझाव देने को तैयार हूँ । मैंने उस समय कहा था कि माननीय वित्त सदस्य ने अपने बजट में जितने अतिरिक्त धन का अनुमान किया है, उससे अधिक धन वे पा सकते हैं और मैंने इसका कारण भी बताया था । माननीय वित्त सदस्य की कार्यप्रणाली बहुत सारहीन है, मैं उन्हें 'अभद्र' नहीं कहूँगा मैं उनकी धींगामुश्ती पर भी कुछ नहीं कहूँगा, लेकिन कठोर तथ्यों को आराम से अनदेखा करने का तरीका उन्हें मालूम है और वे मानते हैं कि अगर अपने विरोधी से तर्कों में न जीता जा सके तो या तो उस पर आक्रोश का प्रदर्शन हो या उसे मजाक का पात्र बना दिया जाय । यह वाकई बहुत उपयोगी शैली है जिसके सहारे वे कई कठिन स्थितियों के पार आ सकते हैं । वे सोचते हैं कि इस सदन में जहाँ तर्क ही निर्णयों के लिए निर्देशक और नियामक तत्व है, इस बात से क्या फर्क पड़ता है यदि कभी-कभार तथ्यों से थोड़ी किनाराकशी कर ली जाये । मैं इस पर और आगे नहीं जाऊँगा क्योंकि मुझे आशा है कि विधेयक के तीसरे वाचन के समय मुझे सामान्य पर्यवेक्षण का एक और अवसर प्राप्त होगा । मेरे सुझावों का अपने अतुलनीय अंदाज में विश्लेषण करते हुए माननीय वित्त सदस्य ने कहा है कि वे या तो अर्थहीन हैं, या विकृत हैं या आधारहीन । मान्यवर, मैंने कहा था कि मैं उनके बजट के आंकलन से अधिक सरप्लस की आशा करता हूँ । मुझे यूरोपीय समूह और सभी व्यावसायिक संगठनों का समर्थन प्राप्त है, और यद्यपि माननीय वित्त सदस्य के व्यक्तित्व में तमाम निर्बलताओं के बावजूद एक अद्भुत आकर्षण है, फिर भी मुझे कोई दुःख नहीं होगा, यदि मुझे महान वित्त सदस्य की एकाकी प्रख्याति के असाधारण साहचर्य में रहने के बजाय इस विशाल समूह में रहना पड़े ।

दूसरे बिन्दु पर मैंने कहा था कि हम 1924 में नियत 5 करोड़ 20 लाख के रेलवे विभाग के योगदान को जोड़ने के लिए अधिकृत हैं । यह एक निर्धारित योगदान है और रेलवे की आय से प्रथम प्राप्ति है । मान्यवर, वर्तमान वर्ष में भी रेलवे बजट में इस राशि की गणना हुई है और इसे इस तरह प्रस्तुत किया गया है :

"1935-36 में रेलवे से सामान्य राजस्व के लिए शुद्ध भुगतान की राशि 5,20,58,498 रुपये हैं ।"

इतने ब्योरे सहित दी गई राशि बिल्कुल काल्पनिक नहीं हो सकती । इस राशि की वास्तविकता के आन्तरिक साक्ष्य हैं । "1935-36 में रेलवे से सामान्य राजस्व के लिए शुद्ध भुगतान"से साफ दिखता है कि रेलवे ने 5 करोड़ 20 लाख के भुगतान का दायित्व अपने ऊपर स्वीकार किया है । मैं सदन को माननीय सर चार्ल्स इनेस के इस सदन में दिये गये उस वक्तव्य का स्मरण करवाना चाहता हूँ जो उन्होंने रेलवे को सामान्य राजस्व से पृथक करने के प्रस्ताव पर दिया था । यद्यपि वक्तव्य में कई हिस्से पूर्णतः प्रासंगिक हैं, मैं फिलहाल केवल एक पंक्ति ही पढूंगा। उन्होंने कहा था :

"मैं सदन को यह याद दिलाना चाहूँगा कि हमें व्यावसायिक दिशा में अपनी समस्त पूंजी पर इस एक प्रतिशत का भुगतान करना है । मैंने अभी इस तथ्य का सन्दर्भ दिया था कि नयी पूंजी, खास तौर पर नयी लाइनों में निवेशित पूंजी की वापसी में कुछ वर्ष लग ही जाते हैं । हम प्रतिवर्ष लाभांश चुकाने का आश्वासन देते हैं और मौसम का भी खतरा उठा रहे हैं । जब मौसम अच्छा होता है और व्यापार ठीक रहता है तो हमारी प्राप्तियाँ बढ़ जाती हैं; जब मौसम खराब होता है और व्यापार अच्छा नहीं रहता तो हमारी प्राप्तियाँ घट जाती हैं । लेकिन मौसम और व्यापार की स्थिति चाहें जैसी हो, हम यह लाभांश प्रति वर्ष चुकाने का आश्वासन देते हैं ।"

और खातों के अलगाव का मुख्य कारण प्रस्तावना की प्रथम धारा में ही इस प्रकार वर्णित है :

"यह सदन रेलवे आकलन के सम्मिलन से सामान्य बजट में आने वाले तीखे उतार-चढ़ाव को समाप्त करने के लिए सपरिषद महाराज्यपाल को संस्तुत करता है..... रेलवे वित्त पृथक किया जाय.... और सामान्य राजस्व को एक निश्चित वार्षिक योगदान प्राप्त हो ।"

दूसरी, और भी धारायें स्पष्ट हैं लेकिन उनको पढ़ा जाना आवश्यक नहीं है । वस्तुतः यह माना गया है कि वर्तमान वर्ष में रेलवे का दायित्व 5 करोड़ 20 लाख है । रेलवे दिवालिया नहीं हुई है, हमने अभी तक रेलवे को मृत-भार और लुप्त सम्पदा नहीं माना है । आगे कुछ समय बाद यह स्थिति आ सकती है; लेकिन अभी तक रेलवे पूर्णतः मूल्यवान और ठोस सम्पदा है । इन परिस्थितियों में मैं जानना चाहूँगा कि इससे 5 करोड़ 20 लाख की वसूली न करने का क्या औचित्य है? जहाँ तक सामान्य बजट का मामला है, हमें अपनी ओर से रेलवे डिप्रीसियेशन कोष पर

भी ब्याज देना पड़ता है, लेकिन दूसरी ओर हमें मालूम पड़ता है कि रेलवे से हम वह राजस्व भी नहीं प्राप्त करते हैं जो इस सदन और रेलवे विभाग के मध्य क्रियान्वित अनुबन्ध के अनुसार पूर्णतः उचित है । यह हो सकता है कि रेलवे आज इसका नगद भुगतान कर पाने की स्थिति में न हो । इस बारे में भी मैं सोचता हूँ कि वे यह कर सकते हैं क्योंकि लगभग तीस करोड़ ब्याज से रूप में प्राप्त हुए हैं । ब्याज का भाग बचा रह सकता है और राजस्व चुकाया जा सकता है। यह तथ्य बना रहता है कि रेलवे को 5 करोड़ 20 लाख देना है और यह देनदारी वाजिब, ठोस, अपरिवर्तनीय और अन्तिम रूप से निर्णीत है । इन परिस्थितियों में, माननीय वित्त-सदस्य किस आधार पर इसे नकार सकते हैं और इसे खाते में डालने के सुझाव को 'रुग्ण उन्मुक्तता' का आशाहीन दृष्टान्त कैसे कह सकते हैं?

मान्यवर, मैंने एक और सुझाव दिया था कि बचत और डाक बैंकों के निक्षेपों को निकालने पर लगे प्रतिबन्ध हटाये जाने चाहिए । माननीय वित्त सदस्य ने या तो मुझे गलत समझा है.... या यदि उन्होंने मुझे गलत तरह से प्रस्तुत किया हो, तो भी मैं यह नहीं कहूँगा । उन्होंने बताया कि मैंने कहा है कि बचत-बैंक में ब्याज की दर बढ़ाई जाये । मैंने ऐसा कभी नहीं कहा । मेरा सुझाव बहुत सरल है और वह यह है कि बचत–बैंक जनता से धन प्राप्त करते हैं और सरकार ने ब्याज बहुत कम कर दिया है । सरकार इसे और कम कर सकती है और कुछ मामलों में एकदम खत्म कर सकती है; मैं इससे परेशान नहीं हूँ लेकिन इस समय बचत की अधिकतम निर्धारित जमा राशि 750/- या इसके अगल-बगल है । इसी तरह एक निश्चित अन्तराल पर ही धन निकाला जा सकता है । मैं सरकार से चाहता हूँ कि वह जनता को अपनी इच्छा पर जमा करने की स्वतंत्रता दे और डाक-बैंकों से धन निकालने की कोई अवधि न रखे या वर्तमान अवधि से कम कर दे । इस तरह मेरे विचार से रुपये का वर्तमान प्रवाहमान ऋण लगभग समाप्त किया जा सकता है और ठोस बचत हो सकती है । मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि सरकार को इसमें परेशानी क्या है । लेकिन यह विवाद मुझे नहीं करना है । मैं यहां एक आम आदमी की तरह हूँ और अर्थशास्त्रियों से यदि घृणा नहीं तो अविश्वास रखने वाले माननीय वित्त सदस्य एक विशेषज्ञ हैं । और यदि वह यह सुझाव स्वीकार नहीं करते हैं तो यह उनकी अपनी इच्छा है । लेकिन मेरे प्रस्ताव को गलत तरह से प्रस्तुत करके और फिर उसके साथ धींगामुश्ती करना हमारे साथ अन्याय करना होगा । वे निर्णय लेने के लिए अधिकृत हैं और इसी उद्देश्य के लिए यहाँ है । लेकिन इसी तरह हम लोगों का कर्तव्य सुझाव देना है, और वे उसे न्यायपूर्ण और विवेकवान भावना से क्यों नहीं लेंगे? वे क्यों आगे आकर ऐसा राजनैतिक भाषण देते हैं, जो उम्र के बावजूद

माननीय गृह सदस्य को ही शोभा दे सकता है । (हंसी) ऐसे वक्तव्य उनके और उनके पद के अनुरूप नहीं हैं । इसलिए मान्यवर, मैं कहना चाहता हूँ कि मेरा प्रस्ताव स्वीकृति के योग्य है ।

मान्यवर, मैंने एक सुझाव और दिया था । मुद्रा सस्ती है और आपको ऊँची दरों पर कई ऋण चुकाने हैं । धन का उपयोग भी नहीं हो रहा है । आप नये ऋण इस तरह प्राप्त कर सकते हैं, पुराने चुका सकते हैं और बचत भी कर सकते हैं । इस तरह वित्तीय व्यवस्था के कई रास्ते और कई तरीके हैं । मान्यवर, मैं गलत हो सकता हूँ । मैं अपने को दोष से परे नहीं मानता और आखिर मेरे पास वह विशेष सत्ता नहीं है जो माननीय वित्त सदस्य के पास है, या जिसका उनके पास होना अपेक्षित है, या जिसका उनके पास न होना सहानुभूति का विषय बनता है । लेकिन इस वजह से वे हमारे सुझावों को धींगामुश्ती में और लगभग दुर्भावनाग्रस्त शत्रुता में क्यों ले रहे हैं? मान्यवर, मैं वही अभिव्यक्तियाँ दुहरा रहा हूँ, जो उन्होंने इस सदन में सर्वप्रथम कही थी । पहले मैं मानता था कि 'दुर्भावनाग्रस्त' एक असंसदीय अभिव्यक्ति है क्योंकि इसमें यह भाव है कि व्यक्ति ने अनुचित और विध्वंसात्मक प्रकृति को पहचानते हुए भी सप्रयास यह काम लिया है । लेकिन वह सोचते हैं कि यह संसदीय है,और मैं उनके मामले की सीमा तक यह स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ ।

मान्यवर, मेरे कुछ और सुझाव थे । यद्यपि उन्होंने उन्हें एकदम ठुकराया तो नहीं,लेकिन उन्होंने कहा कि उच्च आय और अनर्जित आय पर करारोपण के मेरे प्रस्ताव पर इस तरफ के लोग सहमत नहीं होंगे । इस पर, अगर मेरे आश्वासन का उनके लिए कोई उपयोग हो तो, मैं उन्हें यह आश्वासन दे सकता हूँ कि मेरा प्रस्ताव कांग्रेस के करांची अधिवेशन में पारित प्रस्ताव की परम्परा में है । वे बहुत कायदे से कह सकते हैं कि देश को साम्यवादी रास्ते पर ले जाने के अतिरिक्त कभी और कहीं कांग्रेस जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करती । फिर भी अगर फिलहाल के लिए इस प्रस्ताव का कोई उपयोग कर सकते हों तो यह उनकी इच्छा है । मैं इस पर और अधिक नहीं कहना चाहता हूँ । इसलिए आप इसे चाहे जिस दृष्टि से देखें, अपने सामने के सभी तथ्यों और इन प्रश्नों पर अपने दिमाग का प्रयोग करके मैं यह मान सकता हूँ कि सरकार इस वर्ष अपने करों में 10 करोड़ तक की कमी कर सकती है । यह बहुत बड़ी राशि लग सकती है । लेकिन यदि आप याद करें कि रेलवे से निर्धारित योगदान ही अकेले 520 लाख पहुँचता है और आप मेरे अन्य प्रस्तावों पर भी विचार करें तो आप पायेंगे कि मैंने स्पष्ट शब्दों में इस सदन में जो निष्कर्ष रखे

हैं, उनके समर्थन का औचित्यपूर्ण आधार है ।

मैं और अधिक समय नहीं लूँगा । सदन नमक-कर के समापन से श्रेष्ठ शुरुआत नहीं कर सकता । अपने करदाताओं को जो भी सुविधा हम दे सकते हैं, उसका प्रथम अवसर निर्धनतम व्यक्तियों के लिए होना चाहिए । सामने के सम्मानित सदस्यों को इससे चिन्तित नहीं होना चाहिए क्योंकि उनके वेतन की कटौती निरस्त हो चुकी है और बाकी मामलों की उन्हें फिक्र नहीं करनी चाहिए! लेकिन हम अगर असफल भी हों और मितव्ययिता तथा छंटनी न लागू कर पायें तो भी सरकार को प्राप्त और प्राप्त हो सकने वाले सरप्लस के उचित उपयोग का सुझाव देते रहेंगे ताकि जो दुःख झेल रहे हैं, जो बोझ के नीचे कराह रहे हैं और जिनकी जिन्दगी अभिशप्त तथा कंटकाकीर्ण है, उन्हें दुर्गम्य गाँवों की अंधेरी झोपड़ियों और ओसारों में थोडी सी राहत की रोशनी मिल सके ।

●

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि मैं इस विधेयक की स्वीकृति हेतु आए प्रस्ताव का विरोध करना चाहता हूँ । जहाँ तक शासन और इसका समर्थन करने वाले माननीय सदस्यों का सम्बन्ध है, वे इस विधेयक को जोर-जबरदस्ती के जरिये, व्यवस्था बनाये रखने की एक प्रशासनिक पद्धति मात्र मान सकते हैं । उनमें से कुछ इसे मौज-मस्ती के अगंभीर परिप्रेक्ष्य में भी देख सकते हैं । लेकिन जहां तक मेरा और मेरे जैसे सोचने वाले लोगों का सवाल है; उनके सामने महत्वपूर्ण प्रश्न उठते हैं । यह आधुनिक युग और सभ्यता के वांछित अधिकारों और वांछित संस्थाओं पर एक घातक प्रहार से कहीं कम नहीं है । आप चिन्तन की स्वतंत्रता का अधिकार छीन लीजिए; अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार छीन लीजिए; संगठन बनाने की स्वतंत्रता का अधिकार छीन लीजिए; विज्ञान की उपलब्धियों तथा उसकी खोजों को भुला दीजिए; फिर आधुनिक सभ्यता में बचता भी क्या है? आखिरकार, आधुनिक युग की महानतम् उपलब्धि और है ही क्या, और उसे प्राप्त कैसे किया गया है? क्या यह केवल विचारों के संघर्ष और मस्तिष्क पर मस्तिष्क के प्रभाव की कृपा नहीं है कि मानवता प्रगतिशील है और उत्तरोत्तर आगे बढ़ती जा रही है ? मैं इस प्रस्ताव का विरोध कर रहा हूँ क्योंकि नकली शान्ति बनाये रखने के लिए यह कार्रवाई – यदि वह सफल होती है तो भी–जैसा कि लार्ड इरविन ने एक बार कहा था, रेगिस्तान की शान्ति, स्थापित कर सकती है; अथवा एक बार जैसा कि लार्ड मार्ले ने कहा था, यह (विधेयक) भारत को बाधित और स्तब्ध ही कर सकता है । मान्यवर, क्या यह एक त्रासदी और विद्रूप नहीं है कि 1935 के इस कृपा-वर्ष में इस तरह का विधेयक इस सदन के सम्मुख प्रस्तुत किया जाय ? मान्यवर, मुझे याद आ रहा है कि आज से केवल सौ वर्ष पूर्व ही भारत में प्रेस को स्वतंत्र रखने के लिए सर चार्ल्स मेटकाफ ने प्रेस पर से समस्त प्रतिबन्धों को हटाने का आदेश दिया था । मैं उनके उस उत्तर से केवल कुछ पंक्तियाँ ही पढ़ना चाहूँगा जो उन्होंने 1835 में प्रेस पर लगे प्रतिबन्धों को हटाने के लिए आये हुए प्रतिनिधि मण्डल को सम्बोधित करते हुए कही थीं। उन्होंने कहा था :

विधान सभा द्वारा फौजदारी कानून संशोधन विधेयक पर विचार किये जाने का विरोध करते हुए 10 सितम्बर, 1935 को पं० गोविन्द बल्लभ पंत ने यह भाषण दिया था । उन्होंने अपनी बात अगले दिन अर्थात् 11 सितम्बर 1935 को पूरी की ।

"यह उन पर है (आलोचकों और विरोधियों पर) कि वे दिखाएं कि ज्ञान का संचार अभिशाप है, वरदान नहीं और अच्छे शासन का मूल तत्व अपने शासित क्षेत्र को अन्धकारग्रस्त कर देना है : अन्यथा शासन का यह एक अत्यावश्यक कर्तव्य माना जाना चाहिए कि वह जनता को ज्ञान का अमूल्य अवसर प्रदान करे; और इसे असरदार तरीके से प्राप्त करने के लिए प्रकाशन की निर्बन्ध स्वतंत्रता और विचार शक्ति को इससे मिलने वाली स्फूर्ति के अतिरिक्त और क्या उपाय हो सकता है ।"

मैं दूसरे पक्ष के माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे इन बुद्धिमत्तापूर्ण शब्दों पर थोड़ा ध्यान दें । आप इस देश में क्या किसी और तरीके से प्रकाश फैला सकते हैं ? मान्यवर, हम निरक्षरता की निन्दा करते हैं, अंधविश्वासों की आलोचना करते हैं । हम उनका समाधान करना चाहते हैं, हम कुछ इस तरह का प्रचार करना चाहते हैं कि गांव के अंधेरे इलाकों में भी रहने वाला व्यक्ति भी शिक्षित हो जाय । हम चाहते हैं कि खपरैल में रहने वाला निरीह व्यक्ति भी विवेकशील नागरिक बने । हम चाहते हैं कि वह अपने देश की समस्याओं में सक्रिय रुचि रख सकने में समर्थ हो । प्रेस की गतिविधियों का दायरा बढ़ाने के अतिरिक्त हमारे पास और कौन सा साधन है ?

मान्यवर, आगे बढ़ने से पहले मैं सदन को बताना चाहता हूँ कि जब भी प्रेस पर प्रतिबन्ध आरोपित किये गये हैं, उन्होंने मुद्रणालयों के विस्तार और विकास को तथा समाचारपत्रों और अन्य पाक्षिक प्रकाशनों, और यहाँ तक कि पुस्तकों पर विपरीत प्रभाव डाला है । जैसा कि माननीय सदस्य गण जानते हैं, 1910 और 1920 के वर्षों के बीच भारत में प्रेस, प्रेस अधिनियम के लौहपाश में जकड़ा हुआ था । 1921 में प्रेस अधिनियम हटा लिया गया और 1921 से 1930 तक प्रेस मुक्त रहा । इसकी प्रतिक्रिया आश्चर्य-चकित करने वाली है । मान्यवर, 1911 से 1920 के बीच जब प्रेस प्रेस-अधिनियम के अधीन था, मुद्रणालयों की संख्या 2,780 से बढ़कर 3,371 हुई थी, अर्थात् 10 वर्षों में 6 सौ की वृद्धि हुई या प्रतिवर्ष 608 औसत रहा । जब 1921 में इन बन्धनों को हटा लिया गया तो क्या नतीजा निकला ? 1921 से 1931 के बीच मुद्रणालयों की संख्या 3,371 से बढ़कर 6,520 हो गयी, अर्थात् लगभग 32 सौ की वृद्धि हुई । इस तरह वृद्धि दुगुनी थी । देश में मुद्रणालयों की संख्या पूर्ववर्ती 10 वर्षों से अधिक थी । समाचार-पत्रों के साथ भी यही स्थिति थी । समाचार-पत्रों और प्रकाशनों की संख्या 1911 में 2,924 थी जो कि 1920 में 3,093 हो गयी । इस तरह पूरे दशक में केवल 169 की कुल वृद्धि हुई । लेकिन, इसके बाद,

1920-21 और 1930-31 के बीच यह संख्या बढ़कर 4,500 हो गयी, अर्थात् इस दशक में पूर्ववर्ती दशक के 169 की तुलना में 1,500 की वृद्धि हुई । इस तरह केवल 1 वर्ष में प्रतिवन्ध हटाने के बाद इस देश में समाचार पत्रों और प्रकाशनों की संख्या में जो वृद्धि हुई वह उन पूर्ववर्ती 10 वर्षों से भी अधिक थी जब प्रेस दमनात्मक प्रेस अधिनियम के अधीन था । (कांग्रेस पक्ष की बेंचों से हर्षध्वनि) इसके बाद हम जरा प्रकाशित पुस्तकों की संख्या भी देखें । 1911-12 में 11,584 पुस्तकें प्रकाशित हुईं । और 1919-20 में यह संख्या कितनी थी ? वास्तविकता में यह संख्या मात्र 11,110 थी । इस प्रकार प्रेस अधिनियम के लागू रहने की अवधि में कुल मिलाकर 500 की कमी हुई । लेकिन प्रेस अधिनियम के निरसन का क्या नतीजा हुआ ? 1919-20 और 1930-31 के बीच प्रकाशित पुस्तकों की संख्या 11,100 से बढ़कर 17,427 हो गयी—यानी 6 हजार से भी ज्यादा की वृद्धि हुई । मान्यवर, इन संगणकों और सांख्यिकी के संदर्भ में क्या आपको इस बात पर थोड़ा भी संदेह हो सकता है कि प्रेस पर प्रतिबन्ध ज्ञान और संस्कृति के विस्तार में एक बड़ी बाधा है और वह इस देश के शुभचिन्तकों और उन सभी व्यक्तियों की राह का रोड़ा है जो सत्य, प्रकाश और ज्ञान के विकास में रुचि रखते हैं ।

हमें पिछले कुछ वर्षों के इतिहास पर दुबारा दृष्टिपात करना चाहिए । जैसा कि मैंने अभी कहा है, 1835 से 1910 के बीच प्रेस दो संक्षिप्त समयान्तरालों के अतिरिक्त सदैव स्वतंत्र ही रहा है । 1910 में प्रेस अधिनियम लागू किया गया जो 1921 तक प्रभावी रहा । मान्यवर, मैं माननीय सदस्यों को प्रेसविधि समिति के प्रतिवेदन की याद दिलाना चाहता हूँ । मैं उनकी कही बातों को यहाँ दुहराऊंगा नहीं । उस प्रतिवेदन के महत्वपूर्ण उद्धरण मेरे कुछ पूर्ववर्ती वक्ताओं ने दिये हैं । मैं माननीय सदस्यों को केवल यह बताना चाहता हूँ कि जुलाई, 1921 में जब प्रेस विधि समिति ने प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था और प्रेस अधिनियम के निरसन के तुरन्त पश्चात् देश का वातावरण आज की तुलना में कहीं अधिक दारुण, कहीं अधिक जीवन्त, और कहीं अधिक आक्रामक था उस समय, मान्यवर, सविनय अवज्ञा आन्दोलन लगभग अपने शिखर पर था, स्थानीय कानून भी नहीं थे, और बंगाल में आतंकवाद को नियंत्रित करने के लिए कोई भी कानून नहीं था । इसके अतिरिक्त हिंसक और अहिंसक अपराधों में दंडित सभी राजनैतिक कैदी, जो कि मांर्ट-फोर्ड अधिनियम पारित होने और दिसम्बर,1919 की उद्घोषणा के आधार पर मुक्त हुए थे, उस समय मुक्त थे । मान्यवर, उस समय आतंकवाद आज की तुलना में आक्रामक था । मेरे विचार से गृह सदस्य, भारत सरकार, और भारत सचिव सभी संयुक्त रूप से और अलग-अलग भी यह दावा करते हैं कि जहां तक आतंकवाद का

मामला है देश की स्थिति अच्छी है और उसमें अत्यधिक सुधार हुआ है । क्या मैं यह जान सकता हूँ कि इस तरह के विधेयक को ऐसे समय पुनः स्थापित करने का क्या कारण हो सकता है, जबकि यहां निर्विघ्न शान्ति है? और जहां तक आतंकवाद का सवाल है, आप मानते हैं और दावा करते हैं कि स्थिति में अत्यधिक सुधार हुआ है । और जहां तक सविनय अवज्ञा का सवाल है वह फिलहाल स्थगित और शान्त है । मैं पूरी विनम्रता के साथ यह पूछना चाहता हूं कि इस समय इस तरह का विधेयक लाने का क्या औचित्य हो सकता है जबकि 1921-22 में 1910 का प्रेस अधिनियम हटाना उचित, आवश्यक और सुरक्षित माना गया था । जहां तक आतंकवाद का प्रश्न है, बंगाल अधिनियम में उसके लिए अत्यधिक कठोर प्रावधान है । उसके अन्तर्गत दंडाधिकारियों को मुद्रकों और सम्पादकों को यह आदेश देने के लिए अधिकृत किया गया है कि वे उनके द्वारा इंगित सामग्री का प्रकाशन न करें भले ही वह वैध हो या अवैध, उचित हो या अनुचित । बंगाल फौजदारी विधि संशोधन अधिनियम में कुछ ऐसे प्राविधान हैं जिनके कारण बंगाल में हर व्यक्ति या पत्रकार की समस्त स्वतंत्र गतिविधियां बाधित हो गयी हैं । मैं इस प्रश्न पर विचार नहीं कर रहा हूँ कि यह सत्य है अथवा असत्य । मैं केवल इस प्रश्न पर विचार कर रहा हूं कि जहां तक आतंकवाद का प्रश्न है, इस विधेयक में आप जो भी समाधान प्रस्तुत कर रहे हैं, बंगाल फौजदारी विधि संशोधन अधिनियम की तुलना में तुच्छ, महत्वहीन और अनुपयोगी है और इन स्थितियों में इस विधेयक को विधि पुस्तिका में स्थाई रूप से सम्मिलित करने के लिए आतंकवाद का बहाना लेना पूर्णतया औचित्यहीन है । इसके उपरान्त मान्यवर, मैं यह जानना चाहता हूँ कि अन्ततः उस फौजदारी विधि संशोधन अधिनियम के विगत तीन वर्षों के प्रशासन का क्या लाभ और प्रभाव हुआ है जिसे अगले दिसम्बर में समाप्त हो जाना है, और उस समय उसका निर्विलाप देहान्त हो जायगा ? मैं यह जानना चाहूंगा कि उस विधेयक के पारित होने और विगत तीन वर्षों के उसके प्रशासन का क्या लाभ हुआ और उसकी कौन सी फलदायी परिणति हुई ? वह घोषित रूप में एक आपातकालिक व्यवस्था थी । उसे एक अस्थायी दौर या एक क्षणिक दुर्व्यवस्था का सामना करने के लिए लाया गया था और उसकी प्रतिक्रिया और उसका प्रभाव क्या पड़ा ? एक व्याधि जो केवल स्थानीय और अस्थायी थी और सिर्फ संयोग से जन्मी थी, अब जड़ पकड़ चुकी है, और राजनैतिक व्यवस्था का स्थायी, अविच्छेद्य और अप्रिय प्रवृत्ति बन गयी है । क्या यह अपने आप में उस अधिनियम की भर्त्सना करने और उसे फेंक देने के लिए पर्याप्त नहीं है? हमारे यहां एक कहावत है—मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों-ज्यों दवा की गयी । जब तीन वर्षों तक लगातार प्रयोग करने के बाद भी इलाज पूरी तरह से अप्रभावी रहा हो और यहां तक कि रोगी के लिए हानिकारक और घातक सिद्ध हुआ

हो, तो क्या उस दोषपूर्ण इलाज को चलाते रहना किसी भी प्रकार बुद्धिमत्तापूर्ण माना जा सकता है? इसलिए मेरा निवेदन है कि इस विधेयक को पारित न किया जाय क्योंकि जिस वर्तमान अधिनियम से यह विधेयक जन्मा है वह स्वयं में एक ऐसा राक्षस सिद्ध हुआ है जो रोगी की हत्या तो कर सकता है लेकिन चिकित्सा कतई नहीं । इसके अतिरिक्त एक और कारण है जिसके आधार पर मैं इस प्रस्ताव को पूर्णतया औचित्यहीन मानता हूं । इस समय मेरे पास स्व० गृह सदस्य के उस वक्तव्य की प्रति है जो उन्होंने 1932 में फौजदारी विधि संशोधन अधिनियम को पुनः स्थापित करते हुए दिया था । मेरे पास उस विधेयक की एक प्रति भी है जो उद्देश्यों और औचित्यों के वक्तव्य के साथ उस समय पुनर्स्थापित हुआ था । गृह सदस्य ने उस समय बार-बार यह कहा था कि शासन ने सविनय अवज्ञा आंदोलन के कारण ही यह विधेयक प्रस्तुत किया है । उन्होंने कहा :

"इस विधेयक का उद्गम बहुत सुस्पष्ट है । इसे दो या तीन शब्दों में कहा जा सकता है— सविनय अवज्ञा आंदोलन । इस आंदोलन का इतिहास बताना अनावश्यक है ।"

उन्होंने आगे कहा:—

"वे अध्यादेश छः महीने में समाप्त हो जाने थे जैसे जैसे उसकी अवधि समीप आती जाती थी यह स्पष्ट हो जाता था कि हम उन शस्त्रों को फेंक सकने की स्थिति में नहीं है जिनसे सविनय अवज्ञा आंदोलन का सामना किया जाना है । तदनुसार जून के अन्तिम दिनों में गवर्नर जनरल ने एक नवीन अध्यादेश निर्गत किया । यह अध्यादेश वर्ष के अन्त में समाप्त हो गया । मान्यवर समस्या यह है कि शासन क्या कार्रवाई करे ? सविनय अवज्ञा आंदोलन हालांकि प्रकट रूप से धीमा पड़ गया है और यद्यपि मै सोचता हूं कि मै यह दावा कर सकता हूँ कि इसके समर्थकों में आंदोलन की शुरुआत के समय का संवेग बहुत बड़ी सीमा तक समाप्त हो चुका है, फिर भी उसका अस्तित्व है और कोई भी व्यक्ति यह भविष्यवाणी नहीं कर सकता कि वह कब समाप्त हो । निश्चित रूप से वह उस समय तक तो नहीं ही समाप्त होगा जब तक नेता गण अपने उद्देश्यों की प्राप्ति करने की थोड़ी भी संभावना पायेंगे । मान्यवर, उनके और उनकी सफलता के बीच मे केवल इस अध्यादेश द्वारा प्रदत्त शक्ति ही खड़ी है और इसलिए शासन का यह दृष्टिकोण है कि इस आंदोलन के शीघ्रतर समापन का सर्वश्रेष्ठ उपाय यह स्पष्ट करना ही है कि आंदोलन के विरुद्ध प्रयुक्त शक्तियां शासन के पास बनी रहेंगी"।

जैसा कि मैंने एक मिनट पहले बताया था, इसी तरह की व्याख्या उद्देश्यों और औचित्यों के वक्तव्य में दी गयी है । अभी माननीय गृह सदस्य ने अपने उद्देश्यों और औचित्यों के वक्तव्य में स्वीकार किया है कि इस समय सविनय अवज्ञा आंदोलन स्थगित है । उन्होंने पुराने प्रस्ताव के कतिपय अनुच्छेदों को भी हटा दिया है । जहां तक उनका मामला है, यह विधेयक, सविनय अवज्ञा के पुनः प्रारम्भ होने की स्थिति में उससे लड़ने के लिए सक्षम शस्त्र प्रदान करने के दृष्टिकोण से पुनर्स्थापित नहीं किया गया है । इसे स्वयं माननीय गृह सदस्य ने उद्देश्यों और औचित्यों सम्बन्धी वक्तव्य में स्वीकार किया है । मान्यवर, इन स्थितियों में मैं मानता हूं कि यह विधेयक पूर्णतया औचित्यविहीन है, और यह उस कार्यपालिका की विकृत प्रवृत्ति की देन है जो कि इस तरह की स्वच्छन्द और अधिनायकवादी शक्तियों को हस्तगत करने के लिए सदैव लालायित रहती है, जो उसे संकटकालीन स्थितियों में प्राप्त हो जाती हैं । इस विधेयक का एकमात्र कारण यही है । अपनी अधिनायकवादी शक्तियों को सुरक्षित रखने के लिए बहाने ढूंढना उनके लिए इन स्थितियों में भी सरल है जबकि किसी संकटकालीन स्थिति का सामना करने के लिए इन शक्तियों की आवश्यकता नहीं थी । मैं मानता हूं कि उनके द्वारा बनाये गये कारण एक उर्वरक कल्पना की कहानियां मात्र हैं, क्योंकि तथ्य और वास्तविकता में ये कारण फौजदारी विधि संशोधन अधिनियम,1932 को प्रभावित नहीं करते हैं । इस तरह के किसी भी तर्क का संदर्भ विधेयक के साथ संलग्न वक्तव्य में या गृह सदस्य के प्रारम्भिक भाषण में नहीं था ।

माननीय सर हेनरी क्रेक – नहीं, नहीं । यह सत्य नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत– मुझे पक्का विश्वास है । मैं माननीय गृह सदस्य को इसका खंडन करने की चुनौती देता हूँ। मेरे पास उद्देश्यों और औचित्यों का वक्तव्य है, और मेरे पास भाषणों की प्रतियां हैं । मैं जानता हूं कि माननीय सदस्य को उत्तर देने का अधिकार मिलेगा । मुझे इस मामले में रंचमात्र भी संदेह नहीं है कि जहां तक इस विषय पर प्रकाशित सामग्री की बात है, जब यह प्रस्ताव वर्ष 1932 में रखा गया था उस समय शासन के सामने सविनय अवज्ञा आंदोलन के अतिरिक्त और कोई आधार नहीं था । स्पष्टतया प्रश्न यह है कि वर्तमान परिस्थितियों में इस प्रकृति का विधेयक सदन में प्रस्तुत किया जाना क्या उचित है ? मुझे इस बात की चिन्ता नहीं है कि एक-दो शब्दों के फिसलने का मेरे विपक्षी माननीय सदस्यगण उपयोग कर सकते हैं, जो कि इस समय असहाय और भ्रमित दिखाई दे रहे हैं, लेकिन शासकीय दृष्टिकोण के समर्थकों ने 1932 में इस विधेयक को पुनर्स्थापित करते हुए यह बहुत

स्पष्ट कहा था कि वे इस विधेयक के द्वारा केवल सविनय अवज्ञा आंदोलन का सामना करना चाहते हैं । लेकिन मान्यवर, मैं उनके आगे भी कहना चाहता हूँ । मैं जानना चाहूंगा कि इस कार्रवाई के पीछे कौन से कारण हो सकते हैं ? शासन की इच्छा है कि इसे विधि-पुस्तिका में स्थाई रूप से सम्मिलित किया जाय । मैं माननीय सदस्यों से यह याद रखने का अनुरोध करता हूं कि यह विधेयक किसी संकटकालीन स्थिति का सामना करने वाली आपातकालीन व्यवस्था नहीं है । जहां तक वर्तमान शासन का मामला है, यदि उसके उद्देश्य सफल हुए तो इसे विधि-पुस्तिका में सदा-सर्वदा के लिए स्थान मिल जायगा । इस विधेयक के समर्थन में प्रस्तुत विचित्र तर्कों में एक ऐसा भी तर्क है जो मेरी दृष्टि में आश्चर्य पैदा करने की क्षमता में सबसे बढ़कर है । मैंने इससे अद्भुत तर्क कभी नहीं सुना और यदि यह एक कठोर तथ्य न होता तो मैं—यह तक कि भारत सरकार के संदर्भ में भी – यह स्वीकार करने से हिचकता कि उसमें उनकी मूर्खतापूर्ण धृष्टता करने की क्षमता है । उनका कहना है कि वे प्रेस पर इसलिए प्रतिबन्ध लगाना चाहते है ताकि देश को दायित्वपूर्ण शासन के लिए तैयार किया जा सके । मैंने अपने पूरे जीवन में इससे बचकाना, हास्यास्पद, विकृत और झूठा तर्क नहीं सुना है । मान्यवर, दायित्वपूर्ण शासन का क्या अर्थ है? प्रेस राजनैतिक व्यवस्था का फेफड़ा और उसकी धमनियों का कार्य करता है । दायित्वपूर्ण शासन स्वतंत्र प्रेस द्वारा पैदा की गयी स्फूर्तिदायक हवा में लहराता रहता है । उस जीवनी शक्ति को हटा दीजिए, फिर रिक्ततापूर्ण निष्क्रियता, मूर्खतापूर्ण धृष्टता और देश के प्रशंसकों के बीच सुविधावादी आत्मतोष के घृणास्पद भाव के अलावा और बचता ही क्या है? क्या किसी ने ऐसे किसी दायित्वपूर्ण शासन की बात सुनी है जिसमें शासन के पास अधिनायकवादी शक्तियाँ हों, और क्या इस विधेयक में प्रदत्त शक्तियों से अधिक विस्तृत और दूरगामी निरंकुश शक्ति की कल्पना की जा सकती है? एक क्षण के लिए कल्पना कीजिए कि आपने एक प्रान्त में दायित्वपूर्ण शासन की स्थापना की है और अपने को इस विधेयक से जोड़ लिया है । मैं कहता हूं कि यदि उनमें थोड़ी भी समझदारी होगी तो वे अपने शासन को स्थायी बना सकते हैं । मुझे उन पदों को प्राप्त करने की कोई इच्छा नहीं है । वे मेरी पहुंच के बाहर हो सकते हैं या मेरी इच्छा अथवा महत्वाकांक्षा के परे हो सकते हैं, लेकिन मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि कोई भी राजनीतिज्ञ इस विधेयक में प्रदत्त शक्तियों से,श्रेष्ठतर शस्त्र और श्रेष्ठतर साधन की कल्पना नहीं कर सकता जिसके जरिये वह अपनी सत्ता को स्थायी बना सके । इस विधेयक का विस्तार कहां तक है? शासन किसी भी संगठन को अवैध घोषित कर सकता है । यह संगठन कोई भी यहां तक कि यूरोपियनों का भी संगठन हो सकता है, और यदि मैं कल सत्ता में आ जाऊं तो मुझे ये शक्तियां प्रदान करने के पहले शायद

मिस्टर जेम्स दो बार सोचेंगे । या यह भारतीय प्रशासनिक सेवाओं का संगठन भी हो सकता है, और मैं इसे अवैध घोषित कर सकता हूं, क्योंकि हमारी शक्तियों पर. कोई नियंत्रण नहीं है और उसके विरुद्ध कोई अपील नहीं हो सकती । ऐसा कोई प्राधिकरण नहीं है जहां आप मेरे निर्णय के विरुद्ध कोई याचिका प्रस्तुत कर सकें । मैं जो भी कहता हूँ परम है; मैं जो भी कहता हूँ अन्तिम है । मैं प्रेस का दमन कर सकता हूँ । मैं प्रेस से प्रतिभूति मांग सकता हूँ, मैं खण्ड 4 में वर्णित असंख्य आधारों में से किसी एक का बहाना बनाकर किसी भी प्रेस की जमानत जब्त कर सकता हूँ । मैं इस समय उस खण्ड का वाचन नहीं करूंगा । मैं यह कार्य बाद में करूंगा । लेकिन उसमें असंतोष को उकसावा देने का एक आधार भी है, और हाईकोर्ट के एक न्यायाधीश, सर जान स्टेची ने असंतोष की परिभाषा स्नेह के अभाव से की है । यदि मैं एक मंत्री हूँ और यदि सामने की ओर बैठा हुआ कोई सदस्य ऐसी कोई बात कहता है जो कि दूसरे लोगों के मन में मेरे लिए स्नेह बैठाने के स्थान पर – अप्रत्यक्षरूप से ही सही-उसे कम करता है तो यह मेरी शक्ति के अधीन होगा कि मैं उस प्रेस का दमन करूं और उससे जमानत राशि की मांग करूं । मान्यवर, यदि मैं हिटलर या मुसोलिनी बनना चाहूँ तो मैं क्या इससे अधिक की इच्छा करूंगा? मैं सोचता हूँ कि आप इस देश की बुद्धिमत्ता और इस सदन में विधेयक प्रस्तुत करने के समय बनाये गये आदर्श के साथ भी गम्भीरतम अन्याय कर रहे हैं । मान्यवर, इसके अलावा मैं नहीं जानता हूँ कि आप इन्हें कैसे व्याख्यायित और लागू करेंगे? चार्ली चैपलिन की पत्नी ने तलाक के लिए अदालत में यह आधार दिया था कि वह उसके प्रति घृणा-भाव रखने का दोषी है । सरल हृदय के चार्ली ने निश्छल गम्भीरता के साथ यह प्रतिवाद किया था कि वह अपनी पत्नी से असीमित प्रेम करता है और वह किसी प्रकार की जारता का भी दोषी नहीं है । लेकिन इसका उसे कोई लाभ नहीं मिला और तलाक का आदेश दे दिया गया । मैं नहीं जानता हूँ कि प्रकाशक गण और सार्वजनिक व्यक्ति इस सरकार से अपना बचाव, असंतोष के आरोप के विरुद्ध कैसे कर सकेंगे, जिसने उसके प्रति अपनी शत्रुता कभी छिपाई नहीं है; और आगे आने वाली सरकारों से भी अपना बचाव कैसे कर सकते हैं?

इसके अतिरिक्त एक ऐसा आयाम भी है जो मुझे सबसे अधिक आश्चर्यजनक लगता है । कथनी से करनी श्रेष्ठतर है । माननीय गृह सदस्य और उनकी बिरादरी की इच्छा है कि हम भविष्य के मंत्रियों और शासनों पर भी अपनी आस्था रखें और अग्रिम रूप से अपने अधिकारों और विशेषाधिकारों को उन्हें समर्पित करें । लेकिन उनका स्वयं का व्यवहार कैसा रहा है ? मुझे नहीं मालूम मिस्टर ग्रिफिथ्स यहां हैं या नहीं । यहां तक कि भारत शासन अधिनियम के अन्तिम प्रारूप

में प्रदत्त सुरक्षा-कवच कम से कम बंगाल के भारतीय प्रशासनिक सेवाओं के कतिपय सदस्यों को संतुष्ट कर सकने में असफल रहा है, जिन्होंने जब यह विधेयक सामान्य सभा में अन्तिम चरण में था, एक ठोस खतरा उपस्थित कर दिया, जिससे यहां तक कि इस देश के प्रशासनतंत्र में भी थोड़ी उत्तेजना फैली थी । मान्यवर, क्या मैं माननीय गृह सदस्य और उनके सहयोगियों से एक प्रश्न पूछ सकता हूँ ? जहां तक शाही सेवाओं का मामला है, वे मंत्रियों पर विश्वास नहीं कर सकते । मंत्रीगण उन्हें स्पर्श भी नहीं कर सकते । शाही सेवाओं पर केवल राज्य सचिव का आत्यंतिक नियंत्रण है । यहां तक कि गवर्नर जनरल पर भी विश्वास नहीं किया जा सकता, मंत्रियों की तो बात ही दूर है । यहां तक कि राज्य-सचिव पर भी विश्वास नहीं किया जा सकता; जब तक सेवाओं के प्रतिनिधि के रूप में उनके सलाहकार बहुमत से किसी परिवर्तन का समर्थन नहीं करते, तब तक यहां तक कि संसद भी उनकी सेवा शर्तों में कोई संशोधन नहीं कर सकती है । मान्यवर, नियुक्तियों के मामले में भी, मंत्री को राज्यपाल के पास जाना पड़ता है और अनुरोध करना पड़ता है । उसे उनसे अनुरोध करना पड़ता है कि वे मिस्टर ग्रिफिथ्स की नियुक्ति मिदनापुर या किसी स्थान पर कर दें, और जहां तक कि स्वास्थ्य सेवाओं का संबंध है, कतिपय आरक्षित पदों पर किसी भारतीय की नियुक्ति यहां तक कि राज्यपाल भी नहीं कर सकते । मान्यवर, क्या इससे प्रशासन तंत्र का भावी शासन के प्रति विश्वास प्रदर्शित होता है? क्या उनकी ओर से यह तर्क करना उचित है कि हम ऐसे शासनों पर विश्वास करें और इन संदिग्ध व्यक्तियों की कृपा पर अपने उन अमूल्य अधिकारों को समर्पित कर दें, जिनके कारण जीवन जीने योग्य बनता है? क्या यह गम्भीर प्रस्ताव है ? क्या पाखंड की इससे विस्तृत सीमा हो सकती है ? क्या इससे बड़ी और कोई बेईमानी हो सकती है? मैं इसी समय और इसी स्थान पर प्रशासनतंत्र से प्रश्न पूछना चाहता हूँ – आप किस आधार पर भविष्य के रहस्यमय, अज्ञात और अज्ञेय मंत्रियों के हाथों हमारे अपने अमूल्य उत्तराधिकार, और सभ्य अस्तित्व के आधारस्वरूप अति प्रिय मौलिक अधिकारों को सौंपने के लिए हमें बाध्य कर रहे हैं ? आप इस देश पर वे बेड़ियां डालने का साहस कैसे कर सकते हैं, जबकि आप स्वयं इन मंत्रियों के प्रभाव–वृत्त से मुक्त होने के लिए कठोर योजनाबद्ध और भरपूर प्रयास कर रहे हैं (हर्षध्वनि) ।

मान्यवर, मुझे एक पुरानी पढ़ी कहानी याद आ रही है । इव और मैरी नाम की दो चचेरी बहनें थीं । इव छोटी थी लेकिन दो बार तलाक ले चुकी थी । उन बहनों का ऐंची आंख वाला एक मित्र था जिसका नाम था जॉन । जॉन विवाह करना चाहता था और इव ने मैरी को बहुत गम्भीरता और व्यवस्थित रूप से यह

समझाने का प्रयास किया कि वह जॉन से विवाह कर ले। मैरी ने भद्रतापूर्वक कहा: "तुझे विवाहित जीवन का गहरा अनुभव है, तेरे जीवन में दो पति आ चुके हैं । जॉन की आँखें ऐंची हैं । तू उससे विवाह क्यों नहीं कर लेती ?" इव कुछ दिनों तक तो उत्तर देने में बहानेबाजी करती रही, लेकिन फिर आखिरकार उसने सही बात बता ही दी; "मेरी प्रिय मैरी! तुम्हारे अभिभावकों ने केवल एक बार विवाह किया था । तुम्हारे बाबा और तुम्हारी दादी ने भी एक ही बार विवाह किया था । तुम प्रकृति से और आनुवंशिक कारणों से वफादार हो । जहां तक मेरा मामला है, मेरी मां मेरे पिता की तीसरी पत्नी थीं और मेरे पिता मेरी मां के तीसरे पति । (हंसी) इसलिए मेरे लिए ऐसे पुरुष से विवाह करना सुरक्षित नहीं होगा । इसके अलावा मैरी, मैं जानती हूँ कि तुम्हें एक पति चाहिए, ताकि तुम उसकी सेवा कर सको, और मैं एक ऐसा पति चाहती हूँ जो मेरी सेवा कर सके । जहां तक तुम्हारा मामला है, जॉन सुरक्षित रहेगा और तुम प्रसन्न रहोगी । लेकिन यदि मैंने उससे विवाह किया तो हम दोनों दुःखी रहेंगे । लेकिन मैं तुम दोनों की सहायता करना चाहूंगी और मैं जिस भी उद्देश्य के लिए सही समझूंगी, हर मौके पर तुममें से किसी एक या तुम दोनों का भरपूर इस्तेमाल चाहूंगी । (हंसी) मान्यवर, इस देश की यही दशा है । इस देश के निश्छल मैरियों यानी हम लोगों को सुझाव दिया जा रहा है कि हम लोग ऐंची आंख वाले जॉन से विवाह कर लें ताकि चतुर और षड्यंत्रकारी इव दोनों की सेवाओं का इच्छित उपयोग कर सके । (हँसी) क्या हम लोग वाकई में निश्छल और मूर्ख हैं? और फिर मान्यवर, आजकल क्या हो रहा है? देश के उच्च पदस्थ और शक्तिशाली लोग कैसा व्यवहार कर रहे हैं? क्या आप जानते हैं कि चुनाव क्षेत्रों का सीमांकन कैसे हो रहा है? क्या आप जानते हैं कि सीमांकन सम्मेलनों और समितियों का गठन कैसे हो रहा है? क्या आप जानते हैं कि इतने विभिन्न प्रकारों से ऐसा षड्यंत्र किया जा रहा है ताकि नौकरशाही शाश्वत रूप से शासन करती रहे, और शरीर तथा मुखौटा चाहे भारतीय ही क्यों न दिखे, शक्ति सदा-सर्वदा यूरोपियनों के हाथों में ही केन्द्रित रहे?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम)–क्या माननीय सदस्य यहां रुकेंगे और कल पुनः अपना भाषण प्रारम्भ करेंगे?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत–ठीक है ।

(भाग दो)

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम)–सदन इस समय माननीय गृह सदस्य द्वारा 5 सितम्बर, 1935 को प्रस्तुत प्रस्ताव पर विचार करने जा रहा है;

"कि फौजदारी विधि को संशोधित करने वाले विधेयक पर विचार किया जाय" ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, यह विधेयक यदि पूर्णतया नहीं तो अवश्य ही मुख्यतया गृह विभाग द्वारा वितरित दो पुस्तिकाओं पर निर्भर है, जिनमें एक में समाचार पत्रों और अन्य प्रकाशनों के उद्धरण हैं और दूसरे में वे वक्तव्य हैं जिन्हें सेठ गोविन्ददास के अल्प सूचना वाले प्रश्नों के उत्तर में माननीय गृह सदस्य ने दिया था । मैं मानता हूँ कि तिनकों की बुनियाद पर गगनचुम्बी इमारत बनाने का इससे श्रेष्ठतर प्रयास असम्भव है । मान्यवर, "प्रेस विधायन से सम्बन्धित समाचार पत्रों में प्रकाशित लेखों से कतिपय उद्धरण" शीर्षक वाले इस पैम्फलेट के उद्धरणों पर ध्यान दीजिए । मान्यवर, मैंने कल माननीय सदस्यों को याद दिलाया था कि वर्ष 1921 और 1931 के बीच इस देश में कोई प्रेस अधिनियम नहीं था । मैं मानता हूँ कि शासन ने अपने अनन्त संसाधनों के द्वारा इन 10 वर्षों के अन्तराल में प्रकाशित लेखों की सूक्ष्मतम परीक्षा करने के बाद ही इस पैम्फलेट में प्रकाशित सामग्री को एकत्रित किया है ।

माननीय सर हेनरी क्रेक (गृह सदस्य)–इस तरह के हजारों लेख हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत–ठीक है! मैं नहीं जानता कि उन्होंने कुछ छिपा रखा है । यदि उन्होंने अंधेरे में कुछ छिपाकर रखा है जिसे वे बाहर लाने का साहस नहीं करते, क्योंकि प्रकाश में वह जल जायेगा और वाष्पीकृत हो जायगा, तो हमारे लिए उसका कोई अर्थ नहीं है । यदि उनके पास इसके अतिरिक्त और कुछ सामग्री है तो हम उसे नहीं जानते; जो भी हमारे सम्मुख प्रस्तुत किये जाने योग्य समझा, उस सबको उन्होंने इस पैम्फलेट में सम्मिलित कर लिया है । मान्यवर, इस पैम्फलेट में वर्ष 1922, 1923,1924, 1925, 1927, और 1929 में प्रकाशित कोई भी सामग्री नहीं है । इसमें बम्बई और मद्रास प्रेसीडेंसियों या संयुक्त प्रांत, बिहार और उड़ीसा असम, केन्द्रीय प्रांत और उत्तर-पश्चिम सीमांप्रान्त पर प्रकाशित कोई सामग्री नहीं आई । इस पुस्तिका में प्रकाशित समस्त सामग्री केवल बंगाल, पंजाब तक सीमित है और वह भी 1926, 1929, 1930 तक तक सीमित है । मान्यवर, इस व्यापक सर्वेक्षण से केवल यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि समाचार पत्र वास्तविकता में कभी भी इतने चिन्ताजनक, सनसनीखेज और खतरनाक, दुष्ट और विध्वंसक नहीं थे जितने कि उन्हें आज बताया जा रहा है । मान्यवर, इन प्रकाशित उद्धरणों में भी अन्ततः है ही क्या? यह बताने के पूर्व मैं माननीय सदस्यों को यह बताना चाहता हूँ

कि जहां तक संयुक्त प्रांत का सवाल है, मैंने स्थानीय शासन के प्रशासनिक प्रतिवेदनों को पढ़ा है और निश्चय ही, सकारात्मक रूप मे, एकदम स्पष्ट रूप से 1923 के प्रतिवेदनों में और पुन: 1924 के प्रतिवेदनों में कहा गया है कि प्रांत में प्रेस अधिनियम हटाये जाने के पश्चात् सार्वजनिक समाचार-पत्रों के स्वर और उसकी भाषा में पर्याप्त सुधार हुआ है । मान्यवर, ये उद्धरण लेखों से छिटपुट छांट लिए गये हैं और बहुत विश्वसनीय अनुवाद न होने के नाते भी उन्हें सुरक्षित संकेतक नहीं माना जा सकता; लेकिन यदि हम उन्हें यथारूप स्वीकार भी कर लें तो भी उनसे क्या संकेत मिलता है और क्या सिद्ध किया जा सकता है? प्रारम्भ के 9 उद्धरण अकेले बंगाल के एक जिले पाबना से सम्बन्धित हैं और वे सबके सब जुलाई,1926 के महीने में प्रकाशित हुए हैं । जब हम आगे बढ़ते हैं तो कुछ विवरणात्मक लेखों को भी पाते हैं । मैंने सभी लेखों का परीक्षण किया है, और मैं पूरी तरह से आश्वस्त हूँ कि यदि इस पुस्तिका को किसी न्यायाधिकरण के सम्मुख प्रस्तुत किया जाय तो कम से कम आधी सामग्री तो पूर्णतया निर्दोष पायी जायगी; और इससे स्पष्ट रूप से उन लोगों की मानसिकता प्रदर्शित होती है जिन्होने इस 'दमनात्मक विधायन के समर्थन में इन उद्धरणों को उदाहरण के तौर पर प्रस्तुत किया है । इस पुस्तिका में समाचार पत्रों के उद्धरणों के अतिरिक्त पुस्तिकाओं, पुस्तकों, और साइक्लोस्टाइल्ड तथा अन्य पोस्टरों को भी सम्मिलित किया गया है । मान्यवर, मुझे यह नहीं मालूम कि इस विधेयक की परिधि में साइक्लोस्टाइल्ड पोस्टर कैसे आ सकेंगे जब तक कि शासन ने किसी परवर्ती चरण में संशोधन करने का इरादा न बना लिया हो; अन्यथा जहां तक वर्तमान विधेयक का प्रश्न है, मैं इसकी प्रासंगिकता नहीं समझ पा रहा हूँ । हमें साइक्लोइस्टाइल्ड पोस्टर अथवा पुस्तिका में कहीं भी साम्यवाद की कोई झलक नहीं मिली है । कतिपय गुमनाम पत्रों, जिनके अस्तित्व से पहली बार इस पुस्तिका के जरिये ही हम परिचित हुए, के दो लेखों की एक या दो पंक्तियों के अतिरिक्त इस पूरी पुस्तिका में कोई ऐसा उद्धरण नहीं है जिसमें हिंसा को प्रत्यक्ष प्रोत्साहन मिले; और जहां तक साम्प्रदायिकता का संदर्भ है, मान्यवर, जैसा कि मैंने बताया था, पाबना जनपद से सम्बन्धित 9 लेख एक सप्ताह के भीतर प्रकाशित हुए थे । हम नहीं जानते कि उस समय वहां क्या हुआ था । शायद उस समय बंगाल के उन जनपदों में अत्यन्त उत्तेजक वातावरण था । मान्यवर, मैं यह जानना चाहता हूँ कि इन उद्धरणों के सहारे क्या कोई भी दायित्वपूर्ण सरकार कभी इस तरह के विधायन के लिए विधायिका के पास पहुंचने का साहस कर सकती है, जैसा कि उन्होंने हमारे सामने 10 वर्ष बीत जाने के बाद किया है? मान्यवर, अभी कुछ दिन पूर्व हमें बताया गया था कि इसमें प्रकाशित समाचार पत्रों और प्रकाशनों की संख्या 4600 है । हम यहां प्रेस में प्रकाशित समस्त सामग्री का सर्वेक्षण कर रहे हैं, चाहे वह समाचार

पत्र हो या पुस्तिका, या पोस्टर या पुस्तकें हों । हमें यह याद रखना चाहिए कि इन पत्रों में कुछ दैनिक होंगे, कुछ साप्ताहिक होंगे, कुछ पाक्षिक होंगे तथा कुछ मासिक इत्यादि होंगे; इस तरह प्रकाशनों की संख्या यदि करोड़ों नहीं तो लाखों में अवश्य होगी । उनमें से केवल 30 का चुनाव किया गया है और इन 30 के आधार पर हम से कहा जा रहा है कि इस देश के प्रेस को सदा-सर्वदा के लिए दंडित किया जाय ।

माननीय सर हेनरी क्रेक— इस तरह के हजारों थे ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत—मैं नहीं जानता हूँ कि ये 'हजारों और' वास्तविकता में हैं या केवल माननीय गृह सदस्य की कल्पना में ही हैं ।

माननीय सर हेनरी क्रेक— नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत—जहां तक प्रकाशित पत्रों की बात है वे केवल इतना ही प्रस्तुत कर पाये । मैं मानता हूँ कि ये निकृष्टतम नमूने हैं जो वे प्राप्त कर सके हैं और मैं माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि वे इन्हें पढ़ें और इनका आकलन करें । मान्यवर, समाचार पत्रों में वर्ष 1908, 1909 और 1910 में प्रकाशित लेखों के बारे में मुझे अच्छी तरह से याद है और मैं आज भी यह कहने का साहस रखता हूँ कि उस अवधि में प्रकाशित कुछ पत्रों के केवल एक अंक में प्रकाशित सामग्री इस पूरी पुस्तिका में प्रकाशित पूरी की पूरी सामग्री से कहीं अधिक आपत्तिजनक है । मान्यवर, यह तुलनात्मक आकलन है । मैं माननीय गृह सदस्य से वास्तविक स्थिति के बारे में जानना चाहूँगा । उन्होंने हमें बताया है कि साम्प्रदायिकता इस देश में आज से अधिक आक्रामक कभी नहीं थी । उन्होंने उसे समाप्त करने के लिए कौन से कदम उठाये? और यदि फौजदारी विधि संशोधन अधिनियम के तीन वर्षों से लागू रहने के परिणामस्वरूप आज यह स्थिति आ गयी है कि साम्प्रदायिकता अपने निकृष्टतम चरण में है तो मैं पूछता हूँ कि वे फिर क्यों इस कष्टकारी कार्रवाई को बढ़ाते जा रहे हैं जिससे इतना विनाश हुआ है? इसके उपरान्त मैं माननीय गृह सदस्य से पूछना चाहूँगा कि क्या उन्होंने कभी उपरिवर्णित पत्रों के विरुद्ध दफा 153क के अन्तर्गत कोई कार्रवाई की थी और क्या उन्होंने दफा 108 के अन्तर्गत इनमें से किसी मुद्रक या प्रकाशक के विरुद्ध कोई कारवाई की थी ?

माननीय सर हेनरी क्रेक— यदि माननीय सदस्य विधेयक की प्रस्तुति के समय के मेरे

वक्तव्य को देखें तो वे पायेंगे कि बार-बार कार्रवाई की गयी है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत–जहां तक मुझे ज्ञात है इनमें से किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध उन लेखों के लिए अभियोजन नहीं हुआ ।

माननीय सर हेनरी क्रेक–हम उन्हें पकड़ नहीं सके ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत–यह अविश्वसनीय वक्तव्य है, इसे मैं स्वीकार नहीं कर सकता । मान्यवर, यदि पुलिस वास्तव में इतनी अक्षम है कि वह अपराधियों को पकड़ नहीं सकती है तो उन्हें नौकरी में बनाए रखने का क्या औचित्य है? (हर्षध्वनि) आपको चाहिए कि आप अपने कर्मचारियों को सेवामुक्त कर दें । आप इस पुलिस बल को क्यों नियुक्त किये हुए हैं और इसे चलाने के लिए हमारे ऊपर करारोपण क्यों कर रहे हैं, जबकि आप और आपकी पुलिस अपराधियों को पकड़ नहीं सकती है ? (हर्षध्वनि) मान्यवर, क्या आपकी पुलिस केवल निर्दोष व्यक्तियों को पकड़ने के लिए बनायी गयी है, और क्या केवल इसी उद्देश्य के लिए आप यहां पर हैं ? क्या आपका उद्देश्य केवल इन निर्दोष नागरिकों के दमन का शस्त्र तैयार करना है ताकि आप थोड़ा आनन्दित हो सकें और आपकी पुलिस निर्दोष को फंसाने में सक्षम हो सके? यह रहस्य समाप्त हो चुका है और मैं मानता हूँ कि यह विधेयक इस उद्देश्य की अच्छी तरह से पूर्ति कर सकेगा । मान्यवर, मैं अभी आप से कह रहा था कि साम्प्रदायिकता का यह विचित्र-जीव कल्पना की अद्‌भुत देन है, इसे हमें भयभीत करने के लिए पैदा किया गया है । मान्यवर, जब मैं शासन के सदस्यों से साम्प्रदायिक संघर्ष की बात सुनता हूँ तो मुझे ऐसा लगता है जैसे चालक के हाथों से नियंत्रण छूट रहा है और दुर्घटना अवश्यम्भावी है ।.सम्भवतः कुछ मामलों में मैं यहां किसी दुर्भावना का आरोप नहीं लगा रहा हूँ–इच्छा विचार की जननी हो सकती है । (हर्षध्वनि) लेकिन, जैसा भी हो, मान्यवर, मैं कहना चाहता हूँ कि यदि शासन को अनुभव हो रहा है कि साम्प्रदायिकता निकृष्टतम स्थिति में है, तो हमें अति दायित्वपूर्ण स्थानों से की जा रही इन खुली घोषणाओं से उपजने वाली फसल के लिए भी तैयार रहना चाहिए । (हर्षध्वनि) हो सकता है कि उनमें अपनी भविष्यवाणियों के सत्य सिद्ध होने की इच्छा न हो, किन्तु हमें सचेत रहना ही होगा । मान्यवर, मेरे अपने जनपद में एक भद्र वरिष्ठ अधिकारी आयुक्त के पद पर काम कर रहे थे । जैसा कि माननीय सदस्यगण जानते हैं, वर्ष 1924-25 में साम्प्रदायिक विवाद फिर से उठ खड़ा हुआ था । एक बार वे मुझसे बात कर रहे थे और उन्होंने मुझसे पूछा, "पंडित, इन दिनों साम्प्रदायिकता बहुत ज्यादा बढ़ गयी

है । ऐसा क्यों है?" मैने कहा कि इसके कई कारण हैं । उन्होंने कहा, "नहीं, नहीं । इसे बहुत सरलता से समाप्त किया जा सकता है ।" मैने पूछा "कैसे?" उन्होंने कहा, "मुझे आप सबसे खराब जिला दे दीजिए और मैं देखूंगा कि साम्प्रदायिकता समाप्त कैसे नहीं होती है?" मैंने उनसे पूछा कि वे ऐसा कैसे कर सकेंगे? उन्होंने मुझे एक घटना बताई । उन्होंने कहा कि जब वे नौजवान थे और एक जिले में जिला मजिस्ट्रेट थे, उस समय एक तहसीलदार उनके पास आया और उनसे बताया कि उनकी तहसील में आग धधक रही है और साम्प्रदायिक विस्फोट अवश्यम्भावी है । उन्होंने तहसीलदार से कहा कि उन्होंने जीवन में पहली बार ऐसी कोई रपट सुनी है, और उसे अगली ताजी सूचनाओं के साथ बुलाते हुए इन शब्दों में चेतावनी भी दे दी; "यदि तुम कल फिर यह दुहराओगे कि तुम्हारी तहसील में अभी भी आग धधक रही है तो मैं तुम्हारी सेवा-पुस्तिका में प्रविष्टि करूंगा और तुम्हारा इस तहसील से तबादला कर दूंगा ।" उन्होंने मुझे बताया कि तहसीलदार अगले दिन उनसे मिला और कहा; "हमें समय दीजिए, स्थिति में सुधार हो रहा है ।" उन्होंने उससे कहा, "ठीक है, तुम थोड़ा समय और ले सकते हो ।" तहसीलदार उनके पास अगले दिन वापस आया और बोला, "सब खैरियत है, साहब ।" साम्प्रदायिकता समाप्त करने का यही एक रास्ता है । मैं कहता हूँ कि आपने उसे समाप्त करने का निश्चय कर लिया है तो आप उसे समाप्त कर सकते हैं । मैं अप्रिय और अरुचिपूर्ण टिप्पणियाँ नहीं करना चाहता हूँ लेकिन मैं अपने सामने बैठे माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि लेडी मिण्टो द्वारा प्रकाशित लार्ड मिण्टो और लार्ड-मार्ले के बीच के पत्र-व्यवहार पढ़ने का कष्ट करें । मैं उनसे अनुरोध करूंगा कि वे भारत-सचिव पद से सेवानिवृत्त होने के तुरन्त बाद लार्ड ओलीवियर द्वारा 'दि टाइम्स' में लिखे गये लेख को देखें । मैं उनसे अनुरोध करूंगा कि वे वेजुवुडबेन द्वारा कुछ समय पूर्व की गयी टिप्पणियों पर ध्यान दें, और अभी शीघ्र ही 'अर्लआफ सैलिसबरी' द्वारा दिये गये वक्तव्य की ओर ध्यान दें । मैं अधिक नहीं कहूँगा। लेकिन मान्यवर, मैं उन्हें ध्यान दिलाना चाहूँगा कि साम्प्रदायिकता केवल इस देश की ही समस्या नहीं है । जहां भी विदेशी शासन है, वहां यह प्राकृतिक प्रवृत्ति है कि उस शासन को स्थायी बनाने में सहयोग देने वाली सभी शक्तियों को बढ़ावा दिया जाय । यह बहुत स्वाभाविक है । लेकिन इससे हम अपने राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वों से मुक्त नहीं हो सकते । मैं उन लोगों में से हूँ जो यह अनुभव करते हैं कि यदि हमारे शत्रु हमें हतप्रभ कर सकते हैं तो हम मूर्ख हैं । यदि हमारे शत्रु हमें परास्त कर सकते हैं तो वे हमसे सक्षम होंगे । लेकिन मैं उनके द्वारा किसी भी प्रकार से और किसी भी आधार पर परास्त नहीं होना चाहूँगा । मैं अपनी ओर से किसी प्रकार की लापरवाही या असफलता की यहां कोई कैफियत

नहीं देना चाहता हूँ, बल्कि मैं यहां एक बात को इसलिए प्रस्तुत कर रहा हूँ क्योंकि वह एक तथ्य है । इस संदर्भ में माननीय सदस्यों को यह याद दिलाना चाहूँगा कि बेलफास्ट में अभी हाल में एक दंगा हुआ था । बेलफास्ट डब्लिन नहीं है जो कि सिन–फिन या आइरिश स्वतंत्र राज्य की राजधानी है; बल्कि अद्वितीय लार्ड कार्सन के प्रिय प्रान्त की राजधानी है । मैं यहां बेलफास्ट की घटनाओं पर 'न्यू स्टेट्समैन एण्ड नेशन' में प्रकाशित लेख का एक अंश पढ़ना चाहूँगा । उसके अनुसार:

"12 जुलाई.. जिसे उत्तरी आयरलैण्ड में स्वर्णिम दिवस कहा जाता है, के वार्षिक उत्सवों से बेलफास्ट में शुरू हुए दंगों को अत्यधिक राजनैतिक महत्व दिया जाना चाहिए ।

इंग्लैण्ड में समाचार पत्रों में प्रकाशित होने वाली रपटें हमें केवल भीषणतम दंगे, लूटमार, एक दर्जन शासकीय भवनों के जलाये जाने, पांच व्यक्तियों की मृत्यु, और लगभग एक सैकड़ा लोगों के घायल होने, राइफलों, पिस्तौलों, मशीनगनों के इस्तेमाल और आखिरकार सेना को बुलाई जाने की खबर देती हैं । सेना ने इस्पाती कंटोप पहन कर और संगीनें तानकर सड़कों पर गश्त किया और यार्क स्ट्रीट क्षेत्र की झोपड़ियों से पटी सड़कों में इधर-उधर छिपे विद्रोहियों की गोलियों का जवाब दिया ।"

यह बेलफास्ट में पिछले महीने घटी घटना का विवरण है । बेलफास्ट में कैथोलिकों की बहुत कम संख्या है और वहां प्रोटेस्टेटों का प्रभुत्व है । इस तरह हमें इस तरह के वक्तव्यों के जाल में नहीं फंसना चाहिए कि साम्प्रदायिकता पहले की तुलना में आज अत्यधिक आक्रामक हो गयी है । मैं निष्ठापूर्वक विश्वास करता हूँ — और मेरा दावा है कि मैं राष्ट्र की वर्तमान स्थिति और लोगों के बारे में कुछ ज्ञान और अनुभव रखता हूँ, और यह निश्चित रूप से उस ज्ञान से कहीं अधिक आत्मीय और विश्वसनीय है, जो कि मेरे विपक्षी माननीय सदस्यगण प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि उनमें से किसी के पास भी जनता की भावनाओं और आस्थाओं की सीधी जानकारी नहीं है–कि साम्प्रदायिकता के निकृष्टतम दिन समाप्त हो चुके हैं । पहले के किसी भी समय और कम से कम गत 10 वर्षों की तुलना में आज कहीं अधिक साम्प्रदायिक सद्भाव है । कतिपय स्वार्थी लोगों और सम्प्रदायों के बीच घृणा बढ़ाने के लिए सदैव तत्पर रहने वाले तत्वों के अपवादों को छोड़कर देश की दशा आज इतनी अच्छी है उतनी पहले कभी नहीं थी । और मैं पूरी तरह से आश्वस्त हूँ कि यदि ऐसी कृत्रिम बाधाएं न खड़ी की जायं जो भविष्य में आपसी

अविश्वास को जन्म देती हों, तो प्रगति की वर्तमान गति बनी रहेगी जब तक हम अपने इच्छित स्थान तक नहीं पहुंच जाते ।

मान्यवर, मैं कुछ दूसरे स्थानों पर प्रकाशित सामग्री से कुछ उद्धरण देना चाहूंगा । मैं यह नहीं जानता कि माननीय गृह सदस्य को इस बात की सूचना है या नहीं कि इंग्लैण्ड में किस तरह की चीजें छप रही हैं । क्या उन्होंने वहां प्रकाशित हो रहे पर्चों या लेखों को कभी पढ़ा है? मैं नहीं जानता कि वे 'वर्कर्सडेली' या 'लेबर लीडर' या इस तरह के दूसरे समाचार पत्र पढ़ते हैं अथवा नहीं । मुझे लगता है कि उन पत्रों के एक अंक में जितना साम्यवादी साहित्य प्रकाशित होता है उतना यहां कुल मिलाकर 10 वर्षों में भी प्रकाशित नहीं हुआ है और उन्हें यहां प्रतिबन्धित भी नहीं किया गया है तथा मैं उन्हें अक्सर पढ़ता रहता हूं । इंग्लैण्ड में प्रकाशित कुछ पर्चों से मैं कुछ उद्धरण दूंगा । ये पर्चे वहां ऐसे लोगों द्वारा लगातार और नियमित रूप से प्रकाशित होते रहे हैं, जो अपने को पृष्ठभूमि में कुछ उसी तरह से छिपाने में सफल हुए हैं जैसे हमारे यहां के कुछ काल्पनिक सम्पादकों के बारे में बताया जाता है । मान्यवर, मैं यहां 'हैनसार्ड' से एक उद्धरण पढ़ूंगा जो कि इंग्लैण्ड के महान्यायवादी के पिछले सत्र के भाषण का एक अंश है । उनका कहना है

साम्यवादी नाविकों के मुखपत्र का दावा करने वाले 'रेड सिगनल' नामक पत्र में भी इसी तरह का उल्लेख है । मैं सदन के सम्मुख कुछ उदाहरण रखना चाहूँगा ताकि माननीय सदस्यों को यह ज्ञात हो सके कि गोपनीय और भूमिगत तरीके से सम्राट की सेनाओं को किस प्रकार से उकसाया जा रहा है । अक्तूबर, 1931 के 'दि सोल्जर्स वायस' ने सैनिकों को यह उपदेश दिया है कि : "विजय मतदान के द्वारा नहीं बल्कि जनसंघर्ष के जरिये हासिल होगी । हमें आम हड़ताल को दोहराना ही होगा ।" मई, 1932, के अंक में यह वाक्य है, "जब अवसर आये हमें उनके द्वारा किये गये शस्त्र-प्रशिक्षण का इस्तेमाल करते हुए उनके शासन को उखाड़ फेंकना चाहिए और अपने मजदूर साथियों के साथ एक होकर स्वतंत्र समाजवादी ब्रिटेन की स्थापना करनी चाहिए ।" नवम्बर, 1932 में इस पत्र में कहा गया है :

"कामरेड पाठकों! हमारी सलाह है कि आप लोग अपनी यूनिट से शुरुआत करें । अपनी इकाई में अपनी तरह की सोच वाले दूसरे साथियों से सम्बन्ध बनाना शुरू कीजिए और उसके बाद दूसरे लोगों के मत-परिवर्तन का प्रयास कीजिए । यदि आप ठीक तरह से नहीं जानते हैं तो बेरोजगार आंदोलन के उस साम्यवादी सदस्य से लिखकर सलाह कीजिए जिसे आप पहले से

जानते हैं ।" सम्राट की सेना के सदस्यों को उकसाने के ये कुछ उदाहरण हैं । अक्तूबर,1932 में साम्यवादी नाविकों के मुखपत्र 'दि रेड सिगनल' में लिखा है :

"वे लोग आपके हाथों में एक बंदूक थमायेंगे । इसे लीजिए और युद्ध की कला का अध्ययन कीजिए । अपने देश के पूंजीपतियों और पूंजीवाद को समाप्त करने के लिए मजदूरों को यह ज्ञान प्राप्त करना बहुत जरूरी है ।"

मई, 1933 में उसने कहा है:

"यदि युद्ध होता है तो उसे युद्ध भड़काने वाले पूंजीपतियों और उनकी इस दिवालिया व्यवस्था के विरुद्ध गृह युद्ध में बदलना होगा, हम अपने साथियों से निवेदन करते हैं कि जब भी सम्भव हो वे इस महान आंदोलन से जुड़ जायें ।"

मान्यवर, मैं माननीय गृह सदस्य से पूछता हूं कि क्या उन्होंने इस देश में इस तरह की चीज देखी है? क्या उन्होंने इस देश की सेना में कहीं इस तरह का परचा बंटते हुए देखा है? क्या उन्होंने लोगों को इस तरह की दुष्ट गतिविधियों में लिप्त पाया है? महान्यायवादी ने दूसरे स्थान पर कहा हैं :

"पिछले एक-दो वर्षों में दो या तीन अभियोजनों के परिणामस्वरूप मुख्य अपराधी भूमिगत हो गये हैं । वे इतने कायर हैं या इतने संकोची हैं कि वे अपने प्रकाशनों में अपना नाम या पता नहीं लिखते हैं ।"

महान्यायवादी ने दूसरे पत्र से भी उद्धरण दिया है :

"मई, 1932 के 'दि सोल्जर्स वायस' में कहा गया है :

'अंग्रेजी, फ्रेंच और जापानी में पर्चे छापे गये हैं और उनके वितरण की योजना बहुत सावधानी से बनायी गयी है, उन्हें परेड ग्राउण्ड पर फेंका गया, दीवालों पर चिपकाया गया, नृत्य कक्षों और कैबरे प्रदर्शित करने वाले स्थानों पर डाला गया और अक्सर कई सैनिकों और नाविकों को आश्चर्य होता था कि उनकी जेबों और उनके हाथों में ये पर्चे कहां से आ गये ।'

जैसा कि मैंने कहा है, ये पर्चे खुफिया तरीके से छापे जाते हैं और दूसरे लोगों के जरिये बंटवाये जाते हैं । इनके प्रकाशक पूरा एहतियात रखते हैं कि वे पृष्ठभूमि

में ही रहें क्योंकि दो-तीन साल पूर्व के अभियोजनों में कुछ को वर्तमान कानून के अन्तर्गत उचित दण्ड मिला है ।

वे आगे कहते हैं:

"आप पूछ सकते हैं; वहां इसकी संख्या कितनी है? वर्ष 1932 में इस तरह के 17 विध्वंसात्मक पर्चे निकले थे । मेरा आशय 17 अंकों से नहीं, बल्कि भिन्न शीर्षकों के 17 भिन्न पर्चों से है । 'दि सोल्जर्स वायस' और 'रेड सिग्नल' जैसे इन पर्चों में उकसावेबाजी की गयी है, और उस वर्ष इनका वितरण 20 स्थानों पर किया गया था । 1933 में ऐसे 11 विध्वंसात्मक पर्चे छापे गये और 14 स्थानों पर उनका वितरण हुआ । सम्राट की सेना में इनका उसी तरह वितरण हुआ, जैसा मैंने अभी बताया है । उन्हें बैरकों की रेलिंग के ऊपर फेंका गया । नाश्ते की जगहों और मनोरंजन-कक्षों में इन्हें सैनिकों या नाविकों के हाथों में पकड़ा दिया जाता है और ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि गत दो वर्षों में प्रत्येक वर्ष ऐसे लगभग 50,000 पर्चे छापे गये और उन्हें सम्राट की सेनाओं में वितरित करने का प्रयास किया गया ।"

मान्यवर, मैं अपने विपक्षी सदस्यों अथवा माननीय गृह-सदस्य के धैर्य की परीक्षा नहीं लूंगा । मैं इनका जिक्र इसलिए नहीं कर रहा हूँ क्योंकि मैं इसकी संस्तुति करता हूँ; मैं इस सदन को केवल यह बताना चाहता हूँ कि यहां की तुलना में इंग्लैण्ड में ऐसी विषाक्त और विस्फोटक सामग्री का वितरण कहीं अधिक होता है । इसके बावजूद क्या कभी इंग्लैण्ड की जनता ने अपने प्रेस पर प्रतिबन्ध लगाने का प्रयास किया है? क्या उनके दिमाग में कभी इस प्रकार का कोई कदम उठाने की इच्छा हुई है? अभी हाल में मुझे मि० ग्रिफिथ्स से यह सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ कि सिनेमा की सेंसरशिप और प्रेस के नियंत्रण में कोई अन्तर नहीं है । यदि मेरे माननीय मित्र मि० मोर्गान ने यह कहा होता तो मैं अधिक चिन्ता नहीं करता लेकिन जब जिला मजिस्ट्रेट के पद पर कार्यरत भारतीय प्रशासनिक सेवा के सदस्य, जिन्हें इस तरह के मुकदमों का निपटारा करना पड़ता है, इस तरह का वैचारिक भ्रम प्रदर्शित करते हैं, तो यही स्थिति इस मांग का निर्णायक तर्क बन जाती है कि कार्यपालिका को ये शक्तियां न सौंपी जाएं । (सुनिये, सुनिये) मान्यवर, क्या उन्हें यह नहीं मालूम है कि पूरे विश्व में सिनेमा को नियंत्रित रखा गया है? क्या उन्हें यह नहीं मालूम है कि इंग्लैण्ड, फ्रांस, कनाडा, आस्ट्रेलिया और संयुक्त राज्य समेत हर जगह सिनेमा पर सेंसरशिप लागू है? क्या उन्हें इसके साथ यह भी मालूम है कि यदि ब्रितानी सामान्य सभा या लार्ड सभा में इसी प्रकृति का कोई विधेयक प्रेस की स्वतंत्रता को बाधित करने के लिए लाया जाये, तो यह बन्दी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम के विरुद्ध होगा और बिल ऑव राइट्स तथा मैग्नाकार्टा के भी विरुद्ध

होगा? क्या वे यह नहीं जानते हैं कि यह अमेरिकी संविधान के मौलिक तत्व के विरुद्ध होगा और प्रतिनिधि सदन या सीनेट अभिव्यक्ति की आजादी या संगठन की स्वतंत्रता पर रोक लगाने वाली किसी विधि का निर्माण नहीं कर सकती है? (सुनिये, सुनिये) क्या वे यह नहीं जानते है कि स्वतंत्र राज्य के संविधान में भी इस प्रकार की विधियां हैं? क्या वे यह नहीं जानते कि यहां तक कि कनाडा के संविधान में भी इस प्रकृति की विधियां हैं? क्या वे यह नहीं जानते कि ये मौलिक अधिकार हैं जिन्हें सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना गया है? क्या वे यह नहीं जानते कि सिनेमा के मामले में कसौटी बहुत साफ है—यदि दृश्य अश्लील और अभद्र है तो उसे तुरन्त जाना जा सकता है? यदि माप और परीक्षण के मानक वस्तुगत होते हैं तो सही निष्कर्ष निकालना सरल है । मैं मानता हूँ कि जहां तक भारत का मामला है, यहां तो सिनेमा के नियंत्रण में भी राजनैतिक मान्यताएं काम करती हैं । हम जानते हैं कि हमारे यहां सिनेमा को भी राजनैतिक प्रचार के लिए और विदेशी शासन को स्थायी बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है । बम्बई कांग्रेस के चित्रों को प्रदर्शित करने वाली फिल्म को वाकई प्रतिबन्धित कर दिया गया! मैं माननीय गृह सदस्य और अपने विपक्षी सदस्यों से पूछता हूँ कि अन्तर्राष्ट्रीय या स्थानीय, किस कानून के अन्तर्गत इस कारवाई की अनुमति है? बम्बई कांग्रेस के चित्रों में कौन सी अश्लीलता, अभद्रता या अनैतिकता थी? क्या कोई व्यक्ति इसका औचित्य बता सकता है? क्या यह इस मांग का सशक्त तर्क नहीं है कि कम से कम इस देश की कार्यपालिका को इसको देखते हुए, किसी किस्म की असाधारण शक्ति नहीं मिलनी चाहिए?

मान्यवर, मैं भली-भांति जानता हूँ कि कार्यपालिका किस प्रकार से अपने द्वारा ही बनाये गये नियमों को तोड़ती रहती है, हालांकि वे शासकीय आदेशों के अपने मैनुअलों का ही सहारा लेते हैं । मेरे प्रांत में जिला परिषदों और नगरपालिकाओं के चुनाव हो रहे हैं और कांग्रेस ने प्रत्याशी खड़े किये हैं । शासकीय आदेशों के मैनुअल में एक नियम है कि कोई शासकीय कर्मचारी चुनाव में सक्रियता नहीं दिखा सकता और यहां तक कि किसी प्रत्याशी के पक्ष में अपनी राय भी नहीं प्रकट कर सकता है । इस नियम का खुला उल्लंघन करते हुए पूरे प्रदेश भर के अधिकारियों ने योजनाबद्ध षड्यंत्र करके कांग्रेसियों को हराने और प्रतिद्वन्द्वी प्रत्याशियों को खड़ा करने और विजयी बनाने का प्रयास किया । मान्यवर, मैं जानता हूँ कि आज भी सारे देश में और निश्चित रूप से मेरे प्रदेश में भी सभी प्रतिक्रियावादी शक्तियों को संगठित करने की कोशिश की जा रही है और नौकरशाही सेना में अपंगों, दृष्टिहीनों और इसी तरह के लोगों की भर्ती भी की जा रही है, जिनकी दास्य-वृत्ति पर संदेह नहीं किया जा सकता । मान्यवर, यह हमारी

आंखों के ठीक सामने हो रहा है और उसके बावजूद वही नौकरशाही हमसे कह रही है कि हम उस पर विश्वास करें और यहां तक कि अपनी सारी स्वतंत्रतायें भी उन्हें सौप दें ।

मान्यवर, अब दूसरे पैम्फलेट पर ध्यान दें । इसमें सेठ गोविन्द दास के प्रश्न के उत्तर में दिये गये वक्तव्य शामिल हैं । इससे हमें ज्ञात होता है कि 17 मामलों में जमानत-राशि को जब्त कर लिया गया और मि० ग्रिफिथ्स ने इस पर बहुत अधिक जोर दिया है । मान्यवर, इससे क्या सिद्ध हो सकता है? 4,600 प्रकाशनों में से 17 की जमानत-राशि जब्त हुई । क्या मैं जान सकता हूँ कि इसका अनुपात कितना होता है? यह अनुपात 500 में लगभग 1.7 या 300 में 1 है । मान्यवर, क्या पूरी दुनिया में ऐसा कोई व्यवसाय है, क्या कोई समुदाय है, या कोई ऐसा भद्र और निर्दोष वर्ग है जिसमें इस अनुपात से भी कम संख्या नियम तोड़ने वाले सदस्यों की हो ? मेरे विपक्षी सदस्यों को बम्बई का ब्लैक-बे घपला, लॉयड बैराज काण्ड, शस्त्रागार परिषद् काण्ड, मेसोपोटामिया की दुर्घटना और इस तरह की तमाम घटनाओं का स्मरण करना चाहिए । क्या यह सत्य नहीं है कि पवित्रतम व्यक्तियों के बीच भी, इससे कहीं अधिक भयंकर अपराधों में, इससे भी अधिक अनुपात में लोगों को दोषी पाया गया है? मान्यवर, फिर ऐसा कानून क्यों न बनाया जाए जिसके अन्तर्गत भारतीय प्रशासनिक सेवा के प्रत्येक सदस्य से अच्छे व्यवहार और ईमानदारी के लिए 10,000 रु० जमानत-राशि जमा करवाई जाए? अभी हमने अभी हाल में घटे विण्दा काण्ड पर ध्यान दिया था और हम दूसरे मामले भी जानते हैं जिसमें सैनिकों को अति गम्भीर किस्म के हिंसक अपराधों का दोषी पाया गया है, और उनका अनुपात जमानत जब्त करवाने वाले समाचार पत्रों से बहुत अधिक है । फिर ऐसा कानून क्यों न बनाया जाये, जिनके अन्तर्गत इस देश में लाये गये प्रत्येक सैनिक से कम से कम एक वर्ष का वेतन जमानत राशि की तरह जमा करवाया जाए, ताकि हम इसके सद्व्यवहार के लिए आश्वस्त हो सकें? मान्यवर, भारतीय प्रशासनिक सेवा और अन्य शाही सेवाओं में सम्भवतः सेवा-शर्तों में यह अन्तर्निहित रहता है कि वे लोग इस देश के प्रति निष्ठावान रहेंगे । फिर भी हममें से बहुत ऐसा नहीं मानते कि वे सदैव इसके अनुकूल ही व्यवहार करते हैं । मान्यवर, यदि विचार-वैभिन्य का बहुत महत्व नहीं है, तो आप इस उद्देश्य के लिए सर जफरुल्ला खान, कुंवर जगदीश प्रसाद और सर नृपेन्द्र सरकार का एक स्थायी आयोग क्यों नहीं बना लेते, जिसके द्वारा भारतीय प्रशासनिक सेवा के उन सदस्यों की प्रतिभूति जब्त कर ली जाए या उन्हें दण्डित किया जाये जो इस देश के हितों के निश्चितरूप से विरोधी सिद्ध हुए हैं? जिस तरह से भारतीय प्रशासनिक सेवा तथा

अन्य सेवाओं के सदस्यों को यह अधिकार मिल रहा है कि वे स्वयं निश्चित करें कि उनके आलोचकों ने उनके विरुद्ध घृणा फैलायी है या नहीं और इसका फैसला करें, इसी तरह वे शासन और सेवाओं में अपनी निष्ठा सिद्ध कर चुके अपने ही सहयोगियों को यह अधिकार क्यों नहीं देते कि वे इस देश के प्रति उनकी निष्ठा से जुड़े मामलों पर निर्णय कर सकें? क्या वे इसके लिए तैयार हैं? यदि वे इसे स्वीकार कर लेते हैं, तो मैं अपने मत पर पुनर्विचार करने के लिए तैयार हूँ । लेकिन यहां तो मात्र प्रस्ताव भर से माननीय गृह-सदस्य क्षुब्ध हो जाते हैं । वे हमारी बात सिर्फ इसलिए बर्दाश्त कर रहे हैं क्योंकि वे इस सदन में हैं; अन्यथा यह विचार कि तीन भारतीय, जो कि भूरे रंग के हैं, और उस नस्ल के हैं जिनका बहुत सटीक विवरण एक अन्य यूरोपियन मुसोलिनी ने दिया है, उनके बारे में फैसला देने का अधिकार पायें, उनके लिए असहनीय है? मान्यवर, फिर वे हमसे क्या आशा कर सकते हैं? अन्ततः क्या हम मानव नहीं है? क्या हमारे अन्दर भावनायें नहीं है? मान्यवर, अभी कुछ दिन पहले माननीय गृह सदस्य ने कहा था कि सभी हत्याएं एक समान हैं । मुझे मालूम नहीं है कि वे दण्ड में कमी करने या क्षमा प्रदान करने के विशेषाधिकारों का प्रयोग करते हैं या नहीं । यदि वे करते हैं तो क्या वे हत्या के विभिन्न वर्गों में विभेद करते हैं? अन्यथा दया की प्रार्थनाओं का निस्तारण वे कैसे करते हैं? और क्या उनकी दृष्टि में खड्ग बहादुर द्वारा अपने परिवार की प्रतिष्ठा बचाने के लिए एक दुष्ट की हत्या करने और एक दुष्ट व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति की पत्नी का उपभोग करने के लिए हत्या करने में कोई फर्क ही नहीं है? क्या दोनों एक ही स्तर पर हैं? जहां तक आतंकवाद का प्रश्न है, खास तौर पर जिस अभद्र तरीके से मेरे विपक्षी सदस्यों ने मि० आसफ अली के वक्तव्य पर प्रतिक्रियाएं की हैं, उसके बाद मैं अपनी निष्ठा की घोषणा नहीं करना चाहता । मैं कांग्रेस का सदस्य हूँ, मैंने उसके प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर किया है और जिन्हें मेरे शब्दों पर विश्वास नहीं है, उनके लिए मेरे पास केवल तिरस्कार है और मैं इस बात की बिल्कुल चिन्ता नहीं करता कि वे मेरे बारे में क्या सोचते हैं । फिर भी मैं कहना चाहूँगा कि आनुपातिकता का अहसास होना चाहिए और उचित परिप्रेक्ष्य की एक अनुभूति होनी चाहिए जिसे कभी भूलना गलत होगा । आखिरकार, यहां तक कि कानून की निगाह में भी सभी अपराधी समान नहीं हैं । क्या यूरोपियनों और अमेरिकनों के अभियोजन की वही प्रक्रिया है जो भारतीयों के लिए है? क्या हमें 'रप्चर ऑफ स्पलीन केसेज़' की याद है जो बिजली के पंखों के आने के बाद ही सुलझ सका था ? और मुझे एक प्रमुख प्रसंग याद आ रहा है, जिसके बारे में सोचने पर मुझे हर बार अत्यधिक क्रोध आता है । मान्यवर, 1924 में टूण्डला में बलात्कार की एक घटना हुई थी । रेलवे विभाग के कुछ आंग्ल-भारतीय युवकों ने कुछ भारतीय लड़कियों के साथ दुष्कृत्य किया

था । उन्हें दोषी पाया गया और उन्हें कोड़े खाने की सजा मिली । सर हेनरी गिडनी, जो आज दुर्भाग्य से यहां नहीं हैं, ने उस समय शासन को एक ज्ञापन दिया, यह जानना जरूरी है कि उसका उद्देश्य क्या था । उसका उद्देश्य उन्हें छुड़ाना नहीं था बल्कि उसका उद्देश्य था कि इन दुष्टतम और नीचतम अपराधियों को कोड़े मारने का काम कोई भारतीय नहीं बल्कि कोई गैर-भारतीय करे । (कांग्रेस दल की बेंचों से 'शर्म' की आवाजें ।) और आखिर हुआ क्या ? उस ज्ञापन को किसने स्वीकार किया? उस व्यक्ति ने इसे स्वीकार किया, जो इंग्लैण्ड में लार्ड मुख्य न्यायाधीश और लार्ड चान्सलर रह चुका था, यानी रीडिंग के विसकाउण्ट जो उस समय भारत के वॉयसराय थे । (कांग्रेस पार्टी की बेंचों से 'शर्म' की आवाजें ।) मान्यवर, कार्यपालिका के अध्यक्ष के इस दृष्टिकोण के बाद हमसे यह कहना कि विभेद का कोई खतरा नहीं है और वे केवल शुद्ध न्याय की भावना से संचालित होंगे, हमारे लिए कुछ ऐसी बात है जिससे हमारा अनुभव मेल नहीं खाता और जिसकी असत्यता की हमें जानकारी है । मान्यवर, यदि उस स्तर का व्यक्ति, उस तरह के प्रशिक्षण तथा विधि और न्याय से पूरी तरह परिचित व्यक्ति भी इस तरह का व्यवहार करता है तो आप हमें हमारी स्वतंत्रताओं और अमूल्य अधिकारों को समर्पित करने के लिए कैसे कह सकते हैं? मान्यवर, यह कार्य हमारी स्वीकृति के साथ या हमारे द्वारा कैसे सम्भव है? हम अपनी इच्छा से आत्महत्या कैसे कर सकते हैं?

मैंने आपसे कहा है कि 17 मामलों में जमानत जब्त की गयी है । इसके साथ मैं आपको चित्र का दूसरा पहलू भी दिखाऊँगा । इस वर्ष भी इन आंकड़ों के अनुसार 71 पत्रों से जमानत-राशि मांगी गयी और उनमें से केवल 15 यह शर्त पूरी कर सके और 56 पत्रों को प्रकाशन बन्द करना पड़ा । इसी तरह से 448 अन्य पत्रों का प्रकाशन भी बन्द हो गया । इससे हम क्या निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि यह एक अत्यन्त दमनात्मक और अत्याचारी विधि है । और कैसे? प्रशासकीय निर्णय के अनुसार भी सारे पत्रों में से केवल 17 को ही दोषी पाया गया है, लेकिन इसके अलावा भी 500 पत्र थे जिनका व्यावहारिक रूप से शुरू में ही गला दबा दिया गया और उन्हें अपनी पक्ष-प्रस्तुति का भी अवसर नहीं दिया गया । यह दमनात्मक विधि की सबसे बड़ी शैतानी है । यह दोषियों से अधिक निर्दोषों को त्रस्त करती है । इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि शुरू से इनका रास्ता न रोका गया होता, तो इनमें से अधिकांश पत्रों ने अपने अतिरिक्त दूसरों को भी सहायता की होती । अभी कल मिदनापुर से माननीय सदस्य ने हमें बताया था कि शासन की

कार्य-प्रणाली संवेदनशील है और वे नवयुवकों को आतंकवादी जाल से बचाना चाहते हैं । क्या इसके लिए यही रास्ता है? कृपया देखिए : आपने 500 व्यक्तियों को वैधानिक व्यवसाय से जीविका अर्जन करने से रोक दिया । यदि आपने इन 500 व्यक्तियों को काम करने की अनुमति दी होती तो प्रत्येक प्रेस में कम से कम पांच और व्यक्तियों को काम मिलता और यदि इन पत्रों को प्रतिबन्धित न किया जाता और यदि इनसे जमानत-राशि न मांगी गयी होती तो इस तरह कम से कम 3,000 व्यक्तियों को रोजगार मिला होता । मुझे कुछ दिन पहले का एक समाचार याद आ रहा है और यह भी ऐसा विषय है, जिस पर हृदय रोता है । पटना में कान्सटेबुलों की 7 रिक्तियां थीं और 2,000 अभ्यर्थी: और उनके साथ कैसा बर्ताव हुआ? वहां इतनी अफरा-तफरी थी कि अभ्यर्थियों पर लाठी चलानी पड़ी । देश में बेरोजगारी की यह स्थिति है । सात कान्सटेबुलों के लिए 2,000 अर्जियां आती हैं और उन्हें रोटी देने की जगह आप पत्थर, बल्कि लाठियां खिलाते हैं । दूसरी ओर लोग अपने लिए रोजगार बनाने की कोशिश करते हैं और उन्होंने अपनी आजीविका का प्रबन्ध स्वतंत्र रूप से कर भी लिया होता लेकिन आप इन 2,000 लोगों के रास्ते में खड़े हो जाते हैं, और इस तरह वे दुर्दिनों के शिकार हो जाते हैं । क्या यह आश्चर्य की बात है कि उनमें से इसके बाद कुछ लोग ऐसे हताश तरीकों पर उतर आये, जिनसे चाहें देश के व्यापक हितों पर चोट ही क्यों न पहुंचती हो? मैं उन लोगों में से हूं जो यह मानते हैं कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी तरीके से हिंसा को प्रोत्साहित नहीं करना चाहिए, और ऐसा इसलिए नहीं है कि मुझे इस सरकार से कोई तनाव है, बल्कि यदि मेरा बस चले तो मैं इसे टुकड़े-टुकड़े कर दूं । मैं हिंसा का विरोध इसलिए करता हूं, क्योंकि वर्तमान स्थिति में यदि देश में हिंसा फैलेगी तो हम लोग कहीं के नहीं रहेंगे और स्थिति बद से बदतर होती चली जायेगी । इसलिए मैं ऐसी किसी गतिविधि में सहयोग नहीं दे सकता जिससे हिंसा को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रोत्साहन मिलता हो । लेकिन यदि आप इसका प्रभावी तौर से निराकरण करना चाहते हैं तो आपको तटस्थता से व्याधि के कारणों की पड़ताल करनी होगी ।

माननीय मि० ग्रिफिथ्स ने कहा है कि वे देश के नवयुवकों की सहायता करने के लिए व्यग्र हैं । मैं उनकी घोषणा की गम्भीरता पर कोई संदेह नहीं करता; उन्होंने यह भी कहा है कि उनकी और उनकी सरकार की कार्य-प्रणाली संवेदनशील है । मुझे कल का एक समाचार याद आ रहा है । एक बन्दी को एक आपत्तिजनक पत्र लिखने पर पांच वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड दिया गया है, क्योंकि उसने पत्र लिखने के पूर्व कारागार अधीक्षक की अनुमति नहीं ली थी । यह कार्यप्रणाली

असाधारण रूप से संवेदनशील है लेकिन हम अपनी ओर से इसकी संवेदनशीलता समझ सकने में असमर्थ हैं । क्या मि० ग्रिफिथ्स ने कभी यह जानने की कोशिश की है कि इस देश में इतना असन्तोष क्यों है? उन्हें मालूम होगा कि बेकन ने विद्रोह के निदान का क्या तरीका बताया था । उसने कहा था, "विद्रोह का निदान है कि इसमें से तत्व निकाल लिया जाये और हम तत्व में दरिद्रता और असंतोष शामिल है ।" क्या उन्होंने कभी यह सोचा है कि वे यहां क्यों हैं? क्या उन्होंने कभी यह सोचा है कि इस सेवा की क्या भूमिका है, जिसके वे एक सदस्य हैं? क्या उन्हें यह नहीं मालूम है कि आज से 40 वर्ष से भी पहले सामान्य सभा ने इंग्लैण्ड और भारत में एक साथ भारतीय प्रशासनिक सेवा की परीक्षायें आयोजित करने के लिए एक प्रस्ताव पारित किया था? लेकिन इसे लागू क्यों नहीं किया गया? क्या वे यह नहीं जानते हैं कि आज भी उच्चतम नागरिक सेवाओं के 2,500 उच्चाधिकारियों और सम्राट से कमीशन पाने वाले 5,000 अन्य अधिकारियों में भारतीयों का अनुपात 6 या 5 में 1 भी नहीं है? क्या वे यह नहीं जानते कि यदि आज भी विदेशी भर्ती रोक दी जाए तो वे सभी लोग, जिनके सामने हर रास्ते पर दीवार है, फिर से उत्साहित हो जायेंगे और इस तरह वे अपने को और इस देश को शान्ति और समृद्धि प्रदान कर सकेंगे? मैं उनसे अनुरोध करूंगा कि वे इस उद्देश्य के लिए काम करें और कम से कम उन लोगों का सहयोग करें जो इस देश की नौकरियों के लिए विदेशी नियुक्तियों को रोकना चाहते हैं । इस अकेले काम से देश में स्वराज नहीं आ जाएगा लेकिन यदि इतना ही कर दिया जाए तो मैं उन्हें आश्वस्त कर सकता हूँ कि देश में आतंकवाद समाप्त हो जाएगा ।

मि० ग्रिफिथ्स का नाम अच्छा है; इससे मुझे सिनफिनवाद के पिता और सिन फिन गणतंत्र के प्रथम राष्ट्रपति मि० आर्थर ग्रिफिथ की याद आती है जो माइकेल कोलिन्स के साथ प्रतिनिधि-मण्डल के नेता के तौर पर डाउनिंग स्ट्रीट गये थे और जिन्होंने लार्ड बिरकन हेड जैसे अहंकारी और लॉयड जॉर्ज जैसे सशक्त और प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों के साथ आइरिश समझौता किया था; और ग्रिफिथ ने अद्भुत कार्य किया था । मुझे आशा है कि मि० ग्रिफिथ्स उस नाम से कुछ अवश्य सीखेंगे, जिससे हमें प्रेरणा मिली है; और वे वास्तविक रूप से इस देश के लिए कुछ करेंगे; इसके लिए हम उनके हमेशा कृतज्ञ रहेंगे ।

मान्यवर, मि० ग्रिफिथ्स ने कहा है कि यह पूर्णतः तर्कसंगत है कि जब एक संगठन अवैध घोषित हो जाता है तो उसके कोष को जब्त कर लिया जाए । मान्यवर, मुझे उन शौकों का तर्कशक्ति याद आ रहा है, जिसमें नीरो संलग्न रहा

करता था । उस समय ग्लैडिएटर लोग हुआ करते थे जिन पर नीरो कभी-कभी एक निश्चित संख्या में कोड़े मरवाया करता था । यदि ग्लैडिएटर मर जाता था, तो उसकी तार्किक परिणति उसे भेड़िए के सामने फेंके जाने में होती थी । यदि वह जीवित रह जाता था लेकिन उसकी नाक से खून आ जाता था तो उसके ऊपर भेड़िया छोड़ दिया जाता था और यदि इन दोनों की बजाय उसकी खाल कट जाती थी, तो उसके साथ यह तार्किक व्यवहार किया जाता था कि उसकी खाल चाकू से अलग कर दी जाती थी । मि० ग्रिफिथ्स चीजों को उसकी तार्किक परिणति तक पहुंचाना चाहते हैं । लेकिन क्या यह उनकी समझ में नहीं आता कि अवैध संगठनों की भी वैध गतिविधियां हो सकती हैं? क्या उन्हें यह समझ में नहीं आता है कि स्वराज भवन में अस्पताल, मथुरा और वृन्दावन में प्रेम महाविद्यालय और इस तरह की कई अन्य उपयोगी संस्थाएं कांग्रेस द्वारा संचालित होती हैं जो केवल मानवतावादी और रचनात्मक कार्य करती हैं? इसलिए यह समझा जा सकता है कि अवैध संगठन भी कुछ ऐसे काम कर सकते हैं जो सभी वर्गों के लिए लाभप्रद और राजनैतिक पक्षपात से मुक्त हों ।

मान्यवर, मैंने अपने इरादे से बहुत अधिक समय ले लिया है और मैं अब इस विधेयक के प्रावधानों पर कतिपय टिप्पणियां करूंगा । जैसा कि सर लारेन्स जेनकिंस ने कहा था कि मानवीय कल्पनाशीलता इससे अधिक विस्तृत रूप नहीं धारण कर सकती; और मान्यवर, उन्होंने यह 1910 के विधेयक के बारे में कहा था, जबकि यह विधेयक उससे कहीं अधिक व्यापक है । सर लारेन्स जेनकिंस ने विधेयक के बारे में कहा था :

"धारा 4 के प्रावधान बहुत व्यापक हैं और इसकी भाषा उतनी व्यापक है, जितनी मानवीय कल्पनाशीलता उसे बना सकती है । मुझे लगता है कि एक ओर निश्चितता और दूसरी ओर असम्भाव्यता सभी को इसमें समेट लिया गया है । यह देखना कठिन है कि एक कल्पनाशील व्यक्ति इस धारा को कितनी दूरी तक लागू कर सकता है । इसका विस्तार निश्चित रूप से उन लोगों तक है जिनकी प्रशंसा की जा सकती है । एक वर्ग की प्रशंसा में खतरा हो सकता है । मानक साहित्य माना जाने वाला लेखन भी इसकी गिरफ्त में आ सकता है ।

मान्यवर, कल मि० मोर्गन ने हमसे कहा था कि हम गैरजिम्मेदार हैं, क्योंकि हम कभी सरकार के साथ सहयोग नहीं करते । क्या मैं उन्हें और स्वर्गिक

सेवा के सम्मानित सदस्यों को याद दिला सकता हूं कि जब सर कोर्टिनी इल्बर्ट का विधेयक लाया गया था, उस समय उनका और उनके संरक्षण में पलने वाले प्रेस का लार्ड रिपन के शासन के बारे में क्या व्यवहार था? क्या मैं जान सकता हूं कि उनका दृष्टिकोण उस समय क्या था, जब सर बैमफाइड फुलर ने त्याग-पत्र दिया था और लार्ड मार्ले तथा लार्ड मिण्टो ने उसे स्वीकार कर लिया था? क्या मैं जान सकता हूं कि उनका दृष्टिकोण उस समय क्या था, जब मि० माण्टेग्यू ने जलियावाला बाग कांड के लिए जनरल डायर की निन्दा की थी? क्या मैं उनसे पूछ सकता हूँ कि उनका दृष्टिकोण लार्ड इरविन गांधी वार्तालाप के समय क्या था, जिसकी परिणति गांधी-इरविन समझौते में हुई थी? लेकिन मान्यवर, हम लोग तुच्छ व्यक्ति हैं। मैं यहां केवल अपने ही विचारों पर निर्भर न करते हुए अपने विरोधी सदस्यों के लाभार्थ मैं उस व्यक्ति के विचारों को पढ़कर सुनाना चाहूँगा, जो या तो अकेले या संयुक्त रूप से अथवा विकल्प के रूप में श्री बाल्डविन के साथ ब्रिटिश मंत्रिमंडल का सात या आठ वर्षों तक अग्रणी सदस्य रहा है; मेरा आशय माननीय श्री रैमजे मैकडोनेल्ड से है। उन्होंने कहा था कि :

"विविध कोटि के आक्रामक दृष्टिकोण युक्त अंग्रेजों के स्वामित्व वाले समाचारपत्र इस अर्थ में अंग्रेजों के समर्थक हैं कि वे समस्त विशेषाधिकारों सहित ब्रिटिश प्रभुत्व के रक्षक हैं और पूरी चौकसी के साथ राष्ट्रवाद विरोधी हैं।"

सर एफ०ई०जेम्स– यह किस तिथि की बात है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त– निश्चित रूप से, यह उनके इंग्लैण्ड का प्रधानमंत्री बनने से पहले की बात है। क्या जब यूरोपियनों को सद्बुद्धि आयी? तब मैं अपने मित्र को बधाई देना चाहूँगा और आशा करता हूँ कि वे हमारा समर्थन करेंगे। (मैकडानेल्ड के कथन की अगली कड़ी है :—)

"प्रशासन जब राष्ट्रीयतावादी दावों के आगे झुकता प्रतीत होता है तो वे उस पर खुलकर प्रहार करने लगते हैं और ऐसा भारत विरोधी अभियान चलाते हैं जो भारी आघात पहुँचाता है। अभियान के दौरान कुछ समाचार-पत्र तो सार्वजनिक नीतियों की सीमाओं का उल्लंघन भी करते रहते हैं। जिस देश में कठोर प्रेस कानून लागू हो वहाँ ऐसे पत्रों के साथ कड़ाई से पेश आना चाहिए था, क्योंकि इनकी भाषा और भावना वास्तव में कर्कश होती है कि जिससे कि असंतोष की भावनाओं को बढ़ावा मिलता है, जिससे राजनैतिक अपराधी और अराजकता के एजेण्ट के लाभ उठाते हैं। कई बार उनकी आलोचना अपमानजनक होती है। यदि भारतीय समाचार-पत्र भी ऐसा ही दुष्टतापूर्ण मार्ग अपनायें तो उन पर यह कानून निःसंदेह तत्काल लागू कर दिया जाना चाहिए।"

मान्यवर, हम लोगों को गैरजिम्मेदार कहा जाता है। मैं एक बार पुनः अपने

विपक्ष में बैठे सभी सदस्यों—वे सरकारी हों या गैर सरकारी जानकारी में प्रेस-ला और फौजदारी कानून संशोधन अधिनियम के बारे में उस व्यक्ति के स्पष्ट विचारों को लाना चाहूँगा जो न केवल कई वर्षों तक प्रधानमंत्री रहा है बल्कि आज भी श्री बाल्डविन के बाद दूसरे स्थान पर है :

"यही भारत सरकार का दोष है । इसका1910 का प्रेस एक्ट और 1919 का फौजदारी कानून (संशोधन) अधिनियम जनता की स्वतंत्रताओं और सरकार के दायित्वों के प्रतिकूल है और किसी भी देश की संहिता-पुस्तकों में सम्मिलित किये जाने योग्य नहीं हैं ।"

"प्रथमत: दमन के अधिकारों का आदतन प्रयोग करने से सरकार की ऐसी प्रवृत्ति बन जाती है कि सभी प्रभावकारी, कष्टदायक आलोचनाओं को राज्यद्रोह समझा जाने लगता है और जो सरकार इस प्रकार के राजद्रोह पूर्ण षड्यंत्र के लिए आंशिक रूप में जिम्मेदार होती है वह अपने दोष से मुक्ति पा जाती है और सारा दोष विरोधियों पर मढ़ दिया जाता है । दमन के अधिकार और नीतियाँ शान्ति स्थापित करने के लिए नहीं बनायी जातीं बल्कि इनको केवल दमन मात्र के लिए बनाया जाता है—किसी अन्य बात के लिए नहीं ।.... हर मूर्ख सरकार, जब भी उसकी राय में ऐसा करना आवश्यक हो, तब वह अपने निरंकुश अधिकारों का प्रयोग करना चाहेगी, किन्तु किसी भी देश की जनता अपनी स्वतंत्रताओं के सन्दर्भ में सरकार को ऐसे अधिकार कभी प्रदान नहीं करेगी ।"

मैं अन्तिम कुछ शब्दों को सदन के गैर सरकारी सदस्यों की नोटिस में लाना चाहूँगा । ये शब्द हैं :

"किन्तु किसी भी देश की जनता अपनी स्वतंत्रताओं के संदर्भ में सरकार को ऐसे अधिकार कभी प्रदान नहीं करेगी"—"सरकार को मजबूर किया जाय कि वह राजद्रोह का मुकाबला अपनी राजनीतिक सूझबूझ से करे और उसे अपनी गलतियों का बोझ दूसरे पर थोपने की अनुमति नहीं होनी चाहिए जैसा कि भारत सरकार तब करती है जब वह प्रेस-एक्ट और रोलेट-एक्ट के द्वारा व्यवस्था स्थापित करना चाहती है ।"

मैं अब भी श्री शेरिडन द्वारा 'हाउस आफ कामन्स' में दिये गये भाषण में से दो या तीन वाक्य ही और पढ़ूंगा जो समाचार-पत्रों की सामर्थ्य के बारे में हैं । उन्होंने कहा था—

"केवल स्वतंत्रताविहीन समाचारपत्र मेरे हवाले कर दो और मैं मंत्री महोदय के सम्मुख धन के लोभ में बिक जाने वाले हाउस आफ लार्ड्स को पेश कर दूंगा । मैं उन्हें भ्रष्ट तथा दास मनोवृत्ति का हाउस आफ कामन्स' पेश कर दूंगा । मैं उनके पद को सभी का समर्थन प्राप्त करा दूंगा । मैं उनको मन्त्री पद के सभी प्रभावों से मंडित करा दूंगा । मैं उन्हें स्थान के अनुकूल समस्त अधिकार-धन से लोगों को खरीद कर अपना मुरीद बना लेने और विरोधियों को भयभीत

करने के सभी अधिकार दिला दूंगा । किन्तु समाचारपत्रों की-स्वतंत्रता प्राप्त होने पर मैं एकदम निडरता से उनसे मिलूँगा और सशक्त साधन द्वारा तैयार किये गये उनके सारे ताने-बाने पर मैं आक्रमण कर दूंगा । ऊँचाई पर पहुँचे भ्रष्टाचार को मैं झकझोर दूंगा और उसे उन्हीं बुराइयों की कब्र में दफन कर दूंगा जिन्हें सुरक्षा प्रदान करना उनका उद्देश्य था ।"

मान्यवर, मेरे कहने को अब एक ही बात और बची है । रैमजे मैकडोनेल्ड की पुस्तक के समाचार-पत्रों सम्बन्धी अध्याय के अन्तिम दो वाक्य ये हैं कि :

"नौकरशाही के इतिहास का अंनिम अध्याय दमन का होता है । जिस प्रकार अपने निकट पहुँचते उत्तराधिकारी के विरुद्ध विद्रोह का आरोप लगाने वाले शासक को गद्दी से हटा दिया जाता है उसी प्रकार इनका (नौकरशाही का) भी अंत होता है ।"

जंजीबार के भारतीय आप्रवासी

मान्यवर, मैं प्रस्ताव करता हूँ—

"कि यह एसेम्बली स-परिषद् गवर्नर जनरल को संस्तुत करती है कि वह जंजीबार में बसे हुये भारतीयों के हितार्थ और उनकी स्थिति को सुधारने हेतु सभी प्रभावकारी कदम उठाए ।"

मान्यवर, मुझे माननीय नेता सदन और शिक्षा सचिव की कृपा से यह अवसर मिला है और मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने इतने महत्वपूर्ण विषय पर चर्चा करने के लिए इस सदन को अवसर दिया । समुद्र पार भारतीयों का इतिहास अ-विमुक्त अवसाद, प्रताड़ना और अवमानना की दुःखद गाथा है । यद्यपि यह विचित्र प्रतीत हो सकता है लेकिन यह सत्य है कि उन स्थानों पर भारतीयों की स्थिति अधिक खराब है जो ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल नामक दिखावटी मृदुनामी संगठन में सम्मिलित हैं, और ब्रितानवी स्थिति मजबूत होने और ब्रितानवी प्रभाव में वृद्धि होने के साथ उनकी स्थिति और खराब हुई है । यह एक विडम्बना है, खेद का विषय है, और एक त्रासदी है । लेकिन सबसे ऊपर यह एक सत्य और नग्न सत्य है। यहां तक कि जंजीबार में भी ब्रितानवी शासन के पूर्व दिनों में स्थिति अच्छी थी, और केवल जंजीबार स्थित भारतीयों के हितों के लिए और वहां के भारतीय व्यापारियों को लाभ पहुंचाने के घोषित उद्देश्य के लिए वहां 125 वर्ष पूर्व ब्रिटिश वाणिज्य दूतावास खोला गया था, हालाँकि वर्तमान रीजेन्सी की स्थापना केवल 50 वर्ष पूर्व अंग्रेजों और जर्मनी के बीच मतभेदों के निवारण और प्रभाव-क्षेत्र के निर्धारण के उपरान्त हुई थी । भारतीयों की स्थिति तब आज से बेहतर थी । जो बात जंजीबार के लिए सत्य है, वह अन्य औपनिवेशिक देशों पर भी लागू होती है । हम जानते हैं कि 1904 और 1905 के पूर्व के दक्षिण अफ्रीका और आज के दक्षिण अफ्रीका में शामिल हुए राज्यों में भारतीयों की स्थिति बहुत बेहतर थी और वस्तुतः, जैसा लार्ड

उक्त भाषण पं० गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा विधान सभा में 18 सितम्बर, 1935 को उस समय दिया गया था जब उन्होंने 'जंजीबार' में बसे भारतीय नागरिकों की स्थिति के बारे में एक प्रस्ताव पेश किया था । पन्त जी ने इसी सिलसिले में अपना समापन भाषण उसी दिन अपरान्ह में दिया था ।

लैंसडाउन और अर्ल सेलबोरेंड ने कहा है, दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों की परेशानियाँ ब्रिटेन और दक्षिण अफ्रीका के अधिवासियों के बीच विवाद की मुख्य वजह थी, जिसके फलस्वरूप आखिर में युद्ध भी हुआ । मान्यवर, यह इतिहास का विषय है । मैं वर्तमान स्थिति के तथ्यों पर केन्द्रित रहकर समय बचाना चाहूंगा । जंजीबार के भारतीयों का मामला उठाने के पहले मैं सामान्य प्रकार की कतिपय बातों का जिक्र करूंगा, और मैं चाहूंगा कि उपनिवेश सचिव मि० मैल्काम मैकडोनेल्ड या सर कनलिफ लिस्टर-या जो भी कोई हो—इनको ध्यान में रखें ।

समुद्र पार के भारतीयों में दिलचस्पी रखने वाले व्यक्तियों को मैं सर्वप्रथम यह ध्यान दिलाना चाहता हूँ कि भारतीय कभी भी लालच या लोभ के वशीभूत नहीं हुए, न उनकी कब्जा करने अथवा शोषण की इच्छा ही रही, और वे कभी भी किसी देश या राज्य पर राजनैतिक प्रभाव या आर्थिक नियंत्रण प्राप्त करने के उद्देश्य से वहां जबरदस्ती नहीं घुसे । वे तो वस्तुतः सम्बन्धित राष्ट्रों द्वारा वहां आमंत्रित किये गये थे । जरूरतमंद सरकारों और व्यक्तियों ने पहल की और तत्कालीन भारत सरकार और भारतीय जनता से श्रम-शक्ति प्रदान करने की अपील की थी ताकि वे अपने संसाधनों का विकास और प्रयोग करके स्वयं को समृद्ध बना सकें और वहां के देशवासियों की स्थिति में सुधार ला सकें । भारतीय कभी भी घुसपैठिये नहीं थे । वे सदैव सम्मानित और आमंत्रित अतिथि की तरह गये थे । इस संवाल से सम्बन्धित व्यक्तियों के हृदय में मैं यही ज्योति जाग्रत करना चाहता हूँ ताकि वे इसके नैतिक आशयों और उस देश के स्पष्ट दायित्वों को न भूल जाएं जिसने अपने संकट के समय भारतीयों को अपने यहां स्वयं आमंत्रित किया था । भारतीय किसी लुटेरी प्रवृत्ति की भावना से नहीं बल्कि जंजीबार के सुल्तान के हार्दिक आमंत्रणों और आश्वासनों के आधार पर जंजीबार गये थे । मेरे इस कथन का समर्थन इतिहासकार – खास तौर पर ब्रिटिश इतिहासकार – करते हैं । उनका नामोल्लेख आवश्यक नहीं । इस भांति जो भारतीय वहाँ बुलाये गये थे उनकी संतानों को निकाल बाहर करने की योजना बनाना एक घृणित कार्य है जो द्वेषभावना उत्पन्न करने वाला है । मेरे विचार से जंजीबार के रेजिडेण्ट द्वारा जून, 1934 को जारी आज्ञप्तियों का यही वास्तविक उद्देश्य है । मान्यवर, मैं अपनी पूरी शक्ति के साथ इन मामलों से सम्बन्धित व्यक्तियों को यही बात बताना चाहता हूँ ।

भारत सरकार का ध्यान मैं एक अन्य तथ्य की ओर आकर्षित कराना चाहूँगा और वह तथ्य यह है कि भारतीयों को इन बाहरी देशों को भिजवाने में सरकार ने

एजेण्ट की भूमिका निभाई है । सरकार के सक्रिय सहयोग, उसके कहने पर और उसके द्वारा दी गयी गारंटी के आधार पर भारतीय बाहरी देशों को गये । इन परिस्थितियों में भारत सरकार की खास जिम्मेदारी है, और यदि वह इस संकटपूर्ण स्थिति से भारतीयों को नहीं उबारती है तो वह वचन-भंग की अपराधी होगी । मैं यह नहीं कह सकता हूँ कि प्रदत्त परिस्थितियों में वह श्रेष्ठतम प्रयास नहीं कर रही है । अगर किसी एक प्रश्न पर सरकार और विपक्ष के मध्य असहमति का दायरा कम हो सकता है तो वह यही प्रवासी भारतीयों का मुद्दा है । अन्यथा, मेरी दृष्टि में घरेलू मामलों में यह खाई बहुत चौड़ी और बहुत गहरी है । लेकिन भारत सरकार इन मामलों के सम्बन्ध में कभी भी अधिक चिंतित नहीं होती । सम्बद्ध व्यक्तियों का विशेष ध्यान मैं एक अन्य बात की ओर भी दिलाऊंगा । भारतीय किसी देश में किसी प्रकार के आरक्षण या सुरक्षा-कवच की इच्छा नहीं करते । भारतीय दूसरों के हाथों से खिलाया जाना या बहुत एहतियात के साथ रखा जाना उचित नहीं समझते । वस्तुतः मान्यवर, आज के भारतीयों की बाधाओं और कठिनाइयों का कारण उनका उच्चतर नैतिक गुण ही है । अपनी साहसिकता, मानसिक शक्ति, दृढ़ता, श्रमशीलता, मितव्ययिता और अपनी सीधीसादी जीवन-पद्धति के कारण ही भारतीय सभी प्रकार के घृणास्पद विभेदों का निशाना बनाये गये हैं, क्योंकि उन्मुक्त प्रतियोगिता में वे अपराजेय हैं । इसलिए कृत्रिम बाधाओं द्वारा उन्हें विकलांग बनाया गया है । मैं सभी देशों के आर्थिक और राजनीतिक आत्म-निर्णय के अधिकार को स्वीकार करता हूं,लेकिन इस पर अन्तर्राष्ट्रीय नैतिकता के नियम लागू होने चाहिए । जो लोग किसी देश में बाहर से बुलाये और बसाये गये हैं, जिन्होंने उस देश की खुशहाली और प्रगति में सहयोग दिया है और जो उनके उत्थान और उनकी समृद्धि के लिए मुख्यतः जिम्मेदार माने गये हों, उनको बंधनों से जकड़ने का उस देश को अधिकार नहीं होना चाहिए । मान्यवर, भारतीयों की तो केवल ईमानदारी के व्यवहार की मांग है । वे कोई व्यावसायिक सुरक्षा-कवच नहीं मांगते न वे किसी देश के वासियों के तटीय ट्रैफिक के विकास में बाधा डालना चाहते हैं । वे उनके प्रयासों में रोड़ा नहीं अटकाना चाहते, खास तौर पर जो वहाँ कई पीढ़ियों से बसे हैं और जो उतने ही अच्छे जंजीबारी हैं जितने वहाँ के पुराने निवासी हैं, उनके सम्बन्ध में उनकी मांग हैं कि ऐसा कोई दण्डात्मक विधायन नहीं होना चाहिए जिसकी मंशा भारतीयों या भारतीय हितों को नष्ट ही करना हो । मान्यवर, भारतीय पक्ष का आधार नैतिक है और वह केवल इसी आधार पर आगे भी खड़ा रहेगा । यदि वह न्यायोचित प्रतियोगिता में समाप्त हो जाता है तो उसे कोई शिकायत नहीं होगी, लेकिन यदि उन्हें सुनिश्चित-सुविचारित तरीकों से इस प्रतियोगिता में भाग लेने के अयोग्य बना दिया जाता है तो हमें शिकायत करने का

जायज अधिकार प्राप्त है । मान्यवर, 100 वर्ष पूर्व पहले-पहल जंजीबार में भारतीयों के प्रवेश से पहले जंजीबार की क्या हालत थी? लौंग उद्योग वहाँ लगभग नहीं के बराबर था, और भी तो उसका बहुत संकीर्ण दायरा था । आज विश्व व्यापार में प्राप्त स्थान उसे भारतीयों की देन है । उसके विस्तार और विकास में भारतीयों का योगदान है, भारतीयों का बलिदान है और भारतीयों द्वारा उठाया गया वह खतरा है जो उन्होंने एक विदेशी भूमि को विकसित करने के लिए उत्प्रवास करने में दिखाया है । मान्यवर, मैं चाहता हूँ कि इन तथ्यों को ध्यान में रखा जाय । मान्यवर, इन अपरिचित स्थानों में भारतीय अल्पसंख्यक हैं और गृह सरकार यदि उनके हितों की देखभाल और हिफाजत नहीं करेगी तो उनका भविष्य निराशापूर्ण हो जायेगा । आज की दुनिया यदि भ्रष्ट नहीं तो कम से कम अविश्वसनीय तो है ही । संकुचित और उत्पीड़न चरित्र वाला घोर राष्ट्रवाद लोगों की आत्मा पर हावी हो गया है। यदि वहां के आप्रवासियों को मातृभूमि का प्रभावी संरक्षण नहीं मिलता तो कठिनाइयाँ निश्चय ही और अधिक बढ़ जायेंगी तथा कष्टकारी बन जायेंगी । मान्यवर, यह दुखद बात है कि ब्रिटिश डोमीनियनों, उपनिवेशों, संरक्षित और अधिदेशाधीन प्रदेशों में भारतीयों से वैसा व्यवहार किया जा रहा है, जैसा नाजी जर्मनी में यहूदियों के साथ हो रहा है । ब्रिटिश डोमीनियनों में भारतीयों की लगभग यही स्थिति है और वे सर्वत्र अपने को जाल में फंसा देखते हैं ।

मान्यवर, मैंने भारतीय प्रवासियों से सम्बन्धित कुछ सामान्य और प्रमुख पहलुओं पर प्रकाश डाला है, जिन्हें कृपापूर्ण दृष्टि, ध्यान और यहां तक कि सम्मान के साथ देखा जाना चाहिए । अब मैं जंजीबार स्थित भारतीयों के बारे में कुछ तथ्यों की चर्चा करूंगा । मान्यवर, जून 1934 में रेजिडेण्ट ने 6 आज्ञप्तियां जारी की थीं । उन्हें अनुचित शीघ्रता के साथ संहिता प्रस्ताव में स्थान दे दिया गया । यदि मि० मेनन के शब्द मुझे भलीभांति याद हैं, तो 12 दिनों के अन्दर-अन्दर यह कार्य सम्पन्न हो गया । इस तरह एक आज्ञप्ति में दो दिन का समय लिया गया । मान्यवर, इन आज्ञप्तियों के कारण भारतीयों पर अपूर्व अत्याचार हुआ है । शायद यही पर्याप्त नहीं समझा गया, इसलिए उन आरोपित निर्योग्यताओं पर दूसरी और चीजें डाल दी गयीं । फिर ऋणों के भुगतान में 12 महीने की छूट दी गयी । अब यह छूट 6 महीने के लिए और बढ़ा दी गयी है तथा और भी अधिक छूट मिलने की सम्भावना है । मान्यवर, 6 महीने की छूट का व्यावहारिक अर्थ इसकी अवधि के कम से कम एक वर्ष तक बढ़ जाने का है क्योंकि जंजीबार में केवल लौंग की ही खेती होती है जो जुलाई महीने में कटती है । अगर ऋणग्रस्त व्यक्तियों को फसल के समय भुगतान न करने के लिए छूट दी जाती है तो वे उसका भुगतान पूरा एक वर्ष बीत जाने पर तब तक

नहीं कर पायेंगे, जब तक वे काटकर उसका भण्डारण नहीं कर लेते । मान्यवर, मेरा कहना है कि इसका व्यावहारिक अर्थ यह होगा कि सभी ऋणों और डिक्रियों की अदायगी पर कम से कम एक वर्ष की छूट दे दी जाय । इसके अतिरिक्त, मान्यवर, ऋणग्रस्तता की पड़ताल करने के लिए नियुक्त कृषि आयोग की रिपोर्ट अभी तक प्रकाशित नहीं की गयी है । भारतीयों के विरुद्ध गम्भीर आरोप लगाये गये थे और उनके खिलाफ अफवाहें और कलंकपूर्ण बातें फैलायी गयीं थीं । उनकी आशायें इस रिपोर्ट पर निर्भर थीं किन्तु वह रिपोर्ट अभी तक प्रकाशित नहीं की गयी है । मान्यवर, मुझे निश्चित मन्देह है कि रिपोर्ट भारतीयों के पक्ष में है और उन पर गैरजिम्मेदारी के साथ लगाये गये सभी आरोपों और आक्षेपों को पूरी तरह निराधार सिद्ध कर दिया गया है । मेरे विचार से इसी कारण से उस रिपोर्ट को इतने लम्बे समय से रोके रखा गया है । मैं पिछले वर्ष जारी आज्ञप्तियों में सम्मिलित महत्वहीन आज्ञप्तियों का यहाँ जिक्र नही करूंगा । मैं केवल उन महत्वपूर्ण आज्ञप्तियों की ओर सदन का ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा । इस क्रम में सर्वप्रथम भूमि हस्तान्तरण आज्ञप्ति (लैंड एलीनेशन डिक्री) है, फिर लौंग उत्पादक संघ आज्ञप्ति (क्लोव ग्रोवर्स एसोसिएशन डिक्री) और तीमरा लौंग निर्यातक आज्ञप्ति (क्लोव एक्सपोर्ट्स डिक्री) है । मान्यवर, भूमि हस्तान्तरण आज्ञप्ति नस्लभेद करने वाली आज्ञप्ति है, और महान्यायवादी ने स्वीकार किया था कि इसका उद्देश्य नस्लभेदी है । यह आज्ञप्ति भारतीयों के भूमि अधिग्रहण पर प्रतिबन्ध लगाती है किन्तु जंजीबार में बसे अफ्रीकियों और अरबवासियों पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है । इतना ही नहीं, कभी भी जंजीबार जाने वाला कोई भी अफ्रीकी या अरबवासी जमीन खरीदने का अधिकारी है । लेकिन उन भारतीयों द्वारा भूमि खरीदने पर प्रतिबन्ध है, जिनके पूर्वज तीन-चार पीढ़ी पहले इस अधिदेशाधीन क्षेत्र (प्रोटेक्टरेट) में गये थे और जिनका अब तक भारत से सम्पर्क पूरा-पूरा टूट चुका है । इस व्यवस्था से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि कोई व्यक्ति रेजिडेंट की विशेष कृपा से भूमि अर्जित कर सकता है, क्योंकि कोई भारतीय मूल का व्यक्ति अपने अधिकार के बल पर जमीन नहीं खरीद सकता । मान्यवर, क्या भूमि प्राप्ति की इच्छा अवैध आकांक्षा है? क्या इस प्रकार के द्वेषकारक विभेद का कोई औचित्य है? उस भारतीय पर प्रतिबन्ध है जो वहां कई पीढ़ियों से है और जिसकी वजह से वहाँ समृद्धि आयी है जबकि अरब और अफ्रीका के अन्य भागों से हाल में आये लोगों को इससे छूट मिली हुई है । क्या इस प्रकार के द्वेषकारक और दण्डात्मक विभेद के समर्थन में एक शब्द भी कहा जा सकता है? मान्यवर, केवल वहां की भूमि पर ही भारतीयों ने 80 लाख रुपयों का निवेश किया है और उन्होंने लौंग उद्योग के विकास हेतु यथेष्ट प्रयास किये हैं । इन परिस्थितियों में भारतीयों के साथ इस तरह के द्वेषपूर्ण व्यवहार का लेशमात्र भी

औचित्य नहीं है । मान्यवर, यह कहा जा रहा है कि सभी भारतीय कृषक नहीं हैं । मैं यह नहीं समझ पा रहा हूँ कि वहाँ कृषि से क्या तात्पर्य है, क्योंकि जंजीबार में वस्तुतः सही ढंग से कृषि या पशुपालन व्यवस्था नहीं है । वहाँ लौंग और नारियल के वृक्ष लगाये जाते हैं और जहां तक मेरी जानकारी है, यह सब 'स्वाहिली श्रम' से होता है । इन परिस्थितियों में वहाँ दूसरों से कृषकों को किस तरह अलग किया जा सकता है? मान्यवर, मैं कहना चाहता हूँ कि कोई भी स्वाभिमानी देश ऐसे व्यवहार को सहन नहीं कर सकता है । मुझे स्मरण है कि भारतीयों के उत्प्रवास के समय जंजीबार और भारत सरकार के बीच एक सन्धि हुई थी । उस सन्धि के द्वारा यह गारंटी दी गयी थी कि भूमि प्राप्त करने एवं व्यवसाय के मामले में स्वतंत्रता होगी और व्यवसाय के मामले में सरकार स्वयं या किसी अन्य संघ के माध्यम से एकाधिकार स्थापित करने में भागीदार नहीं बनेगी । मुझे मालूम नहीं कि उसके बाद सन्धि में कोई परिवर्तन हुआ या नहीं । मेरे लिए असली बात तो यह है कि इस परस्पर स्वीकृति सन्धि की सकारात्मक गम्भीर धाराओं द्वारा दी गयी गारण्टी के अन्तर्गत भारतीय वहां बसे थे और अब उससे हटना वचनभंग माना जाना चाहिए ।

मान्यवर, यह तो रहा लैंड एलीनेशन डिक्री का किस्सा । अब मैं लौंग उत्पादक संघ आज्ञप्ति पर प्रकाश डालूंगा । यह एक अद्भुत आज्ञप्ति है । इस आदेश के द्वारा सात सदस्यों का एक संघ स्थापित हुआ है जिसमें कोई भी लौंग उत्पादक नहीं है । इनमें से किसी ने कभी भी लौंग के वृक्षों के आरोपण या उसकी खेती में भाग नहीं लिया है । इन सात व्यक्तियों में से एक मि० बार्टलेट हैं जो अपना स्वतंत्र व्यवसाय करने के दौरान कभी भी भारतीयों से प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाये लेकिन इस समय पूरे तमाशे के मुखिया बने बैठे हैं । इस संघ के संविधान के सम्बन्ध में श्री मेनन द्वारा दी गयी सूचना मैं पढ़ रहा हूँ :

"सामान्य शब्दार्थ में भी यह मुश्किल से संघ (एसोसिएशन) माना जा सकता है क्योंकि प्रबन्ध मण्डल के अतिरिक्त इसमें कोई और सदस्य नहीं है । इस समय इस बोर्ड में तीन अधिकारी हैं—नेशनल बैंक आफ इण्डिया के व्यवस्थापक (नेशनल बैंक ऑफ इण्डिया इसी तरह से इंडियन है जिस तरह पुराने दिनों में इंडियन सिविल सर्विस हुआ करती थी और जैसी अभी हाल तक इंडियन आर्मी हुआ करती थी) और सचिव व्यवस्थापक, मि० सी०ए० बार्टलैट जो कि भारतीयों से लौंग व्यवसाय में प्रायः असफल प्रतिद्वंद्विता करने वाली ग्रेजबुक बार्टलैट एण्ड कम्पनी के भागीदार थे । इस लौंग उत्पादन संघ में एक भी लौंग उत्पादक नहीं है । और न लौंग उत्पादन संगठनों का प्रबन्ध मण्डल में प्रत्यक्ष या परोक्ष में प्रतिनिधित्व ही है क्योंकि यह लौंग

उत्पादकों के हितों का वास्तविक प्रतिनिधित्व करती है । इस तर्क के आधार पर तो जंजीबार सरकार भी अपने को जंजीबार जनता संघ कह सकती है ।"

यह मि० मेनन की टिप्पणी है ।

माननीय उपाध्यक्ष (मि० अखिल चन्द्र दत्त)– माननीय सदस्य के पास केवल एक मिनट बचा है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत– मुझे 30 मिनट का समय मिला था और मेरे विचार से मैंने 2.40 पर (बोलना) शुरू किया है ।

माननीय उपाध्यक्ष (मि० अखिल चन्द्र दत्त) – 2-35 पर । आप कुछ मिनट और ले सकते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – धन्यवाद, मान्यवर, फिलहाल मैं सदन को थकाना नहीं चाहता हूँ इसलिए थोड़ा ही समय और लूंगा । जंजीबार लौंग उत्पादक संघ कुछ भी हो सकता है लेकिन वह किसी प्रकार के उत्पादकों और खास तौर पर लौंग उत्पादकों का संघ तो कभी नहीं हो सकता है । सत्य का इससे बड़ा उपहास और कुछ नहीं हो सकता कि ऐसे संगठन को संघ का नाम दिया जाये । यह लौंग उत्पादक संघ सभी प्रकार के विधि विहित शुल्कों से मुक्त है और इसके अलावा उस द्वीप से निर्यात होने वाले लौंग के प्रत्येक फ्रासिला (35 पौण्ड) पर सात आने कमीशन का भी अधिकारी है । इसका स्वाभाविक प्रभाव यह हुआ है कि लौंग उद्योग उन श्री० बार्टलैट के पूर्ण नियंत्रण और अधिकार में आ गया है, जो कि मि० मेनन के पर्यवेक्षण के अनुसार भारतीयों से अच्छी तरह प्रतियोगिता नहीं कर पाये थे, और स्पष्ट है कि यह लौंग उत्पादक संघ भारतीय प्रतियोगिताओं से प्रति फ्रासिला कम से कम सात आने कम पर बेच सकेगा, साथ ही अन्य लाभ भी इसे मिलेंगे । इसी के साथ लौंग निर्यातकों वाली आज्ञप्ति भी है जिसके अन्तर्गत कोई भी जंजीबार से लौंग का निर्यात बिना लाइसेंस के नहीं कर सकेगा और लाइसेंस शुल्क 5,000 रुपये तक हो सकता है । जब सदन यह ध्यान में रखे कि लौंग निर्यातक अधिकांश में भारतीय रहे हैं, द्वीप का लौंग व्यवसाय भारतीयों के हाथों में रहा है–चाहे वे गांव-गांव से लौंग इकट्ठे करने वाले छोटे व्यवसायी हों या निर्यात करने वाली बड़ी फर्में–तो इस आज्ञप्ति के परिणामों को सहज ही में समझा जा सकता है । श्री मेनन ने इस सम्बन्ध में अपनी अन्-अनुकरणीय शैली में इस प्रकार रिपोर्ट भेजी है :

"भारतीय व्यापारियों को लौंग उद्योग से समाप्त करने के लिए उठाये गये कदमों से बढ़कर किसी कानूनी चालबाजी की कल्पना करना कठिन है। उपरोक्त शक्तियों, विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों से समर्थ होकर लौंग उत्पादक संघ एक महादानव बन गया है जो भारतीय व्यापारियों पर हमला कर रहा है, उन्हें व्यापार से अलग कर रहा है, बाहर फेंक रहा है और पार्टियों से प्राप्त उनकी व्यापारिक स्वतंत्रता को कुचल रहा है।"

मैं इस भाषा को परिष्कृत नहीं कर सकता। मैं और अधिक समय नहीं लूँगा। मैं केवल उस व्यक्ति का भाषण उद्धृत करूंगा जिस पर भारतीयों का पक्षधर होने का किसी किस्म का आरोप नहीं लगाया जा सकता है और जिसने पिछले पांच वर्षों में भारतीय राजनैतिक आकांक्षाओं से लगातार घोर विरोध-प्रदर्शन किया है। वह हैं विंसटन चर्चिल जिन्होंने कहा है कि :

"व्यवसाय के लिए उपलब्ध पूंजी का बड़ा भाग भारतीय बैंकरों द्वारा प्रदान किया गया है जिनसे वित्तीय सहायता मांगने में श्वेतांग निवासियों को भी संकोच नहीं हुआ है। भारतीय किसी अंग्रेज अधिकारी के यहां पहुंचने से बहुत पहले पहुंच गये थे। यदि किसी सरकार को व्यक्ति-व्यक्ति के बीच ईमानदारी से व्यवहार करने के प्रति लेशमात्र चिन्ता हो तो क्या वह जान-बूझकर ऐसे कदम उठा सकती है जैसे उन आप्रवासियों के विरुद्ध उठाये गये हैं जिन्होंने गारण्टीयुक्त सार्वजनिक आश्वासन मिलने पर अपने को इन क्षेत्रों में जमाया था।"

मैं अब और नहीं कहूंगा, और यहीं इस अध्याय को समाप्त करूंगा। मैं अब जानना चाहूंगा कि भारत सरकार इस सम्बन्ध में क्या करने जा रही है। हमें बताया गया है कि उसने अपना अभ्यावेदन प्रस्तुत कर दिया है। सम्भवतः उसने पूरी गम्भीरता के साथ ऐसा किया है। मैं प्रवासी भारतीयों के प्रति भारत सरकार की सदाशयता पर सन्देह नहीं करता हूं। मैं जानता हूँ कि जब तक वह वस्तुतः सत्ताधारी है—भले ही वह हमारी इच्छा के विरुद्ध और हमारे घोर विरोध के बावजूद हो—तब तक वही एक ऐसा संवैधानिक तंत्र और माध्यम है जिसके जरिये हमारे दावे और हमारी मांगें सही स्थान पर पहुँच सकती हैं और हम अपनी स्थिति सही सिद्ध करने का प्रयास कर सकते हैं। क्या मैं भारत सरकार से पूछ सकता हूं कि उसने क्या किया है? सरकार ने कुछ समय पहले बताया है कि वह अपनी ओर से भरसक प्रयास कर रही है। मेरे सामने हाउस ऑफ कॉमन्स के प्रश्न और पिछले जून में मि० मैलकाम मैक्डोनेल्ड और मि० बटलर द्वारा दिये गये उत्तर हैं। मि० बटलर ने कहा था कि विषय अभी भी विचाराधीन है। नयी आज्ञप्तियों के जारी होने के बाद सर कनलिफ-लिस्टर के स्थान पर मि० मैलकांम मैकडोनेल्ड आ गये

हैं । मैं नहीं समझता कि दोनों में बहुत अन्तर होगा, लेकिन उनमें से एक के साथ वह नाम जुड़ा है जो कभी सहानुभूति के लिए नहीं तो कम से कम दूरदृष्टि होने के लिए प्रख्यात था । मान्यवर, मैं पूछता हूँ कि भारत सरकार क्या करने जा रही है? वे अपनी ओर से सर्वाधिक और भरपूर प्रयास करेंगे । लेकिन वह भरपूर प्रयास क्या है? मि० एण्ड्रूज प्रवासी भारतीयों के हितों के महानतम संरक्षक हैं, वे एक महान व्यक्ति हैं, जिन्होंने प्रवासी भारतीयों के हितों को अपना हित बना लिया है । उन्होंने हमें आगाह किया है कि अब समय आ गया है, जब हमें आगे बढ़ना चाहिए और कूटनीतिक वार्तालाप पर ही निर्भर नहीं रहना चाहिए । मान्यवर, जंजीबार के भारतीय राष्ट्रीय संघ के अध्यक्ष ने, जो जंजीबार लेजिस्लेटिव काउंसिल के सदस्य भी हैं, हमसे गम्भीरतापूर्वक प्रतिकारात्मक कार्रवाई के लिए कहा है । मान्यवर, इस मामले में रुचि रखने वाले लोगों ने भी सरकार से इसी तरह का अनुरोध किया है । इम्पीरियल सिटीजनशिप एसोसिएशन (शाही नागरिकता संघ) के अध्यक्ष सर पुरुषोत्तम दास ठाकुर दास ने इस अनुरोध का समर्थन किया है । भारत सरकार इस पर क्या करने जा रही है? मैं मानता हूँ कि मान्यवर, मात्र समझाने-बुझाने, अपने दावे की नैतिक शक्ति और अपने अनुरोध पर निर्भर रहने का समय समाप्त हो गया है । मान्यवर, भारत सरकार की सद्भावना के बिना जंजीबार सरकार नहीं चल सकती है । मान्यवर, जैसा कि मैंने बताया, गरी-गोला उद्योग से सम्पूरित लौंग उद्योग ही जंजीबार का एकमात्र उद्योग है । जंजीबार 80 प्रतिशत लौंग की आपूर्ति करता है और इसका बड़ा भाग भारतीयों द्वारा खरीदा जाता है, और हम खरीदी वस्तु का अधिकतम मूल्य देते हैं, इसलिए यदि भारत सरकार इस पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा देती है तो समस्या का समाधान हो जायेगा । सम्भवतः जंजीबार सरकार भारत सरकार की इच्छा की अवमानना नहीं कर सकती, उसकी यह सामर्थ्य ही नहीं । मेडागास्कर की लौंग वैसे भी जजीबार की लौंग-बाजार पर कब्जा करती जा रही है, और जहां तक अमेरिका की बात है, उन्होंने जंजीबारी लौंग का संश्लिष्ट (सिंथैटिक) विकल्प तैयार कर लिया है । विगत दिवस कदाचित् श्री जोशी ने पूछा था कि क्या इंग्लैण्ड में लौंग व्यापार के सिलसिले में किसी कम्पनी का गठन हुआ है? मुझे इसके संगठनों, व्यवस्थापक और उन सभी के नाम मालूम हुए हैं जो जंजीबार में लौंग डिस्टिलरी का संचालन और नियंत्रण करेंगे । मान्यवर, मैं दुहराता हूं कि जंजीबार सरकार भारतीयों की इच्छा की अवहेलना नहीं कर सकती है । अगर वह यह करती है, तो एक प्राच्य व्यक्ति के नाते मैं रोटी से अधिक आत्मा की चिन्ता करता हूँ । मैं विदेशी राष्ट्रों से कुछ फ्रेंक या डालर आयात करने में सक्षम होने की अपेक्षा राष्ट्र सम्मान को अधिक महत्वपूर्ण मानता हूँ । जहां हमें अनुरोध तथा कार्य करने के वैध अधिकार प्राप्त हों वहां भी मैं ऐसी किसी बात में नहीं पड़ूँगा

जो मेरे सम्मान या राष्ट्रीय गौरव तथा सम्मान पर थोड़ा भी प्रतिकूल प्रभाव डालती हो । मैं माननीय सदस्यों को बताना चाहूंगा कि जब महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह आन्दोलन चला रहे थे तो वायसराय लार्ड हार्डिंग ने क्या कहा था । मान्यवर, हमने इस सदन में अन्ततः सत्याग्रह समाप्त किये जाने की बात प्रायः सुनी है । मुझे याद आता है वायसराय का वह स्पष्ट कथन जिसमें उन्होंने स्पष्ट शब्दों में महात्मा गाँधी द्वारा सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ करने की इसलिए प्रशंसा की थी कि उन्होंने भारत सरकार को दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों के संघर्ष के साथ सार्वजनिक रूप से जोड़ा था ताकि भारत का आत्म-सम्मान सुरक्षित रहे । यह पुराने दिनों की बात है । क्या भारत सरकार इस प्रकरण में भरपूर साहस का प्रदर्शन नहीं करेगी, खास तौर पर जब उसे इटली या मुसोलिनी से नहीं, बल्कि एक महत्वहीन राज्य से निपटना है? मेरे विचार से भारत सरकार बहुत आसानी से इतना साहस कर सकती है और उपयुक्त कदम उठा सकती है ।

मान्यवर, केवल एक बात कहकर मैं समाप्त करूंगा । मैंने जंजीबार से निर्यात और आयात का जिक्र किया है । मैं आंकड़ों की शुद्धता का दावा नहीं कर सकता, क्योंकि मान्यवर, मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं था और मैं आंकड़ों की पुष्टि नहीं कर पाया, लेकिन मुझे ये सही लगते हैं । मान्यवर, मुझे मालूम हुआ है कि गत तीन वर्षों में भारत के जंजीबार से निर्यात व्यापार में बहुत कमी आयी है जबकि आयात में उसी अनुपात में कमी नहीं आयी है । निर्यात 56 लाख से घटकर 20 लाख रु० हो गया है जबकि आयात जो 1929 में 45 लाख था, अब यह घटकर 35 लाख रह गया है, और इस तरह भारत-जंजीबार व्यापार में भारत के विरुद्ध 15 लाख रु० का असन्तुलन है । यदि जंजीबार प्रतिकार की नीति अपनाता है तो मैं इसका स्वागत करूंगा क्योंकि इस समय, मान्यवर, हम जंजीबार से जितना प्राप्त कर रहे हैं उसके अनुपात में अधिक दे रहे हैं । इसलिए हम एक निरन्तर जारी नुकसान उठाने के अलावा इस अपमान को भी स्वेच्छा से स्वीकार करें? मुझे आशा है कि जंजीबार के सिलसिले में भारत और भारतीयों के आत्म-सम्मान के लिए सरकार को तुरन्त प्रतिकारात्मक कार्रवाई करने के लिए यह सदन सर्वसम्मति से एक निश्चयात्मक प्रस्ताव पारित करेगा ।

(भाग दो)

मान्यवर, जो कार्य माननीय शिक्षा सचिव को आज अपराह्न में (इस सदन में) करना पड़ा है, मैं उसकी जटिलता को समझता

हूँ । फिर भी मैं अपनी इस भावना को नहीं छिपा सकता कि मेरे प्रयास को स्वीकार करने की उदारता दिखाने के बावजूद उनका भाषण एक प्रकार से निराशाजनक था । जैसा कि मैंने कहा, मैं उनकी कठिन परिस्थिति से अनभिज्ञ नहीं हूँ, लेकिन ऐसी स्थिति भी आती है जबकि अत्यधिक संकोच उसी तरह अवांछित हो जाता है जिस तरह अत्यधिक साहसिकता । मैं कहना चाहता हूँ कि पिछले डेढ़ सालों से, भारतीय हितों की सुरक्षा के लिए सहायता की मांग की जा रही थी और उनका कोई ठोस परिणाम नहीं निकला था, इसलिए यह समय का तकाजा भर था कि भारत सरकार न केवल जंजीबार स्थित भारतीयों के हित रक्षा के लिए, बल्कि भारतीय आत्म-सम्मान और राष्ट्रीय गौरव के लिए अपनी प्रतिबद्धता की स्पष्ट और दृढ़ घोषणा करती । मुझे दुःख है कि दूसरे कई अवसरों की तरह इस बार भी सरकार वांछनीय कदम उठाने में असफल रही है । मुझे इस पर कोई आश्चर्य नहीं है क्योंकि ग्रेट ब्रिटेन के इतिहास में प्रत्येक पृष्ठ पर और प्रत्येक पंक्ति में मोटे अक्षरों में 'अति विलम्ब' लिखा हुआ है । मान्यवर, सदन में स्थिति स्पष्ट कर दी गयी है । मैं कह सकता हूँ कि माननीय शिक्षा सचिव ने तस्वीर का दूसरा पहलू पेश किया है । इसके बावजूद वे हमें बहुत दोष नहीं दे सकते, यदि हम उनके अप्रमाणित वक्तव्य की अपेक्षा मि० मेनन की रिपोर्ट को अधिक महत्व दें क्योंकि मि० मेनन ने जंजीबार की सही स्थिति जानने के लिए अपने सभी संसाधनों को और अपना पर्याप्त समय लगाकर घटनास्थल पर समस्या का अध्ययन किया था । मेरे वक्तव्य के जिस भाग से वे सहमत नहीं थे उसके सम्बन्ध में उनका कथन बिल्कुल भिन्न था, और क्योंकि श्री मेनन को घटना की व्यक्तिगत जानकारी थी इसलिए मैं भारत सरकार के शिक्षा सचिव की अपेक्षा उन पर निर्भर रहना पसन्द करूँगा । मेरे माननीय मित्र ने कहा है कि उन्हें कथन में भिन्न-भिन्न आशय के स्वर सुनने को मिले हैं ।

मैं यहां दुहराना चाहता हूँ कि सदन के यथार्थवादी सदस्यों में से एक होने के नाते मैं ऐसे किसी कार्य में भाग नहीं लूंगा जो प्रवासी भारतीयों के लिए रचमात्र भी नुकसानदेह हो, चाहे हम उनकी सहायता के लिए कोई प्रभावकारी कदम न उठा पायें । मैं वर्तमान बेबसी की स्थिति से अवगत हूँ लेकिन मुझे आवेश में आकर कुछ बोलने के लिए उत्तेजित नहीं किया जा सकता, इसके बजाय मैं दुःख को मौन रखकर सहन कर लूंगा ।

इसका प्रभाव हमारे प्रवासी भाइयों पर पड़ सकता है । यदि स्पष्ट करना आवश्यक हो तो मैं बता दूं कि भारत सरकार से किये गये अनुरोध के पीछे मेरी यही भावना कार्यरत थी । लेकिन मैं भारत सरकार को लार्ड एम्पहिल के उस वक्तव्य

की याद दिलाना चाहता हूँ जिसमें उन्होंने कहा था कि यदि भारत सरकार प्रवासी भारतीयों के अधिकारों की रक्षा करने में असफल होगी तो उसके गम्भीर परिणाम होंगे । क्या उन्हें अभी भी यह अहसास नहीं होता कि ब्रिटिश डोमीनियनों और अधिदेशाधीन क्षेत्रों के भारतीयों के साथ किये जा रहे व्यवहार की वजह से इस देश में कितनी कटुता और तनाव बढ़े हैं? मैं चाहूंगा कि वे थोड़ा पीछे लौटकर कोमागाटामारू जहाज के लौट आने के बाद के भारत के इतिहास पर विचार करें । मैं अधिक नहीं कहूंगा । मैं उनसे यह याद करने का अनुरोध करूंगा कि सिक्खों के कनाडा से लौटने के बाद कैसी कैसी घटनायें घटित हुई हैं । और यदि भारत सरकार चाहे तो अभी भी उनसे सबक सीख सकती है । हमें बताया गया है कि जंजीबार में उठाये गये कदम अभी हाल में हमारे देश में उठाये गये कदमों के समान ही हैं । मैं जानना चाहता हूँ कि क्या यहां की सरकार ऐसे कदम उठायेगी जिससे कि यहां के जूट-उत्पादकों को ऋण भुगतान के मामलों में कुछ राहत मिल सके और वे उक्त ब्रिटिश व्यापारियों के साथ अपना उत्पादन बेंचे जो उसे अन्य देशों को निर्यात करते हैं? मैं जानना चाहता हूँ कि क्या ब्रिटिश सरकार या उसके उपनिवेश सचिव ऐसा कोई कानून बनाने के लिए तैयार हैं जिससे मलय राज्यों के रबड़ बागानों के श्रमिकों को ऋणों के मामले में कुछ राहत मिल सके और वे उनके बंधन से मुक्ति पा सकें जो शोषण तथा निजी लाभ के लिए उनके साथ क्रूरतापूर्वक और अमानवीय व्यवहार करते हैं? मैं ऐसे उदाहरण देकर गिनती नहीं बढ़ाना चाहता लेकिन मेरे अपने सहित हम चाहे कितना ही खेद व्यक्त क्यों न करें, ब्रिटिश साम्राज्य शोषण का पक्षधर है और कोई भी व्यक्ति फुरसत के समय ऐसे दर्जनों तो क्या सैकड़ों उदाहरण पेश कर सकता है । क्या मैं यह जान सकता हूँ कि जंजीबार के रेजीडेण्ट को यह ज्ञान कब प्राप्त हुआ कि वहां के उत्पादकों को इस तरह के संरक्षण की आवश्यकता है? इस आदेश का जंजीबार डिस्टिलरीज लिमिटेड पर क्या प्रभाव पड़ेगा, जिसे जंजीबार सरकार से अधिदेशाधीन क्षेत्र में लौंग के तेल के आसवन का लाइसेंस प्राप्त करने के उद्देश्य से पंजीकृत किया गया है?

"कम्पनी के पास 14,020 पौंड की पूंजी है जो 20 संस्थापकों में एक पौंड प्रत्येक के शेयरों और 140 पौंड प्रत्येक के सामान्य शेयरों में विभाजित है । मि० ई०डब्लू०, बोविल, मि० डी०ए० जै० बैक्सटन, मि० डब्लू जेनकिन्स और मि० एफ०जी० पेन्टीकोस्ट इसके निदेशक हैं और मि० जे० विन्सेण्ट इसके जंजीबार स्थित प्रबन्धक हैं ।"

मैं माननीय शिक्षा सचिव से जानना चाहूंगा कि उनमें से कितने लोग वास्तविक उत्पादक हैं, कितने लोग जंजीबार के निवासी हैं और भविष्य में इस जंजीबार लौंग उत्पादक संघ की क्या गतिविधियां होंगी ? मान्यवर, शिक्षा सचिव ने हमें बताया है कि जंजीबार लौंग उत्पादक संघ 1927 में स्थापित संघ से बिल्कुल

भिन्न नहीं है । क्या उन्हें यह नहीं मालूम है कि वह संघ सहकारी आधार पर बना था और उसमें 6,000 सदस्य थे जबकि इस संघ में एक भी उत्पादक नहीं है? मैं उन्हें यह भी बताना चाहता हूँ कि मैं सर एलेनपिन और मि० स्ट्रिकलैंड की संस्तुतियों से अनभिज्ञ नहीं हूँ, और उन्होंने कहा था कि उत्पादकों की सुरक्षा के सभी प्रयास सहकारी आधार पर होने चाहिए, और उन्होंने एकाधिकार स्थापित करने के विरुद्ध अपनी राय जाहिर की थी । उन्होंने ठीक वही न करने को कहा था जो सरकार ने किया है । मान्यवर, मैं शासन से जानना चाहूँगा कि उसने मोम्बासा में व्यापार आयुक्त की नियुक्ति के सम्बन्ध में क्या किया है? ऐसा प्रस्ताव बहुत पहले किया जा चुका था । अगर समय रहते व्यापार आयुक्त की नियुक्ति हो गयी होती तो हालात में ऐसा मोड़ न आता और भारतीय हितों को जितना आघात पहुँचा है उतना न पहुँचा होता । शिक्षा सचिव ने हमसे कहा है कि हम प्रतीक्षा करें और देखें कि इन आज्ञप्तियों पर कैसे कार्य होता है और इनका भारतीय हितों और भारतीय व्यापार पर कैसा प्रभाव पड़ता है । यह तो कुछ वैसा ही कहना है कि हमें रुककर उस समय तक जहर के प्रभाव को देखने की प्रतीक्षा करनी चाहिए जब तक शरीर मृतप्राय नहीं हो जाता और अंतिम संस्कार नहीं कर दिया जाता । लेकिन हम उस भयावह अन्त तक प्रतीक्षा नहीं कर सकते।आप जहर के असर से मृत होते व्यक्ति को देखते नहीं रह सकते, न सही निदान के लिए डाक्टर द्वारा रोग परीक्षण की ही प्रतीक्षा की जा सकती है । मान्यवर, इन परिस्थितियों में भारत सरकार को आधिकारिक रूप से घोषणा करनी चाहिए कि वह प्रतिकारात्मक उपायों के पक्ष में है और उन्हें अविलम्ब लागू करेगी । मैं चाहता हूँ कि सरकार को उपनिवेश सचिव और जंजीबार सरकार को अल्टीमेटम देना चाहिए और यदि हालत नहीं सुधरती है तो उसे कम से कम एक बार ऐसी सरकार की तरह व्यवहार करना चाहिए जिसका कर्तव्य है कि वह भारतीय हितों की रक्षा करे । मैं शिक्षा सचिव को बताना चाहता हूँ कि मैं 'जैसे को तैसा' वाले सिद्धांत पर विश्वास करता हूँ । यदि मैं न्याय और औचित्य के अतिरिक्त और किसी सिद्धान्त पर भरोसा करूंगा तो यह मेरे लिए शर्म की बात होगी, लेकिन सदन के सम्मुख प्रस्तुत मेरी शिकायत का केन्द्र बिन्दु यह आरोप है कि जंजीबार सरकार ने भारतीयों के हितों पर प्रहार करने और उन्हें अप्रमाणित करने के लिए ही विशेष रूप से ये आज्ञप्तियाँ निर्गत की हैं । वस्तुतः महान्यायवादी ने स्वीकार ही किया है कि इन आज्ञप्तियों का नस्लभेदी उद्देश्य है । मेरे मित्र ने लौंग उत्पादकों की सुरक्षा की बात कही है । उन्होंने ऋणग्रस्तता से राहत दिलाने का ज़िक्र किया है । यह एक अद्भुत तरीका है । क्या ऋणग्रस्त लोग पूरी तरह से ऋण मुक्त कर दिये जायेंगे? वास्तव में अदायगी की समयावधि बढ़ानी है और जंजीबार सरकार ने स्वीकार किया है कि अफ्रीकियों और अरबवासियों में भुगतान की सामर्थ्य नहीं है । केवल भारतीय लोग ही ऋण चुका सकते हैं लेकिन वे

सम्पत्ति खरीद नहीं सकते । ऋण के भुगतान के लिए आंशिक भूमि का हस्तान्तरण ही एकमात्र उपाय है, किन्तु भूमि भारतीयों को हस्तान्तरित नहीं हो सकती है और दूसरों के पास इसे खरीदने की सामर्थ्य नहीं है । इसका क्या परिणाम होगा? जिनका पैसा फंसा हुआ है, उन्हें न तो पैसा मिलेगा और न ही भूमि, और इस पर भी हमसे कहा जा रहा है कि वह न्यायोचित प्रयास है और यह उस सरकार का कथन है जो कम से कम सिद्धान्त में प्रवासी भारतीयों के हितों का प्रतिनिधित्व करती है । मान्यवर, मुझे इससे अधिक और कुछ नहीं कहना है ।

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी : मैं एक सूचना देना चाहता हूँ । मेरे माननीय मित्र भूमि हस्तान्तरण आज्ञप्ति (लैंड एलीनेशन डिक्री) पर बोल रहे हैं । मैंने यह भी नहीं कहा कि भूमि हस्तान्तरण आज्ञप्ति जिस सीमा तक नस्ल-भेदी है उस सीमा तक उचित है । वस्तुतः मैंने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया था कि श्री मेनन की संस्तुति को स्वीकार करते हुए भारत सरकार आज्ञप्ति का प्रतिवाद करेगी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त : मान्यवर, मैं इन लघु अनुकम्पाओं के लिए भी अनुग्रहीत हूँ । मुझे विश्वास है कि माननीय शिक्षा सचिव मानते हैं कि भूमि हस्तान्तरण आज्ञप्ति अनुचित है, असंगत है और भारतीयों के लिए अपमानजनक है । अतः इसका समाधान ढूंढ़ा जायेगा, लेकिन जैसा कि हम सब लोग जानते हैं कि अभी तक वह जंजीबार शासन या उपनिवेश सचिव के जरिये इस आज्ञप्ति को संशोधित या निरस्त नहीं करवा पाये हैं, हमें विश्वास करना चाहिए कि अब वह प्रतिकारात्मक कार्रवाई करेंगे, इस आधार पर कि आज्ञप्ति का चरित्र न्याय विरुद्ध और अनुचित है और इस आधार पर कि नस्लवादी दम्भ और नस्लवादी धृष्टता इसके अभिन्न और अन्तर्निहित अंग हैं । अन्य की अपेक्षा इस प्रकार का प्रहार अधिक पीड़ादायक होगा । इस दिशा में प्रयासों की असफलता के पश्चात् मुझे आशा है कि वे प्रतिकारात्मक कार्रवाई पर जोर देंगे । मान्यवर, मैं उन लोगों में से हूँ जो यह जानते हैं कि जब तक राष्ट्र या शासन एक स्वस्थ और बन्धनमुक्त व्यवस्था का अनिवार्य अंग नहीं है तब तक कोई राष्ट्र, देश या व्यक्ति अपने सम्मान की रक्षा नहीं कर सकता । हम उसी लक्ष्य और रामबाण औषधि की प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील हैं । लेकिन जब तक हम उस स्थिति को नहीं प्राप्त कर लेते तब तक यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम प्रवासी भारतीयों के अधिकारों की रक्षा के लिए भारत सरकार से अनुरोध करते रहें, क्योंकि हमारे सामने दूसरा कोई रास्ता नहीं है । मान्यवर, कुछ और नहीं तो इस प्रक्रिया में भाग लेने से हमें जो क्लेश हो रहा है उसके प्रति उन लोगों की सहानुभूति अवश्य मिलेगी, यह आशा मैं करता हूँ ।

●

क्वेटा का भूकम्प और कांग्रेस

मुझे अहसास है कि काफी समय समाप्त हो जाने के बाद मैं बोलने खड़ा हुआ हूँ। विषय के महत्व और इस पर की गयी टिप्पणियों की वजह से मैं इस समय हस्तक्षेप कर रहा हूँ। मान्यवर, मुझे खेद है कि सर कावसजी जहाँगीर ने आज जैसा भाषण दिया है, वह उन्हें शोभा नहीं देता। (भाषण के सम्बन्ध में) मैं और अधिक नहीं कहूँगा। इसकी तुलना ऐसे व्यक्ति की बहस से की जा सकती है जिसके पास कोई तर्क नहीं है और इसलिए वह अपने प्रतिद्वन्द्वी पर निकृष्ट अपशब्दों की बौछार कर रहा हो। मान्यवर, माननीय गृहसदस्य ने विवेक और तर्क के स्थान पर भाषाई उग्रता का मार्ग अपनाया है। उन्होंने हमें बताया है कि उन्होंने राजनीतिक उद्देश्यों के लिए एक आपदा का इतना निकृष्ट दुरुपयोग कभी नहीं देखा। मैंने इससे अधिक निर्लज्जतापूर्ण बयान पहले कभी नहीं सुना। मैं माननीय गृहसदस्य से यह जानना चाहूँगा कि दुरुपयोग की ऐसी प्रक्रिया कब से शुरू हुई है? मुझे आशा है कि उनमें भी यह स्वीकारने की सदाशयता होगी कि भूकम्प कांग्रेस पार्टी द्वारा नियंत्रित नहीं होते हैं। जिस तरह सम्राट केन्यूट ने एक बार दावा किया था कि वे लहरों पर नियंत्रण रखते हैं, उसी तरह वर्तमान सरकार भूकम्पों को नियंत्रित कर सकती है, लेकिन कांग्रेस जैसा लोकप्रिय दल इस तरह का दावा नहीं कर सकता है। मान्यवर, क्या वे कांग्रेस को उन रिपोर्टों और अफवाहों के लिए जिम्मेदार ठहराना चाहते हैं जो भूकम्प के दिन से ही देश के एक कोने से दूसरे कोने तक फैलने और जड़ जमाने लगी थीं? क्या वह हमें उन सब बातों के लिए जिम्मेदार ठहराना चाहते हैं, जो देश के एक कोने से दूसरे कोने तक कही गयी हैं?

माननीय सर हेनरी क्रेक : हाँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त : अगर वह यह कह रहे हैं, तो मुझे उनसे कोई बहस नहीं करनी है। अगर वह यह कह रहे हैं कि भूकम्प के तुरन्त बाद कांग्रेस संगठन ने तमाम रिपोर्टें और अफवाहें इसलिए फैलायीं ताकि हम आज के प्रस्ताव हेतु भूमि तैयार कर सकें; हम चाहे जितने साधन सम्पन्न हों, किन्तु उनकी मौलिक चिन्तन की प्रतिभा निस्सन्देह अद्भुत है, और मैं उन्हें ऐसी आश्चर्यपूर्ण काल्पनिक उड़ानों के

लेजिस्लेटिव असेम्बली में 19 सितम्बर, 1935 को पं० गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा दिया गया भाषण ।

लिए बधाई दे सकता हूँ (हर्षध्वनि) । मान्यवर, मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि जहाँ तक इन रिपोर्टों का मामला है, जहाँ तक इन अफवाहों का मामला है, इनका सम्बन्ध प्रत्यक्षदर्शियों के बयान से था । वे ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने सब कुछ देखा और समझा है, और मैं अपने सामने के माननीय सदस्यों से पूछना चाहता हूँ कि इन परिस्थितियों में उस जिम्मेदार दल का क्या कर्तव्य हो सकता है, जिसका पूरा अस्तित्व ही जन-समर्थन पर टिका हुआ है (हर्षध्वनि) । मान्यवर, इनमें से कुछ आरोप तो बहुत गम्भीर प्रकार के हैं जिन पर सरकार को ध्यान देना चाहिए । ऐसे आरोप यहाँ-वहाँ के एक-दो व्यक्तियों द्वारा नहीं बल्कि अगणित स्रोतों ने लगाये हैं और माननीय गृह सदस्य सभ्य संसार के जनमत की चाहे जितनी डींग मारें लेकिन मैं जानता हूँ कि इस आशय और प्रकार की खबरें 'डेली वर्कर' और 'डेली हेरल्ड' में भी छपी हैं ।

माननीय सर हेनरी क्रेक – 'डेली वर्कर' की कौन चिन्ता करता है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – और 'डेली हेरल्ड'? यह अखबार श्रमिक दल के शासनकाल में उसका मुख-पत्र हुआ करता था और आज भी मि० लैंसबरी के नेतृत्व वाले श्रमिक दल का मान्य मुख-पत्र है ।

माननीय सर हेनरी क्रेक – उसमें प्रकाशित झूठी खबरों का मैंने भण्डाफोड़ किया था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मुझे यह नहीं मालूम कि मि० लैंसबरी और मि० मैकडोनेल्ड के नेतृत्व वाली लेबर पार्टी की उपयोगिता अथवा सत्यपरकता के बारे में मेरे माननीय मित्र क्या विचार रखते हैं जबकि वे दोनों व्यक्ति ही 'डेली हेरल्ड' में प्रकाशित रिपोर्टों के लिए जिम्मेदार थे? मान्यवर, यदि उस देश के समाचार-पत्रों की सत्यपरकता ही ऐसी है, जहाँ सौभाग्य या दुर्भाग्य से हमारे माननीय मित्र पधारे हैं तो मुझे कोई आश्चर्य नहीं होगा यदि वे इस देश के अखबारों के बारे में भी ऐसे ही विचार रखते हों (हर्षध्वनि) । यदि वह इंग्लैण्ड की लेबर पार्टी के मान्य मुख-पत्र को झूठे सिक्के ढालने की मशीन मान सकते हैं तो मुझे कोई अश्चर्य नहीं होगा यदि वे इस विशाल देश के दूरदराज स्थानों से प्रकाशित होने वाले गुमनाम अखबारों के बारे में और भी खराब राय रखते हों । मान्यवर, मैं किसी किस्म की उत्तेजना नहीं फैलाना चाहता । मैं अपने सामने बैठे सरकारी पक्ष के माननीय सदस्यों की भावना समझ-बूझ सकता हूँ, और मुझे यह भी अहसास है कि वे किस माहौल में पाले-पोसे गये हैं और उस माहौल में आवश्यक तौर पर किस तरह की असहिष्णु प्रवृत्ति उनमें पैदा हुई होगी, और मैं यह भी समझ सकता हूँ कि उन्हें यह देखकर बहुत सदमा पहुँच रहा होगा कि हमारे जैसे अकृतज्ञ व्यक्तियों द्वारा इस तरह की आलोचना की जाय । इस मामले में उनकी सोच तो कुछ इस प्रकार की है—"सेना ने लोगों को

असहाय स्थिति से उबारने का भरसक प्रयास किया; कठिनाइयों और अकल्पनीय अड़चनों में फंसे लोगों को सेना ने यथासम्भव प्रयास करके बाहर निकाला और अब वे सेना की वांछित प्रशंसा न करके उल्टे उसकी आलोचना करने की मूर्खता दिखा रहे हैं ।" मान्यवर, मैं इस भावना को समझता हूँ । मैं सरकारी पक्ष के इस तरह के दृष्टिकोण को समझने के लिए सदैव तैयार हूँ, मुझे ज्ञात है कि वर्तमान सरकार ऐसे दायित्वपूर्ण शासन के रूप में स्थापित नहीं हुई है जो आलोचना से सुदृढ़ होती है और आत्मनिरीक्षण की अभ्यस्त होती है । उनके लिए यह नया अनुभव है, लेकिन मान्यवर, इतना होते हुए भी हम जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं हो सकते । मैं अपने सामने के माननीय सदस्यों से पूछना चाहता हूँ कि जब इस तरह की रिपोर्टें और अफवाहें फैल रही थीं तब ऐसी स्थिति देखते हुए जनता का विश्वासपात्र और समर्थन प्राप्त होने का दावा करने वाली जिस पार्टी के प्रतिनिधि यहाँ पहुँचे हैं, क्या उसका यह सर्वप्रथम कर्तव्य नहीं था कि वह इस सारे मसले की जांच करने के लिए एक समिति का गठन करे, सरकार से मांग करे ताकि जनता को वास्तविक स्थिति ज्ञात हो सके? मान्यवर, यह कहना बहुत आसान है कि हम केवल शासन के सम्मान और हैसियत के विमूल्यन के लिए ही यहाँ हैं । हमारी चाहे जो आकांक्षा हो, आखिर सरकार चाहती क्या है? क्या वह अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा नहीं करना चाहती? क्या वह अपने सामने आयी कठिनाइयों के समाधान के लिए भावी कार्यप्रणाली के निर्धारण हेतु स्थिति की समीक्षा नहीं करना चाहती है? क्या उसे यह ख्याल नहीं कि उसका सर्वाधिक हित किस में है? क्या इस तरह उड़ रही अफवाहों के सिलसिले में यह सरकार के ही हित में नहीं है कि वह कांग्रेस से बाहर के जिम्मेदार व्यक्तियों से तुरन्त जांच करवाये? कम से कम उन आरोपों की तो अवश्य ही जांच होनी चाहिए, जो चाहे सच हों या नहीं,देश के कोने-कोने में फैल गये हैं । मान्यवर, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता है कि इस तरह के वक्तव्य समय-समय पर दिये गये है । इसी आधार पर भारी संख्या में अखबारों से जमानत मांगी गयी है या उनका प्रकाशन और वितरण रोक दिया गया है, यह साफ जाहिर करता है कि इस विषय ने कितनी दिलचस्पी और उत्तेजना पैदा की है । (हर्षध्वनि) इसलिए मान्यवर, इतने तथ्यों के बावजूद, सरकार जांच करवाने में आनाकानी क्यों कर रही है? मान्यवर, यह मांग न तो धृष्टतापूर्ण है न ही अविवेकपूर्ण । वस्तुतः हमारे देश में ऐसी जांच की मांग अनूठी भले ही प्रतीत हो लेकिन क्या मेरे सामने बैठे माननीय सदस्यों को इस तथ्य की जानकारी नहीं है कि इंग्लैण्ड में जब भी कभी मार्शल-ला लागू होता है तब समिति द्वारा जांच एक वैधानिक आवश्यकता होती है और शासन ऐसी जांच करवाने के लिए बाध्य हो जाता है (हर्षध्वनि) । क्या हमने वहाँ मार्शल-ला प्रशासकों पर किसी किस्म का

अविश्वास प्रकट किया है? मान्यवर, सच्चाई यह है कि असाधारण स्थितियों में, जब संकटों और आपातस्थितियों का सामना करना पड़ता है, तो ऐसी नाजुक हालत पैदा हो जाती है जबकि योग्य व्यक्ति भी गलती कर सकते हैं; और यह भावी मार्गदर्शन तथा प्रगति के हित में है कि जो कुछ किया गया है, उस सब का जायजा लिया जाय ताकि मालूम हो सके कि क्या और अधिक उत्तम ढंग से कुछ किया जा सकता था? मान्यवर, यह प्रस्ताव व्याकुलता उत्पन्न करने वाला क्यों है? क्या डार्डेनल्स प्रकरण पर, यहां तक कि युद्ध के बीच में ही जांच नहीं हुई थी? क्या डार्डेनल्स कार्रवाई में शामिल लोग क्वेटा के राहत कार्यों में लगे लोगों से कम बहादुर, कम ईमानदार या कम देशभक्त थे? क्या मेसोपोटामियाई घपले की खबर आते ही जांच की प्रक्रिया शुरू नहीं कर दी गयी थी, हालांकि उस समय भी युद्ध जारी था? क्या कुछ समय पूर्व इंग्लैण्ड के एक महान चिन्तक और राजनेता ने एक वायसराय को संसद के कटघरे में खड़ा नहीं करवा दिया था? आखिर इस समय सरकार इतनी संवेदनशील क्यों हो गयी है? जब थोड़ा अधिक प्रकाश, थोड़ी अधिक सच्चाई, थोड़ा अधिक त्याग, न्याय प्राप्त करने हेतु अनुरोध और मांग पेश की जाती है तो सरकार उससे मुंह क्यों चुराती है? यह कुछ भी उत्तेजनात्मक बात नहीं है और मेरी समझ में नहीं आता कि इससे भावावेश में आने की क्या बात है? बात बहुत सीधी और सरल है। अनगिनत आरोप लगाये गये हैं जिनमें से कुछ का आज खण्डन हुआ है लेकिन माननीय गृहसदस्य घटनास्थल पर स्वयं उपस्थित नहीं थे। वे अपने वक्तव्यों की सत्यता की व्यक्तिगत गारण्टी नहीं ले सकते हैं।

माननीय सर हेनरी क्रेक : जी हाँ, मैं यह कह सकता हूँ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : आखिरकार उन्होंने दूसरों से सूचनायें एकत्र करवाई हैं। माननीय गृह सदस्य अधिकतम यही कह सकते हैं कि उनको विश्वास है कि उनकी सूचना सत्य है। वे यह दावा नहीं कर सकते कि उन्हें इसकी व्यक्तिगत जानकारी है और उन्होंने व्यक्तिगत रूप से इसको जाना-बूझा है। इससे बहुत बड़ा अन्तर पड़ता है। लोग एक ही किस्म के आंकड़ों से अलग-अलग निष्कर्ष निकाल सकते हैं,और जब माननीय गृहसदस्य आज यहां प्रस्तुत किये गये तथ्यात्मक वक्तव्यों का खण्डन करने की आवश्यकता महसूस करते हैं तो फिर वे इन दो प्रकार के बयानों की जांच के लिए एक स्वतंत्र और तटस्थ प्राधिकरण के गठन पर सहमत क्यों नहीं, जो इस सम्बन्ध में अपना पक्षपात रहित फैसला दे सके? उन्हें आज सत्ता और प्राधिकार प्राप्त हैं और वे आसानी से यह कह सकते हैं कि "हम कोई जांच नहीं

करवायेंगे'', लेकिन क्या इससे जनमानस सन्तुष्ट होगा? क्या इससे हमारे संदेह और सभी आकांक्षायें समाप्त और दूर हो जायेंगी? ऐसा कुछ भी नहीं होगा । ठीक इसके विपरीत इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा । इसलिए विलम्ब हो जाने के बावजूद स्थिति पर पुनर्विचार करने और जांच कराने के लिए सहमत होना उनके लिए उचित होगा । मान्यवर, यह बड़ी सरलता से कहा जा सकता है कि इस प्रस्ताव के प्रस्तुतकर्ता विद्वेष से प्रेरित हैं, किन्तु उसका उत्तर भी उतनी ही सरलता से यह दिया जा सकता है कि जिन्होंने क्वेटा के संकट के समय सार्वजनिक व्यक्तियों के वहां जाने पर रोक लगायी थी, वे दुर्भावना से प्रेरित थे । बिहार के भूकम्प के समय की गयी सार्वजनिक निःस्वार्थ सेवा से वहां की जनता के मस्तिष्क पर जो प्रभाव पड़ा था उसी से घबड़ाकर और सीख लेकर शासन ने लोगों को क्वेटा जाने का अवसर नहीं दिया। मान्यवर, इरादों पर आक्षेप लगाना आसान है, विजय को धुंधला और अस्पष्ट करना भी आसान है, धुआँ और कोलाहल उत्पन्न करना भी आसान है; लेकिन ये बातें किसी के लिए किसी प्रकार सहायक नहीं होंगी । हमें बताया गया है कि तीन दिन के बाद, किसी की जीवन-रक्षा करना असम्भव हो गया था । इन पर्चों को यहां पढ़े जाने के दौरान मैंने सुना कि पहले दिन ही रात के समय राहतकार्य रोक दिया गया था । राहतकार्य दिन में किया गया और रात में नहीं किया गया । मुझे यह सुनकर आश्चर्य हुआ । मुझे यह सोचकर ताज्जुब होता है, क्या क्वेटा के लोग मलवे में दबकर रात के समय नहीं मरते? अन्यथा रात में राहत कार्य रोकने का कोई कारण मुझे नजर नहीं आता । इससे स्पष्ट है कि वहां मानवीय जीवन को अपेक्षित गरिमा नहीं दी गयी और उसके प्रति लापरवाही, गैरजिम्मेदारी और–मैं कठोर शब्दों का प्रयोग नहीं करूंगा–निर्मम उपेक्षा की नीति अपनाई गई । मान्यवर, बहुत कुछ कहा जा सकता है, लेकिन काफी देर हो गयी है, इसलिए मैं और समय नहीं लूंगा। मुझे आशा है कि प्रस्ताव सदन द्वारा अंगीकृत और स्वीकृत किया जायेगा ।

●

चुनाव क्षेत्र का परिसीमन और गुप्त मतदान

मेरे मौन का गलत अर्थ न लगाया जाये, इसलिए मैं कुछ टिप्पणियां करूंगा। मेरा अनुमान है कि यह कार्रवाई हैमण्ड समिति के अध्यक्ष और सदस्यों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करेगी। इसलिए मैं इस बहस में हस्तक्षेप करना आवश्यक समझता हूँ। मान्यवर, कांग्रेस-जनों की इसमें विशेष रुचि है क्योंकि उसने व्यावहारिक रूप में विधायिका पर कब्जा करने का निर्णय लिया है। विधायिका का किस भांति प्रयोग किया जायेगा, इसका निश्चय और निर्णय अभी नहीं हुआ है। फिर भी मेरे दूसरी ओर बैठे सदस्यगण को इससे चिंतित नहीं होना चाहिए क्योंकि ऐसा निर्णय करना हमारा घरेलू मामला है। फिर भी हम चाहते हैं कि चुनाव क्षेत्र उचित ढंग से निर्धारित किये जाय। मान्यवर, मुझे यह कहते हुए खेद है कि जहां तक हमारे प्रान्त का प्रश्न है, मेरा और अन्य बहुत से लोगों का पक्का विश्वास है कि चुनावक्षेत्रों का परिसीमन ऐसे सुनियोजित ढंग से किया गया है जिससे कि प्रदेश के प्रगतिशील विचार के प्रत्येक व्यक्ति को इससे बाहर रखा जा सके (हर्षध्वनि)। मान्यवर, इसके पीछे एक ऐसा योजनाबद्ध षड़यंत्र हैं जिसे चाहे उच्च पदस्थ तथा शक्तिशाली व्यक्तियों ने रचा न हो किन्तु इस पर उतनी कृपादृष्टि अवश्य रही है जिससे भारत सरकार अधिनियम के अधीन वर्तमान परिचालकों की हास्यास्पद सुधार योजना के अन्तर्गत केवल पालतू विधान सभायें और मंत्रिमण्डल स्थापित हो सकें। इसकी प्रस्तावना के रूप में वर्तमान व्यवस्था ने यथासम्भव प्रयास किया है कि ऐसे चुनाव क्षेत्र बनाये जायें जिससे प्रगतिशील विचार और वास्तविक क्षमता वाले व्यक्ति (विधान सभा से) बाहर रखे जा सकें। परिसीमन सम्मेलन में बड़ी निर्लज्जतापूर्वक ऐसे लोग सम्मिलित कर लिए गये थे कि सी०वाई० चिन्तामणि को इस समिति से मुक्त होने के लिए सरकार से अनुरोध करने को विवश होना पड़ा। जेबी चुनाव क्षेत्र (पाकेट-बरो) बनाने का पूरा प्रयास किया जा रहा है ताकि जमींदार लोग अपने आश्रित कृषकों पर अपना पूरा प्रभाव डाल सकें और अपनी विजय यथासम्भव सुनिश्चित कर सकें। वस्तुतः मुझे बताया गया है कि सत्ताधारी जिन्हें जिताना चाहते हैं ऐसे प्रत्याशियों को या तो छांट लिया गया है या उनके नामों पर अस्थायी स्वीकृति दे दी गयी है, और अब इस तरह चुनाव-क्षेत्र बनाये जा रहे हैं ताकि वे लोग विजयी हो सकें। मान्यवर, ऐसी रिपोर्ट है और जैसा मैंने देखा-सुना

लेजिस्लेटिव असेम्बली में 25 सितम्बर, 1935 को दिया गया भाषण।

है, मुझे इस पर विश्वास करना पड़ता है । मान्यवर, मेरा निवेदन है कि मेरी समझ से इंग्लैण्ड की सरकार जिस भावना से योजना को क्रियान्वित करना चाहती है वह भावना परिसीमन-कार्य में निहित नहीं है । भारत सचिव ने बार-बार हम से कहा है कि वे सद्‌भावना को पुनर्स्थापित करने हेतु आतुर हैं । राजनैतिक विचारों और विवादों की बात अलग है लेकिन आचार-व्यवहार के कुछ आधारभूत सिद्धांत और सौजन्यता तथा निष्ठा के प्रारम्भिक नियम होते हैं जिन्हें किसी भी वर्ग के व्यक्तियों को नहीं त्यागना चाहिए । यहाँ तक कि सरकारों को भी, भले ही वे छल-छद्‌म की कितनी अभ्यस्त क्यों न हों, ईमानदारी का एक न्यूनतम स्तर बनाये रखना चाहिए ।

मैं इस सम्बन्ध में और कुछ नहीं कहूंगा । मैं आशा करता हूँ कि हैमण्ड समिति और इसके पूर्व भारत सरकार के महत्वपूर्ण अधिकारीगण यह पता लगाने का कष्ट करेंगे कि मैंने जो रिपोर्ट दी है वह किस सीमा तक सही है ।

केवल एक बात और है जिसे मैं अधिकारियों के ध्यान में लाना चाहूँगा । मान्यवर, मेरे विचार से समय आ गया है जब कि बैलेट मतदान व्यवस्था को वास्तविक और असरदार बनाया जाये (हर्षध्वनि) । जहां तक प्रांतों में मतदान का मामला है, मेरे विचार से वहां बैलेट मतदान व्यवस्था बिल्कुल नहीं है । ग्रामीण क्षेत्रों में 80 प्रतिशत मतदाता अशिक्षित हैं और उन्हें अपनी पसन्द के प्रत्याशी के बारे में खुली घोषणा करनी पड़ती है । उन्हें यह काम प्रत्याशियों के एजेण्टों की उपस्थिति में करना पड़ता है । यह बैलेट मतदान की प्रणाली का खुला मजाक है । मेरा सुझाव है कि बिहार की व्यवस्था लगभग आदर्श है जिसमें प्रत्याशियों को भिन्न रंग आवंटित हैं और मतदाता को मतपत्र में बिना किसी किस्म का निशान लगाये अपने मन के प्रत्याशी के रंग वाले बक्से में मतपत्र को डालना होता है । इसे बिना किसी कठिनाई के लागू किया जा सकता है और बहुत सीधा-सादा और निरक्षर व्यक्ति भी अपने मतपत्र को प्रत्याशी के रंग वाले बक्से में डाल सकता है । मान्यवर, इस समय मैं इससे अधिक समय नहीं लूंगा ।

●

भारत-बर्मा के मध्य वित्तीय दायित्वों का निपटारा

मान्यवर, मैं प्रस्ताव करता हूँ कि प्रस्ताव के अन्त में निम्नलिखित अंश जोड़ा जाय :

"और इसे निरस्त किया जाय क्योंकि अन्य कारणों के अलावा इस जांच में भारत और बर्मा के गैर सरकारी प्रतिनिधि सम्मिलित नहीं किये गये थे और विचारार्थ विषय बहुत सीमित थे क्योंकि दायित्वों का आवंटन भारत और बर्मा के मध्य ही विनिश्चित करना था ।"

मान्यवर, मैं यह प्रस्ताव इसलिए प्रस्तुत कर रहा हूँ क्योंकि सदन के इस ओर के पक्ष में इस पर आम सहमति है, अन्यथा व्यक्तिगत रूप से मैं आदेश-पत्र में सम्मिलित संशोधनों से भी संतुष्ट हो सकता था । मान्यवर, इस प्रस्ताव के प्रश्न जटिल और तकनीकी स्वभाव के हैं । मान्यवर, मैं इसके कतिपय महत्वपूर्ण बिन्दुओं को सामान्य ढंग से पेश करने का प्रयत्न करूंगा । इसके पूर्व, मान्यवर, मैं अपने सम्मानित मित्र, मि० निक्सन को उनके भाषण के लिए धन्यवाद देना चाहता हूं (जोर की तालियां), विशेषरूप से विषय पर उनकी पकड़ और इतने जटिल व गहन विषय को सरल ढंग से प्रस्तुत करने की उनकी क्षमता से मैं प्रभावित हुआ हूँ (जोर की तालियां) । फिर भी यह अच्छा होता कि वह राजनैतिक क्षेत्र में न भटक गये होते । मान्यवर, एक राजनैतिक 'बूमरैंग ।' (सख्त लकड़ी का मुड़ा हुआ एक ऐसा प्रक्षेपास्त्र जो फेंकने वाले के पास लौट आता है) का इस्तेमाल बड़ा कठिन होता है और कभी-कभी तो उसे वह फेंकने वाले व्यक्ति के पास अतिरिक्त शक्ति से लौट आता है जिसे इसके चलाने का अभ्यास नहीं होता है । इसके अलावा माननीय वित्त सदस्य अपनी मेजबानी खुद कर सकते हैं । (हँसी) और उन्हें सहायता की विशेष आवश्यकता नहीं रहती है । मान्यवर, मि० निक्सन के गैर सरकारी पक्ष सम्बन्धी विचार ने उनकी सुन्दर वक्तृता के सौन्दर्य को नष्ट कर दिया । इससे उनके स्वरों की समरसता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है । मान्यवर, उन्होंने अपनी बात पर जोर देते हुए गैर सरकारी सदस्यों की तटस्थता और अवहेलनापूर्ण रवैये का जिक्र किया

लेजिस्लेटिव असेम्बली में 26 सितम्बर, 1935 को प्रस्तुत अपने संशोधन प्रस्ताव के समर्थन में पंत जी द्वारा दिया गया भाषण ।

है । मान्यवर, मैं समझता हूं कि अच्छी बात तो यह होती कि वह ऐसी टिप्पणी न करते । यह टिप्पणी उनके भाषण की विषय-वस्तु से बेमेल थी और यह बहुत अच्छा होता कि वह उनका जिक्र न करते । मान्यवर, एक लेखक ने एक विशेषज्ञ की तुलना एक ऐसी ज्यामितीय रेखा से की है, जिसकी लम्बाई तो हो लेकिन चौड़ाई नहीं । लेकिन ऐसे विलक्षण व्यक्ति दुर्लभ ही होते हैं और जब ऐसे व्यक्तियों को दूसरों में ऐसी विलक्षणता दृष्टिगोचर नहीं होती है तो वे विभ्रमित और चकित हो जाते हैं । मान्यवर, इस सदन में या स्थायी वित्तीय समिति का तमाम व्यावसायिक संगठनों में मि० निक्सन द्वारा गैरसरकारी व्यक्तियों पर की गयी व्यंग्योक्तियों और वक्रोक्तियों पर मुझे और कुछ नहीं कहना है । मान्यवर, मैं यह भी समझता हूं कि मि० निक्सन को भारत सचिव की ओर से क्षमा मांगने जैसा कृतघ्न कार्य नहीं करना चाहिए था । भारत सचिव ने दिये गये गम्भीर वचनों को तोड़ा है और इनकी ओर से कोई भी व्यक्ति वास्तविक सफाई नहीं दे सकता है । उन्होंने जिस तरह से एक के बाद एक कलाबाजियां ली हैं,भारत सरकार के साथ उन्होंने जैसा व्यवहार किया है वह उनकी ख्याति के अनुरूप ही है । मान्यवर, मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ है कि एक दिन माननीय वित्त सदस्य ने हमसे यह कहा कि बहस की रिपोर्ट प्राधिकरण के पास भेजी जायगी और अगले दिन ही उन्होंने यह सूचना दी कि अन्तिम निर्णय हो चुका है और रिपोर्ट पर हस्ताक्षर कर दिये गये हैं । मैंने सोचा था कि जिस गर्वोक्ति के साथ इस देश में संघीय व्यवस्था* की स्थापना की बात की जा रही थी, उसी के साथ इंग्लैण्ड की सरकार ने इस देश की सरकार के साथ सौजन्यपूर्ण और अच्छा व्यवहार करना सीख लिया होगा । लेकिन हमें निराशा ही हाथ लगी है और यदि वही अंग्रेजी सरकार के व्यवहार का उदाहरण है तो हमें इस संघीय व्यवस्था से भगवान ही बचाये ।

मान्यवर, मुख्य विषय पर बोलते हुए मैं बिना हिचकिचाहट के यह कह सकता हूं कि मेरे मन में बर्मा से एक पाई भी लेने की इच्छा नहीं है । मैं उन लोगों में से हूं जो यह मानते हैं कि भारत और बर्मा के बीच का मधुर सम्बन्ध बर्मा से प्राप्त होने वाले थोड़े रुपयों की अपेक्षा कहीं अधिक मूल्यवान और प्रभावकारी है (जोर की तालियां)। मान्यवर, मैं यह भी कहने को तैयार हूं कि पुरातन बर्मा समाज ने भारत के पहले सौजन्यता और हेलमेल की जिस भावना का प्रायः प्रदर्शन किया है, हम उसके प्रति आभारी हैं । मै उनकी सद्भावना को सर्वाधिक महत्व देता हूं । मेरा

* ब्रिटिश पार्लियामेण्ट द्वारा पारित 1935 के इंडिया एक्ट में, केन्द्र में संघीय शासन स्थापना की व्यवस्था थी जो लागू नहीं हो पायी थी ।

मत है कि जो भी व्यवस्था हो वह बर्मा की स्वेच्छा व सहमति से ही हो और यदि बर्मा इस देश को चुकाये जाने वाले ऋण का बिल्कुल भी भुगतान नहीं करना चाहता, तो मैं उन लोगों में हूं जो यह मानते हैं कि अगर हमारा देश स्वतंत्र होता तो हमने उनकी सारी देनदारी को स्वेच्छा से समाप्त कर दिया होता ।(हर्षध्वनि)

माननीय सर जेम्स ग्रिग — और इसका भुगतान ग्रेट ब्रिटेन से मांगा होता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – वित्त सदस्य पूछते हैं कि क्या हमने "इसका भुगतान ग्रेट ब्रिटेन से मांगा होता?" मान्यवर, मेरा उत्तर 'हाँ' में है, और मैं इसकी पुनः पुष्टि करना चाहता हूँ । और इसकी उनको वजह भी बताऊंगा । ग्रेट ब्रिटेन हमसे कई तरह से कम से कम 75 करोड़ रुपया प्रति वर्ष वसूलता है—यह मैं न्यूनतम राशि बता रहा हूं—और मैं सोचता हूं कि माननीय वित्त सदस्य इससे असहमत नहीं होंगे । वे यह भी स्वीकार करेंगे कि यहां तक कि 1914 तक हमारे देश पर अविधानित और अनुत्पादक ऋण लगभग था ही नहीं, और वस्तुतः 1914 में हमारे हाथ में रोकड़बाकी अनुत्पादक या असुरक्षित ऋण से अधिक थी । इसलिए अगर ग्रेट ब्रिटेन के एजेण्टों ने कामकाज ठीक से निपटाया होता तो आज हमारे ऊपर रंचमात्र भी अविधानित ऋण नहीं होता तथा बर्मा या भारत को किसी किस्म के अनुत्पादक तथा अविधानित ऋण का अंश चुकता करने को न कहा जाता । हमारी यह स्थिति मुख्यरूप से 'युद्ध ऋणों' और युद्ध के समय किये गये खर्चों की वजह से ही हुई है । यह राशि मोटे तौर पर 190 करोड़ रुपयों के करीब है । चांदी के विक्रय पर हुए घाटे और युद्ध के बाद के लगातार कई वर्षों में भारत सरकार के घाटे के बजट ही प्रायः वर्तमान घाटे के प्रमुख कारण हैं । मान्यवर, इंग्लैण्ड ने युद्ध-ऋण न अदा करने की प्रेरणा प्रदान कर तमाम ऐसे देशों को दुविधाजनक स्थिति से उबारा है जिनसे उनको कोई लाभ नहीं मिलने वाला है । इसलिए यह उचित निष्पक्ष और न्यायोचित है कि वह हमारे साथ भी वैसी उदारता प्रदर्शित करें । मान्यवर, आज के संसार की क्या स्थिति है? इंग्लैण्ड ने उस पर चढ़े ऋण की देय राशि का भुगतान करने से मना कर दिया है और यहां तक कि उसने संयुक्त राज्य अमेरिका को युद्ध-ऋणों का प्रतीकात्मक भुगतान भी नहीं किया है जिसका कि वह वादा कर चुका था । दूसरे समृद्ध राष्ट्रों ने भी इसी तरह अपनें ऋणों के भुगतान टाल दिये हैं । इसलिए ऐसी स्थितियों में हम पर यह जोर डालना कि हम समस्त युद्ध-ऋण की अदायगी पूरी करें, अनुचित है । यह मात्र एक संयोग है कि इंग्लैण्ड को समस्त युद्ध 22 करोड़ स्टर्लिंग देना है । अगर एक क्षण के लिए कल्पना कर लें कि

यदि इंग्लैण्ड ने पूरा ऋण स्टर्लिंग में ले लिया होता तो आज क्या स्थिति होती? समस्त राष्ट्रों द्वारा स्वीकृत रीति-नीति के अनुसार इंग्लैण्ड ने हमें भी ऋण-स्थगन का लाभ प्रदान किया होता और परिणामस्वरूप युद्ध-ऋण की कोई भी राशि हमसे न मांगी गयी होती । मेरा माननीय वित्त सदस्य से यह कोई फिजूल का आग्रह नहीं है कि वे ब्रिटिश सरकार को यह समझायें कि यह सिर्फ एक संयोग है कि युद्ध-ऋण का एक बड़ा भाग लगभग 170 करोड़ स्टर्लिंग के रूप में न होकर रुपये के रूप में था । इन दोनों प्रकार के ऋणों में शायद ही कोई अन्तर हो । इसलिए मैं अनुरोध करता हूं कि यह जिम्मेदारी ग्रेट ब्रिटेन को ग्रहण करनी चाहिए, यही उचित और न्यायपूर्ण है, इसलिए नहीं कि हम उस पर दबाव डाल रहे हैं बल्कि इसलिए कि उसे स्थिति की कठिनाई का ज्ञान है और वह समर्थ है, और ऐसा करना प्रचलित अन्तर्राष्ट्रीय रीति-नीति के अनुकूल भी है । इसलिए जब माननीय वित्त सदस्य मुझसे पूछते हैं कि क्या इंग्लैण्ड को भुगतान करना चाहिए तो मेरा यही उत्तर है । मुझे आशा है कि वह इसके औचित्य को समझेंगे और भारत के सेवक की तरह कार्य करेंगे । उन्होंने हमसे कई बार कहा है कि वह यहां भारतीय हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं इसलिए वे हमारे साथ मिलकर इंग्लैण्ड से यह उचित और न्यायसंगत अनुरोध क्यों नहीं करते कि वह उस घाटे को पूरा करे जिससे निपटने का सामर्थ्य निर्धन भारत और बर्मा दोनों में नहीं है ।

मान्यवर, मैं माननीय वित्त सदस्य को आश्वस्त करना चाहता हूं कि वह यह न समझें कि मेरा वह वक्तव्य सच्चा तथा हार्दिक नहीं है जिसमें मैंने कहा कि यदि भारत स्वतंत्र होता तो उसने बर्मा पर दबाव डालने की जगह बर्मा की देनदारियां समाप्त कर दी होतीं । यदि भारत स्वतंत्र होता तो हमने यही रुख अपनाया होता क्योंकि हम राष्ट्रों की मनःस्थिति को अत्यधिक महत्वपूर्ण समझते हैं, और तुच्छ लोगों की अपेक्षा सद्भावना को अधिक महत्वपूर्ण और सशक्त कारक मानते हैं । इसलिए मान्यवर, यह कहकर मैंने अपनी मनोभावनाओं को ही अभिव्यक्त किया है । मैं यह भी पूछ सकता हूँ कि एक–दो करोड़ (रुपये) की अतिरिक्त प्राप्ति से हमें कौन बड़ा लाभ हो सकता है । जब तक हमारी वर्तमान व्यवस्था के आधारभूत सिद्धांत अपरिवर्तित रहते हैं तब तक इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है कि हमें किसी दूसरे देश से एक या दो करोड़ रुपया मिलता है या नहीं । माननीय वित्त सदस्य जानते हैं कि पिछले पांच वर्षों में उन्होंने करों का इस तरह पुनर्निर्धारण किया है कि इनमें 48 करोड़ रुपये की वृद्धि हो गयी है । मान्यवर, जब देश में फैली असाधारण आर्थिक मंदी के बावजूद हमारे ऊपर 48 करोड़ रु० प्रति वर्ष का बोझ और डाल दिया गया है तब कुछ हजार रुपये कुछ अर्थ ही नहीं रखते । जब तक यह

शासन-व्यवस्था और इस देश का वित्त-प्रबंध दूसरे देश और दूसरे देशवासियों द्वारा संचालित है, यह सोचना मजाक की बात है कि बर्मा और भारत के बीच एक विशिष्ट वित्तीय समायोजन किस तरह होता है । यह देश सेना पर 15 करोड़ रुपये केवल इसलिए अतिरिक्त खर्च कर रहा है क्योंकि इसमें लगभग एक तिहाई लोग विदेशी हैं । यदि सेना में केवल भारतीयों की भर्ती की गयी होती तो हमने बिना सैन्य-शक्ति घटाये लगभग 15 करोड़ की बचत की होती । इसी तरह कुछ अन्य तथ्य हैं । उनकी नयी व्यवस्था में भी हमारे वित्त का लगभग 80 प्रतिशत हिस्सा अभी भी ब्रिटिश संसद और ब्रिटिश जनता की मनमानी इच्छा पर निर्भर रहेगा । इसलिए हमें इससे क्या फर्क पड़ेगा यदि कुछ हजार जोड़ दिया जाय या घटा दिया जाय । जब तक हम अपने घर के कारोबार के स्वामी नहीं हैं तब तक यह मेरे लिए किताबी हिसाब–किताब मात्र है और उसमें की गयी प्रविष्टियों का मेरे लिए कोई महत्व नहीं है । हम तो साम्राज्यवादी निरंकुशता के असहाय शिकार मात्र ही रहेंगे । हमारी स्थिति तो एक बड़े सामन्त की सम्पत्ति होने की सी है । तब उसको यह नयी व्यवस्था इस अर्थ में अधिक सुविधाजनक, विशिष्ट स्वार्थों की पूर्ति करने वाली और अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुकूल प्रतीत होगी कि वह यहां शोषण जारी रख सके और ब्रिटेन के औद्योगिक संस्थानों का हित–साधन हो सके । कारण कोई भी हो, सामन्त यह सोचता है कि यह अधिक वांछित होगा कि बुक प्रविष्टियां एक स्थान पर दो रजिस्टरों में हों किन्तु यह सब होते हुए भी दोनों देशों की वित्तीय स्थिति पर उसका नियंत्रण बना रहे । यह कहना उसके अधिकार में होगा कि मैं यह कर हटा रहा हूँ और यह कर लगा रहा हूँ । वह यह कह सकता है कि मैंने यह धन इस तरह खर्च किया है और मैं आदेश देता हूँ कि यह धन इस तरह खर्च न किया जाये । इन परिस्थितियों में इस समायोजन या आवंटन का क्या अर्थ हो सकता है? इसलिए मैं कहना चाहता हूँ कि जब तक सरकार और शासन–व्यवस्था में आधारभूत परिवर्तन नहीं होता है, सभी परिवर्तन हास्यास्पद या पाखण्डपूर्ण ही होंगे ।

इस अवसर पर मुझे एमरी प्राधिकरण की रिपोर्ट पर टिप्पणी करनी है । यह केवल अकादमिक मसले से अधिक कुछ नहीं है । ऐसा होते हुए भी यदि मैं इस रिपोर्ट पर अपने विचार प्रकट न करूं, तो मुझसे जो आशा की जाती है, उसे मैं पूरा न कर सकूँगा । मान्यवर, यह रिपोर्ट प्रत्येक दृष्टिकोण से दूषित और पूर्णतः अस्वीकार्य है । तीन चरणों के बाद प्राधिकरण का कोई एवार्ड अन्तिम रूप ग्रहण करता है । सर्वप्रथम एक न्यायाधिकरण की स्थापना होती है; दूसरे चरण में निरीक्षण और विचार–विनमय होता है और अन्तिम चरण में इसके निष्कर्ष और

निर्णय आते हैं । इस मामले में इन तीनों चरणों में कार्यवाही त्रुटिपूर्ण और अव्यवस्थित रही है । पहले प्राधिकरण (ट्रिब्यूनल) की संरचना को ही लें। इसमें भद्र और अनुभवी व्यक्ति सम्मिलित थे, लेकिन इनमें कोई भी वित्त विशेषज्ञ और इस देश की समस्याओं से परिचित नहीं था और न ही उनमें न्यायिक क्षमता थी । मैं मि० एमरी को हाउस आफ कामन्स के अनुदार सदस्य के रूप में जानता रहा हूँ और मैंने उनके बारे में थोड़ा अध्ययन भी किया है । लेकिन ऐसे स्थान पर उन्हें बैठा देना पहली घटना है। यह तो रहा इसकी संरचना का मामला ।

अब मैं प्रक्रिया के बारे में बात करूंगा । मान्यवर, शासन ने यह गम्भीर आश्वासन दिया था कि भारत और बर्मा के प्रतिनिधि इस जांच कार्य में सम्मिलित किये जायेंगे । इस आश्वासन का गोल–मेज सम्मेलन की बर्मा–उपसमिति की प्रथम रिपोर्ट में उल्लेख है । इसे बाद में दुहराया भी गया था । सर जार्ज शूस्टर ने इस सदन को गम्भीर आश्वासन दिया था कि स्थायी वित्त–समिति के प्रतिनिधि इस प्राधिकरण से सम्बद्ध किये जायेंगे । मान्यवर; इस आश्वासन को आगे भी कई अवसरों पर दुहराया गया था । अब हमें ज्ञात हुआ है कि सरकारी या गैरसरकारी विशेषज्ञ या सामान्य, किसी भी किस्म के भारतीय को किसी भी अवसर पर इसका सदस्य नहीं बनाया गया था । इसके अलावा जांच कार्य भी इतने रहस्यमय ढंग से किया गया कि भारत सरकार को भी यह जानकारी नहीं मिल पायी कि जांच कब शुरू हुई थी और कब समाप्त हो गयी । उसे भी पूरी तरह से अंधेरे में रखा गया था । मान्यवर, इधर ब्रिटिश और भारत सरकार ने आपसी सहमति से इस देश में स्वराज स्थापित करने की एक और विशिष्ट पद्धति तैयार की है । वह पद्धति यह है कि सरकार द्वारा घोषित स्वराज-स्थापना हेतु किए जाने वाले सभी प्रयासों से भारतीयों को अलग रखा जाये क्योंकि उनके अनुसार भारत स्व–शासन के पूर्णतः उपयुक्त है और अब उन्होंने भारत को पूर्ण स्वराज प्रदान करने का निर्णय कर लिया है । इस देश के लोगों की क्षमता के प्रति विश्वास प्रदर्शित करने की उनकी पद्धति अवश्य ही अद्भुत है! इस देश में स्वराज-स्थापना हेतु गठित समस्त समितियों से भारतीय अलग कर दिये जाए । मान्यवर, यह प्राधिकरण वर्तमान भारत सरकार के दिशा–निर्धारक सिद्धांत और आस्था का अच्छा उदाहरण है ।

अब मैं तीसरे और अन्तिम चरण पर आऊंगा जो पंचाट (एवार्ड) से सम्बन्धित है । मैं मानता हूँ कि गुणावगुण के आधार पर यह एवार्ड दोषयुक्त और त्रुटिपूर्ण है । वस्तुतः यह एवार्ड है ही नहीं । इसमें जिन बातों पर बल दिया गया है,

उनके समर्थन में कोई तर्क प्रस्तुत नहीं किया गया है । इसके कथन हठवादितापूर्ण हैं, जो तथ्यों, आंकड़ों या तर्कों से कहीं भी समर्थित नहीं हैं । मैं इस सम्बन्ध में कुछ ही बातें कहूँगा कि प्राधिकरण जिस निष्कर्ष पर पहुंचा है, वह स्पष्ट रूप से क्यों गलत है? सर्वप्रथम अनावंटित दायित्वों के निर्धारण में न्यायाधिकरण ने ठोस गलतियां की हैं । मान्यवर, मैं समझता हूं कि दायित्वों में 40 करोड़ जोड़ने का कोई औचित्य नहीं था, क्योंकि मेरे विचार से यह राशि रेलवे–ऋण के विमोचित स्टाक तथा शमित वार्षिकी के खाते की है । मि० निक्सन और सर हेनरी होवर्ड दोनों ने ही इसका विवरण दिया था और दोनों ने इस सम्बन्ध में अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की थी । दोनों का मत था कि यह राशि 1924 के बहुत पहले अदा कर दी गयी थी और इसका कई वर्षों से स्थायित्वकरण हो चुका था तथा यह स्वीकृत व्यवस्था में सम्मिलित कर ली गयी थी इसलिए इसे परिसम्पदा (पावने) का अंग न माना जाए । सर हेनरी होवर्ड इस विचार से सहमत थे । लेकिन इसके बावजूद प्राधिकरण ने इस राशि को परिसम्पदा में जोड़ दिया और इसे समग्र दायित्व से घटा दिया । मान्यवर, यह एकदम गलत है । आप केवल तीन विकल्पों में से किसी एक का चुनाव कर सकते हैं, जैसा कि मि० निक्सन ने स्पष्ट किया था । यह ऐतिहासिक पद्धति ऋणदाता-देनदार पद्धति या आनुभाविक (एम्पायरिकल) पद्धति हो सकती है । प्राधिकरण ने भारत सरकार की तकनीकी और अन्य रिपोर्टों की प्रविष्टियों के आधार पर प्रायः इसी आनुभाविक पद्धति को अपनाया है । इसलिए यदि प्राधिकरण पूरे प्रश्न पर पुनः प्रारम्भ से विचार करना चाहता था तो उसे मूल्यह्रास के प्रश्न को भी ध्यान में रखना चाहिए था और यदि मूल्यह्रास पर पुनः विचार किया गया होता तो मेरे विचार से रेलवे की परिसम्पदा बहुत घट जाती और असंरक्षित ऋण इसी अनुपात में घट जाता । मूल्यह्रास पर फिर से विचार किये बिना परिसम्पदा में 40 करोड़ जोड़ देना स्पष्टतः अनुचित है । इसके अलावा प्राधिकरण को नयी दिल्ली के निर्माणार्थ लिए गये ऋण को भारत के मत्थे नहीं मढ़ना चाहिए । केवल इस आधार पर कि दायित्व उस समय निर्धारित हुआ था और ऋण राशि का राजस्व से भुगतान न करके उसे नयी दिल्ली के नाम से लिया गया था, परिसम्पदा के स्वरूप में परिवर्तन नहीं हो सकता । वह व्यावसायिक परिसम्पदा नहीं है और मेरे विचार से इस पर ध्यान ही नहीं दिया जाना चाहिए था । मेरा यह भी विचार है कि निष्क्रिय परिसम्पदा को भी किसी गणना में सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए । आखिरकार जब हम किसी स्थान के व्यक्तियों की संख्या मालूम करना चाहते हैं तो मृत व्यक्तियों को उसमें सम्मिलित नहीं करते यद्यपि 'व्यक्ति' शब्द उसमें भी जुड़ा हुआ है । निष्क्रिय सम्पदा, परिसम्पदा है ही नहीं । मुझे समझ में नहीं आता है कि उन्हें असंरक्षित दायित्व की

राशि के निर्धारण में क्यों सम्मिलित किया गया है?

मैं महसूस करता हूं कि प्राधिकरण ने भारत के सन्दर्भ में बर्मा के दायित्वों का अनुपात तय करने में भयंकर भूल की है । मान्यवर, मुझे मालूम नहीं हैं कि ट्रिब्यूनल इस निष्कर्ष पर कैसे पहुंचा । मैंने उसकी रिपोर्ट पर्याप्त ध्यान से पढ़ी है लेकिन मैं इसका कारण नहीं समझ पाया । मान्यवर, तथ्य बहुत स्पष्ट है । मि० निक्सन और सर हेनरी होवर्ड ने स्पष्ट स्वीकार किया है कि केन्द्र और प्रदेशों के समस्त राजस्व को ध्यान में रखा जाना चाहिए; और जब दो देशों में पूर्ण पार्थक्य होना है, तो हम राजस्व के किसी भी स्रोत को नजरन्दाज नहीं कर सकते । केन्द्र और प्रदेश के बीच राजस्व के स्रोतों का विवरण केवल औपचारिक और प्रशासकीय है । हम अपने प्रादेशिक वित्त के इतिहास से परिचित हैं । पहले प्रदेशों को केन्द्र से कृपा-सहायता मिला करती थी; उसके बाद समय–समय पर नवीनीकृत होने वाले सावधिक समायोजन का समय आया; उसके बाद मेस्टन समझौता (सेटलमेंट) हुआ और उसके बाद में भारत सरकार ने प्रांतों को भुगतान कर दिया । मान्यवर, केन्द्रीय और प्रान्तीय राजस्व के स्रोतों में किसी किस्म का वास्तविक अन्तर नहीं है । दोनों को ध्यान में रखा जाना जाहिए था । इसके पश्चात् मान्यवर, प्राधिकरण ने आयकर की आय को तो सम्मिलित कर लिया, लेकिन रेलवे आय को इससे अलग रखा । यदि हम प्रत्येक देश द्वारा आय का आयकर के आधार पर स्थानीकरण और निर्धारण अलग–अलग कर सकते हैं तो इसे सम्मिलित किया जाना चाहिए । यह निश्चित रूप से प्रत्येक देश के व्यवसाय, उद्योग और वित्तीय तथा आर्थिक स्तर का अच्छा मानदण्ड है । मेरे विचार से दोनों विशेषज्ञों ने इसे केवल इसलिए नजरंदाज कर दिया क्योंकि आय–कर के स्थानीय स्रोत का सही निर्धारण असम्भव है ।

मान्यवर, उन्होंने रेलवे की आय को सम्मिलित नहीं किया है । इससे भारत को लाभ प्राप्त नहीं होता, भारत को इसके अलग कर दिये जाने से लाभ मिला है । लेकिन बर्मा के साथ न्याय न करने का मुझे कोई औचित्य नजर नहीं आता । हम यहां पर भारत के हित समर्थन मात्र के लिए नहीं हैं,बल्कि हम न्याय के समर्थक हैं और मेरे विचार में रेलवे की आय सम्मिलित की जानी चाहिए । लेकिन यह कोई बहुत सारपूर्ण बात नहीं है क्योंकि आजकल रेलवे मुश्किल से ही कुछ आय दे पाती है । मेरे एक मित्र ने केन्द्रीय राजस्व के मुख्य स्रोतों के आधार पर अनुपात–सम्बंध निर्धारित किया है । इनका निष्कर्ष है कि यह अनुपात 14 प्रतिशत होगा । मैं इस निष्कर्ष से सहमत नहीं हूं लेकिन मि० निक्सन द्वारा प्रदत्त और सर हेनरी होवर्ड

द्वारा स्वीकृत आंकड़ों के अनुसार यह 9.5 से 10.5 प्रतिशत के बीच होना चाहिए और 7.5 प्रतिशत के अनुपात का तो कोई भी औचित्य नहीं है । मैं यह कहने का साहस करता हू कि 7.5 का अनुपात प्रदर्शित किया जा सके तो मैं समझता हूँ कि यह वृत्त को चतुर्भुज में बदलने के समान होगा । मैं इस अनुपात राशि के औचित्य को समझने में पूरी तरह असमर्थ हूँ ।

मान्यवर, मैं पेंशन के तकनीकी प्रश्न पर अधिक समय नहीं लेना चाहता । इस विषय सम्बन्धी स्थिति बहुत स्पष्ट है । यदि मान लिया जाय कि बर्मा भारत से अलग नहीं होता, तो अब तक अर्जित पेंशन राशि में क्या अंशदान होता चाहे वह पूर्ण अर्जित होती या आंशिक रूप में अर्जित पेंशनें । यह ठीक इसी अनुपात में होता जिस अनुपात में बर्मा समेत भारत के राजस्व में उसका योगदान होता । भारत से बर्मा के विलग हो जाने से इस स्थिति में कोई अन्तर नहीं आना चाहिए और न्यायपूर्ण सिद्धान्त के आधार पर बर्मा को उसी सीमा तक अंशदान का देनदार ठहराया जाना चाहिए । मि० निक्सन ने इस अलगाव की तुलना भागीदारी के विखण्डन से की है । यह सही नहीं है, मेरे ख्याल से सही तुलना संयुक्त हिन्दू परिवार के विभाजन से की जा सकती है । दोनों देशों के मध्य दायित्व और परिसम्पदा का निपटारा हिन्दू संयुक्त परिवार पर लागू नियमों के अनुसार होना चाहिए ।

मान्यवर, मुद्रा के सम्बन्ध में मुझे ट्रिब्यूनल के निष्कर्ष के विरुद्ध अधिक नहीं कहना है । लेकिन मैं एक चीज जानना चाहता हूं और मेरी यह जिज्ञासा बहुत गम्भीर है कि जिस रिपोर्ट को हम चाहें या न चाहें और चाहे वह न्यायोचित हो या न हो तथा जिसको हमारे ऊपर लादा जाना हो, क्या हमसे उसकी शव परीक्षा करने के लिए कहा जा रहा है, या उसमें अभी जान है या कि भारत सरकार ऐसी स्थिति में है कि वह इसको पुनर्विचारित और पुनर्निर्णीत करवा सकती है ताकि दोनों देशों को संतोष मिल सके । मैं चाहता हूं कि वित्तीय और न्यायिक विशेषज्ञों के साथ भारतीय और बर्मी जूरी भी रखी जाय और जो भी निर्णय हो उस पर भारतीय और बर्मी गैर-सरकारी प्रतिनिधियों की स्वीकृति अनिवार्य हो, और यदि मैं भारतीय जूरियों को प्रभावित करने की स्थिति में रहूं तो मैं उन्हें सलाह दूंगा कि वे बर्मा के लोगों की इच्छापूर्ति हेतु अधिकतम प्रयास करें । मैं चाहता हूं कि ऐसे दृष्टिकोण से समझा–बूझा जाय । आप इस प्रश्न को चाहे ऐतिहासिक पद्धति से या विश्लेषणात्मक पद्धति से हल करना चाहें, मेरे विचार से दो-तीन मामले ऐसे हैं जिनका दायित्व ब्रिटेन को ही वहन करना चाहिए । बर्मा युद्धों की व्यय–राशि ब्रिटेन को ही देनी चाहिए । मैं इस सम्बन्ध में अधिक तर्क प्रस्तुत नहीं करना चाहता । हमें बताया

गया है कि इस राशि का निर्धारण एक कठिन कार्य है । इंग्लैण्ड कम से कम वह न्यूनतम राशि तो प्रदान कर ही सकता है जो इसके अनुसार युद्ध और अधिग्रहण कार्रवाई पर व्यय हुई है, और उस सीमा तक भारत और बर्मा को राहत पहुंचा सकता है । दूसरी बात वर्तमान विश्व की स्थिति और युद्ध–ऋणों के निपटान की शैलियों को देखते हुए यह उचित है कि (प्रथम) विश्व युद्ध सम्बन्धी व्यय और अंशदान का भार इंग्लैण्ड अपने ऊपर ले और बर्मा तथा भारत को इससे मुक्त करे । यदि ऐसा होता है तो भारत और बर्मा के बीच दायित्व के निर्धारण का मामला ही नहीं उठेगा । मुझे विश्वास है कि भारत सरकार इस मामले में इस तरह प्रयास करेगी कि दोनों देश लाभान्वित हो सकें और विनाश से बच जायं । अन्यथा वित्तीय ढांचे पर इतना बोझ है कि यह किसी भी समय चरमरा कर गिर सकता है ।

●

वेतन–भुगतान विधेयक पर चर्चा

मैं इस समय भाषण नहीं देना चाहता था लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि सदन के सम्मुख विचाराधीन संशोधन के वास्तविक चरित्र पर थोड़ा भ्रम हो गया है । एक वेतनभोगी व्यक्ति की सेवायें दो प्रकार से समाप्त की जा सकती हैं या तो वह स्वयं नौकरी छोड़ सकता है या नियोजक द्वारा हटाया जा सकता है । इसकी उप–धारा (2) केवल उन मामलों से सम्बन्धित है, जब नियोजक कर्मचारी की सेवा समाप्त करता है । जहां तक कर्मचारी द्वारा स्वैच्छिंक रूप से सेवा से हटने के मामले हैं, मेरे विचार से उन पर उप–धारा (1) लागू होगी और सेवा समाप्ति के बाद भी उसमें नियोजक को एक सप्ताह का समय मिलेगा । इस तरह वहां उसे दो दिन से भी अधिक का पर्याप्त समय मिलेगा । उप–धारा (2) केवल उन मामलों के लिए है, जबकि नियोजक द्वारा या नियोजक की ओर से सेवा समाप्त की गई हो । इसलिए यहां प्रश्न है कि क्या कर्मचारी की सेवा समाप्त करने वाले नियोजक को दो दिन तक वेतन रोक रखने का समय मिलना चाहिए? यह मुझे बहुत अनुचित लगता है कि एक ओर तो कर्मचारी को नौकरी से बाहर निकाला जाए और दूसरी ओर उसका देय वेतन भी न मिले । मैं यह मानने को तैयार हूँ कि जब कर्मचारी स्वयं ही नौकरी छोड़ता है, उसे उप–धारा (1) के अन्तर्गत वेतन मिलने की प्रतीक्षा करनी चाहिए; यह अवधि एक सप्ताह भी हो सकती है । लेकिन यहां कुछ माननीय सदस्यों द्वारा प्रकट किये गये विचारों से मैं सहमत नहीं हूँ कि इसमें वे मामले भी रखे जाने चाहिए जिनमें कर्मचारी स्वयं नौकरी नहीं छोड़ता है बल्कि ऐसा करने के लिए बाध्य हो जाता है..

सर कावसजी जहांगीर : और व्यावहारिक परेशानियों के बारे में स्थिति कैसी रहती है?

पंतजी द्वारा यह भाषण लेजिस्लेटिव असेम्बली में पेमेण्ट आफ वेजेज बिल की धारा(5) की उपधारा—2 पर भारतीय श्रमिक आंदोलन के सर्वप्रथम प्रणेताओं में से एक, लम्बे संसदीय रुपये अनुभवों वाले श्री एन०एम० जोशी द्वारा प्रस्तुत संशोधन प्रस्ताव पर 5 फरवरी, 1936 को दिया गया था । इस संशोधन का सम्बन्ध इस्तीफे अथवा मालिक द्वारा रिटायर किये गये बेरोजगार श्रमिकों के वेतन के भुगतान का समय निर्धारित करने से था । इस भाषण में पंतजी ने बेरोजगार हो गये अथवा नौकरी छोड़ने वाले श्रमिकों को वेतन के भुगतान की नीति का मुद्दा उठाया था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : मेरे विचार से व्यावहारिक परेशानी नियोजक से अधिक कर्मचारी को होती है । यदि नियोजक समझता है कि वह अपने कर्मचारी से सुविधाजनक ढंग से मुक्ति नहीं पा सकता है तो उसे कुछ दिन और प्रतीक्षा करनी चाहिए । उसे इतनी अधिक जल्दबाजी या अधीरता नहीं अपनानी चाहिए जिससे कि उसके अपने लिए तथा अन्य के लिए संकट उत्पन्न हो जाय । उसे कर्मचारी का हिसाब–किताब तैयार होने तक प्रतीक्षा करनी चाहिए । इसलिए मैं सरकार और इस विषय में रुचि रखने वाले माननीय सदस्यों से अनुरोध करता हूं कि मैंने जो कहा है वह ठीक है और यदि यह धारा केवल उन्हीं मामलों में प्रयोज्य है जबकि सेवा की समाप्ति नियोजक द्वारा या नियोजक की ओर से की गयी है, तो कर्मचारी को सेवा–समाप्ति के दिन ही वेतन प्राप्त होना चाहिए । इससे आगे प्रतीक्षा करने के लिए नहीं कहा जाना चाहिए......

सर कावसजी जहांगीर : वेतन कितना है आप इसका हिसाब कैसे लगायेंगे ?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : जब तक हिसाब न बन जाये, उसे नौकरी से न निकाला जाए ।

सर कावसजी जहांगीर : आपका तात्पर्य है कि उसे एक अतिरिक्त दिन का वेतन दिया जाये?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : तब तक उसे नौकरी में रहने दिया जाए ।

सर कावसजी जहांगीर : कर्मचारी उजरती काम पर रखा गया है; उसे किये गये काम के अनुसार भुगतान होता है और उसकी गणना केवल एक विशिष्ट गणितीय प्रक्रिया से की जा सकती है और या किये गये काम को नाप-जोख कर ही किया जा सकता है । क्या आप कह सकते हैं कि इसको कितना देय है, आप उसके काम को रोकने के पांच–दस मिनट के भीतर ही इसका कैसे पता लगा सकते हैं? इसके लिए कुछ घण्टों का समय चाहिए । जहां सैकड़ों आदमी काम करते हों वहां और भी अधिक समय चाहिए । यह व्यावहारिक परेशानी है । हम इस तथ्य से अच्छी तरह परिचित हैं कि इस मामले में नियोजक नोटिस देता है लेकिन इससे क्या फर्क पड़ता है कि नियोजक नोटिस देता है या कर्मचारी?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य दूसरा भाषण नहीं दे सकते ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : सर कावसजी जहांगीर द्वारा बतायी गई कठिनाई का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है । मैं समझता हूं कि जब मैं एक श्रमिक को निकालने का निर्णय लेता हूं जिसकी जीविका मेरे ऊपर निर्भर है तो मैं कम से कम उसके प्रति इतना क्रूर नहीं हो सकता कि एक ओर उसकी पगार रोक लूं और उसे

काम से बाहर भी कर दूं । यदि श्रमिक स्वयं काम छोड़ता है तब तो मैं अवश्य कह सकता हूं कि "आप मेरी सुविधा का ख्याल नहीं कर रहे हैं । उस वक्त तक प्रतीक्षा कीजिए जब तक मैं ये कठिन और सूक्ष्म गणितीय गणनाएं नहीं कर लेता । जब मैं यह सब पूरा कर लूंगा, उसके बाद ही पगार आप प्राप्त कर सकेंगे ।" लेकिन जब मैं खुद ही किसी को नौकरी से बाहर करता हूं तो मेरी समझ में नहीं आता कि मैं उससे यह कैसे कह सकता हूं कि "आप कल या परसों आइए । आपको पगार लेने के लिए मेरी सुविधा का ख्याल रखना होगा ।" यदि कर्मचारी स्वेच्छा से काम छोड़ता है तो उप–धारा (1) से नियोजक को वेतन देने के लिए एक सप्ताह का समय मिलता है, लेकिन जब कर्मचारी को उसकी इच्छा के खिलाफ नौकरी से निकाला जाता है तो उससे यह कहना निश्चित ही अनुचित और अन्यायपूर्ण होगा कि "आपको काम नहीं करने दिया जाएगा और आपको दो दिन और वेतन का इन्तजार करना पड़ेगा ।"

विशेषाधिकार भंग और 'अभ्युदय' पर जुर्माना

मान्यवर , मैं माननीय विधि : सदस्य की समस्त आपत्तियों पर विचार नहीं करना चाहता । केवल एक-दो मुद्दे ऐसे हैं जिनकी ओर मैंने एकाधिक बार माननीय अध्यक्ष का ध्यान आकर्षित करना चाहा था और मैं महसूस करता हूं कि यह उसके लिए उपयुक्त अवसर है, इसलिए मैं इस अवसर का उपयोग करना चाहता हूँ । माननीय विधि सदस्य ने प्रस्ताव का विरोध दो आधारों पर किया है । उनके अनुसार यह प्रश्न उठाने की अनुकूल पद्धति नही है, चाहे विशेषाधिकार भंग हुआ है । इसके उपरान्त, इस ठोस प्रश्न पर कि विशेषाधिकार भंग हुआ है ...

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या प्रथम दृष्ट्या मामला बनता है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – वे सोचते हैं कि चूँकि इससे किसी प्रकार के विशेषाधिकार का प्रश्न नहीं जुड़ा हुआ है इसलिए विशेषाधिकार हनन का प्रथम दृष्ट्या मामला तक नहीं बनता है । अब इस समय माननीय विधि सदस्य ने नियम 24–क का सन्दर्भ दिया है और कहा है कि सामान्य लोक–महत्व के प्रश्नों पर प्रस्ताव के जरिये ही चर्चा हो सकती है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – आपके अनुसार यह लागू नहीं होता ?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, मेरे विचार से इस प्रश्न ने इस सदन में बहुत विडम्बनापूर्ण रास्ता अपनाया है । सर्वप्रथम, एक प्रस्ताव आया जिसे गर्वनर–जनरल ने निरस्त कर दिया । फिर सदन के स्थगन का प्रस्ताव आया, वह भी निरस्त कर दिया गया । अब विशेषाधिकार हनन के आधार पर आवेदन प्रस्तुत

यह भाषण लेजिस्लेटिव असेम्बली में 10 फरवरी, 1936 को पंडित कृष्ण कांत मालवीय द्वारा पेश किये गये काम रोको प्रस्ताव के समय दिया गया था । इस प्रस्ताव का विषय था– शिमला में हुई सदन की बैठक में, 6 सितम्बर, 1935 को फौजदारी कानून (संशोधन) अधिनियम पर चर्चा के दौरान पंडित कृष्ण कांत मालवीय द्वारा सदन में दिये गये पूरे भाषण के मुद्रण के लिए 'अभ्युदय' (इलाहाबाद) से गारण्टी की मांग । प्रस्ताव में भाषण की स्वतंत्रता और उसके प्रेस में छापने की आजादी का जिसके कि सदन के सदस्य अधिकारी थे, मुद्दा उठाया गया था ।

किया गया है । हमें बताया गया है कि इसकी उचित प्रक्रिया यह है कि प्रस्ताव रखा जाये और उस प्रक्रिया का अनुगमन किया जाये, जिसका निर्वाह आज माननीय सदस्य ने यह प्रश्न उठाते हुए किया है । मुझे यह आशंका है कि यदि यह प्रस्ताव रखा गया, तो आवश्यक तौर पर यह एक व्यक्तिगत मामले तक सीमित रहेगा, और उसके द्वारा यह संस्तुति की जायेगी कि "यह सदन गवर्नर-जनरल इन काउंसिल से अनुशसा करता है कि 'अभ्युदय' पर आरोपित दण्ड को निरस्त किया जाए" ऐसी स्थिति में यह इस आधार पर निरस्त कर दिया जाएगा कि यह सामान्य लोक-हित का मामला नहीं है । मैं यह समझता हूं कि मेरा ऐसा सोचना गलत नहीं है कि व्यक्तियों से जुड़े सवाल चाहे वे कितने ही महत्व के क्यों न हों, अपने-आप में एक प्रस्ताव की विषय-वस्तु नहीं हो सकते । फिर भी मान्यवर, मुझे प्रसन्नता है कि माननीय विधि सदस्य ने अपने को केवल 'मे' की संसदीय व्यवहार प्रस्तक (पार्लमिण्ट्री प्रेक्टिस) उद्धरणों तक ही सीमित नहीं रखा है । उन्होंने हमारे मैनुअल में वर्णित नियमों को इस तरह के मामलों के समाधान के लिए उपयुक्त माना है । मुझे ऐसा अनुभव होता है कि हमारे मन में 'मे' की किताब पर अव्यक्त रूप से बहुत विश्वास है और उससे उद्धृत असम्बद्ध वाक्यों के आधार पर महत्वपूर्ण फैसलों पर पहुंचने की प्रवृत्ति है, चाहे वह हमारे नियमों से बेमेल ही क्यों न हो । पिछले मौके पर, माननीय विधि सदस्य ने आपके सम्मुख 'मे' के एक वाक्य का हवाला दिया था, जिसमें यह निर्धारित है कि विशेषाधिकार हनन का मामला कार्य-स्थगन प्रस्ताव के द्वारा नहीं लाया जा सकता है । मेरे पास हाउस आफ कामन्स में सरकारी कार्य की प्रक्रिया का मैनुअल है, जिसमें यह कहा गया है....

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार : मैं चाहता हूं कि माननीय सदस्य अपने को व्यवस्था के प्रश्न तक सीमित रखें । मुझे उनके सामान्य भाषण से कोई आपत्ति नहीं है और मैं उनके रास्ते में बाधा नहीं डालूंगा । लेकिन मुझे उत्तर देने का अधिकार रहेगा । मैंने इस दृष्टिकोण से कभी प्रश्न को नहीं लिया है । मैंने केवल तकनीकी आधार पर अपनी आपत्तियां प्रस्तुत की थीं लेकिन यदि माननीय सदस्य नये मुद्दे उठा रहे हैं तो पुनः उत्तर द्वारा उनका समाधान करने के अलावा कोई उपाय नहीं है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य अपने को विवादित बिन्दु तक सीमित रखें ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : मैं यह कहना चाहता हूं कि हाउस आफ कामन्स के संचालन मैनुअल के नियम 58 के अन्तर्गत यह स्पष्ट प्राविधान है कि वहां विशेषाधिकार का विषय कार्य-स्थगन के द्वारा नहीं उठाया जा सकता है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) : यह स्थायी आदेश नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं मैनुअल में वर्णित नियमों की बात कर रहा हूँ ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यह मैनुअल सर कोर्टनी एल्बर्ट द्वारा प्रकाशित हुआ है और उसमें केवल स्थायी आदेशों का समावेश ही नहीं वरन सदन की कार्य–प्रक्रिया भी वर्णित है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – यह आधिकारिक मैनुअल है जो सदन के अध्यक्ष द्वारा निर्गत हुआ है । हम पर्याप्त दुविधाजनक स्थिति में हैं । एक ओर हम से यह कहा जा रहा है कि चूँकि हाउस आफ कामन्स में विशेषाधिकार का विषय कार्य–स्थगन प्रस्ताव के द्वारा नहीं लाया जा सकता है, इसलिए हम यह नहीं कर सकते ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – पीठ का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है । पीठ को केवल यह सूचना वांछित है कि किस रूप में इस तरह का प्रश्न चर्चित हो सकता है । पीठ को यह भी सूचना चाहिए कि क्या इस प्रसंग में प्रथम दृष्ट्या मामला बनता है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – हाउस आफ कामन्स के प्रक्रियात्मक नियम सं० 45 में यह प्राविधान है कि यदि विशेषाधिकार का प्रश्न अचानक आ जाए तो उसे निर्धारित कार्यक्रम के बीच में किसी भी समय उठाया जा सकता है किन्तु यदि यह प्रश्न अचानक नहीं उठता तो इसे दिन के निर्धारित कार्यक्रम से पहले प्रस्तुत किया जायेगा ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या इससे प्रस्तुत समस्या सम्बन्धी कठिनाई का समाधान हो रहा है? क्या विशेषाधिकार के प्रश्न से यह परिलक्षित नहीं होता कि सदन इस प्रश्न को उठाने में सक्षम है? वस्तुतः जैसा कि माननीय सदस्य अवगत हैं, ब्रिटिश संसद को संसद का उच्च न्यायालय भी कहा जाता है और उसे अपने विशेषाधिकार के हनन को रोकने और दण्डित करने का अधिकार है । संसद ने यह शक्ति अपने दीर्घ संसदीय इतिहास के व्यवहारों से अर्जित की है । क्या हमें यहां ऐसे अधिकार प्राप्त हैं या हमारे यहां विशेषाधिकार के प्रश्न पर लागू होने वाले नियम और स्थायी आदेश हैं? यहाँ 'विशेषाधिकार' शब्द के दो अर्थ हैं । एक अर्थ में इसके द्वारा किसी न्यायालय की कार्रवाई को बाधित किया जा सकता है । दूसरे अर्थ में सदन इसका स्वयं संज्ञान कर सकता है । और अपनी शक्तियों से इसका समाधान कर सकता है । यदि यह मान लें कि सदन को ऐसा कोई अधिकार प्राप्त नहीं है तो फिर किस अर्थ में विशेषाधिकार का प्रश्न उठ सकता है? एक विशेषाधिकार हनन के मामले का समाधान यह सदन किस प्रक्रिया के द्वारा कर सकता है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – यह शक्ति सदन में अन्तर्निहित है । जहां तक इस

सम्बन्ध में सदन की शक्ति का प्रसंग है, वह अन्य संदर्भों में हमारी शक्ति के समकक्ष है । मैं कहना चाहता हूं कि सदन में इस प्रकार के प्रस्ताव के द्वारा यह प्रश्न उठाने की अनुमति होनी चाहिए । यह प्रश्न के स्वरूप का मामला है, और मैं माननीय अध्यक्ष महोदय से यह आदेश करने का अनुरोध करता हूं कि प्रस्ताव के इस स्वरूप को व्यवस्थानुक्रम माना जाए । अब मैं दूसरे प्रश्न पर आता हूं कि क्या यह मामला विशेषाधिकार के अन्तर्गत आता है अथवा नहीं? और फिर जैसा कि आपने अवलोकित किया है, तीसरी बात यह है कि हम इस प्रकार के प्रस्ताव पर कार्रवाई कर सकने में सक्षम हैं? सर्वप्रथम मैं अपनी समझ के आधार पर इस अन्तर्निहित प्रश्न या प्रस्ताव की अन्तर्वस्तु की स्पष्ट और ठोस व्याख्या करना चाहूंगा । मेरे विचार से विवादित प्रश्न यह है कि क्या इस देश में प्रेस को इस सदन की कार्रवाई की विस्तृत रिपोर्टिंग करने का अधिकार है या नहीं? और क्या वह कार्यपालिका द्वारा बाधा पहुँचाये बिना ऐसा कर सकता है? क्योंकि इस प्रसंग में कार्यपालिका ने प्रतिभूति आरोपित की है? मैं यह निंदात्मक लेखन सम्बन्धी न्यायालय में चलने वाली कार्रवाई या नागरिकों के निजी अधिकारों पर हमला सम्बन्धी मामलों के बारे में बात नहीं कर रहा हूं । सीधा सवाल यह है कि .....

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या यह मजिस्ट्रेट का आदेश है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – नहीं,यह स्थानीय शासन का आदेश है । मजिस्ट्रेट का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है । कार्यपालिका की एक शाखा के रूप में, स्थानीय शासन ने, मान लीजिए, इस सदन के एक सदस्य के भाषण की विस्तृत रिपोर्ट छापने के कारण प्रेस से प्रतिभूति मांगी है । इस आदेश में कई और आरोप हो सकते हैं । यदि माननीय सदस्य के भाषण से सम्बन्धित आरोप उस आदेश में नहीं होता तो मैं मान सकता हूं कि विशेषाधिकार का प्रश्न नहीं उठ सकता था । किन्तु यदि यह आरोप इस सदन में एक माननीय सदस्य के भाषण से सम्बन्धित है तो मैं कहना चाहूंगा कि यह इस सदन और इसके सम्मानित सदस्यों का विशेषाधिकार है कि उनके भाषणों को बाहर के प्रेस में कार्यपालिका के किसी दण्ड, प्रताड़ना या बाधा के बिना छापा जा सके । सामान्यतया शासन विधायिका का एक अंग और उसकी अधीनस्थ संस्था है । जैसा कि मैंने बताया, कुछ व्यक्तियों के अधिकार और दूसरे देशों के दृष्टान्तों से मेरा कोई मतलब नहीं है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – वाद-विवाद सम्बन्धी अभिव्यक्ति की आजादी के नियम इतने व्यापक नहीं हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मेरी मान्यता है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपसिद्धांत ही प्रकाशन की स्वतंत्रता है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – अभिव्यक्ति की आजादी भारत सरकार

अधिनियम की धारा 67 में ही वर्णित है । इसके अतिरिक्त कोई नियम नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : सही है कि इसके अतिरिक्त कोई स्पष्ट विधान नहीं है, लेकिन मेरा कहना है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में ही इसके प्रकाशन का भी अधिकार सन्निहित है । मान्यवर, अब मैं आपका ध्यान उस असंगति की ओर ले जाना चाहता हूँ जो निहितार्थ गारंटीशुदा नियमों के अधीन इस सदन की कार्यवाही को सही–सही और उपयुक्त ढंग से बिना किसी प्रतिबन्ध के प्रकाशित न करने देने की दशा में उत्पन्न होगी ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या यह सदन के भाषण की यथावत् प्रस्तुति है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – जी हाँ, अब मैं कहना चाहता हूं कि ऐसा एक भी उदाहरण नहीं मिलता है जब पार्लियामेंट ने किसी भाषण की प्रस्तुति पर किसी को दण्डित किया हो । मैं हाल के समय की बात कह रहा हूं । मैं उस समय की बात नहीं कह रहा हूँ जब गोपनीयता ही पार्लियामेंट का नियम था, उस समय का जमाना दूसरा था । महत्वपूर्ण मामला यह है कि कानून ने स्वयं कार्यपालिका का यह कर्तव्य निर्धारित किया है कि वह भाषणों के प्रकाशन की व्यवस्था करे और लोक सेवक के नाते सदन के सचिव को यह कर्तव्य सौंपा गया है कि वह यहां दिये गये भाषणों को प्रकाशित करें और जनता की जानकारी, दिशा–निर्देश और उसकी सूचना के लिए सदन की कार्रवाई की सही रिपोर्ट दें । अब कैसी विचित्र विसंगति पैदा हो जायेगी यदि एक ओर इन रिपोर्टों के प्रकाशन का दायित्व विधायिका के सचिव पर डाला जाता है और दूसरी ओर सचिव द्वारा जारी की गयी इस रिपोर्ट की प्रतिलिपि उतारने वाले व्यक्ति को गिरफ्तार या दण्डित किया जाता है । मेरी समझ में यह अनुचित स्थिति है और इसका बचाव नहीं किया जा सकता है । मामले का स्वरूप ही ऐसा है, प्रत्येक प्रकाशक को इस सदन की कार्रवाई प्रकाशित करने का अधिकार मिल जाता है ।

माननीय सर हेनरी क्रेक (गृह सदस्य) – नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : मैं अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत कर रहा हूं । मैं पार्लियामेंट की कारवाई सम्बन्धी रेडलिन की पुस्तक के खण्ड दो पृष्ठ सं० 50 से एक उद्धरण सुना रहा हूं—

"इस वक्तव्य के पश्चात, सदन ने एक प्रवर समिति गठित की, जिसकी रपट से यह गम्भीर निर्णय लिया गया कि संसदीय रिपोर्ट, मतदान और प्रक्रिया सम्बन्धी सूचना का प्रकाशन इस सदन के संवैधानिक कर्तव्यों का आवश्यक अंग है ।"

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या यह आधिकारिक प्रकाशन है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – यह आधिकारिक नहीं है । वहां कोई आधिकारिक प्रकाशन नहीं है । 'हैन्सार्ड' भी एक आधिकारिक प्रकाशन नहीं है । यह भी वास्तविक अर्थ में आधिकारिक प्रकाशन नहीं है क्योंकि हाउस आफ कामन्स या सरकार इसमें प्रकाशित सूचनाओ के लिए उत्तरदायी नहीं है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या उसे सरकारी रिपोर्ट नहीं माना जाता है? '

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : यह उसी तरह का आधिकारिक प्रकाशन है जैसे आप इस सदन की कार्रवाई प्रकाशित करने का लाइसेंस मुझे दे दें । आपका अनुमोदन प्राप्त हो जाने पर मेरा प्रकाशन सही माना जायगा ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या दूसरी कोई सरकारी रिपोर्ट जाता है?'

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – नहीं ऐसी कोई अन्य सरकारी रिपोर्ट नहीं है । मेरा कहना है कि जहाँ भी जनतांत्रिक संस्थाएं होती हैं, वहां विशेषाधिकारों और परम्पराओं का विकास होता रहता है, लेकिन जहां हमारे देश की तरह कार्यपालिका को अत्यधिक अधिकार प्राप्त होते हैं जो कि जनतांत्रिक शासन की प्रारम्भिक अवधारणा के लिए भी अनिष्टकारी है, यदि उन्हें इस सदन के भाषणों पर नियंत्रण और रोकथाम की अनुमति मिल जाती है, तो जनतांत्रिक शासन के मौलिक सिद्धांत ही खोखले पड़ जायेंगे और उसकी बुनियाद को ही उलट दिया जायेगा । इसलिए कतिपय विशेषाधिकारों को संविधान में और विशिष्ट परिस्थितियों में अन्तर्निहित मान लेना चाहिए । मेरे विचार से जैसी हमारी स्थिति है....

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या 'हैन्सार्ड' संसद की आधिकारिक रिपोर्ट है ?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – इसे आधिकारिक प्रकाशन माना जाता है । 'हैन्सार्ड' एक प्राइवेट कम्पनी द्वारा प्रकाशित होता है जिसे सरकार से सहायतार्थ अनुदान मिलता है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या इसे सरकारी रिपोर्ट माना जाता है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – रिपोर्ट इस अर्थ में आधिकारिक है कि उसके पाठ को स्वीकार किया जाता है लेकिन वह वर्तमान शासन द्वारा या उसके तत्वावधान में प्रकाशित नहीं होता है ।

माननीय सर हेनरी क्रेक – मेरे विचार में यह आधिकारिक है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं इसका फैसला माननीय विधि सदस्य पर छोड़ देता हूं । यह इस अर्थ में आधिकारिक मानी जाती है कि प्रथम दृष्ट्या इसे सत्य माना

जाना है । मैं कहना चाहता हूं कि हमारे सामने यह प्रश्न नहीं है कि यह विशेषाधिकार पूर्णरूप में है अथवा नहीं, बल्कि प्रश्न है कि इस मामले में प्रथम दृष्ट्या के आधार पर आगे विचार किया जाय अथवा नहीं? फिलहाल हम केवल इतने तक ही सीमित रहेंगे कि क्या एक प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं? और मैं पूरी गम्भीरता से कहना चाहता हूं मान्यवर, कि इसमें बहुत गम्भीर और महत्वपूर्ण प्रश्न शामिल हैं और यदि आप इसे यह कहकर निरस्त कर देंगे कि यह इतना बेकार का और बेतुका प्रस्ताव है कि इस पर विचार करना ही सम्भव नहीं है, या आप सन्तुष्ट हो जाएं कि ऐसे मसले पर कोई भी व्यक्ति विशेषाधिकार की बात नहीं उठायेगा, तो यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण होगा । इसलिए मैं अनुरोध करता हूं कि प्रस्ताव व्यवस्थागत है और इसे स्वीकार करने की कृपा की जाए ।

●

आर्थिक राष्ट्रवाद : समय की मांग

मान्यवर, मेरा प्रस्ताव है कि–

'कि 'रेलवे–परिषद' के शीर्षक की की गयी माँग में 100 रुपये की कमी की जाए ।"

मैंने पिछले सप्ताह माननीय वाणिज्य–सदस्य के भाषण को बड़े ध्यान से सुना था । मैं उनकी स्पष्टवादिता और निष्कपटता से प्रभावित हुआ हूं । उनके स्वर और शैली की मैं प्रशंसा करता हूं । इस संदर्भ में उन्होंने मुझे संतुष्ट किया है क्योंकि आमतौर पर सत्ता–पक्ष की ओर से हम उत्तेजनापूर्ण, धृष्टतापूर्ण और छद्मपूर्ण बातें ही सुनते रहे हैं और इसका एक उदाहरण हमें आज प्रश्नोत्तरकाल में भी मिल चुका है । फिर भी मैं यह नहीं चाहता कि इस समय हमारा ध्यान आर्थिक और वित्तीय संदर्भों से अलग किसी धारा में बंटे । इसके मुद्दे बहुत महत्वपूर्ण हैं और मैं चाहता हूं कि सदन इस पर बिना किसी उत्तेजना या पूर्वाग्रह के विचार करे ।

जैसा मैंने कहा, मुझे प्रसन्नता है कि वाणिज्य–सदस्य के भाषण का स्वर और उसकी शैली प्रशंसनीय है । यह बहुत अच्छा होता अगर यही बात उनके वक्तव्य की गुणवत्ता और विषय–वस्तु के बारे में कही जा सकती । इस प्रकरण पर मुझे महान निराशा हुई । यह बहुत आश्चर्यजनक तो नहीं लेकिन वास्तविक निराशा की बात अवश्य थी । आश्चर्य की तो अब सम्भावना भी नहीं बची है । मैं बहुत पहले ही निराश हो चुका हूं और एक वर्ष का अनुभव मेरे साथ है– और मैं सोचता हूं कि यह हम सबमें गहरे पैठ गया है— कि हम सामने की बेंचों से किसी भी कल्याणकारी उपादेय या सुखद कार्य की अपेक्षा नहीं कर सकते । लेकिन जहां तक माननीय वाणिज्य सदस्य का मामला है, हमारी यह धारणा थी कि वे उस धृष्ट नौकरशाही के अंग नहीं हैं और आशा थी कि वह इसे नयी शक्ति प्रदान करेंगे तथा अपने चारों ओर फैली पूर्णतः निकम्मी नौकरशाही के जलकुण्ड में फंसी अपनी नाव बाहर निकाल सकेंगे । लेकिन हमें मालूम हुआ है कि माननीय वाणिज्य सदस्य भी लाल

यह भाषण 24 फरवरी, 1936 को पंतजी द्वारा रेलवे बोर्ड की मांग नं०1 के घटाकर 100 रुपये किये जाने के लिए उनके द्वारा लेजिस्लेटिव असेम्बली में प्रस्तुत प्रस्ताव के समय दिया गया था ।

फीते की दलदल में फंस गए हैं, और वे भी न्यस्त स्वार्थों के खिलाफ खड़े नहीं हो पा रहे हैं। परिणामस्वरूप उनकी रचनात्मक सलाहें उन भारी समस्याओं के सामने, जिन्हें हल करना है, महत्वहीन हो गयी हैं। वाणिज्य-सदस्य का एक दो मुद्दों पर स्पष्ट रूप से अनुचित विचार है। उन्होंने श्रम कानून के अन्तर्गत होने वाले व्यय पर विशेष बल दिया है। उन्होंने अपने वक्तव्य के पूरे दो पैराग्राफों में बताया है कि श्रम के बोझ से दबे श्रमिकों के कष्ट निवारण तथा उन्हें मानवोचित जीवनयापन विधि उपलब्ध कराने हेतु अब तक लगभग 50 लाख रु० का अतिरिक्त व्यय हुआ है। इस पहलू पर उनका इतना जोर देना शायद ही उचित कहा जा सके। लेकिन जिसने मुझे विशेष रूप से प्रभावित किया है वह है उनके वक्तव्य का दूसरा भाग; एक ओर तो उन्होंने इस काम पर हुए व्यय पर विशेष जोर दिया है, वहीं उन्होंने 'ली' व्यवस्था के अन्तर्गत होने वाली लूट पर एक शब्द भी नहीं कहा है। शोषितों को दी गयी रत्ती भर सुविधा का तो उन्होंने झूठमूठ का ऐसा बखान किया है, मानों वह इसके विरोधी हों, लेकिन उन लोगों की सुख-सुविधा हेतु व्यय किये जाने वाले हजारों-हजारों रुपयों के सम्बन्ध में उन्होंने एक शब्द भी नहीं कहा जिनको पहले से ही हमेशा-हमेशा अधिक उपलब्ध रहा है तथा जिनकी स्वार्थपूर्ति हेतु ही इस देश का शोषण हो रहा है। मुझे यह एक खेदजनक भूल और विरोधाभास लगता है।

इसके अलावा माननीय वाणिज्य-सदस्य के भाषण में एक और उल्लेखनीय भूल हुई है। उन्होंने पिछले वर्ष वेतन में की गई कटौती को वापस लेने के सम्बन्ध में खेद का एक शब्द भी नहीं कहा है। इसके पीछे या तो मूर्खतापूर्ण गलत हिसाब-किताब हो सकता है, या फिर जानीबूझी गलतबयानी, योजनाबद्ध तिकड़म और धोखाधड़ी हो सकती है। मैं सरकार पर परवर्ती आरोप नहीं लगाना चाहता हूं। लेकिन यदि यह हिसाब-किताब की गलती थी, तो माननीय वाणिज्य-सदस्य को शासन की ओर से इस महान गलती के लिए सदन के सम्मुख हार्दिक खेद प्रकट करना चाहिए था। गत वर्ष माननीय वाणिज्य-सदस्य ने हमें आश्वस्त किया था कि कतिपय विशिष्ट रेलवे लाइनों को छोड़ शेष राजकीय रेलवे बिना किसी घाटे के कार्य करेगी, लेकिन अब हम देखते हैं कि हमारी समस्त आशाओं पर पानी फिर गया है। वस्तुतः न केवल समाप्त होने वाले वर्ष 1934-35 में घाटा हुआ है, बल्कि जहां तक वास्तविक और आय-व्यय अनुमानों का सम्बन्ध है, वास्तविक रूप से हुआ घाटा पिछले वर्ष बनाये गये घाटे से अधिक ही है। केवल इतना ही नहीं, बल्कि हमें चालू वर्ष में भी यह अन्तर और भी अधिक दिखाया गया है। माननीय वाणिज्य-सदस्य के अनुसार 2 करोड़ रुपये की जगह घाटा 454 लाख रु०

होगा । मैं सिद्ध करूंगा कि ये आंकड़े भी सही नहीं हैं । इससे स्थिति की वास्तविक गम्भीरता का पता नहीं लगता है । यदि आय–व्यय को उचित और ठीक तरीके से बनाया गया होता तो इस वर्ष की बैलेंस शीट में व्यय खाते में 12 करोड़ की राशि अधिक होती, और इसे सिद्ध करने के लिए मैं सदन से कुछ क्षणों की मोहलत चाहूंगा ।

माननीय वाणिज्य–सदस्य की गणना के अनुसार व्यवहार में 454 लाख का घाटा अपेक्षित है । इसमें 5 करोड़ की राशि और जोड़नी चाहिए जो इसे अंशदान के रूप में सामान्य राजस्व को हस्तान्तरित करनी है । हमें इसमें 2 करोड़ की वह राशि भी जोड़नी पड़ेगी जिसे गलत ढंग से पूंजी खाते में निकाला दिखलाया गया है । लेकिन यह पुरानी वस्तुओं के स्थान पर नयी वस्तुओं की खरीद का मामला है । अतः ठोस वित्तीय सिद्धान्तों के आधार पर इसे राजस्व से निकाली राशि मानना चाहिए । यह त्रुटि शासन ने मान ली है । इसके अलावा मूल्यह्रास कोष का हिसाब इस प्रकार तैयार किया गया है कि कार्य–प्रणाली के दोष के कारण हुई 45 लाख की क्षति इसमें नहीं दिखायी गयी है । इसके अतिरिक्त हमें कुछ व्यय स्थगित करने की सूचना दी गयी है । परिणामस्वरूप सामग्री और रेल–पथों की स्थिति बिगड़ी है । इस पर लगभग 50 लाख रु० व्यय होता । इस तरह वास्तव में 12 करोड़ 50 लाख से कम का घाटा नहीं हुआ है । इसके बावजूद यदि विभाग को कतिपय अनुकूल स्थितियों की सहायता न मिलती तो घाटा और अधिक होता । उदाहरण के तौर पर इस वर्ष ब्याज दर सुविधाजनक रही जिसके कारण वर्ष 1929-30 की तुलना में लगभग डेढ़ करोड़ की बचत हुई । कोयले, स्टोर और अन्य वस्तुओं के मूल्य में कमी की वजह से भी इस वर्ष बचत हुई है । इनके बिना वास्तविक घाटा 15 करोड़ के करीब हो जाता । क्या यह किसी तरह से क्षम्य और तर्कसंगत है कि इस वर्ष जबकि घाटा 12 करोड़ रुपये से अधिक पहुंच गया हो, वेतन में पांच प्रतिशत की मामूली कटौती को भी वापस कर दिया जाए और इस तरह कटौती से 90 लाख की जो मामूली बचत हुई थी, उसे बढ़ी हुई तनख्वाह में रख दिया जाए । मान्यवर, मैं इसे सरकार का आपराधिक कृत्य मानता हूं ।

आज क्या हालत है? हमें बताया गया है कि पिछले पांच या छः सालों में रेलवे को कुल मिलाकर लगभग 60 करोड़ का घाटा हुआ है । यह भी सत्य नहीं है । वास्तविक घाटे की राशि लगभग 100 करोड़ है और यदि माननीय वाणिज्य सदस्य आंकड़ों पर ध्यान देंगे तो उन्हें बड़ी सरलता से यह जानकारी मिल जाएगी । रिपोर्ट के अनुसार ही वर्ष 1931 से 1937 के बीच रेलवे को 45 करोड़ 62 लाख का

घाटा हुआ है । शेष अंशदान की राशि 31 करोड़ के करीब है, अत्यधिक पूंजीगत व्यय की राशि 14 करोड़ के लगभग है और पिछले दो वर्षों में मूल्यह्रास कोष को हस्तान्तरित होने वाली राशि वास्तविक से 60 लाख कम आंकी गयी है । यदि इन सारी राशियों को जोड़ा जाए तो घाटे की राशि 90 करोड़ से अधिक होगी, और यदि सभी संबद्ध मदों को जोड़ा जाए तो यह लगभग 100 करोड़ होगी । हमारे सामने ये तथ्य हैं । इन परिस्थितियों में, जबकि उन्हें अनुमानेतर या अतिशयोक्ति नहीं कहा जा सकता, माननीय वाणिज्य सदस्य क्या कहना चाहते हैं? मान्यवर हम एक क्रांति के एकदम सामने खड़े हैं । उन्होंने कुछ सुझाव दिये हैं जो स्थिति से निपटने के लिए बिल्कुल नाकाफी हैं । हमें बताया गया है कि योग्य तथा प्रख्यात एजेंट उपयुक्त विकल्पों की खोज में लगे हैं और समय समय पर विज्ञप्तियों के जरिए शासन आश्वासन देता रहा है, लेकिन इसका क्या परिणाम हुआ है? श्रम के जरिये पूरा पहाड़ खोदा गया लेकिन कहावत के अनुसार चूहा भी नहीं निकला । माननीय वाणिज्य–सदस्य अब क्या कहना चाहते हैं? पिछले मौके पर उन्होंने श्री शाम लाल की क्रांतिकारी प्रस्तावों के लिए आलोचना की थी लेकिन क्या वे इस तथ्य से अनभिज्ञ हैं कि हम एक वास्तविक आर्थिक क्रांति के फंदे में फंस गये हैं? हमारी आर्थिक व्यवस्था में भूकम्प आ गया है । पूरे आर्थिक ढांचे की बुनियाद ही हिल गयी है । मशीन नियंत्रण में नहीं और पुर्जे छिन्न–भिन्न हो गये हैं । इन परिस्थितियों में सहूलियत के छोटे-मोटे उपायों से कुछ भी नहीं होने वाला है । आज की आर्थिक स्थिति में हमें साहसी, राजनीतिक सूझबूझ और रचनात्मक प्रतिभा वाले व्यक्तियों की आवश्यकता है और अब इधर–उधर काटपीट करने से काम नहीं चलेगा । मैं चाहता हूं कि माननीय वाणिज्य सदस्य वैज्ञानिक यथार्थवाद की भावना से इस समस्या को देखें । आखिरकार वह क्या करना चाहते हैं? क्या वे वास्तविक प्रभावकारी समाधान की इच्छा नहीं रखते हैं? यदि हाँ, तो क्या जो साधन उन्होंने सुझाये हैं, वे पर्याप्त होंगे? वे मेरा कहा मान लें, अगर आर्थिक क्रांतियों के दौरान मूर्खतापूर्ण और हठपूर्ण आत्म संतुष्टि की नीति अपनायी जाती है, तो परिणामस्वरूप राजनैतिक क्रांतियों का जन्म होता है और यदि सरकार परम्पराओं के चक्कर से बाहर नहीं निकलती तथा पूरा साहस बटोर कर दृढ़ निश्चय के साथ समस्या-समाधान हेतु आगे नहीं बढ़ती, तो आर्थिक क्रांति के पश्चात राजनैतिक क्रांति का आना अनिवार्य है । (कुछ विरोधी सदस्यों द्वारा वाह्-वाह)

मान्यवर, माननीय वाणिज्य सदस्य ने वर्तमान स्थिति से निपटने के लिए तीन सुझाव दिये हैं,— सर्व प्रथम बिना टिकट भिक्षुक यात्रियों को पकड़ने का तुच्छ उपाय, रेल सड़क की प्रतियोगिता सम्बन्धी दूसरा सुझाव, और तीसरा किराये और

भाड़े की प्रस्तावित वृद्धि का है । मान्यवर, माननीय वाणिज्य-सदस्य वास्तविक मुद्दों को समझने में पूरी तरह असफल रहे हैं । बेटिकट यात्रियों और भिखारियों का मामला किसको प्रभावित करता है? रेल-रोड प्रतियोगिता वर्तमान स्थिति को किस तरह प्रभावित करती है? मैं यह नहीं जानता कि उन्होंने इस मामले को किस दृष्टि से देखा है । लेकिन स्थिति बिल्कुल स्पष्ट है और मुझे आशा है कि वह इसे स्वीकार करेंगे । यात्रियों से प्राप्त आय में वृद्धि हुई है और यात्री-यातायात में उन्होंने अपने बजट के अनुमानों से अधिक प्राप्त किया है, लेकिन भाड़े में पर्याप्त कमी आयी है । क्या बेटिकट भिखारी वस्तु यातायात के राजस्व को कम करते हैं या माननीय सदस्य केवल यात्री- यातायात से राजस्व में होने वाली वृद्धि के बारे में चिन्तित हैं? क्या रेल-सड़क प्रतियोगिता केवल यात्री-यातायात को ही प्रभावित नहीं करती है? दूसरों को मूर्ख क्यों बनाया जा रहा है? जहाँ तक यात्री-यातायात का प्रश्न है, इसमें तो वास्तविक वृद्धि ही हुई है । आपकी इस वर्ष की परेशानी यात्री-यातायात की प्राप्ति में कमी की नहीं है, बल्कि पूर्ण रूप से वस्तु यातायात की प्राप्ति में कमी की है, जो इस वर्ष 4 करोड़ है और भविष्य में और भी बढ़ सकती है । मैं माननीय वाणिज्य सदस्य से जानना चाहता हूं कि वह बिना टिकट यात्रा को संज्ञेय अपराध बनाकर वस्तु-यातायात को कैसे प्रोत्साहन दे सकेंगे ? मैं उनसे पूछूँगा कि वे रेल-सड़क प्रतियोगिता को समाप्त करके वस्तु-यातायात को किस तरह प्रोत्साहित कर सकेंगे ? वस्तुतः भिखारियों तक के मामले में इस साल पिछले साल की तुलना में लगभग 2 लाख कम बेटिकट यात्री पकड़े गये हैं । यह अनुपात हजार में एक से अधिक नहीं आता है । ये विस्तार के मामले हैं जिनका मैं उल्लेख करना नहीं चाहता । मैं उनसे केवल इतना कहना चाहता हूं कि इन साधनों से वह उस लक्ष्य को नहीं प्राप्त कर सकते जिसे हम भी प्राप्त करना चाहते हैं । रेल-सड़क प्रतियोगिता के बारे में क्या उन्हें यह बुनियादी कारण समझ में नहीं आता कि रेलवे की दरें अलाभकर और अधिक हैं । मैं उनसे यह सुनने को उत्सुक था कि वह इस प्रतियोगिता से बचना नहीं चाहते बल्कि केवल उन्हीं मार्गों से गाड़ियों को हटाना चाहते हैं, जो उसके समान्तर या रेलवे लाइनों के पास हैं । मान्यवर, मुझे एक वकील की घटना याद आ गई जिसने अपने समृद्ध प्रतिद्वन्द्वी को सालिसिटर बनने की सलाह दी और कहा कि वह अदालती मुकदमों में संक्षेप बनाकर उनको फीस सहित उसे सौंप दें । वह प्रतिद्वन्द्विता समाप्त नहीं करना चाहता था बल्कि अपने समृद्ध प्रतिद्वन्द्वी को सोलीसिटर बनने की सलाह देकर उससे उसका क्षेत्र छुड़वाना चाहता था और उसके सभी मुकदमों को अपने लिए सुरक्षित करवाना चाहता था । मेरे माननीय मित्र रेल-सड़क प्रतियोगिता से भयभीत नहीं हैं बल्कि केवल रेलवे के कार्यक्षेत्र से मोटरगाड़ियों को हटाना चाहते हैं । उसके पश्चात् वे मोटर-गाड़ियों

और यातायात का समायोजन चाहते हैं ताकि मोटर कारें रेलवे को और अधिक यातायात दे सकें । मान्यवर, पिछले वर्ष माननीय-वाणिज्य सदस्य ने हमें बताया था कि----

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – सदस्य के पास अब केवल दो मिनट और हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, मैं आपसे थोड़ा और समय चाहता हूं ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) — हमने इसी तरह की व्यवस्था बनाई थी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं आवश्यकता से अधिक समय नहीं लेना चाहता, लेकिन यदि मुझे बोलने से रोका जाता है.....

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – दूसरे दल के सदस्य भी बोलना चाहते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, मैं अधिक समय नहीं लेना चाहता लेकिन विषय को देखते हुए मुझे आशा थी कि आप मुझे सदन को सम्बोधित करने के लिए अधिक समय देंगे ।

माननीय वाणिज्य सदस्य ने हमें पिछले वर्ष कहा था कि वे रेल—सड़क प्रतियोगिता का स्वागत करते हैं । उनके शब्द थे :

"यह सहज सम्भव है और शायद हमारी आशा के पहले हो जाए कि वैज्ञानिक शोधों के द्वारा वर्तमान मोटर चालन व्यय को बहुत कम किया जा सके । इस प्रतियोगिता के बारे में वर्तमान और भविष्य के परिप्रेक्ष्य में रेलवे का संकुचित विभागीय दृष्टिकोण कुछ भी हो, हमें यह स्वीकार करना होगा कि समाज के व्यापक हित में इसे बना रहना चाहिए क्योंकि केवल इसी तरह की प्रतियोगिता द्वारा जनता को न्यूनतम मूल्य पर अधिकतम दक्षता के साथ सेवा मिल सकेगी ।"

मान्यवर, यह माननीय वाणिज्य सदस्य के पूर्ववर्ती अधिकारी का वक्तव्य है और आज वह स्वयं अधिकांश दुर्भाग्य को इसी रेल-सड़क प्रतियोगिता के मत्थे मढ़ रहे हैं । उनका अगला सुझाव किराये और भाड़े की वृद्धि का है । यह आत्मघाती नीति है और मैं माननीय वाणिज्य सदस्य को चेतावनी देते हुए यह कहना चाहता हूं कि इससे पहले कि तेजी से और पतन हो , इसे रोकने का प्रयत्न करें । उन्हें वस्तुतः

पूरी नीति को परिवर्तित करने का प्रयास करना चाहिए । इन अलाभकारी दरों की वजह से वैसे भी पर्याप्त गड़बड़ी हो चुकी है क्योंकि इन बढ़ी दरों को यातायात सहन नहीं कर सकता । मान्यवर, इस संदर्भ में रेलवे विभाग की पूरी नीति ही अत्यन्त मूर्खतापूर्ण रही है । यह विकृत रही है, मैं तो यहां तक कहता हूं कि यह दुष्टतापूर्ण रही है और मेरे आरोप तर्कों पर आधारित हैं । 1913-14 को आधार वर्ष मानलें, इस वर्ष मूल्य सूचकांक 100 था, किन्तु आज तो वह 86 के नीचे आ गया है । वस्तु–निर्यात सूचकांक भी आयात के सूचकांक से बहुत कम है । हमें महत्वपूर्ण तथ्य को सदैव याद रखना चाहिए । दूसरी ओर 1914 से वेतन बिल 14 करोड़ से बढ़कर 36 करोड़ रुपये का हो गया है । इसी प्रकार भाड़े की दर भी प्रतिमील 4 रुपये प्रति टन से बढ़कर 6 रुपये हो गयी है और यात्री किराया प्रतिमील 50 प्रतिशत से बढ़कर 60 प्रतिशत हो गया है । इसका क्या निष्कर्ष निकल सकता है? एक ओर तो मूल्य स्तर में 60 प्रतिशत से अधिक की गिरावट आयी है, और दूसरी ओर किराए और भाड़े में 60 प्रतिशत से 70 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है । दोनों के बीच किस तरह सन्तुलन स्थापित किया जा सकता है? मेरे पास कई देशों के आंकड़े हैं लेकिन मैं सदन को इन आंकड़ों से थकाना नहीं चाहता । मैं उन्हें केवल वर्ष 1934-35 के लिए लीग आफ नेशन्स की सांख्यिकीय वार्षिकी के पृष्ठ 190 का संदर्भ दूंगा जिसके अनुसार वर्ष 1913 आधार वर्ष और किराए तथा भाड़े के 100 सूचकांक पर, संसार के सभी देशों के सूचकांक में गिरावट आयी है और यह औसत सूचकांक 70 के बीच है । आंकड़े आपके सामने हैं और माननीय वाणिज्य सदस्य इनसे अपनी सन्तुष्टि कर सकते हैं । रेलवे के मामले में माननीय वाणिज्य सदस्य ने कुछ देशों का सन्दर्भ दिया है । मैंने इनमें से कुछ देशों की रिपोर्ट प्राप्त की है; इनसे स्पष्ट हैं कि वहां किराये और भाड़े में पर्याप्त गिरावट आई है । इनसे यह भी स्पष्ट है कि कार्य संचालन व्यय कम हुआ है और वेतनमानों में भी 20 से 25 प्रतिशत की कटौती की गई है । यह भी स्पष्ट है कि हमारे देश में भी जब दरों में कमी की गयी है, उसकी तुरन्त प्रतिक्रिया हुई है और यातायात की मात्रा में स्पष्ट तौर पर वृद्धि हुई है । उदाहरण के लिए मैं उत्तर–पश्चिम रेलवे द्वारा 1934-35 में यात्री–किराए में की गई कमी का सन्दर्भ पेश कर रहा हूँ । इन तथ्यों से यह आधारभूत नियम सही सिद्ध होता है कि यातायात की मात्रा दरों के अनुपात के अनुकूल घटती बढ़ती रहती है । जितनी अधिक दर होगी, उतना ही कम यातायात होगा; जितनी कम दर होगी, उतना ही अधिक यातायात होगा । दूसरी ओर वेतन का समायोजन मूल्य–स्तर से होना चाहिए (हर्षध्वनि) । इसलिए मैं माननीय वाणिज्य सदस्य को पूरी शक्ति के साथ यह सुझाव देता हूं कि वे एक वैज्ञानिक रास्ता अपनाएं; उन्हें समस्या का समाधान यथार्थवादी दृष्टिकोण से करना चाहिए । उन्हें अपने को उस

जाल से बचाना चाहिए जो अन्यथा उन्हें अपनी जकड़ में फांस सकता है । उन्हें उन न्यस्त स्वार्थों से ऊपर उठना चाहिए जो उन्हें प्रकाश से दूर और सदैव अंधेरे में रखने का पूरा प्रयास करेंगे । नवीन दृष्टिकोण विकसित करना उनकी अपनी जिम्मेदारी है लेकिन मैं उनसे यह कहता हू कि रेलवे प्रशासन को सुधारने का एक ही रास्ता है और वह यह कि सर्वप्रथम 1913-14 में प्रचलित आधारभूत दरों की ओर ध्यान दीजिए और तब वर्तमान सूचकांक की पृष्ठभूमि में किराये और भाड़े की दरों में 25 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक की कमी कीजिए । महान संकट से मुक्ति पाने का यही एक रास्ता है । मैं माननीय सदस्य को सूचित करना चाहता हू कि अभी हाल में कनाडा सरकार ने किराए और भाड़े में 20 प्रतिशत की कमी की है । इसके बाद मैं इस बात पर बल दूंगा कि उचित किराए-भाड़े से प्राप्त होने वाली आय का अनुमान करने के बाद आपको उन सभी उच्च वेतनभोगी अधिकारियों के वेतन का पुनर्निर्धारण करना चाहिए जो निश्चित न्यूनतम से अधिक पा रहे हैं (हर्षध्वनि) । और इन सारे वेतन और देयों में 10 से 25 और 30 प्रतिशत की निर्ममतापूर्वक कमी की जानी चाहिए । मैं कोई विचित्र या असाधारण प्रस्ताव नहीं रख रहा हूं । ऐसी कार्रवाई लगभग सभी देशों के रेलवे विभागों द्वारा एक साथ की गयी है । मेरे पास विविध देशों की रेलवे रिपोर्टें हैं जो मेरी बात की पुष्टि करती हैं. माननीय वाणिज्य सदस्य ने वर्तमान संकट के लिए आर्थिक राष्ट्रवाद और आर्थिक मंदी को जिम्मेदार ठहराया है । लेकिन आर्थिक मंदी का क्या अर्थ होता है? क्या वे इसके मूल कारणों तक पहुंच पाये हैं? इसका अर्थ केवल इतना होता है कि कच्चे माल और प्राथमिक सामग्री के मूल्य में भयावह, अप्रत्याशित और अचानक गिरावट आती है । और आर्थिक राष्ट्रवाद का इसके अलावा और क्या अर्थ होता है कि राज्य आर्थिक पुनरुद्धार और पुनर्निर्माण की नीति का समर्थन करे? मेरे माननीय मित्र इन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु क्या कर रहे हैं? उनके द्वारा प्रस्तावित समाधान प्रश्न की परिधि को भी स्पर्श नहीं करते । उन्होंने उन आवश्यक कारणों पर गहराई से विचार नहीं किया, जिन को वे वर्तमान दुर्भाग्य, हानि और घाटे का कारण मानते हैं । उन्हें यह याद रखना चाहिए कि भारत जैसे असीमित संसाधनों, प्रचुर कच्चे माल और विस्तृत बाजार वाले देश के लिए आर्थिक राष्ट्रवाद लाभप्रद ही हो सकता है क्योंकि इस समय मुद्रा सस्ती है, ब्याज की दरें कम हैं और वेतन कम, और यही वह अवसर है जब कि विश्व की आर्थिक मंदी का लाभ उठाकर हम अपने देश के व्यवसाय और उद्योग को मजबूत बना सकते हैं ताकि रेलवे आज के मुकाबले में अधिक महत्वपूर्ण और लाभप्रद बन सके । आखिर आर्थिक राष्ट्रवाद का क्या अर्थ होता है? इसका अर्थ है आर्थिक नियोजन की सुनियोजित नीति । माननीय वाणिज्य सदस्य को याद रखना चाहिए कि जापान ने इस आर्थिक मन्दी का लाभ उठाकर

दुनिया के सभी देशों की बाजारों पर कब्जा कर लिया है । उन्हें यह भी याद रखना चाहिए कि बेल्जियम, स्वीडन, नार्वे और हालैण्ड आर्थिक मंदी के बावजूद अभी भी पहले की तरह ही समृद्ध हैं । मेरे माननीय मित्र को वर्तमान कठमुल्लापन और लौह आवरण का परित्याग करना होगा । उन्हें न तो इसमें फंसना और न व्यक्तित्व को लुप्त ही कर देना चाहिए । उन्हें इस अंधेरे भंवर से अपने को ऊपर रखते हुए अपनी नाव को साहस और दृढ़ता के साथ खेना चाहिए ताकि रेलवे देश की अर्थ-व्यवस्था में अपना उचित स्थान प्राप्त कर सके । मुझे आशा है कि वह दृढ़ और साहसिक प्रयास कर सकेंगे और देश तथा रेलवे को उस विनाश से बचा सकेंगे, जो लगभग तब निश्चित है जब वह बिना अपने विवेक और अपनी बुद्धि का प्रयोग किए हुए अपने को दूसरों से संचालित होने देंगे ।'मान्यवर, मैं उनसे यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाने, एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने और उन सिद्धांतों को स्वीकार करने का अनुरोध करता हूं जिनकी मैंने व्याख्या की है ताकि रेलवे न केवल अपने को चलाने में सक्षम हो सके बल्कि व्यवसाय और उद्योग को भी विकसित कर सके, जिस पर देश की आर्थिक भलाई निर्भर है । (तालियां)

●

वित्त समिति की उपेक्षा

मान्यवर, मैं बजट पर कुछ टिप्पणियां करूंगा जो मेरे विचार से अनुकूल हैं। मैं स्वीकार करता हूं कि जहां तक बजट के मुख्य मुद्दों या नीतिगत व्यापक प्रश्नों की बात है, मैं उन्हें उन 20 मिनटों में नहीं उठाना चाहता, जोकि माननीय अध्यक्ष ने प्रत्येक वक्ता के लिए सख्ती से निर्धारित किये हैं। मान्यवर, माननीय वित्त सदस्य ने इस वर्ष एक उल्लेखनीय नवीन ढंग अपनाया है। उन्होंने बजट के व्याख्यात्मक भाग को क्रियात्मक भाग से अलग कर दिया है और फिलहाल प्रारम्भ में उन्होंने वित्तीय स्थिति के निरीक्षण वाले भाग को वितरित किया है। एक सीमा तक यह उनके अधीनस्थों के के लिए राहत की बात होगी क्योंकि इस तरह उनके ऊपर सन्देह के कम अवसर होंगे, लेकिन मुझे यह नहीं मालूम है कि भारत सरकार इन मामलों में किस सीमा तक सावधानी बरतेगी। अविश्वास पतन का लक्षण होता है। औरंगजेब के दिनों में भी यही हुआ था। उसे अपने पिता अपने पुत्र और अपने भाइयों पर सन्देह था। उसे अपनी छाया पर भी सन्देह था—

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – उसी तरह, जिस तरह आप हम पर सन्देह करते हैं?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – हम सरकार नहीं हैं। हम उन पर अविश्वास करते हैं जो हमारे विरोधी हैं और उन देशवासियों का विरोध करते हैं जो इस देश का शोषण करने वाले विदेशी तंत्र के अविभाज्य अंग हैं। यदि सत्ताधारी वर्ग अपने एजेण्टों पर विश्वास करना छोड़ देते हैं जिनकी सहायता से ही वे काम कर सकते हैं, तो यह उस नैतिक पतन और बिगड़ती स्थिति का संकेत है, और इसके फलस्वरूप वह संस्था ही छिन्न-भिन्न हो जायेगी जिसके वे प्रतिनिधि हैं। इसी तरह औरंगजेब के बाद मुगल साम्राज्य का अन्त हुआ था। इसलिए मुझे आशा है कि ऐसा संदेह इस देश में इस शासनप्रणाली की पूर्व घटना सिद्ध होगी। मान्यवर, मुझे आशा है कि माननीय वाणिज्य–सदस्य माननीय वित्त सदस्य से कुछ सबक सीखेंगे। माननीय वित्त सदस्य ने सच्चे अर्थ में काम की बातें कहीं हैं और अपने अधीनस्थों की बेकार प्रशंसा में समय नष्ट नहीं किया है। मुझे आशा है कि वे अपने भाषण के अन्त में अपने और अपने पूर्ववर्ती अधिकारियों की ओर से प्रतिवर्ष सर गुथरी रसेल और रेलवे

लेजिस्लेटिव असेम्बली में पंतजी द्वारा 4 मार्च, 1936 को वर्ष के सामान्य बजट पर सामान्य चर्चा के दौरान दिया गया भाषण।

विभाग के अन्य अधीनस्थ अधिकारियों के प्रतिकृतज्ञता प्रदर्शित करने की आवश्यकता नहीं समझेंगे । मुझे प्रसन्नता है कि माननीय वित्त सदस्य ने अपने भाषण से अपने अधीनस्थों की पारम्परिक प्रशंसा वाला भाग हटा दिया है, जो बजट–भाषण में होना भी नहीं चाहिए था । एक समय था जब सर गाई फ्लीटवुड विल्सन, सर मैलकम हैली और शायद एडवर्ड बेकर भी अपने भाषण के अन्त में इसी प्रकार का एक पैराग्राफ या वाक्यांश डाल देते थे । लेकिन मुझे प्रसन्नता है कि अब यह समाप्त हो गया है और इस अर्थहीन औपचारिकता को समाप्त कर दिया गया है । इसके लिए मैं माननीय वित्त सदस्य को बधाई देता हूं । उन्होंने दूसरे तरह की कार्यप्रणाली अपनायी है और उन्होंने सदन में अपने अधीनस्थों को चेतावनी दी है और यह कार्य करने का श्रेष्ठतर तरीका है क्योंकि मैं मानता हूँ कि उच्चस्थ अधिकारियों द्वारा सरकारी कर्मचारियों पर सभी सम्भव नियंत्रण लागू किया जाना चाहिए ।

मान्यवर, माननीय वित्त सदस्य ने भाषण शुरू करते ही हमें कैसाण्ड्रा और उसकी तरह के भविष्यवक्ताओं की याद दिला दी, और थोड़ी देर तक हमें तो यह लगा कि हम कैसाण्ड्रा के सामने खड़े हैं । जिस तरह उन्होंने भाषण शुरू किया उसी से उन्मत्त मद्यपी की खर्चनशीनी का प्रदर्शन हो गया है । सदन में भी उन्होंने इसी का प्रमाण दिया है । स्वयं गलती करना, गलत गणना करना, और फिर अपनी त्रुटियों के लिए हमें प्रताड़ित करना— यह ऐसी धृष्टता है जिसे केवल माननीय वित्त सदस्य ही कर सकते हैं, और सदन को उनकी बेहद खर्चनशीनी का पता तब लगा जब वित्त सदस्य ने अपना वक्तव्य दिया ।

मान्यवर, पिछले वर्ष उन्होंने मेरी बावत जो कहा था मैं उसका हवाला देना चाहता हूं । इसके लिए मुझ पर अहंकारी होने का लांछन लगाया जा सकता है जो क्षम्य है । मैं उनके शब्दों को उद्धृत कर रहा हूं : "उन्होंने कहा"– 'उन्होंने' का तात्पर्य मुझसे था– "कि हमने राजस्व आय का अनुमान इस उद्देश्य से कम किया है ताकि हम करदाताओं को उनके उचित अधिकार से वंचित कर सकें ।"

"और इस उद्देश्य के लिए"
इसी तरह उन्होने आगे कहा । फिर उन्होंने कहा :

"मुझे पक्का विश्वास है कि इस सदन में प्रस्तुत किये गये अनुमान उचित और

सत्य हैं । पंडित गोविन्द बल्लभ पंत ने भारत में वर्तमान प्रोत्साहनपूर्ण कारकों की चर्चा की है । यह बिल्कुल सत्य है कि प्रोत्साहनपूर्ण कारक वर्तमान हैं । मोटे तौर पर पूरे विश्व में इस प्रकार के कारक मौजूद हैं ।" आदि आदि ।

तदुपरान्त उन्होंने मुझसे अपनी असहमति के कारणों का विवरण दिया । लेकिन हमारी राय को तिरस्कृत करने, हमारा विरोध करने के लिए हमें जिम्मेदार ठहराने और हमारे द्वारा स्पष्ट शब्दों में चेतावनी दिये जाने पर भी भले ही उन्होंने जानबूझकर और सोच समझकर आपको न छिपाया हो, फिर भी राजस्व के सम्बन्ध में गलत गणना का दोषी होने पर भी हमें प्रताड़ित करने का उनका तरीका बड़ा विचित्र है। (हर्षध्वनि) मान्यवर, यदि माननीय वित्त सदस्य ने साफ कर दिया होता कि विरले अवसरों पर वित्त सदस्य का विशेषाधिकार है कि वह कुछ पत्ते अपने पास छिपा कर रखें, तो मुझे उनसे इस तरह की कोई शिकायत नहीं होती, और मैं उन्हें यह बता दूं कि इस तरह की स्थिति में उनके पूर्ववर्ती अधिकारी सर गाई फ्लीटवुड विल्सन ने ऐसा ही किया था । यदि माननीय वित्त सदस्य ने सदन में इस तरह का स्पष्ट वक्तव्य दिया होता — जब कि उनकी स्पष्टवादिता का कई बार प्रमाण मिल चुका है— तो आलोचना की दिशा कुछ दूसरी ही होती । उस स्थिति में कलह का विषय यह होता कि वह जानबूझकर गलत कार्य करने के दोषी हैं । लेकिन इसमें न तो कोई औचित्य है और नहीं साहसिकता कि एक तो गलत कार्य किया जाए और फिर दोषी उन्हें ठहराया जाय जिन्होंने कैसाण्ड्रा की तरह की भविष्यवाणियों के लिए उन्हें स्पष्ट शब्दों में चेतावनी दी थी (हर्षध्वनि) । मान्यवर, ऐसे और भी कारण थे, जिनसे माननीय वित्त सदस्य संकेत प्राप्त कर सकते थे । मैं समझता हूं कि अन्यों की भांति उन्हें भी ज्ञात है कि पहली अप्रैल, 1934 से 31 जनवरी, 1935 के बीच आयात की मात्रा अथवा उसका मूल्य लगभग 109.5 करोड़ रुपया था जब कि पिछले वर्ष 1933-34 में इसी अवधि में यह 95 करोड़ रु० था और इन दश महीनों में पिछले वर्ष के दस महीनों की तुलना में लगभग तीन करोड़ रु० अधिक आयात शुल्क के रूप में वसूला गया । ये आंकड़े मेरे पास हैं । माननीय वित्त सदस्य जनवरी, 1936 के 'ट्रेड रिव्यू' के पृष्ठ संख्या दो को देखें । इस तरह हमें इस समय ज्ञात था कि आयात में 17 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई है । वे यह भी जानते थे कि पिछले वर्ष की तुलना में इस वर्ष आयात शुल्क की राशि 3 करोड़ अधिक थी फिर भी उन्होंने अनुमानों को इस प्रकार तैयार किया कि वृद्धि 4 करोड़ से भी अधिक दिखायी गयी है (हर्षध्वनि) । अर्थात् मान्यवर, यह ऐसी स्थिति तब है जब दोनों वर्षों को सम्मिलित कर लिया जाय और अकेले उसी वर्ष को लिया जाय तो यह आंकड़ा लगभग 2 करोड़ तक ही सीमित रहता है । मान्यवर, हम 1934-35 और 1935-36

के दो वर्षों की समीक्षा कर रहे हैं । उनके पास ऐसे आंकड़े थे, जिनकी सत्यता पर सन्देह नहीं किया जा सकता था, फिर भी यह आश्चर्य की बात है कि उन्होंने वर्ष 1934-35 के मामले में भी ऐसी भयंकर भूल की जो पूरा हो चुका था और जो बजट प्रस्तुत किये जाने के कुछ सप्ताह बाद समाप्त होने वाला था । मान्यवर, यदि माननीय वित्त सदस्य ने यह सब अहसास नहीं किया है तो यह पशोपेश में डालने वाली बात है । मैं उन्हें धूर्त नहीं कह सकता और मैं उन्हें मूर्ख कहने से भी हिचकूँगा क्योंकि वह शायद दोनों ही नहीं हैं । वह इस प्रकार के व्यक्ति हैं जिनके बारे में श्री गोखले ने एक बार कहा था कि लार्डकर्जन एक निश्चित इरादे से भारत आये थे, उनकी यह निश्चित नीति थी, उनका यह निश्चित ध्येय था । मान्यवर, मैं माननीय वित्त सदस्य के बारे में भी यही कह सकता हूं । इसके अलावा वह न तो मूर्ख हैं और न ही धूर्त । वह बड़े चलते पुर्जे व्यक्ति हैं, और वह अपनी बात अच्छी तरह समझते हैं, लेकिन वह दूसरों के उद्देश्यों और इरादों के बारे में कुछ नहीं जानते और दूसरों की बाबत उनकी राय प्रायः खराब होती है । लेकिन मान्यवर, इस बात को यहीं खत्म करते हुए मैं माननीय वित्त सदस्य का ध्यान हमारे सम्मुख बजट के दो अन्य पक्षों की ओर आकर्षित करूंगा । मेरे विचार से यहां सबसे अच्छी तरह से उन्हें भी यह मालूम होगा कि वित्त विभाग के मुख्य अधिकारी होने के बावजूद आज के खर्चों पर उनका वैसा नियंत्रण नहीं है जैसा कि होना चाहिए था । शायद उनको मुझसे बेहतर जानकारी होगी कि आवंटित राशि वर्ष प्रतिवर्ष पूरी इस्तेमाल नहीं हो पाती है । वह यह भी जानते हैं कि हर वर्ष कई अनुपूरक मांगे सदन के सम्मुख प्रस्तुत होती हैं और स्वीकृत होती हैं, लेकिन उनकी राशि का पूरा इस्तेमाल नहीं हो पाता है । मैं उनसे पूछूँगा कि क्या इन परिस्थितियों में व्यय को नियंत्रित करने वाले पूरे तंत्र की पुनर्व्यवस्था नहीं की जानी चाहिए? (हर्षध्वनि) मैं सोचता हूं कि क्या पूर्व लेखा–निरीक्षण–व्यवस्था आरम्भ नहीं की जा सकती? मैं यह समझता हूं कि भारत जैसे विशाल देश में ऐसी व्यवस्था लागू करने में कठिनाई अवश्य होगी, लेकिन फिर भी मैं सोचता हूं कि कतिपय विभागों के मामले में यह सम्भव है और चाहे जो हो कतिपय ऐसी व्यवस्थाएं बनाई जानी चाहिए, ताकि व्यय को नियंत्रित और विनियमित किया जा सके ।

मेरे विचार से माननीय वित्त सदस्य को इस तथ्य की पूरी जानकारी है कि 31 मार्च को बहुत गैर–जिम्मेदारी से, चाहे आवश्यकता हो या न हो, किसी न किसी बहाने से भारी मात्रा में पैसा निकाला जाता है क्योंकि वित्तीय वर्ष समाप्त होने वाला होता है अनुदान व्ययगत (लैप्स) हो सकता है । मैं सोचता हूं कि क्या वह

सार्वजनिक निर्माण विभाग के आरक्षित कोष की भांति कोई व्यवस्था नहीं कर सकते ताकि वर्ष समाप्ति के अवसर पर धन का दुरुपयोग न हो सके वरन् उसकी अपेक्षा बची धनराशि कुछ समय के लिए उस कोष में स्थानान्तरित की जा सके? मान्यवर, ये छोटे मुद्दे हैं और मैं उनकी विस्तृत चर्चा नहीं करना चाहता लेकिन मानता हूं कि मितव्ययिता व्यवस्था की आत्मा होती है और शासन को व्यय के विषय में सजग रहना चाहिए । मान्यवर, चालू वर्ष के बजट में यह सैनिक खर्चों के लिए प्रस्तावित राशि वित्तीय वर्ष 1934-35 में हुए शुद्ध व्यय की अपेक्षा ढाई करोड़ अधिक है । मैं समझता हूँ कि यह सुनकर माननीय वित्त सदस्य को बड़ा आघात पहुंचा होगा । यदि वह खातों का परीक्षण करेंगे तो वे मेरी बातों से सहमत होंगे, इसलिए मैं इस पर और अधिक समय नहीं लूँगा । इस सम्बन्ध में मैंने जो प्रणाली अपनायी है, उसे मैं बता रहा हूं । जहां भी प्रस्तावित सैन्य खर्चों से सैन्य आरक्षित कोष में धनराशि का स्थानान्तरण हुआ है, मैंने उसे आवंटित राशि से कम कर दिया है, जहां आरक्षित कोष से निकाली हुई है, मैंने उसे वर्ष की आवंटित राशि से जोड़ दिया है । निष्कर्ष यह है कि बजट–वर्ष में वर्ष 1934-35 में सैनिक खातों के अन्तर्गत हुए वास्तविक खर्च की तुलना में ढाई करोड़ अधिक खर्च होगा :

1936-37 :	45,45.00,000	1934-35 :	44,34,26,000
	+82,40,000		–68,93,924
	46,27,40,000		43,65,32,076

अंतर : 46,27,40,000 — 43,65,32,076 = 2,62,07,924

मैं फिर कहता हूं कि यह बहुत चिन्ताजनक स्थिति है और मैं माननीय वित्त सदस्य से चाहता हूँ कि क्या यह 'सक्षम लेखा परीक्षा' जैसी उस व्यवस्था को लागू करने का सही समय नहीं है, जिसकी जोरदार संस्तुति अध्यक्ष लोथर और हेनरी गिब्सन ने की थी और जिसके अन्तर्गत कतिपय अधिकारियों की लेखा परीक्षा करने हेतु नियुक्ति होनी है जो औपचारिक रूप से सरकारी कागज पत्रों की जांच मात्र ही नहीं करेंगे, बल्कि समय-समय पर वास्तविक कार्यप्रणाली की जांच भी करेंगे, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि कर–दाता को अपने धन का पूरा मूल्य मिल रहा है ।

मान्यवर, यहां अतिरिक्त राशि (सरप्लस) की बहुत चर्चा हुई है । यह अतिरिक्त राशि आखिर है क्या? अतिरिक्त राशि सदैव एक अप्रत्याशित राशि होती

है । अतिरिक्त राशि गलत हिसाब–किताब लगाने का परिणाम है । यह करदाता पर असावधानी-अज्ञानतावश आरोपित भार होता है । यदि वित्त विभाग या वित्तीय मामलों के इंचार्जों ने स्थिति का सही अनुमान लगाया होता तो ऐसा भार कर-दाताओं पर न पड़ता । इन परिस्थितियों में अतिरिक्त राशि वह अतिरिक्त कर है जो मूर्खतापूर्ण ढंग से जनता पर लगाया गया है । अन्य परिस्थितियों के अलावा इस मन्दी के अवसर पर तो यह और भी अधिक दुखदायी है । ऐसे समय में, जब दामों में लगभग 50 प्रतिशत की कमी आयी है, यह एक असह्य भार है । इन स्थितियों में कोई भी वित्त सदस्य अपने को लाभ दिखाने वाले बजट के लिए बधाई नहीं दे सकता । वस्तुतः दुर्भाग्यवश हमारे देश में एक विचित्र चक्र चल रहा है । हमारे यहां वित्त सदस्य के सौभाग्य या दुर्भाग्य के अनुसार लाभ (सरप्लस) या घाटा होता रहा है । सर मैलकाम हैली को घाटे का सामना करना पड़ा, सर बेसिल ब्लैकेट के समय पे लाभ दिखाया गया, फिर सर जार्ज शूस्टर को घाटा देखना पड़ा और अब फिर सरजेम्स ग्रिग के समय में लाभ का बजट प्रस्तुत है । मैं माननीय वित्त सदस्य को इससे बचने का अनुरोध करता हूं और मैं उन्हें बताना चाहता हूं कि कम से कम एक मामले में वह संविधान और अपने पूर्ववर्ती सदस्य के आश्वासनों के विरुद्ध गये हैं । हम सभी जानते हैं कि माननीय वित्त सदस्य दूसरों की राय के बारे में उदारता नहीं बरतते । अपने यहां आने के कुछ सप्ताह बाद अगस्त, 1934 में उन्होंने अपनी आदत के अनुरूप अपने पूर्ववर्ती के बारे में अच्छे विचार व्यक्त किए । मैं सोचता हूं कि वह अपनी कही बात को स्वयं याद कर सकते हैं । मैं यहां नियुक्त किये गये अन्य विशेषज्ञों और अन्य वित्त सदस्यों की नीतियों के सम्बन्ध में उनके कैसे विचार रहे हैं, इस बारे में और अधिक नहीं कहूंगा । यहां सर मैल्काम हैली ने शासन की ओर से एक निश्चित आश्वासन दिया था और वह सदन में एक प्रस्ताव के द्वारा स्वीकृत किया गया था कि बिना वित्त समिति की अनुमति के एक मुश्त अनुदान से कोई भी आवंटन नहीं किया जायगा । यह बहुत स्पष्ट असंदिग्ध और साफ शब्दों में कहा गया था । उस अवसर पर अपने भाषण के दौरान सर मैलकाम हैली ने कहा था :

"मान्यवर, सच्चाई यह है कि, यदि सम्भव हो, तो हम सदन के उन सदस्यों की बुद्धि का, जिन्हें वित्त या प्रशासन का ज्ञान है, अपने लाभ के लिए प्रयोग करना चाहते हैं ।"

मुझे नहीं मालूम कि माननीय वित्त–सदस्य इस सभा के सदस्यों या सदस्य को ऐसा बुद्धिमान मानते हैं या नहीं ।

इसके पश्चात सर मेलकाम हेली का कहना था :

"एकमुश्त अनुदान के आवंटन से सम्बन्धित सभी मामलों को इसे सौंपने में मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी और वस्तुतः हम यह पहले ही कर चुके हैं और इसके आगे भी, इसकी परिभाषा को विस्तृत करके इसमें छटनी और व्यय में मितव्ययिता के मामलों को सम्मिलित करने में भी मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी ।"

वस्तुतः इस एसेम्बली द्वारा एक प्रस्ताव पारित हुआ था, जिसमें कहा गया था :

"समिति के निम्न कार्य होंगे– (क) सभी विभागों के उन सभी नये खर्चों के प्रस्तावों की समीक्षा करना, जो मतदान से स्वीकृत होते हैं (ख) एकमुश्त अनुदानों से आवंटनों की स्वीकृति देना (ग) छंटनी और व्यय में किफायत हेतु सुझाव देना और (घ) सामान्य तौर पर भारत सरकार के वित्त विभाग द्वारा सन्दर्भित मामलों पर सलाह देकर विभाग की सहायता करना ।"

मान्यवर, माननीय वित्त–सदस्य या सरकार को कोई अधिकार प्राप्त नहीं है कि वित्त समिति की स्वीकृति के बिना इस ग्रामीण विकास कोष से अनुदान प्रदान करें (हर्षध्वनि) । जिस सीमा तक उन्होंने यह किया है, उस सीमा तक वह उस नीति के विरुद्ध गये हैं जिसे शासन ने मंजूर कर लिया था और जिस पर सदन ने अपनी स्वीकृति दे दी थी और जो इस सभा के अभिलेख का अंग हो गया है । उनका अनुदान देना यदि गैर कानूनी नहीं है तो असंवैधानिक अवश्य है । यद्यपि मैं समझता हूँ कि वह बड़े आतुर हैं कि वित्त समिति भंग कर दी जाय, तथापि मैं आशा करता हूँ कि भविष्य में वह समिति के प्रति सहानुभूति न सही, किन्तु अधिक सम्मान प्रदर्शित करेंगे क्योंकि जब तक मैं इस सदन का सदस्य हूँ, मैं उनसे किसी प्रकार की सुविधा प्राप्त नहीं करना चाहता किन्तु मैं उनके अधिकारों तथा विशेषाधिकारों के कायम रखने पर बल देता रहूंगा और उनकी रक्षा करता रहूंगा । माननीय वित्त–सदस्य ने वित्त समिति के निर्णयों के प्रति कोई सम्मान प्रदर्शित नहीं किया है । मैं इस सदन को यह सूचित करना चाहूंगा कि दो अवसरों पर दो अनुदानों के मामलों के अलावा, जिसे समिति का बहुमत स्वीकृत नहीं कर पाया था, शेष सभी सरकारी प्रस्तावों को समिति ने स्वीकृत किया है— यद्यपि बहुत मौकों पर मुझे इसका खेद रहा है । लेकिन इन दो मामलों में भी माननीय वित्त–सदस्य ने हम से तुरन्त वहीं उसी समय कहा था कि स्वीकृत न किये जाने के बावजूद वह उन प्रस्तावों को सदन की

स्वीकृति के लिये प्रस्तुत करेंगे । यह मेरे लिए अत्यन्त खेद की बात है कि इस असेम्बली की किसी समिति का इस प्रकार तिरस्कार किया जाए— मैं व्यक्तिगत रूप से अपनी बावत नहीं कह रहा हूँ,मैं उस समिति में एक विशेष दल के प्रतिनिधियों के बारे में नहीं कह रहा हूँ; मैं इस सदन की गरिमा के बारे में कह रहा हूं । मैं माननीय सदस्यों से पूछना चाहता हूं कि जब उनके द्वारा एक समिति का गठन हुआ था और इसके लिए इस सदन के प्रत्येक सदस्य के मतदान से चुनाव हुआ था, साथ ही एकलसंक्रमणीय मतदान की भी व्यवस्था की गयी थी, तब उस समिति के निर्णयों की, जिसने वैसे भी कदाचित् बहुत कम अवसरों पर शासन के प्रस्तावों को अस्वीकृत किया हो, अवहेलना करना और उन्हें ठुकरा देना कहां तक उचित हैं? माननीय वित्त सदस्य हमसे कहते हैं कि वह केवल परामर्शदात्री समिति है । ठीक है, लेकिन संसार के सभी मंत्रिमण्डल सलाहकार संस्थाएं ही हैं । हाउस आफ कामन्स के सभी मंत्री सम्राट के सलाहकार मात्र होते हैं और यहां के सत्ता पक्ष के सभी माननीय सदस्यगण की स्थिति गवर्नर–जनरल के संवैधानिक सलाहकार होने मात्र की है । यदि मंत्रिमण्डलों, मंत्रियों जैसी सलाहकार संस्थाओं के निर्णयों को पूरी दुनिया में उलट–पुलट दिया जाये, तो संवैधानिक शासन की सारी शक्ति, महत्ता और अर्थवत्ता समाप्त हो जाएगी । जहां तक मेरा मामला है, मैंने बजट पर केवल प्रशासकीय भावना से विचार व्यक्त किया है । लेकिन मुझे लगता है कि पूरी व्यवस्था इतनी सड़-गल गई है; कि पूरी चीज ही असहनीय रूप से इतनी कष्टकारी हो गयी है, कि जब तक उसको तोड़–मरोड़ कर नष्ट नहीं कर दिया जाएगा, तब तक इस देश के सुभविष्य की कोई आशा नहीं की जा सकती ।

●

भारतीय परिसीमन समिति पर प्रस्ताव

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – प्रस्ताव बहुत किया जाता है : "कि भारतीय परिसीमन समिति की रिपोर्ट के संघीय विधायिका से सम्बन्धित भागों पर विचार किया जाए ।"

माननीय सदस्य,पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त एक संशोधन प्रस्तुत करना चाहते हैं । पीठ उनसे पूछती है कि उन्होंने नियम के अन्तर्गत आवश्यक सूचना क्यों नहीं दी है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, दरअसल मैंने सूचना प्रेषित की थी, लेकिन कल अवकाश था ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – आपने उसे पहले क्यों नहीं भेजा?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैंने ऐसे किसी प्रस्ताव की सूचना देने के पहले रिपोर्ट का मनन करने का प्रयास किया था । यदि किसी माननीय सदस्य को आपत्ति न हो तो, मान्यवर, मेरा आपसे अनुरोध है कि कार्य–संचालन के नियमों को निलम्बित कर दें ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यदि किसी सदस्य को आपत्ति न हो .....

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार — जहां तक हमारा मामला है, हमें कोई आपत्ति नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत — मान्यवर, मैं प्रस्ताव रखता हूं : "कि 'विचार किया जाए' के स्थान पर निम्न जोड़ा जाए :

'एक समिति को सन्दर्भित किया जाए जिसमें माननीय सर नृपेन्द्र सरकार, माननीय सर मोहम्मद जफरुल्लाह खान, श्री भूला भाई देसाई, श्री एस० सत्यमूर्ति, श्री एम० आसफ अली, सर कावसजी जहांगीर, श्री एम०ए० जिन्ना, श्री अब्दुल मतीन चौधरी, श्री एम०एस० अणे, सरदार मंगल सिंह, सर लेस्ली हुडसन, श्री मथुरादास विस्सनजी, राव बहादुर एम०सी० राजा, और श्री एन०एम० जोशी सम्मिलित हों ।'

सदन के नेता माननीय श्री नृपेन्द्र सरकार ने एक संशोधन प्रस्ताव रखा था कि सदन को भारतीय परिसीमन समिति की रिपोर्ट के उन हिस्सों पर विचार करना चाहिए जो संघीय विधायिका से सम्बन्धित हैं । 6 मार्च, 1936 को पंत जी संशोधन प्रस्ताव पर हुई चर्चा के दौरान बोल रहे थे ।

और मान्यवर, यदि सदन मुझे अनुमति दे, तो मैं कुछ नाम और जोड़ना चाहूंगा; श्री अखिल चन्द्र दत्त, पंडित नीलकण्ठ दास और प्रस्तावक के नाम बढ़ाना चाहूंगा; इस सुझाव के साथ कि रिपोर्ट 18 मार्च, 1936 के पूर्व प्रस्तुत की जाए। मान्यवर, मैं जिस कारण से इसे सदन में चर्चित होने के स्थान पर समिति को सन्दर्भित करना आवश्यक समझता हूं, वह मेरे विचार से इस सदन के सभी माननीय सदस्यों को उचित प्रतीत होगा। रिपोर्ट का क्षेत्र बहुत व्यापक है।

डा० पी० एन० बनर्जी – बहुत अधिक व्यापक है।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : इससे सम्बन्धित प्रसंग विविध प्रकार के और जटिल हैं; सदन में इसकी विषय–वस्तु पर बहस करने के लिए जो सीमित समय आवंटित किया जाएगा, उसमें इस पर उचित तरीके से गौर कर सकना कठिन होगा और न्याय नहीं हो सकेगा, और इसके अतिरिक्त रिपोर्ट से पैदा होने वाले प्रश्नों पर विविध प्रकार और दृष्टिकोणों से विचार करना होगा। इन परिस्थितियों में सर्वोत्तम ढंग यह है कि रिपोर्ट को एक समिति के सुपुर्द कर दिया जाए। इसमें बहुत बिन्दुओं पर विचार किया जाना है और यदि कोई इनका वर्णन मात्र ही करे तो इसमें कई मिनट व्यय हो जायेंगे। मैं इसके केवल कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों की चर्चा करूंगा। उदाहरण के लिए कुछ मुद्दे हैं — बहु सदस्यीय चुनाव क्षेत्र हो या एक सदस्यीय, अनुसूचित जाति के प्रतिनिधियों के लिए वितरणात्मक, संयोगात्मक और एकल–संक्रमणीय मत प्रणाली में से कौन श्रेष्ठ होगी; रिपोर्ट में ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों से चुने जाना वाले निर्धारित प्रतिनिधियों का अनुपात उचित है या अनुचित; जमींदारों, व्यवसायी, श्रमिक इत्यादि के विशेष चुनाव क्षेत्रों के मतदाताओं और उनके लिए प्रस्तावित अर्हताओं में कोई फेर-बदल होना चाहिए या उसे जैसे का तैसा स्वीकार कर लिया जाए; रिपोर्ट में प्रस्तावित मतदान प्रणाली उचित है या नहीं; रिपोर्ट में प्रस्तावित पद्धति से गुप्त मतदान प्रणाली पर अमल हो सकेगा अथवा नहीं; इत्यादि, इत्यादि। इसी तरह के और बहुत से मुद्दे हैं। रिपोर्ट की गुणवत्ता पर विस्तृत बहस करने की अपेक्षा मेरे विचार से इस स्थिति से निपटने का श्रेष्ठतम तरीका और एकमात्र लाभप्रद, उपयोगी तथा असरदार रास्ता यही होगा कि पूरी रिपोर्ट को ही इस सदन की एक समिति के सुपुर्द कर दिया जाए। मैंने एक ऐसी समिति प्रस्तावित करने का प्रयास किया है जिसमें इस रिपोर्ट में विशेषरूप से रुचि रखने वाले सभी पक्षों को उचित प्रतिनिधित्व मिला है। मुझे उन नामों को जोड़ने में कोई आपत्ति नहीं होगी जिन्हें आवश्यक समझा जायेगा, और यहां तक कि उन नामों को हटाने में भी कोई आपत्ति नहीं होगी, जो अनावश्यक समझें जाएंगे। मैं समिति को इसके वर्तमान आकार से बड़ा नहीं बनाना चाहता हूं। आप एक या दो और नाम जोड़ सकते हैं। मेरी समझ में किसी पक्ष की उपेक्षा

नहीं हुई है । जैसा कि मैंने कहा है, मैं उन व्यक्तियों से प्रतिबद्ध नहीं हूं जिनके नामों का मैंने उल्लेख किया है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या माननीय सदस्य स्वयं संतुष्ट हैं कि यह समिति सभी पक्षों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व करती है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – हां मान्यवर, सभी दलों के नेता इसमें हैं ।

सर मोहम्मद यामिन खां – सम्बद्ध सदस्यों के बारे में आप क्या कर रहे हैं?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – पीठ के अनुसार तीन नाम दलहीन हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – सूची में दलहीन माननीय सदस्यों के नाम हैं; जैसे श्री जोशी, जो श्रम का प्रतिनिधित्व करत हैं, श्री राजा जो दलित जातियों के प्रतिनिधि हैं, और श्री मथुरादास विसनजी, जो वाणिज्य के प्रतिनिधि हैं ।

श्री एम०एस० अणे – (इनमें से) शासन के प्रति वफादारी का प्रतिनिधित्व कौन कर रहा है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत : मैंने सदन के माननीय नेता और विधि के प्रभारी जो कि वफादारी के मूल स्रोत होते हैं, को सम्मिलित किया है और मैंने उन्हें शीर्ष पर स्थापित किया है और वे समिति के अध्यक्ष होंगे । मान्यवर, समस्या की प्रकृति और विस्तार के तमाम प्रश्नों से सम्बद्ध तमाम मुद्दों को देखने पर सदन मेरे इस विचार से सहमत होगा कि इस प्रश्न को उचित तरीके से निपटाने का यही प्रभावी तरीका है कि इस समिति को सौंप दिया जाये । चूंकि समिति के निर्णय पर विलम्ब नहीं होना चाहिए और इसलिए भी कि सरकार को इस सदन का दृष्टिकोण यथासम्भव अविलम्ब ज्ञात होना चाहिए, मैंने प्रस्तावित किया है कि 18 मार्च तक इस समिति की रिपोर्ट प्रस्तुत हो जानी चाहिए । यह इस सदन और शासन को निर्णीत करना है कि इस समिति की रिपोर्ट सदन में प्रस्तुत की जाए या इस सदन की ओर से उसे अपनी रिपोर्ट सरकार के सम्मुख प्रस्तुत करने के लिए अधिकृत किया जाए । इसका निर्णय इस सदन को करना है । वैसे मैं निजी तौर पर यही उत्तम समझता हूं कि समिति अपनी रिपोर्ट सदन के सम्मुख पेश करे । खैर, सभी स्थितियों में, यह श्रेष्ठतर होगा कि मामले पर समिति में ही सूक्ष्म रूप से विचार कर लिया जाए क्योंकि इन जटिल और महत्वपूर्ण मुद्दों पर निर्णय लेने हेतु इस सदन में स्फुट चर्चा ही सम्भव है । चूंकि वे संवैधानिक नीति या साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के मौलिक प्रश्नों से सम्बन्ध नहीं रखते हैं बल्कि केवल प्रतिनिधित्व की पद्धतियों से सम्बन्धित है, इसलिए मेरे विचार से परेशानी की स्थिति नहीं पैदा होगी । इन परिस्थितियों

में मुझे आशा है कि मेरा यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से सदन में स्वीकृत होगा और सरकार उदारतापूर्वक इसे स्वीकार करेगी ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यहाँ मेरा ध्यान दो बातों की ओर आकर्षित किया गया है । मेरे विचार से इस प्रकार के संशोधन के लिए कोई स्पष्ट प्राविधान नहीं है । साथ ही माननीय सदस्य ने यह स्पष्ट नहीं किया कि कौन समिति का अध्यक्ष होगा और कितने लोगों से गणपूर्ति होगी । सम्भवत: वह इसे स्पष्ट करना चाहेंगे ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं प्रस्तावित करता हूं कि माननीय सर नृपेन्द्र सरकार समिति के अध्यक्ष हों और गणपूर्ति के लिए सात सदस्य आवश्यक होंगे । मेरे प्रस्ताव के अन्त में निम्न जोड़ा जाए :

"कि समिति के अध्यक्ष माननीय सर नृपेन्द्र सरकार होंगे और सात सदस्यों से गण–पूर्ति होगी ।"

माननीय सर लेस्ली हुडसन –(बम्बई यूरोपीय) मैं प्रस्तावित करता हूँ कि यदि कोई आपत्ति नहीं हो तो समिति के सदस्यों में लेफ्टि० कर्नल सर हेनरी गिडनी का नाम सम्मिलित किया जाए ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – संशोधन प्रस्तुत किया जाता है :–

"कि 'विचार किया जाए' शब्दावली के स्थान पर निम्न जोड़ा जाए : "एक समिति को सन्दर्भित किया जाए जिसमें माननीय सर नृपेन्द्र सरकार, माननीय सर जफरुल्लाह खान, श्री भूलाभाई जे० देसाई, श्री एस० सत्यमूर्ति, श्री एम० आसफ अली, सर कावसजी जहांगीर, श्री एम०ए० जिन्ना, श्री अब्दुल मतीन चौधरी, श्री एस०एस०अणे, मंगल सिंह, सर लेस्ली हुडसन, श्री मथुरादास विस्सनजी, राव बहादुर एम०सी० राजा, श्री एन०एम० जोशी, श्री अखिल चन्द्र दत्ता, पंडित नीलकण्ठ दास, लेफ्टि० कर्नल सर हेनरी गिडनी और प्रस्तावक सम्मिलित होंगें । समिति से अपेक्षित है कि वह 18 मार्च, 1936 के पूर्व अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर देगी । समिति के अध्यक्ष माननीय सर नृपेन्द्र सरकार होंगे और सात सदस्यों से समिति की गण–पूर्ति होगी ।"

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मान्यवर, मैं इस नियम पर अपने और शासन के दृष्टिकोण को स्पष्ट करना चाहूंगा । हम गैर सरकारी सदस्यों के विचारों को जानना चाहते हैं । जैसा कि मैंने स्पष्ट किया है, शासन अभी तक किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा है । हमें इस पर कोई आपत्ति नहीं होगी यदि सदन में बहस के जरिए राय निर्धारित करने के बजाय इसे इसी हेतु समिति के सुपुर्द कर दिया जाय ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – मेरा निर्णय है कि इस रिपोर्ट को सदन में प्रस्तुत किया जाए और इस पर चर्चा हो ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – यदि यह विचार है कि प्रस्तावित संस्तुतियों या पारित प्रस्तावों को इस सदन का विचार माना जाएगा, तो मुझे कोई आपत्ति नही है लेकिन मेरे विचार मे माननीय सदस्य कहना चाहते थे– जिसका संकेत मुझे आपकी बात में भी मिल रहा है– कि इस रिपोर्ट के प्रस्तुत होने के बाद सदन में दूसरी रिपोर्टों की तरह इस पर चर्चा होगी ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – मेरे विचार से आशय यही है कि रिपोर्ट सदन में प्रस्तुत की जाएगी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, मैं निश्चित रूप से रिपोर्ट का सदन में प्रस्तुत किया जाना अधिक पसन्द करूंगा । लेकिन यदि इन दोनों में से एक को चुनना है– कि कोई समिति न हो या समिति अपनी रिपोर्ट शासन को प्रस्तुत करे– तो मैं चाहूंगा कि आज इस रिपोर्ट के सिद्धांतों पर चर्चा हो और फिर सदन की राय के प्रकाश में रिपोर्ट तैयार करने के लिए समिति का गठन किया जाए ।

माननीय अध्यक्ष – निश्चित रूप से माननीय सदस्य यह नहीं चाहते होंगे कि समिति मामले का निर्णय करे । समिति की रिपोर्ट पर निर्णय करने का अधिकार सदन का ही होना चाहिए ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – जी हां मान्यवर, जैसा अभी तक का कायदा रहा है, सदन को ही इसका निर्णय लेना चाहिए ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मेरी परेशानी यही है हम यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि हमने एक आश्वासन दिया था और उसी आश्वासन के आधार पर हमने सदन में यह रिपोर्ट रखी है । हमने और कोई आश्वासन नहीं दिया था, न और कोई आश्वासन दे सकते हैं कि समिति की रिपोर्ट पर बहस के लिए और समय दिया जा सकता है । प्रस्तावक ने मुझे एक वैकल्पिक दिशा बताई है, लेकिन मुझे नहीं मालूम कि वह सदन को स्वीकार होगी या नहीं । मेरे विचार से यह प्रस्तावित किया जा रहा था कि चूंकि विवाद के मुद्दे बहुत अधिक और जटिल हैं और इस पर विचारों में पर्याप्त मतभेद की सम्भावना है इसलिए इस पर यहां बहस करने के बजाय समिति को यह कार्य सौंपा जाए और मैं समझ रहा था कि मुझसे कहा जा रहा है कि मैं इस रिपोर्ट को सदन के अभिमत के तौर पर स्वीकार करलूं । यह केवल सदन से ही सम्भव है, बशर्ते यह नियमानुकूल हो ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यह सम्भव नहीं है ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार यदि यह सम्भव नहीं है तो मैं स्पष्ट करना चाहता हूं कि जहां तक मेरा और मेरे माननीय सहयोगी सर मुहम्मद जफरुल्लाह खां का

मामला है, हम इन स्थितियों में इस समिति में सम्मिलित नहीं हो सकते । हमें एक विशुद्ध गैर सरकारी समिति गठित किये जाने पर कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन हमारी कठिनाई यह है कि हम समिति की रिपोर्ट पर बहस के लिए भविष्य में और अधिक समय नहीं दे सकते । यह हमारी स्थिति है । किसी भी स्थिति में हम समिति की कार्रवाई में सम्मिलित नहीं होना चाहते और यह भी स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हम ऐसा कोई आश्वासन दे सकने की स्थिति में नहीं हैं कि समिति द्वारा सदन में प्रस्तुत किसी रिपोर्ट पर आगे भी सरकार द्वारा समय प्रदान किया जायेगा ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – जब तक यहां इस आशय का कोई स्पष्ट दृष्टान्त नहीं प्रस्तुत किया जाता कि सदन इस तरह से अपने अधिकारों को किसी समिति के सुपुर्द कर सकता है, तब तक इस प्रकार के किसी प्रस्ताव की अनुमति नहीं दी जा सकती, यदि इसका तात्पर्य यह है कि सदन के सम्मुख विचाराधीन प्रश्न का निर्णय समिति को करना है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – जहां तक इस प्रस्ताव की शर्तों का प्रश्न है, उसे इस हिदायत के साथ समिति के सुपुर्द किया जा रहा है कि वह अपनी रिपोर्ट उस मूल संस्था को प्रस्तुत करें, जिसने यह प्रश्न इसे सन्दर्भित किया है । लेकिन यदि इसे संशोधित करने का प्रस्ताव सदन में लाया जाता है तो यह सोचना होगा कि संशोधन किया जाए अथवा नहीं । अन्यथा इस प्रस्ताव की शर्तें बहुत स्पष्ट हैं ।

माननीय अध्यक्ष – मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि सदन की शक्तियों का प्रतिनिधायन न हो ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – माननीय नेता सदन ने आज केवल अपनी इसी मुश्किल का वर्णन किया है कि यह रिपोर्ट पर विचार करने का समय सुनिश्चित नहीं कर सकते । यह एक बहुत छोटी बात है । जब यह सदन किसी मामले को एक समिति के सुपुर्द करता हो और जब उसकी रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी हो और यह आवश्यक तथा महत्वपूर्ण हो तो मुझे पूरा विश्वास है कि शासन इस पर विचार करने के लिए समय निकाल लेगा ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – उन्होंने एक और कठिनाई प्रस्तुत कर दी है— वह यह कि यदि सत्ता पक्ष के सदस्य इस समिति में सम्मिलित नहीं होंगे तो माननीय सदस्य को इस स्थिति के सम्बन्ध में क्या कहना है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – उस स्थिति में यह एक गैर–सरकारी समिति होगी और अपने अध्यक्ष का स्वयं चुनाव करके अपना कार्य सम्पन्न करेगी । लेकिन यदि अध्यक्ष का नामांकन होना ही है तो मैं उपस्थित सदस्यों में से एक का नाम प्रस्तावित

करूंगा ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मुझे आशा है कि कोई विभ्रम नहीं होगा; मैं इस प्रकार की रिपोर्ट के लिए इस सत्र में समय नहीं दे पाऊंगा ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – इस स्थिति में मैं इसके लिए समय नहीं निकाल पाऊंगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – खैर, सदन के सम्मुख प्रस्ताव है और उस पर चर्चा होनी है । यह सरकार को निश्चित करना है कि वह इसके लिए समय निकाल पायेगी या नहीं ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यह प्रस्ताव की विषय-वस्तु नहीं हो सकती ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – हम इस तरह का प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं कर सकते कि सरकार को समय निकालना ही होगा । यह सरकार के सोचने का विषय है । लेकिन मुझे अब भी विश्वास है कि वे इतने सक्षम हैं कि हमारे लिए समय निकाल सकते हैं ।

माननीय अध्यक्ष – इस सदन और माननीय सदस्य को इस तथ्य का ध्यान रखना चाहिए कि नेता सदन इसके लिए इस सत्र में समय देने का आश्वासन नहीं दे सकते । अब यह उनके विवेक पर है कि वे प्रस्ताव को रखते हैं या नहीं ।

श्री एम० एस० अणे – मान्यवर, मुझे व्यवस्था का प्रश्न उठाना है । नेता सदन ने कहा है कि वे और उनके सहयोगी इस समिति में सम्मिलित होने की स्थिति में नहीं हैं । मेरी समझ के अनुसार हमारी नियमावली के स्थायी आदेश संख्या 40 के अन्तर्गत इस सदन की कोई प्रवर समिति स्थापित नहीं हो सकती है ।

माननीय अध्यक्ष – यह एक प्रवर समिति नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – हमारे सामने कोई विधेयक नहीं है ।

श्री एम० एस० अणे-यह सदन की एक समिति है जो एक विशिष्ट रिपोर्ट के परीक्षण के लिए नियुक्त हुई है । मैं कहना चाहता हूं......

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – नियम 24 'ए' लागू होगा ।

श्री एम० एस० अणे –हम केवल एक तरीके से ही इस तरह की समिति गठित कर सकते हैं और वह सदन में प्रवर समिति नियुक्त करने का जैसा तरीका ही हो सकता है । केवल एक यही प्राविधान है जिसका उपयोग इस समिति के गठन के लिए हो सकता है । ऐसी समिति के सिलसिले में प्राविधान है कि जिस विभाग से प्रस्तावना का सम्बन्ध है, उसके अध्यक्ष को उस समिति में रहना होगा । इसमें उनकी इच्छा का प्रश्न उठता ही नहीं है ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मैं साम्यों की नहीं, नियमों की चर्चा कर

रहा हूँ ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य किस नियम का सन्दर्भ दे रहे हैं?

श्री एम०एस० अणे : मैं स्थायी आदेश संख्या 40 का सन्दर्भ दे रहा हूँ ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यह नियम इस मामले में लागू नहीं होता है । केवल 24 'ए' को ही यहां प्रयुक्त किया जा सकता है । हमारे विचार मे और कोई नियम प्रयोज्य नहीं है ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – जी हां, मान्यवर ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या माननीय सदस्य (पंडित पंत) इसमें इन दो सदस्यों के सम्मिलित न करने का प्रस्ताव रख रहे हैं?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं माननीय सर नृपेन्द्र सरकार और माननीय सर मुहम्मद जफरुल्ला खान के नाम वापस लेने की प्रार्थना करता हूँ क्योंकि वे लोग समिति में नहीं आना चाहते हैं ।

सर एच०पी०मोदी – इस (गठित होने वाली) समिति की स्थिति कैसी होगी? क्या रिपोर्ट सदन में पेश की जायेगी और यदि हां, तो क्या सदन को इस पर विचार करने का अवसर मिलेगा?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – स्पष्ट है कि इस सत्र में नहीं ।

सर एच०पी०मोदी – तो क्या इस रिपोर्ट में उठाये गये मुद्दों पर विचार व्यक्त करने का अवसर इस सदन को नहीं प्राप्त होगा?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – इसका यही परिणाम होगा ।

सर एच०पी० मोदी – क्या इसकी अनुमति है? अगर इसका यही परिणाम है...

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – जब संशोधन आएगा, सदन को उसकी जानकारी होगी ।

सर कावसजी जहांगीर – मेरे विचार से इस कठिनाई के दो कारण हैं । इसका पहला कारण यह है कि...

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – हम इस तरह के प्रश्नों पर बहस नहीं करना चाहते हैं ।

सर कावसजी जहांगीर – मैं संशोधन के बारे में बात कर रहा हूँ ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – हम उस पर आ रहे हैं । यदि वे दो नाम हटाए जा रहे हैं तो फिर समिति का अध्यक्ष कौन होगा?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – श्री अखिल चन्द्र दत्ता, उपाध्यक्ष समिति के अध्यक्ष होंगे ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यदि इस तरह संशोधन होता है तो माननीय सर नृपेन्द्र सरकार और माननीय सर मुहम्मद जफरुल्ला खान के नाम हट जायेंगे और सर नृपेन्द्र सरकार के स्थान पर श्री अखिल चन्द्र दत्ता इसके अध्यक्ष होंगे ।

श्री डी०के० लाहिड़ी राय चौधरी – व्यवस्था का प्रश्न है, मेरे विचार से ये दो नाम स्वीकृत किये जा चुके हैं । क्या सदन के लिए यह उचित होगा कि निर्णय के पश्चात् नामों में परिवर्तन किया जाए?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – कोई निर्णय नहीं लिया गया हैं । मैंने केवल प्रस्ताव का वाचन ही किया है ।

सर कावसजी जहांगीर – क्या पौने एक बजे कार्य स्थगन होना चाहिए? (हंसी)

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – शुक्रवार होने की वजह से सवा दो बजे तक के लिए कार्य स्थगन हो रहा है । अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम के पीठासीन होने के साथ भोजनावकाश के पश्चात् सवा दो बजे सभा ने कार्य प्रारम्भ किया) ।

श्री एन०एम० जोशी – (नामांकित गैर सरकारी) माननीय अध्यक्ष महोदय, आपकी अनुमति से मैं अपना संशोधन प्रस्तुत करना चाहता हूँ । यह इस प्रकार है :

"कि प्रस्ताव के अन्त में निम्नलिखित जोड़ा जाय :
"कि विचारोपरान्त असेम्बली की राय है कि संघीय सभा में श्रमिक प्रतिनिधित्व के मामले में," .....

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – पंडित गोविन्द बल्लभ पंत ने प्रस्ताव द्वारा संशोधन पेश किया है कि रिपोर्ट को एक समिति के विचारार्थ सौंप दिया जाए । इस संदर्भ में माननीय सदस्य अपना संशोधन प्रस्तुत नहीं कर सकते । यदि माननीय पंत का संशोधन निरस्त किया जाता है, तब माननीय सदस्य अपना संशोधन प्रस्तुत कर सकते हैं ।

श्री एन०एम० जोशी – मेरा सुझाव है कि यदि आप सभी संशोधनों को प्रस्तुत करने की अनुमति दें और फिर बहस करवाएं तो सदन को सुविधा होगी ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यहां इस तथ्य को देखते हुए कि यह प्रस्ताव एक समिति के गठन के सम्बन्ध में है, हम उसकी अनुमति नहीं दे सकते । जोशी के संशोधन को बाद में लिया जायेगा ।

श्री एन०एम० जोशी – मेरा सुझाव है कि यदि हमें संशोधन प्रस्तुत करने की अनुमति दी जाए तो समिति को कुछ दिशा प्राप्त हो सकती है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्यगण इस संशोधन के साथ इस प्रस्ताव पर भी विचार कर सकते हैं– इस विषय पर उनका चाहे जो भी विचार हो ।

माननीय अध्यक्ष – क्या संशोधन के प्रस्तावक इन तीन नामों को जोड़ने के लिए सहमत हैं—

सर मुहम्मद याकूब, श्री मुहम्मद नवमान और श्री के०एल० गौबा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, मुझे कोई आपत्ति नहीं है ।

लेफ्टि०कर्नल सर हेनरी गिडनी – क्या मैं सर गुलाम हुसैन हिदायतुल्ला का नाम सम्मिलित किये जाने का प्रस्ताव कर सकता हूँ ?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या (इस प्रस्ताव के) प्रस्तावक को आपत्ति है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या किसी दूसरे माननीय सदस्य को इन नामों के सम्मिलित करने में कोई परेशानी है?

(सहमति को दर्ज किया गया)

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – प्रस्ताव है:

"कि 'विचार किया जाए' शब्दावली के स्थान पर निम्न सम्मिलित किया जाए : "एक समिति को संदर्भित किया जाए जिसमें निम्न सम्मिलित हों— श्री भूलाभाई देसाई, श्री एस० सत्यमूर्ति, श्री एम०आसफ अली, सर कावसजी जहांगीर, श्री एम०ए०जिन्ना, श्री अब्दुल मतीन चौधरी, श्री एम०एस० अणे, सरदार मंगल सिंह, एम०सी० राजा, श्री एम०एस० जोशी, श्री अखिल चन्द्र दत्ता, पंडित नीलकण्ठ दास, लेफ्टि०कर्नल सर हेनरी गिडनी, सर मुहम्मद याकूब, श्री मुहम्मद नवमान, श्री के०एल० गौबा, सर गुलाम हुसैन हिदायतुल्ला और प्रस्तावक । इसके साथ यह हिदायत दी जा रही है कि समिति 18 मार्च, 1936 के पूर्व अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करे और श्री अखिलचन्द्र दत्ता इसके अध्यक्ष होंगे तथा सात सदस्यों से गण–पूर्ति होगी ।"

प्रस्ताव स्वीकृत किया गया ।

अंग्रेजी साम्राज्य का जाल–पाश

मान्यवर, मुझे लगता है कि माननीय वित्त सदस्य ने आज सुबह बहुत फीका भाषण दिया है और उन्होंने अपने शत्रुओं को सबसे पहले और सबसे कठोर प्रहार करने के लिए आमंत्रित किया है । मैं नहीं जानता कि वे मुझे शत्रुओं में गिनते हैं या नहीं? लेकिन इतना तो मैं कह ही सकता हूँ कि उनकी और उनकी सरकार की जिसके वे (वाच्यार्थ) सजावटी सूत्र हैं, निरस्त्रीकरण रीति के कारण मुझे पूरे जीवन में बंदूक सम्भालने का कभी कोई मौका नहीं मिला । मेरे विचार से किसी आत्माभिमानी भारतीय को उस समय तक यह बन्दूक सम्हालने जैसा काम करना भी नहीं चाहिए जब तक प्रत्येक भारतीय को समान रूप से ऐसी सुविधा नहीं मिलती । लेकिन मान्यवर, उनकी आज की टिप्पणी पिछले मौके पर उनकी सन्देहास्पद टिप्पणी से बेहतर है । यदि मुझे सही याद आ रहा है तो पिछली बार उन्होंने कहा था, "अगर आप मुझ पर हमला करेंगे तो मैं भी आप पर हमला करूंगा ।" मुझे उनका ऐसा वक्तव्य बहादुराना नहीं लगा । मुझे उस समय बहुत अजीब लगा जब उन्होंने यह संकेत किया कि हम उन पर हमला करना चाहते हैं लेकिन उनके आघात से अपने को छिपाते हैं । ठीक है, जब हम इस तरह के शौक पालेंगे तो उनकी तरह के आवेगवान और साहसी युवा खिलाड़ी के आक्रमण का खतरा भी उठायेंगे ।

मेरे विचार से वित्त विधेयक में बहुत कहने की गुंजाइश नहीं है । यह एक वार्षिक परम्परा है और इस वर्ष का प्रयास तो और भी गया-गुजरा है । माननीय वित्त सदस्य ने इस बार कतिपय ऐसे हिस्सों को निकाल दिया है जिनके सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा जा सकता था। लेकिन बजट भाषण के दौरान उन्होंने एक टिप्पणी की थी जिस पर आज मैं विशेष ध्यान देना चाहता हूँ । उन्होंने कहा है:–

"संक्षेप में, अपनी अनुभवहीनता के कारण मैंने विनाश की भविष्यवाणी करने वालों को अधिक महत्व दिया, जो किसी न किसी कारण से यह घोषित करना चाहते थे कि भारत ब्रिटिश

---

16 मार्च,1936 को इंडियन फाइनेन्स बिल पर लेजिस्लेटिव असेम्बली में पंत जी का भाषण ।

साम्राज्य और स्टर्लिंग मुद्रा से सम्बद्ध होने की वजह से बर्बाद हो रहा है । और मैंने उन लोगों के आश्वासनों को बहुत कम महत्व दिया जो मुझसे कहते थे कि भारत में आर्थिक संकटों से उबरने की अद्‌भुत शक्ति है ।"

स्पष्ट है कि उनके अनुसार भारत ब्रिटिश शासन के अधीन आर्थिक समृद्धि के शिखर पर पहुंच गया है । यदि इसके विपरीत कोई भी अन्य सुझाव दिया जाता है या मामूली संकेत किया जाता है तो भी उन्हें वह केवल आधारहीन निंदा ही नहीं प्रतीत होती है, बल्कि पुरातनपन्थी होने के नाते उसमें उन्हें नास्तिकता की तीखी अनुभूति होती है । मैं आज अपरान्ह इसी पर विचार प्रकट करूंगा कि क्या भारत के ब्रिटिश सम्बन्धों से कोई आर्थिक लाभ हुआ है या अपनी समृद्धि के लिए प्रख्यात सोने की चिड़िया कहलाने वाले इस प्राचीन देश को उत्तरोत्तर कंगाल बना दिया गया है । इसके अलावा उन्होंने एक वक्तव्य और दिया है, और मैं उस पर भी समय व्यय करूंगा । उन्होंने आर्थिक पुनरुत्थान के सन्दर्भ में भारत की अद्‌भुत क्षमता की व्यक्तिगत पुष्टि की है ।

मान्यवर, इन प्रश्नों पर चर्चा करने के पहले मैं माननीय वित्त सदस्य का ध्यान एक कट्टरपंथी अर्थशास्त्री के काफी समय पूर्व व्यक्त किये गये विचार की ओर आकर्षित करूंगा । मेरे विचार से वह जांन स्टुअर्ट मिल को इस श्रेणी में शामिल करते होंगे । जांन स्टुअर्ट मिल ने कहा था :

"जनता के अपने शासन में एक अर्थवत्ता और एक वास्तविकता है लेकिन एक समूह द्वारा दूसरे समूह पर शासन न तो स्थापित है और न ही स्थापित किया जा सकता है ।"

यह तो बहुत प्रचलित मान्यता है । इसकी परवर्ती पंक्तियां बहुत महत्वपूर्ण हैं:–

"एक मानव समूह दूसरे देश के समूह को अपने निजी इस्तेमाल के लिए, उसकी भूमि को धन कमाने के लिए, अपने देशवासियों के मुनाफे हेतु उनका पशुपालन केन्द्रों की तरह संचालन करने के लिए, उपयोग कर सकता है ।"

जब से अंग्रेजों को कुछ करने का अवसर मिला तब से उन्होंने भारत को केवल अपने लाभ के लिए और अपने मुनाफे के लिए, एक पशुपालन–केन्द्र की भांति समझा । जहां तक गुलाम और अधीन नस्लों का सवाल है, उनके बजटों को सन्तुलित करना एक यांत्रिक प्रक्रिया मात्र है । इससे न तो प्रगति का और न समृद्धि का संकेत मिलता है । जब तक दुधारू गाय मरती नहीं या उसका दूध नहीं सूखता, तब तक ग्वाला उसके थनों से अधिकतम दूध निकालता ही रहेगा, भले ही

यह हृदयहीन प्रक्रिया गाय के लिए कष्टप्रद और बछड़े के लिए सांघातिक हो । वह जो भी चाहेगा या जिसकी भी इच्छा करेगा, उसे प्राप्त कर ही लेगा चाहे गाय या उसकी जाति पर उसका कितना भी घातक प्रभाव क्यों न पड़े?

मान्यवर, इस देश में मुनाफे और घाटे के बजट के कई चक्र आये । वर्ष 1898 और 1910 के बीच मुनाफे का बजट था । उसके बाद घाटा आया और फिर युद्धकालीन (व्यावसायिक) समृद्धि आयी । 1920 से 1924 के बीच फिर घाटा आरम्भ हुआ जबकि घाटा 90 करोड़ तक पहुंच गया । तत्पश्चात् सर बैसिल ब्लेकेट के समय में समृद्धि देखने को मिली और फिर 1934 के पांच-छः वर्षों में घाटा आया । लेकिन क्या मुनाफे के बजट के दौरान भारत ने एक कदम भी प्रगति की है? क्या मुनाफे के बजट की अवधि में आम भारतीय की स्थिति पहले की अपेक्षा कुछ बेहतर हो सकी थी? वस्तुतः मुनाफे का बजट कभी-कभी घाटे के बजट से भी कहीं अधिक खतरनाक हो जाता है, उससे फिजूलखर्जी बढ़ती है और अक्सर इससे आवर्तन व्यय में कभी-कभी यथेष्ट और ठोस वृद्धि होती है जो मुनाफे के बजट के बाद भी बनी रहती है, जो बाद में बहुत परेशानी पैदा करती है । माननीय वित्त सदस्य अच्छी तरह जानते हैं कि दूसरे देशों ने किसी प्रकार उल्लेखनीय आर्थिक प्रगति प्राप्त की है, वे इस तथ्य से अच्छी तरह परिचित होंगे कि इंग्लैण्ड में 1930 के पश्चात् पहली बार इस वर्ष 3.7 करोड़ पौंड का व्यापार सन्तुलन उसके पक्ष में रहा । मेरा विश्वास है कि वे जानते होंगे कि वहां सितम्बर 1931 की तुलना में भी इस समय सूचकांक 100 से 114 पहुंच गया है ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग – उत्पादन का क्या मूल्य था?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मूल्य का ? मेरे विचार से वह यह भी जानते होंगे कि उत्पादन का सूचकांक तो इससे भी ज्यादा बढ़ा है । मेरे विचार से वह यह भी ज़ानते होंगे कि न्यूजीलैण्ड और कनाडा में भी तदनुरूप वृद्धि हुई । मेरे विचार से, वह यह भी जानते होंगे कि दूसरी ओर भारत में मूल्य सूचकांक न केवल 1918-19 से, न केवल 1928-29 से बल्कि यहां तक कि सितम्बर, 1930 से भी नीचे है । मेरे पास यह सिद्ध करने वाले दस्तावेज हैं जिसके अनुसार आज भारत लगभग अकेला ऐसा देश है जहां अभी भी भारी मंदी जारी है । मेरे विचार से उन्हें दूसरे देशों के व्यापार–संतुलन में वृद्धि की जानकारी है । मेरे विचार से वह यह भी जानते हैं कि जहां तक प्राइवेट उत्पादों के आयात–निर्यात का सम्बन्ध है, भारत का व्यापार संतुलन पिछले वर्ष की अपेक्षा 1933-34 में अधिक था । और इस साल भी 1933-34 की तुलना में हमारा व्यापार संतुलन कम रहेगा । हमारे देश में जहां जनता और शासन के हित एक दूसरे के विरुद्ध हैं, जहां शासन के अस्तित्व की आधारभूत शर्त ही

यही है कि उसमें जनता के दायित्वपूर्ण प्रतिनिधि न शामिल किये जायें और जनता के मतों से चुनकर इस सदन में पहुंचा हुआ कोई प्रतिनिधि उनके अखाड़ों में घुस न पाये, उस देश में मान्यवर, जनता के हित शासन के विरुद्ध ही रहेंगे । यह सहज सम्भव है कि जनहित का गला घोंट कर शासन के लाभार्थ आर्थिक स्थिति में सुधार हो जाये, और 18 पेन्स की विनिमय दर इसी का उदाहरण है । यदि माननीय वित्त सदस्य विनिमय अनुपात को 18 पेन्स से घटाकर 16 पेन्स कर दें तो सरकार को तुरन्त ही 4 से 5 करोड़ के बीच का नुकसान होगा । लेकिन इसी के साथ विदेशी मुद्रा के सन्दर्भ में खेतिहर उत्पादों की, प्राथमिक उत्पादों की कीमत कम से कम साढ़े बारह प्रतिशत बढ़ जायेगी । मान्यवर, यह स्पष्ट है कि जहां तक हमारे देश का मामला है सरकार और जनता के हित परस्पर विरोधी हैं । जो एक के लिए ठीक है वह दूसरे के लिए गलत, और जैसा सी–सा के खेल में होता है, जब एक ऊपर उठता है तो दूसरा नीचे आ जाता है । इसलिए मान्यवर जहां तक शासक वर्ग के हितों का सवाल है, वह सहज ही सोच सकता है कि उनकी स्थिति अच्छी है या और अधिक अच्छी हो जाएगी । यदि आयात और कस्टम के राजस्व में वृद्धि हो जाय, निर्यात कम हो सकता है, आयात और निर्यात के बीच का अन्तर उत्तरोत्तर घट सकता है और निरन्तर घटता रह सकता है लेकिन आयात के बढ़ने से सरकारी राजस्व में लगातार वृद्धि हो जाएगी, और वर्तमान स्थिति का सबसे त्रासद पहलू यह है कि अन्तर्देशीय व्यापार की मात्रा में कमी आयी है । रेलवे यातायात के आंकड़ों के अनुसार वस्तु-यातायात में कमी आने के कारण ही पिछले वर्ष यातायात से होने वाली आय में कमी आयी है, लेकिन जहां तक विदेश-व्यापार का सम्बन्ध है, यातायात में वृद्धि हुई है । यदि घरेलू बाजार में कमी आयी और न्यूनता उत्पन्न हुई है तो उसका मुख्य कारण अन्तर्देशीय व्यापार में कमी है । और जब घरेलू व्यापार कमजोर पड़ता है तो इसका अर्थ है कि देशवासियों की आर्थिक क्षमता ह्रासोन्मुखी हो गयी है और उसकी क्रय शक्ति कमजोर हो गयी है । वस्तुतः इस देश में लागू की गयी नीति की यही स्वाभाविक परिणति होनी थी । यद्यपि इंग्लैण्ड इतना समृद्ध और विकसित है फिर भी उसने आयात–निर्यात को नियंत्रित करने के लिए मुद्रा और विनिमय दर में सम्बन्ध स्थापित करने में चतुराई बरती, जब कि हमारे यहां रुपया को स्टर्लिंग से बांध दिया गया । यहां तक कि कनाडा और आस्ट्रेलिया ने भी अपनी मुद्राओं का मूल्य घटा दिया है । और ब्रिटिश साम्राज्य के कई राष्ट्रों ने मुद्रा अवमूल्यन किया है, लेकिन हमारे यहाँ रुपये को स्टर्लिंग के पहियों से बांध दिया गया है और इसके परिणामस्वरूप हमारी मुद्रा की ऐसी स्थिति है जो बढ़ी कीमतों के अवसर पर भले ही उचित लगती हो, किन्तु इस समय जब कीमतों में गिरावट आयी है वह अवश्य ही देश के लिए हानिकारक है और विश्व के दूसरे हिस्सों की कीमतों से

उसकी कोई समता नहीं है । मान्यवर मैं जानता हूं कि जबकि दूसरे देशों ने आर्थिक सुधार के लिए और आर्थिक मंदी तथा दबाव पर काबू पाने के लिए रचनात्मक नीति अपनाई है, यहां हमारे देश में जहां सरकार की दिलचस्पी केवल विधि और व्यवस्था को बनाए रखने, हमें निर्बल और शस्त्रहीन करने और हमारी अज्ञानता, निरक्षरता, बीमारी, निर्धनता और असहायता को बनाए रखने में है,सरकार ने इस विशाल देश की आर्थिक पुनर्स्थापना को प्रोत्साहित करने के लिए अपनी उंगली भी नहीं उठायी है ।

मान्यवर, माननीय वित्त सदस्य ने आर्थिक पुनरुत्थान कर सकने की अद्भुत भारतीय क्षमता का जिक्र किया है । इससे मेरे मस्तिष्क में उत्तुंग पर्वत शिखरों, उर्वर घाटियों, नौकायन के लिए उपयुक्त नदियों, विस्तृत उपयोगी समुद्र तट, गन्ने, गेंहूँ और धान के लहराते खेतों, जूट, चाय कपास के बागानों,कोयला–खदानों और खानों और अपनी समृद्ध वनस्पतियों तथा पशुधन की छवि उभर आयी है । इससे मुझे इस देश के असीमित संसाधनों की याद आयी है । मुझे महसूस हुआ है कि वित्त सदस्य के निष्कर्ष उचित और सही हैं । यह देश, जिसे ईश्वर और नियति की महान कृपा और असीमित आशीर्वाद प्राप्त हैं, निश्चय ही पुनरुत्थान की अद्भुत क्षमता से भी युक्त होगा । लेकिन फिर मान्यवर, अगले ही क्षण मैंने अपने सामने इस विशाल देश में करोड़ों कंगालों को घूमते–फिरते देखा, मैंने इस देश की जनता को निर्धनता में जकड़ा पाया । और एक अकल्पनीय अभाव की स्थिति में घिरा पाया । मुझे याद आया कि जब अंग्रेज इस देश के सम्पर्क में थे, तब उनका जीवन स्तर और प्राप्त सुविधाएं लगभग उतनी ही थीं जितनी कि यहां के निवासियों की थीं । लेकिन आज उनके यहां मृत्यु–दर हमसे आधी है और औसत आयु हमसे दुगुनी से भी ज्यादा है और यहां तक कि उनके यहां प्रति व्यक्ति मदिरापान का खर्च हमारे यहां के दो व्यक्तियों की औसत आय से भी ज्यादा है । और उनके यहां कस्टम तथा पेय एवं शराब से प्राप्त आबकारी ही हमारी कुल राष्ट्रीय राजस्व के बराबर है । जब मैंने यह देखा तो मुझे एक ओर असीमित संसाधन और दूसरी ओर अकल्पनीय निर्धनता के बीच की भारी खाई भी देखने को मिली । ऐसा क्यों है? यह पहेली मेरे सामने थी । मेरे सामने यह सवाल था कि कैसे इतने असीमित संसाधनों वाला देश पूर्ण कंगाली और अभाव की इस स्थिति में आ गिरा है? आप प्रति व्यक्ति आय देखिए, आयात और निर्यात देखिए, उसके व्यवसाय का आकार देखिए, या ऐसा कोई आयाम देखिए जो आप के अनुसार आर्थिक स्थिति का संकेत या सूचकांक हो, आपका हृदय विदीर्ण हो जायेगा और कोई भी चीज उसे संतोष प्रदान नहीं कर सकेगी । हम आज क्या देखते हैं? अबीसीनिया, इटली का शिकार हुआ है क्योंकि

राष्ट्रों की यह सोच है कि जब तक उनके पास कच्चा माल नहीं है, तब तक वे प्रगति नहीं कर सकते । जर्मनी ने भी इसी तरह का कदम उठाया है जो कि वर्साइल्स में उसके साथ किए गये व्यवहार का परिणाम है जिस पर फिलहाल मैं कुछ नहीं कहूंगा, क्योंकि राष्ट्रों का मानना है कि कच्चे माल पर उनका आधिपत्य समृद्धि की कुंजी है । फिर इस तरह की प्राकृतिक सुविधाओं के बावजूद हमारे देश की इतनी दयनीय और शोचनीय स्थिति क्यों है? हमारे यहां केवल कच्चा माल ही प्रचुरता में नहीं है, बल्कि ऐसे देशवासियों की संख्या भी करोड़ों में है जिनकी मितव्ययिता, संयमी जीवन, उद्योगशीलता, जीवन की सरलता, शुद्धता और स्वच्छता की पुष्टि पिछले 3,000 वर्षों में दुनिया के हर हिस्से के यात्रियों ने की है । इस तरह एक ओर हमारे पास प्रचुरता में कच्चा माल है और दूसरी ओर वह मानव शक्ति भी, जो उन्हें विनिमय-योग्य वस्तुओं में भी बदल सकती है, जो सम्पत्ति मानव जाति की सुख और सुविधा का स्रोत मानी जाती है, फिर हम क्यों भूखे हैं ? हमारा निरन्तर पतन क्यों हो रहा है? इसका उत्तर है कि हम अप्राकृतिक रूप से एक डेरी फार्म के समान है, जो उस साम्राज्यवादी लौह–पाश की सेवा और समृद्धि के लिए समर्पित हैं, जिसका प्रतिनिधित्व हमारे सामने की बेंचों पर बैठे माननीय सदस्यगण कर रहे हैं । इसके नुकीले पंजे पूरे देश में फैले हैं, जिसने प्रत्येक देशवासी के शरीर और हृदय को जकड़ कर सारा रक्त चूस लिया है ।

मि०एम०ए० जिन्ना – आप इसे होने क्यों देते हैं?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – क्या मैं इसकी अनुमति देता हूँ? यदि मेरे हाथ में होता तो मैं इसे आज ही चकनाचूर कर देता और यदि मेरे पास मि० जिन्ना जैसी शक्ति होती तो मैंने चमत्कार कर दिया होता । (तालियां) वह जानते हैं कि मैं उनका कितना सम्मान करता हूँ और वह यह भी जानते हैं कि मैं कितना व्यथित हूँ । यदि फिर भी यह व्यवस्था बनी है, तो यह मेरी वजह से नहीं बल्कि मेरे बावजूद है और मैं इसे न केवल भू–लुण्ठित करने, न केवल परास्त और औचित्यहीन करने के लिए दृढ़ संकल्प हूँ बल्कि इसके अपराधों के लिए, इसे वास्तविक रूप में पश्चाताप से ग्रस्त देखने के लिए भी कृत–संकल्प हूँ । मान्यवर, अंग्रेज कई चीजों का श्रेय ले सकते हैं । उन्होंने इस विशाल देश में शान्ति स्थापित की-ऐसी शान्ति जो स्वामी को दासों के श्रम को हथियाने के लिए चाहिए और वह दासों को न्यूनतम शान्ति से अधिक की अनुमति भी कभी नहीं देगा, लेकिन यह भुखमरी-निर्धनता और मृत्यु की प्रतीक शान्ति है और मेरी भावना है कि ऐसी शान्ति थोड़ी कम होती और जीवन थोड़ा अधिक होता । मान्यवर, शायद कुछ चीजें हो सकती हैं, जिनका श्रेय वे ले सकते हैं लेकिन जहां तक अंग्रेजों की लूट का सवाल है, जहां तक इस देश की बढ़ती गरीबी

का मामला है, वे किसी भी इंसानी अदालत में इन आरोपों से मुक्ति नहीं पा सकते है, उनके अपराधों की संख्या बहुत अधिक है और इस समय मैं माननीय वित्त सदस्य को बता देना चाहता हूँ कि यद्यपि उनकी यह धारणा सही है, कि जिस देश को प्रकृति ने इतने साधन और सुविधाएं प्रदान की हैं उसकी स्वाभाविक क्षमता भी अवश्य अद्‌भुत होगी, लेकिन वह यह भूल गये कि उन्होंने, उनके पूर्वजों और उनके जैसे लोगों ने उसका गला घोंट दिया है, उसकी सारी जीवनशक्ति चूस ली है और उसे असहायता की वर्तमान स्थिति में पहुंचा दिया है । मान्यवर, जब भी यह कहा गया कि अंग्रेजी शासन से इस देश के उद्योगों और उत्पादनों को बहुत क्षति पहुँची है तभी माननीय, वित्त सदस्य ने अपनी असहिष्णुता और अधीरता का प्रदर्शन किया है । उन्हें यह निन्दनीय लगा और यद्यपि वह भद्र पुरुष हैं किन्तु इस बात पर मुझे आश्चर्य नहीं होता कि उन्होंने इस देश के इतिहास को समझने की कभी कोई कोशिश नहीं की ।

एक माननीय सदस्य – भद्र पुरुष को इसकी आवश्यकता भी नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – उन्होंने कभी सोचा ही नहीं कि उनका इस देश से कभी कोई वास्ता पड़ेगा, फिर उन्हें इस बात की चिन्ता क्यों होती कि उनके पूर्ववर्तियों ने इस देश के लोगों के साथ कैसा व्यवहार किया है? वह यहां आ पड़े हैं और सौंपे गये काम को पूरा करने के लिए प्रतिबद्ध हैं, लेकिन उनके पूर्ववर्ती प्रशासकों ने क्या किया, इसकी जानकारी हासिल करने को वह कुछ महत्व नहीं देते, उसकी उन्हें चिन्ता भी नहीं, वह उनके कारनामों के लिए अपने को जिम्मेदार भी नहीं मानते । लेकिन आज के उनके दृष्टिकोण के बारे में क्या कहा जाय? मैं उनके पूर्ववर्तियों के कारनामों की बावत थोड़ी देर बाद चर्चा करूंगा । लेकिन मैं चाहता हूं कि वह अपने दृष्टिकोण और अपनी नीतियों को अवश्य याद रखें कि वह क्या करना चाहते हैं और क्या नहीं करना चाहते? अगर कोई यह कहता है कि इस संसार की समस्याओं के लिए पुरातनपंथ सर्वश्रेष्ठ विकल्प नहीं है और इसके लिए अंधी आस्था की अपेक्षा विवेक, प्रकाश और कतिपय अन्य तर्कसंगत प्रयासों की अधिक आवश्यकता है, तो माननीय वित्त सदस्य आहत निर्बोधता का प्रदर्शन करने लगते हैं । वह अपने विश्वासों से चिपके हुए हैं, वह दूसरों द्वारा फेंके गये वस्त्रों को लिपटाये हुए हैं और वह ऐसे अजर–अमर पुरातन पन्थ के मूल्यों का प्रतिपादन करते हैं जिनको उनका देश ग्रेटब्रिटेन स्वयं त्याग चुका है । वह मुझे ऐसे कम्युनिस्ट या, बोल्शेविक प्रतीत होते हैं जो रूस से इस देश में ईसाइयत का प्रचार करने के लिए आये हैं । इस देश में माननीय वित्त सदस्य द्वारा आर्थिक पुरातनपन्थ का प्रचार करना कुछ वैसे ही है जैसे एक साम्यवादी यहां आकर हमें ईसा पर आस्था रखने और उसके लाभों और

विशेषाधिकारों के बारे में शिक्षा दे । पिछली बार माननीय वित्त सदस्य ने मुझसे कहा था "चिकित्सक पहले अपनी चिकित्सा करे । वह जानते हैं कि मैं तो यहां एक रोगी के रूप में हूँ और वह ही यहां अकेले चिकित्सक हैं । हम सभी उन बीमारियों से ग्रस्त हैं, जिनके विषाणु उन्होंने खुद पिछले 180 वर्षों से यहां फैलाये हैं और फिर भी विडम्बना यह है कि वह अपने को चिकित्सक की तरह प्रस्तुत कर रहे हैं और हमारा इलाज उन्हीं पर निर्भर करता है । इसलिए मैं किसी प्रकार से भी चिकित्सक नहीं हो सकता, मैं एक रोगी हूँ और मैं उनसे आशा करता हूँ, और मुझे यह आशा करने का अधिकार है कि वह इस देश को बर्बाद करने वाली बीमारी की उपयुक्त चिकित्सा करेंगे । मुझे यह कहने का पूरा अधिकार है कि वह उस पद-जिस पर वह आज आसीन हैं-के प्रति निष्ठावान रहें । क्या यह अपेक्षा करना व्यर्थ होगा कि वह अन्य देश की अपेक्षा इस देश की अधिक चिन्ता करें? मैं उनके पूर्ववर्ती एक अधिकारी सर जान स्ट्रेची द्वारा ऐसे ही अवसर पर दिये एक वक्तव्य की ओर उनका ध्यान आकर्षित करूंगा । इसमें उन्होंने 1878 में कपास के ऊपर आरोपित आयात-कर के बारे में कहा था :

"मुझे विश्वास है कि मैं भारत के प्रति अपने कर्तव्यों के लिए उतना ही प्रतिबद्ध हूँ जितना कोई दूसरा हो सकता है, फिर भी मुझे इस सत्य को स्वीकार करने में कोई शर्म नहीं है कि मेरे लिए अपने देश की सेवा करने से बढ़कर और कोई कर्तव्य नहीं है । मुझे विश्वास है कि मेरे देश के निवासियों की शिकायतें सच्ची और गम्भीर हैं और वे किसी काल्पनिक क्षति की शिकायत नहीं कर रहे हैं ।"

इस प्रकार वह यह सोच रहे थे कि इस देश में राजस्व के उद्देश्य से एक ऐसी कर नीति बनायी जा रही थी । जिसका संरक्षणवादी चरित्र था । उन्होंने स्पष्ट किया कि उनके देश का हित इस तरह की नीति से मेल नहीं खाता और न उसकी पूर्ति की ओर प्रगति हो सकती है, इसलिए अपने द्वारा इस अंगीकृत देश के प्रति घोषित समस्त स्नेह के बावजूद उन्होंने यह अनुभव किया कि यदि वे अपने देश का हित- साधन नहीं कर पायेंगे तो वह कर्तव्यच्युत हो जायेंगे ।

और यह सहज भावना थी । मुझे नहीं मालूम कि माननीय वित्त सदस्य ऐसी भावना से कहां तक सहमत हैं ।

एक माननीय सदस्य – पूरी तरह से ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – लेकिन मैं यह चाहता हूँ कि इस सम्बन्ध में वह यहां अपने दृष्टिकोण के विषय में कुछ कहें । मुझे आशा है कि वह हमें बतायेंगे कि क्या वह

निष्कपट रूप से व्यक्त की गयी सर जांन स्ट्रेची की भावनाओं से सहमत हैं या वह यह मानते हैं कि जब तक उनका वेतन केवल एक देश द्वारा मिलता है, तब तक उसकी निष्ठाओं का विभाजन नहीं हो सकता? लेकिन यह प्रश्न का केवल एक पहलू हैं ।

माननीय वित्त सदस्य ने अहस्तक्षेप—नीति, संरक्षण और कट्टरपंथी अर्थशास्त्र के बारे में बार-बार कहा है । क्या मैं उनसे पूछ सकता हूँ कि स्वयं उनके देश में आज इन सब की क्या स्थिति है? मुझे याद पड़ रहा है—और यदि मैं गलत कह रहा हूँ तो सुधार किया जा सकता है— कि दो तीन साल पहले वर्तमान राजा के नेतृत्व में ब्रिटेन में 'ब्रिटिश वस्तुयें खरीदो' नाम से एक सशक्त अभियान चलाया गया था । उन्होंने जगह-जगह पर जाकर कहा कि कट्टरपंथी अर्थशास्त्रियों की सस्ता सामान खरीदने की सलाह न मानिये और ब्रिटेन में बना सामान खरीदिये । मुझे यह भी याद पड़ रहा है— और यदि मैं गलत कह रहा हूँ तो वे कृपया सही करें— कि इंग्लैण्ड में एक कानून है जिसके अनुसार बिना शासकीय अनुमति के कोई व्यक्ति किसी विदेशी नागरिक को घरेलू नौकर या आर्टिस्ट नियुक्त नहीं कर सकता । मुझे इस सूचना की सत्यता पर संदेह है, कृपया इसका खण्डन या मण्डन किया जाय । यहां आने के पहले वे वहां कस्टम के ही मुखिया थे । अतः यदि वह भूल गये हों तो मैं उन्हें यह भी याद दिलाना चाहता हूँ कि इंग्लैण्ड में उस प्रत्येक वस्तु पर भारी आयात कर लगता है जो वहां के विचार में वहीं पैदा हो सकती है या जिसके बिना उनका काम चल सकता है । मैं केवल कुछ नांम लूंगा:– खुबानी, 9 शिलिंग 4 पेन्स प्रति सी०डब्लू०टी० (1 सी०डब्लू०टी० = 50.8 कि०ग्रा० लगभग), सेब 4 शि० 6 पेन्स प्रति सी०डब्लू०टी०; सन्तरा 3 शि० 6 पेन्स; आडू, 14 शि०; हरी मटर 36 शि०; शलजम 8 शि०; आलू 1 पौंड से 2 पौंड प्रति टन, मछली और घोंघा 30 शि० (और इसके अतिरिक्त 10 शि० और 6 प०); शक्कर 11 शि० 8 पेंस प्रति सी० डब्लू०टी०; कांच और लोहा तथा इस्पात पर (आयात कर) साढ़े तैंतीस प्रतिशत पड़ता है, और इस सदन के प्रत्येक सदस्य को यह जानने में दिलचस्पी होगी कि जो जूते और बूट हम पहनते हैं, उसके प्रति जोड़ पर एक शिलिग 6 पेन्स का संरक्षणात्मक कर पड़ता है ।

मैंने तटकर अनुसूची से केवल कुछ उदाहरण ही दिये हैं । यह अनुसूची इंग्लैण्ड में इस समय प्रचलित है और मेरे मित्र भी अच्छी तरह जानते होंगे कि इससे बहुत लाभ हो रहा है । अभी हाल में हमने चुकन्दर से बनी चीनी पर होने वाले व्यय के बारे में बहस की थी । आयातित शकर पर 11 शिलिंग आयात–कर लगाने

के अलावा वहां चुकन्दर से चीनी बनाने पर 4 करोड़ की आर्थिक सहायता भी दी जा रही है, और उन्होंने इस मामले पर विचार करने के लिए एक 'ग्रीन समिति' की स्थापना की थी । 'ग्रीन समिति' ने प्रतिवेदन में कहा था कि सर्वश्रेष्ठ शक्कर उद्योग सम्भवतः इग्लैण्ड में स्थापित और संचालित हो ही नहीं सकता, और यह सारा धन बर्बाद किया जा रहा है । लेकिन इसके बावजूद जब हाउस आफ कामन्स में एक प्रश्न पूछे जाने पर मि० इलियट ने कहा कि यह सहायता जारी रहेगी और उन्होंने कहा—यद्यपि माननीय वित्त सदस्य ने इसे देखा होगा लेकिन वह मेरे द्वारा इसे दुहराने को अन्यथा नही लेंगे— कि ग्रीन समिति ने पूरे प्रश्न को शक्कर के सन्दर्भ में ही देखा है, लेकिन कुछ अधिक महत्व के तथा व्यापक प्रश्न भी इससे जुड़े हैं, जैसे उस उद्योग में काम करने वाले अनेक व्यक्तियों का सवाल है; और उन्होंने कहा कि उद्योग फलफूल सकता है या नहीं यह प्रश्न महत्वहीन है; क्योंकि यदि सब्सिडी रोक दी जायेगी तो इतने अधिक व्यक्तियों – मेरे विचार से 40,000 का – रोजगार छिन जाएगा । क्या वित्त सदस्य यह स्वीकार करेंगे कि तैयार माल के उत्पादन हेतु यहाँ उपलब्ध कच्चा माल तथा कुछ मामूली वस्तुओं के आयात के अलावा अन्य बातें भी होती हैं और क्या सरकार जब संरक्षण की नीति के सम्बन्ध में निर्णय हेतु विचार करेगी तो इन अन्य बातों की ओर ध्यान देगी? मि० इलियट ने यही तर्क वहां दिया था लेकिन मेरे माननीय मित्र कह रहे हैं "नहीं, केवल स्वतंत्र व्यापार ही एक मात्र समाधान है और यहां जो भी संरक्षण प्रदान किया गया था या किया गया है, वह सब गलत है ।" यदि उनके लिए सम्भव होता तो उन्होंने अब तक का सारा संरक्षण समाप्त कर दिया होता, और उन्हें ऐसा न कर पाने का खेद है । मैं जानता नहीं, लेकिन मुझे एक शक है और मेरा सन्देह अक्सर पुष्ट हुआ है, क्योंकि हम दोनों एक दूसरे के दिमाग को अच्छी तरह जानते हैं । मैं सोचता हूँ कि वित्त सदस्य के लिए यदि सम्भव होता तो वह 1925 की नीति के अन्तर्गत उन उद्योगों को संरक्षण न देते जो उन्हें प्राप्त हो गया है । अगर वह अपनी इच्छा लागू कर सकते तो अपने कट्टरपंथी अर्थशास्त्र की मुक्त व्यवसाय की नीति ही लागू करते । लेकिन वह फिस्कल आयोग और विभेदक संरक्षण की घोषित नीति से बाधित हैं । इससे निपटने के लिए उन्हें सूक्ष्म बौद्धिक मकड़जाल बुनना पड़ता है । मान्यवर, इसमें कोई अनोखापन नहीं है । इतिहास सिर्फ अपने को दुहरा रहा है । अंग्रेजी शासन की प्रारम्भ से ही यही नीति रही है । मैं माननीय वित्त-सदस्य को महान अर्थशास्त्री लिस्ज की टिप्पणी की याद दिलाना चाहता हूँ जो उन्होंने 1844 में अंग्रेजों की संरक्षणवादिता और मुक्त व्यापार की कथित नीति पर की थी । ये शब्द लिस्ज के हैं और और सौ साल बीत चुके हैं, तब से हम आज तीसरी पीढ़ी में हैं, और यह जानना दिलचस्प होगा कि व्यक्ति और पीढ़ियां आती जाती रहती हैं लेकिन इस देश की सम्पत्ति को बहा ले

जाने वाली पुरानी नदियां और सैलाब वहीं हैं और सदैव की भांति कायम रहेंगे। मान्यवर, लिस्ज ने कहा था :

" यदि उन्होंने भारत से सूती और रेशमी कपड़ों को आजादी से आने दिया होता तो परिणामस्वरूप इंग्लैण्ड के सूती और रेशमी वस्त्रों के उद्योग शीघ्र ठप्प हो जाते । भारत को सस्ते श्रम और कच्चे माल की सुविधा ही न प्राप्त थी बल्कि उसके पास शताब्दियों पुराना अनुभव और शिल्प कौशल भी था । उन्मुक्त प्रतिस्पर्धा की स्थिति में इन सुविधाओं का प्रभाव अवश्य ही पड़ता । लेकिन इंग्लैण्ड एशिया में ऐसे उपनिवेश नहीं बनाना चाहता था कि उत्पादन उद्योग में वह भारत के अधीन हो जाता । उसने व्यावसायिक श्रेष्ठता प्राप्त करने का प्रयास किया और यह महसूस किया कि मुक्त व्यापार करने वाले दो देशों के बीच उस देश की श्रेष्ठता स्थापित होगी जो औद्योगिक तैयार माल बेचेगा,और कृषि उत्पाद मात्र बेचने वाला राष्ट्र अनुपालक रहेगा.... इस नीति के अन्तर्गत उसने भारतीय सूती और रेशमी कपड़ों के आयात को प्रतिबन्धित कर दिया क्योंकि इनका उत्पादन उनके कारखानों में भी होता था । यह प्रतिबन्ध पूर्ण और अनिवार्य था । इंग्लैण्ड में भारतीय कपड़े के एक धागे के प्रयोग की भी अनुमति नहीं थी । उसने इन सुन्दर और सस्ते वस्त्रों को प्रतिबन्धित कर दिया और अपने निम्न स्तरीय और मंहगे उत्पादनों को वरीयता प्रदान की । हालांकि वह योरप के अन्य देशों को कम कीमत पर श्रेष्ठ भारतीय कपड़े निर्यात करता रहा और स्वेच्छा से उन्हें सस्तेपन के सारे लाभ उपलब्ध कराता रहा लेकिन अपने यहां उसने उनको आने नहीं दिया । क्या इंग्लैण्ड का ऐसा कार्य मूर्खतापूर्ण था? निश्चित रूप से एडम स्मिथ और जे०बी० से — और मैं सर जेम्स प्रिंग का नाम भी जोड़ रहा हूँ—के सिद्धांतों के अनुसार अंग्रेज मंत्रिगण सस्ती और खराब हो जाने वाली वस्तुओं की चिन्ता न करके अपने यहां अधिक महंगी और स्थायी उत्पादन शक्ति के विस्तार की कोशिश कर रहे थे ।"

मान्यवर, माननीय वित्त सदस्य को इसे इस कारण अनदेखा नहीं करना चाहिए कि लिस्ज जर्मन था । यह 1844 में लिखा गया था जब फ्रांस एक क्रांतिकारी राष्ट्र माना जाता था और वहां गणतंत्र फिर एक बार सिर उठा रहा था । यह उस समय लिखा गया जब ग्रेट ब्रिटेन और जर्मनी में पूर्ण तादात्म्य और सद्भाव था और दोनों ने मिलकर 1870 में फ्रांस के विरुद्ध युद्ध लड़ा था । लेकिन मान्यवर, फिर भी कहा जा सकता है कि आखिरकार वह विदेशी था इसलिए मैं अपने माननीय मित्र के देश के ही एक इतिहासकार को उद्धृत कर रहा हूँ और मैं सोचता हूँ कि वह उनकी मान्यता पर प्रश्न चिन्ह नहीं लगायेंगे—मैं एच०एच० विल्सन का सन्दर्भ दे रहा हूँ । मेरे मित्र, माननीय वित्त सदस्य ने हमेशा पर्याप्त सहनशीलता का प्रदर्शन किया है; जब भी उन्हें कभी ऐसी कोई बात कही गई है कि इस देश के उत्पादकों और उद्योगों की समाप्ति, विध्वंस और विनाश के पीछे अंग्रेज

लोगों की योजनाबद्ध, निर्मम और विचारित नीति थी, जिसका वित्त सदस्य यहां प्रतिनिधित्व कर रहे हैं । मेरी इच्छा है कि वह मि० विल्सन की बातों पर विशेष ध्यान दें । उन्होंने कहा था :

"यह उस अन्याय का दुखद दृष्टान्त है जो भारत के ऊपर उसको अधीन बनाने वाले देशों ने किया है । यह बात गवाही देते समय कही गयी थी ।"

यह उस संसदीय समिति के सम्मुख दी गयी गवाही से सम्बन्धित है जो तब प्रत्येक 20 वर्ष बाद बैठा करती थी; जिसने आगे कहा था :

"वर्ष 1813 में दी गयी गवाही में कहा गया था कि तब ब्रिटेन में बने वस्त्रों की तुलना में भारतीय सूती और रेशमी वस्त्र 50 से 60 प्रतिशत कम मूल्यों पर बिकने पर भी मुनाफा अर्जित करते थे । इसलिए यह आवश्यक हो गया कि ब्रिटिश उद्योग को बचाने के लिए भारतीय माल के मूल्य में 70 प्रतिशत से 80 प्रतिशत तक कर लगाया जाय या सकारात्मक प्रतिबन्ध लगाये जाएं अगर इस तरह न किया जाता और अगर प्रतिबन्धात्मक करों तथा आज्ञप्तियों का सहारा न लिया जाता तो पैसले और मैनचेस्टर की मिलें शुरू में ही रुक गई होतीं और फिर वाष्पशक्ति प्राप्त होने पर उन्हें दुबारा चालू किया जा सकता था । भारतीय उद्योग के विनाश के बाद ही उनको कायम किया जा सका । यदि भारत आजाद होता तो उसने प्रतिकार किया होता, ब्रिटिश सामानों पर प्रतिबन्धात्मक कर लगाया होता और इस तरह अपने उत्पादक उद्योग को विनाश से बचा लिया होता । यह आत्मरक्षा का अधिकार उसे प्राप्त नहीं था । वह तो विदेशियों की कृपा पर निर्भर था । ब्रिटिश उत्पादों और विदेशी माल को बिना कोई कर चुकाये, भारत में ठूंस दिया गया ।"

यह अच्छा होता अगर माननीय वाणिज्य सदस्य इसे सुनने के लिए अपने स्थान पर होते । मैं चाहता हूँ कि कम से कम माननीय वित्त–सदस्य इस पर ध्यान दें—

"ब्रिटिश उत्पादों को बिना किसी कर के भारत में ठूंस दिया गया और विदेश उत्पादकों ने राजनैतिक हथियार का इस्तेमाल करते हुए उस प्रतियोगी को परास्त और अन्त में समाप्त कर दिया, जिससे वे बराबरी के स्तर पर मुकाबला नहीं कर सकते थे ।"

मान्यवर, यह वहां के इतिहासकार द्वारा प्रस्तुत प्रमाण है जहां के वित्त सदस्य स्वयं रहने वाले हैं । लेकिन मैं और गहराई में जाकर उन मौलिक साक्ष्यों का सन्दर्भ दूंगा जिनके आधार पर उक्त निष्कर्ष निकाला गया है । संसदीय समिति की जांच के दौरान रेकिंग जांन नामक व्यवसायी ने इस बात की पुष्टि की थी कि किस तरह इन प्रतिबन्धात्मक तट करों के कारण भारतीय उत्पादनों के लिए इंग्लैण्ड का बाजार बन्द हो गया था । मैं मि० रेकिंग से पूछे प्रश्नों और उनके उत्तरों को पढ़कर सुनाऊंगा :

"क्या आप बता सकते हैं कि ईस्ट इंडिया हाउस में टुकड़ों में बिकने वाले सामान पर एड वेलोरम शुल्क कितना पड़ता है?"

इसका उत्तर था :

"छींट के कपड़े पर आयात किये जाने पर 100 पौंड पर 3 पौंड 6शिलिंग 8 पेन्स शुल्क पड़ता है और यदि उसे ब्रिटेन में घरेलू कार्यों के उपयोग में लाया जाता है तो 68 पौंड 6 शि॰ 8 पेन्स का अधिभार पड़ता है,यदि उसका ब्रिटेन में ही इस्तेमाल होता है तो उस पर 26 पौं॰ 6 शि॰ 8 पेन्स अतिरिक्त शुल्क पड़ता है । तीसरा वर्ग रंगे हुए सामान का है जिनका इस देश में उपयोग प्रतिबन्धित है, इस पर 100 पौण्ड आयात माल पर 3 पौं॰ 6 शि॰ 8 पेन्स शुल्क पड़ता है, इनका केवल निर्यात हो सकता है ।"

और इसी प्रकार की अन्य बातें कहीं गईं ।

मान्यवर, यह तथ्य अकाट्य है कि इस देश के उद्योगों का गला घोंटने की नीति आदेशानुसार अथवा भूले–चूके, सकारात्मक और नकारात्मक तरीके से बहुत निर्ममता से लागू की गई है, और वर्तमान अव्यवस्था का कोई समाधान तब तक सम्भव नहीं है, जब तक इसको पूर्णतः संशोधित नहीं किया जाता और वास्तविक औद्योगिक पुनर्स्थापना नहीं की जाती । मान्यवर, पिछले वर्ष मैंने इस सदन में योजना पर बोलने का साहस किया था । लेकिन माननीय वित्त–सदस्य ने उस पर गम्भीरता से विचार नहीं किया । उन्होंने 'लाल' और 'रूस' का भय दिखाया और उन्होंने सांको पांजा, मेरा मतलब है ब्रजकुस, को उद्धृत किया और इस तरह अपनी बात समाप्त कर दी । मान्यवर, मेरे सुझाव के साथ पिछले वर्ष वह इस तरह पेश आये । मैं नहीं जानता कि उन्हें उत्तेजित करना मेरे पार्ट में उचित था क्योंकि मैं अच्छी तरह से जानता हूँ कि वे एक विशाल यंत्र या षड्यंत्र के छोटे पुर्जे ही हैं जो पिछले दो सौ सालों से शाश्वत रूप से हर दिन और हर रात, हर सप्ताह हर महीने, हर वर्ष और हर दशक इस देश की कराहती जनता को पीसता ही जा रहा है । एक षड्यंत्र के होते हुए योजना की जगह कहां बचती है? इसलिए अब मैं उन्हें योजना की बाबत और परेशान नहीं करूंगा । लेकिन मैं उनसे पूछना चाहता हूँ कि क्या वह समझते हैं कि यहां की अत्यधिक कर-भार से दबी जनता किसी प्रकार के आर्थिक सुधार हुए बिना अपने आकाओं को अपने खून पसीने की कमाई से कोई अतिरिक्त कर अदा कर सकती है? क्या वे यह नहीं मानते कि आर्थिक पुनरुद्धार हेतु कतिपय प्रयास करना स्वयं उनके स्वार्थ के लिए आवश्यक है? कमोबेश भारत ऐसा देश है जो दुनिया भर से नमी इकट्ठा कर उनको बादल में बदलता है ताकि वे इंग्लैण्ड में बरस सकें, उसकी भूमि को सींच सकें और वहां वालों को इसका फायदा हो सके । यहां की मधुमक्खियां अपने परिश्रम से शहद इकट्ठा करती हैं और उनकी एकत्रित

सम्पदा हजारों मील दूर रहने वाले लोगों के आनन्द के लिए निर्यात कर दी जाती है। मान्यवर, क्या मैं अपने माननीय मित्र से पूछ सकता हूँ कि कोई देश किस तरह से अपने यहां के लगभग 150 करोड़ रु० प्रति वर्ष की निकासी सहन कर सकता है जिसके बड़े हिस्से का कोई प्रत्यक्ष प्रतिलाभ उसे प्राप्त नहीं होता है। गृह–भार, ब्याज-भार, सेवानिवृत्ति-भार, अवकाश पर गये कर्मचारियों का वेतन, समुद्र–पार–भत्ता, नौवहन–भार, भारत स्थित ब्रिटिश कम्पनियों का मुनाफा, उनके द्वारा कई अन्य मदों के आधार पर निर्गत धन के कारण कैसे कोई देश अपना आर्थिक सन्तुलन बनाये रख सकता है? कैसे कोई देश जीवित रह सकता है यदि उससे इनमें से अधिकांश का कोई समतुल्य प्रतिलाभ दिए बिना, इतनी बड़ी धनराशि हर वर्ष छीनी जा रही हो? मैं उन्हें बर्क के भाषण की याद दिलाऊँगा जो उसने इस सम्बन्ध में फॉक्स के विधेयक पर दिया था; इसमें उनकी रुचि हो सकती है। उन्होंने कहा था :

"तातार आक्रमण दुष्टतापूर्ण था, लेकिन भारत की बर्बादी तो हमारे संरक्षण में हुई है। वे इनके शत्रु थे; जबकि हम मित्र हैं। बीस वर्ष बाद भी हमारी विजय आज भी उतना ही रूखापन लिये हुए है जितनी प्रथम दिन थी। स्थानीय आदमी शायद ही जानता हो कि एक अंग्रेज की भूरी खोपड़ी देखने का क्या मतलब होता है।"

हम तो यहां केवल अपने माननीय मित्र सर हेनरी क्रेक का सिर ही देख रहा हैं! माननीय वित्त सदस्य शायद आगे की कुछ पंक्तियों में विशेष रुचि लें। बर्क ने कहा था :

"नौजवान, बल्कि लगभग बच्चे ही बिना किसी सामाजिक सम्बन्ध के और स्थानीय लोगों के साथ बिना किसी सहानुभूति के वहां शासन करते हैं। उनके स्थानीय जनता से वैसे सम्बन्ध हैं मानों वे अभी भी इंग्लैण्ड में रह रहे हैं और वे जनता से उतना ही सम्पर्क रखते हैं जितना एकाएक फायदा उठाने के लिए आवश्यक है; ताकि बाद में वे यहां से दूर जा बसें। वय-जनित लालसा और यौवन के साहस से प्रेरित वे अधिकारी एक के बाद एक लहर की भांति आते–जाते रहते हैं और स्थानीय लोगों की निगाह में शिकार की तलाश में घूमने वाले पक्षियों की भांति अन्तहीन और निराशाजनक परिदृश्य प्रस्तुत करते हैं, जिनकी क्षुधा कभी शान्त नहीं होती है और खाने की बरबादी होती है। अंग्रेज को मिलने वाले मुनाफे का हर रुपया भारतीय की स्थायी हानि है।"

यह एक न्यायप्रिय मित्र की टिप्पणी है जो उसने उस समय की थी जब मैं या वित्त सदस्य पैदा भी नहीं हुए थे। मैं यह नहीं बता सकता कि हमारे पिता या

पितामह भी उस समय पैदा हो चुके थे या नहीं । लेकिन उस समय जो नीति थी वह आज तक चली आ रही है और उसके कारण मैं अंग्रेजों की अनुदारवादिता और जड़ता की अद्‌भुत क्षमता की प्रशंसा करता हूँ— खास तौर पर तब जब कि उनके स्वार्थों का सवाल हो या दूसरों के हितों का गला घोंटना हो । मैं सोचता हूँ कि इसके बाद माननीय वित्त सदस्य की हमसे यह शिकायत नहीं रहेगी यदि इन दृष्टान्तों और घटनाओं के बाद हम समझते हैं कि ऐसा नहीं है कि मुक्त व्यापार की नीति हमारे लिए हानिकारक नहीं है । यह स्पष्ट है कि हमारे देश का हित अपने कच्चे माल से यहीं पक्का माल तैयार करने में है और ऐसा हर प्रस्ताव दुष्टतापूर्ण है जिसमें यहां के कच्चे माल को लन्दन, बर्मिंघम, मैनचेस्टर या लंकाशायर या और कहीं ले जाना हो और फिर पक्के या तैयार वस्तु की तरह वापस लाना हो, ताकि हमारे यहां और बेरोजगारी बढ़े, भुखमरी बढ़े और हमारी हालत पहले से भी और अधिक दयनीय हो जाए । मैं पूरी गम्भीरता के साथ वित्त–सदस्य से पूछता हूँ कि 70 वर्षों से आप इस देश में रेलवे–लाइनों के विस्तार की सक्रिय और सशक्त नीति पर चल रहे हैं— क्या आपको और आपके पूर्वाधिकारियों को ऐसा कभी महसूस ही नहीं हुआ कि रेल और डिब्बे यहां भी बनाये जा सकते हैं? आज भी आप लोकोमोटिव के स्थानीय निर्माण के सुझाव का उपहास करते हैं और ताना मारते हैं । आप शस्त्रों और विस्फोटकों का प्रयोग करते हैं । आपके पास शस्त्रागार हैं । पिछले 150 वर्षों से सरकारी विभागों में विशाल भण्डारागार बनाये गये हैं लेकिन आपको कभी इसका अहसास ही नहीं हुआ कि इस देश में कच्चा माल है जिनकी सहायता से देशवासियों को लाभ पहुँचाते हुए यहीं उन्हें विनिमय योग्य वस्तुओं में बदला जा सकता है । समय–समय पर आपने कपास समिति, रेशम समिति, चाय समिति इत्यादि का गठन किया है । आप इन सब कच्चे मालों से मुनाफा चाहते हैं लेकिन आपने कभी भी इस देश के किसी एक उद्योग के निर्माण में प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए कोई भी वास्तविक समिति नहीं बनाई । क्यों? इसका क्या कारण था? और आप अपने देश में क्या करते रहे हैं? मैं वहां पिछले साढ़े चार वर्षों में उद्योगों के विकास के लिए स्थापित डेढ़ सौ समितियों का नाम बता सकता हूँ । लेकिन जहां तक हमारे यहां की बात है, 250 साल हो रहे हैं और आपने इस समस्या के अध्ययन के लिए एक भी समिति नहीं बनाई है । इससे स्पष्ट है कि आपका स्वार्थ यहां की जनता के शोषण तक सीमित है । इससे जाहिर होता है कि आप चाहते हैं कि हम आपके आराम के लिए गुलामों की तरह रहें और अपने को गड्ढे और कूड़ेदान में फेंक दें । वित्त सदस्य मुझे ऐसा करने के लिए क्षमा करेंगे कि मेरा विश्वास है कि उनकी अन्तरात्मा अभी तक मरी नहीं है । इसके कारण हैं । कट्टरपंथी अर्थशास्त्र वस्तुतः अन्तरात्मा की आवश्यकता नहीं मानता; उसकी

मान्यता आर्थिक व्यक्ति की यान्त्रिकता पर अवलम्बित है जो केवल लालसा और स्वार्थ का मिश्रण है । मान्यवर, कट्टरपंथी अर्थशास्त्र व्यक्ति में इन दो के अतिरिक्त किसी अन्य तत्व को अस्वीकार करता है । यदि ऐसा है, तो मैं माननीय वित्त सदस्य से अनुरोध करूँगा कि कट्टरपंथी अर्थशास्त्री होने के बावजूद वे अपने पूर्वाग्रहों से ऊपर उठें और इतिहास के तथ्यों पर विचार करें । मैं यह मानने को तैयार हूँ कि कट्टरवाद और अनुदारवाद अन्धे होते हैं और वे ऐतिहासिक तथ्यों की ओर ध्यान नहीं देते । उनका सूत्र है "यह मेरा विश्वास है, यह मेरा पन्थ है, यह मेरी आस्था है और मैं इस पर दृढ़ हूँ ।" मैं माननीय वित्त सदस्य से इससे भी अच्छे व्यवहार की अपेक्षा करता हूँ । इसलिए मुझे आशा है कि वह इस देश में अब तक प्रचलित कार्यकलापों को विश्लेषण करेंगे और यह समझने की कृपा करेंगे कि हमारे प्रति उनका यह कर्तव्य है कि वह एक ऐसी नीति अपनायें जो अभी तक लागू नीतिं से स्पष्ट रूप से भिन्न हो । जब 1859 और उसके आगे के वर्षों में हमारे यहाँ 5 प्रतिशत का तट–कर लगाया गया था तो ब्रितानी संसद में और ब्रिटेन में उसके विरुद्ध नियमित अभियान चलाया गया, क्योंकि यह संदेह किया गया था कि इससे ब्रिटिश वस्त्रों के मुक्त प्रवेश में बाधा पहुँचेगी ।

जैसा स्वतंत्र दल के माननीय नेता को याद होगा, अभी पिछले दिन जब इस सदन में वस्त्र उद्योग को संरक्षण प्रदान करने का प्रश्न प्रस्तुत हुआ था, सरकार ने इसे ब्रिटिश वस्तुओं की वरीयता बनाये रखने की शर्त पर ही स्वीकार किया था और विधायिका को यह विष इसलिए पीना पड़ा क्योंकि अन्यथा यह मामूली सी सुविधा भी छीन ली जाती । इसी तरह जब इस्पात को संरक्षण देने का प्रस्ताव आया तो भी सरकार ने ब्रिटिश इस्पात को वरीयता देने की शर्त के साथ ही इसे स्वीकार किया । आपको ध्यान रखना चाहिए कि दोनों मसलों पर समान शर्तों का सम्बन्ध नहीं था । यह ओटावा समझौते का अंग नहीं था । यह एक पक्षीय मामला था । अगर आप संकटकालीन स्थितियों में भी स्थानीय उद्योगों की प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सुरक्षा का कोई प्रयास करना चाहते हैं, तो भी आपको ग्रेट ब्रिटेन को विशेषाधिकार प्रदान करना ही होगा, क्योंकि वह आपका राजनैतिक स्वामी है । आज तक यह नीति जारी है । यह स्वतंत्र इच्छा या पारस्परिक सहमति की बात नहीं है, और यह इंग्लैण्ड द्वारा अपने पक्ष में हमारे ऊपर थोपी गयी वरीयता है, क्योंकि पिस्तौल हाथ में लेकर वह आपसे कहते हैं, "हम प्रभुता सम्पन्न हैं । अगर तुम हमारा कहा नहीं करोगे तो तुम्हें कुछ भी नहीं मिलेगा ।" मैं कहता हूँ कि आपके दिन गुजर गये और प्रतिशोध की देवी आपसे आर्थिक क्षेत्र में भी हिसाब मांगेगी । मान्यवर, मैं माननीय वित्त सदस्य से केवल एक अनुरोध करना चाहता हूँ । मुझे संरक्षण से कोई विशेष

अनुराग नहीं है । वह यह जानते हैं । मुझे अप्रत्यक्ष करों से भी कोई अधिक अनुराग नहीं है । लेकिन मैं भारतीय उद्योगों को नष्ट नहीं होने दूंगा । मैं बिना किसी श्रेष्ठतर विकल्प के संरक्षण के विमूल्यीकरण या समापन को स्वीकार नहीं करूंगा । मैं भारतीय उद्योगों को नुकसान पहुँचाने वाली तिरस्कृत आर्थिक अनुदारता की झूठी जटिलताओं में फंसने वाला नहीं हूँ । यदि भारतीय उद्योग के विनाश और संरक्षण के बीच कुछ चुनना है तो मैं संरक्षण को बेहिचक स्वीकार करूंगा । मैं राजकीय नियंत्रण, प्रोत्साहन और राजकीय दिशा-निर्देशन की नीति का गम्भीर समर्थक हूँ । मैं केवल उन महत्वपूर्ण उद्योगों के समाजीकरण का पक्षपाती हूँ जो हमारे देश की वर्तमान स्थिति में राज्य के द्वारा प्रत्यक्षतः प्रतिबन्धित हो सकते हैं । लेकिन जब तक आप ऐसी नीति लागू नहीं करते तब तक आपको संरक्षणवादी नीति को प्रभावकारी ढंग से अपनाना ही होगा । मैं सोचता हूँ कि मुक्त व्यापार और उसके धोखेबाज चरित्र पर प्रकाश डालने वाले सर गेविन जोन्स के ताजा भाषण को मेरे माननीय मित्र ने बहुत रुचि से, या श्रीप्रकाश के शब्दों में 'उमंग के साथ' सुना होगा । उन्होंने वाकई एक स्फूर्तिदायक भाषण दिया है, और यदि उन्होंने इसे नहीं पढ़ा है तो मैं अनुरोध करूंगा कि अब वे इसे अवश्य पढ़ लें । उस अकेले भाषण में ऐसी जगहों पर पेश होने वाली टनों सामग्री से कहीं अधिक सार है । मुझे आशा है कि यूरोपीय सदस्यगण इससे कुछ अवश्य सीखेंगे । आपको इस देश में वही नीति अपनानी चाहिए, जैसी आपने रेल निर्माण के सिलसिले में अपनायी थी । आपको निश्चित प्रकार के उद्योगों के लिए ब्याज की एक न्यूनतम दर अदा करने की गारंटी देनी चाहिए । एक औद्यौगिक सर्वेक्षण करवाइये । विभिन्न स्थानों के उपयुक्त उद्योगों को चुनिये । उद्योगों का प्रसार देश के एक कोने से दूसरे कोने तक होना चाहिए । श्रेष्ठतम योजना श्रेष्ठतम विशेषज्ञों द्वारा बनायी जानी चाहिए; ऐसे विशेषज्ञों द्वारा जिन्हें माननीय वित्त सदस्य भी विशेषज्ञ मानते हैं, उन्हें योजनायें बनाने दीजिए । इसकी सूचना दीजिए कि अमुक स्थान पर अमुक प्रकार का उद्योग लगाना लाभप्रद हो सकता है । सरकार उन उद्योगों के लिए लोगों को आमंत्रित करे और घोषित करे कि वह साढ़े तीन या 4 या 5 प्रतिशत की न्यूनतम ब्याज दर अदा करने की गारंटी करती है । यह शर्त रखिए कि रेलवे में चालू व्यवस्था के अनुकूल सरकार को इन उद्योगों को 20 या 30 वर्ष बाद अधिग्रहण करने का अधिकार होगा । निदेशक मण्डल में शासन और श्रमिकों का प्रतिनिधित्व होना चाहिए । शासन, श्रम और पूंजी में वास्तविक सहयोग होना चाहिए । मैं आपको आगाह करना चाहता हूँ कि यदि आप अपनी रचनात्मक नीतियों द्वारा इस देश में बड़े पैमाने पर सम्पत्ति का सृजन नहीं कर पायेंगे तो आज आगे कोई कर भी नहीं वसूल पायेंगे क्योंकि गाय का दूध सूख जाने पर आप केवल रक्त निकाल सकते हैं । इस देश की कृषि और इसके

उपयोग के बीच संतुलन स्थापित करने और उत्पादन बढ़ाने के लिए आपको औद्योगीकरण, यन्त्रीकरण, सहकारिता और वैज्ञानिक प्रबंधन की सक्रिय नीति लागू करनी होगी । यदि यह नहीं किया जा सकेगा तो मेरे विचार से संतुलित बजट पेश नहीं किया जा सकेगा । यह केवल डकैतों और लुटेरों का बजट ही होगा । ऐसे लोगों का बजट रहेगा, जो उन लोगों की इच्छाओं का तनिक भी ख्याल नहीं रखते, जिनको मनमाने ढंग से चूसते हैं । यह जनता का बजट केवल उसी स्थिति में हो सकता है, जब आप जनता में वह अद्‌भुत आर्थिक क्षमता उत्पन्न कर सकेंगे, जिसका आपने भाषण में जिक्र किया है ।

मान्यवर, पिछले दिनों मेरे माननीय मित्र ने भारत की आर्थिक स्थिति पर ब्रिटिश शासन के प्रभाव की चर्चा की थी । मैं सोचता हूँ कि मैंने उस विषय पर पर्याप्त बातें कह दी हैं और मुझे कुछ और नहीं कहना चाहिए । मुझे आशा है कि उन्हें भी पर्याप्त पीड़ा पहुंची होगी, और उन्हें हमारे साथ थोड़ी-बहुत सहानुभूति होगी क्योंकि हम कई दशकों से— लगभग दो शताब्दियों से — दीर्घसूत्री शोषण की अमानवीय नीति के शिकार हैं । इसने हमारी हड्डियों तक को नहीं बख्शा है । हम इन्हें शाप नहीं देंगे । हम प्राच्य देशीय हैं लेकिन यह तो कहा ही जायेगा कि आप के पास अवसर था लेकिन आपने उसे गँवा दिया । नैतिक उच्चता से ही देश की उन्नति होती है । हम पूरब के लोग मानते हैं कि व्यक्ति केवल पेट के लिए ही नहीं जीवित रहता है । लेकिन आप रोटी मात्र के लिए उस उच्च आदर्श का परित्याग क्यों करते हैं? विश्व प्रगतिशील है, विज्ञान प्रगतिशील है । प्रख्यात अर्थशास्त्रियों ने यह सिद्धांत जलाकर नष्ट कर दिया है कि जनसंख्या की वृद्धि ज्यामितिक उन्नयन की भांति होती है जब कि सम्पत्ति की वृद्धि गणितीय उन्नयन के समान होती है । यह तर्कपूर्ण, वैज्ञानिक योजना का युग है । क्या अंग्रेजों के लिए पूर्वाग्रह–विहीन बन सकना असम्भव है? क्या उनके लिए क्षुद्रता और अहंकार से ऊपर उठना असम्भव है? यहां हमारे सम्मुख आर्थिक मसीहा के रूप में माननीय वित्त सदस्य हैं । क्या उनका कट्टरपन्थी अर्थशास्त्र उन्हें सत्य का साक्षात्कार कराने और स्थिति संभालने में सहायक हो सकता है? इन कट्टरपन्थी अर्थशास्त्रियों को अपने से श्रेष्ठतर उस उद्धारक से सबक लेना चाहिए जिन्होंने विश्व हित हेतु संघर्ष किया और दूसरों की रक्षा के लिए अपना बलिदान कर दिया । यदि आपके नियंता आपको इस देश के हित के विपरीत कुछ करने के लिए कहते भी हैं तो भी क्या आप उस श्रेष्ठतर उद्धारक का अनुकरण करते हुए साहस के साथ वह नहीं करेंगे जो इस देश के हित में हो?

मान्यवर, मैं कठोर आक्रमण करने की कला से अपरिचित हूँ । मैं एक

अहिंसक जीव हूँ और लड़ना और गोली दागना नहीं जानता । मैं कुछ शब्दों के साथ ही अपनी बात समाप्त करूंगा । मेरे मस्तिष्क में बहुत बातें आ रही हैं लेकिन मैं अपना यह कर्तव्य मानता हूँ कि अधिक समय न लूँ । माननीय वित्त सदस्य ने अपने भाषण के अन्त में बैरोमीटर और थर्मामीटर का जिक्र किया है । बैरोमीटर की बात तब की जाती है जब समुद्र में तूफान उठता है और थर्मामीटर की बात तब होती है जब शरीर रोगग्रस्त हो जाता है; जब स्थिति सामान्य से अधिक खराब हो जाती है और रोगी नार्मल नहीं रहता ।

लेफ्टि०कर्नल सर हेनरी गिडनी – उच्च रक्तचाप?

पंडित गोविन्द पल्लभ पन्त – मान्यवर, मैं भारत को पुराना स्वास्थ्य वापस दिलवाना चाहता हूँ । यहां स्वतंत्र–व्यापार जैसी कोई बात नहीं है । हमारे लिए स्वतंत्र व्यापार आपात्कालीन व्यापार से भिन्न नहीं है । हमारे देश का निर्यात सोने के निर्यात के समकक्ष ही है । एकाधिकार प्राप्त क्षेत्रों की वस्तुओं के अलावा हम कुछ अन्य वस्तुओं का भी निर्यात करते हैं क्योंकि हमारे पास इसके अलावा कोई और चारा ही नहीं है । किसान भूखा रहता है लेकिन उसे अपनी उदार सरकार का ऋण चुकाने के लिए अपना अनाज बेचना ही पड़ता है । मान्यवर, उसे ऐसा करना ही पड़ता है और अनाज से हाथ धोना पड़ता है । यद्यपि इस कारण उसे भुखमरी का सामना करना पड़ता है । निर्यात और मुक्त व्यापार से इस देश के आर्थिक उत्थान की सम्भावना नहीं है । जब देशवासी भोजन और कपड़े के लिए तरसते हों, उस समय खाद्य पदार्थों और वस्त्रों का निर्यात वाकई आश्चर्यजनक है । यदि आप इस देश को वाकई समृद्ध बनाना चाहते हैं तो आपको यहां की आन्तरिक पुनर्रचना पर जोर देना होगा । मान्यवर, क्या आपको कभी इसका आभास हुआ है कि हमारे यहां विश्व की 1/5 आबादी है फिर भी संसार की उपभोक्ता वस्तुओं में हमारा इतना हिस्सा नहीं है? संयुक्त राज्य अमेरिका में हमसे चौगुनी कपास पैदा होती हैं और हमसे कई गुना अधिक गेहूँ का उत्पादन होता है, फिर भी वह अपने उत्पादन के दसवें हिस्से से अधिक का निर्यात नहीं करता । वहां की जनसंख्या हमारी जनसंख्या के एक तिहाई से भी कम है लेकिन जितना हम पैदा करते हैं वहां उससे सौ गुना अधिक खपत होती है क्योंकि उन लोगों का जीवन स्तर औचित्यपूर्ण है । इसलिए हमें इस देश में कच्चे माल के उत्पादकों और निर्माताओं को हाल की वैज्ञानिक खोजों के आधुनिकतम उपयोग से अवगत कराने की आवश्यकता है ताकि सम्पत्ति का सृजन हो सके, ताकि व्यक्तियों की आवश्यकतायें पूरी हो सकें और दुर्भाग्य से पीड़ित जनता का बोझ कम हो सके, ताकि इस देश को साम्राज्यवाद के लौहपाश से और बलात् कब्जा करने वाली सेना से मुक्ति मिले; ताकि हम लोग भद्रतापूर्वक अपना

जीवन जी सकें और हम लोग बैरोमीटर तथा थर्मामीटर की जगह स्वस्थ और सामान्य भारत के बारे में सोच सकें, जिसे पुनरुत्थान की क्षमता बहुत पहले से प्राप्त थी, और हमें आश्वस्त किया गया है कि वह पुनरुत्थान की स्थिति में पहुंचने में समर्थ है, और उस तक वर्तमान में पहुंचने की उसमें योग्यता है । (बड़ी देर तक तालियों की गड़गड़ाहट)

●

वित्तीय अनौचित्य

मान्यवर, मै अपना संशोधन प्रस्तुत कर रहा हूँ :

"कि 'आय–कर' की पूरक अनुदान की मांग, जो 40,000 रु० से अधिक न हो, में 100 रु० कम कर दिया जाये ।"

मान्यवर, सदन के सम्मुख चर्चित प्रस्ताव भारत-सरकार की स्वच्छन्द, अधिनायकवादी और असंवैधानिक कार्य–प्रणाली का एक अतिरिक्त उदाहरण है । मैं बताऊँगा कि मेरा क्या आशय है । पूरक प्राक्कलन सम्बन्धी नियमों के अधीन सरकार के वित्तीय प्रस्तावों को सदन के सम्मुख प्रस्तुत करने के पहले स्थायी वित्त समिति के सम्मुख रखना चाहिए । यह प्रस्ताव स्थायी समिति के सम्मुख कभी नहीं रखा गया । चूंकि पूरक मांग सम्बन्धी प्रक्रिया को नहीं अपनाया गया है । इसलिए मैं इसका विरोध करता हूँ, और मेरी समझ में नहीं आता कि यह किस भांति व्यवस्था के विपरीत है? मुझे जो कहना है, मैं उसकी सीमा को जानता हूँ । मैंने वस्तुतः पूरे प्रस्ताव को अस्वीकार करने की मांग पेश की होती । लेकिन मैं ऐसा इसलिए नहीं कर रहा हूँ क्योंकि मैं जानता हूँ कि इस मांग की धनराशि का बहुत बड़ा भाग पहले ही खर्च हो चुका है । इसलिए मैंने केवल 100 रुपये की कटौती का प्रस्ताव किया है ।

इस अनुदान से उठने वाला मुद्दा असाधारण महत्व का है । इससे इस सदन के मान्य विशेषाधिकारों का हनन होता है । सरकार इस सदन के साथ बहुत असंवैधानिक और मनमाना व्यवहार करती रही है । पिछले मामलों में उन्होंने प्रतिनिध्यात्मक तथा संवैधानिक शासन के सिद्धांतों का उल्लंघन किया था, लेकिन इस मामले में तो उन्होंने इस सदन द्वारा निर्मित उन नियमों तथा निर्णयों का भी उल्लंघन किया है जिसे सरकार और लेखा महानिदेशक द्वारा स्वीकृत किया जा चुका हैं । आज अनुपूरक मांगों के रूप में इस सदन के सम्मुख 34 प्रस्ताव हैं और उनकी

सदन में भारत सरकार की ओर से सरकारी सदस्य श्री के०संजीवा राव द्वारा पेश किये गये इस प्रस्ताव   कि गवर्नर जनरल इन काउंसिल को 31 मार्च, 1936 को आयकर भरने के लिए अधिकतम 40,000 रु० की अनुपूरक धनराशि स्वीकृत किये जाने की मांग में कटौती की जाय, के समर्थन में 25 मार्च, 1936 को लेजिस्लेटिव असेम्बली में पंत जी द्वारा दिया गया भाषण ।

समग्र राशि 1 करोड़ 12 लाख से अधिक है । इन 34 प्रस्तावों में से एक तिहाई से भी कम प्रस्तावों को स्थायी वित्त समिति के सम्मुख प्रस्तुत किया गया है । यह स्पष्ट है कि सदन स्वयं इस मांगों के जटिल विस्तार का अध्ययन नहीं कर सकता । स्थायी वित्त समिति के गठन के समय सर मैल्काम हेली ने संवैधानिक तर्कों के अतिरिक्त सामान्य प्रकृति के तर्क भी दिये थे । यदि इस सदन को शासन की फिजूल-खर्ची पर नियंत्रण रखना है और अपने को व्यय के प्रस्तावों सम्बन्धी प्रशासनिक जिम्मेदारियों से परिचित रखना है तो यह केवल शासन द्वारा अभीष्ट प्रस्तावों को स्थायी समिति के सम्मुख रखने से ही सम्भव हो सकता है । इस विशेष मामले में एक नयी सेवा के गठन का प्रस्ताव है । इस पर साधारण प्रशासनिक ढंग से धन व्यय नहीं किया जा सकता । इसमें निश्चित उद्देश्यों के लिए विशेषज्ञों की नियुक्ति का प्रस्ताव है और विभाग की सामान्य आवश्यकताओं से इसका सम्बन्ध नहीं है । इस प्रकार का मामला नयी सेवा की कठोर परिभाषा के अन्तर्गत आता है और इसे स्थायी वित्त समिति के सम्मुख प्रस्तुत करना शासन के लिए अनिवार्य था । अनेक अनुपूरक मांगों की समग्र राशि बढ़कर 112 लाख रुपये से भी अधिक हो गयी है । यह अपने आप में वित्त प्रबन्धन की बहुत ही दोषपूर्ण प्रक्रिया है । माननीय वित्त सदस्य ने पिछले वर्ष स्वीकार किया था कि अनुपूरक मांगों को बिरले मामलों में पेश किया जाना चाहिए और उन्हें असाधारण स्थितियों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए और यह भी स्पष्ट है कि ऐसा क्यों होना चाहिए । यदि वर्ष भर का व्यय निर्धारित करने के बाद सवा करोड़ रुपये का अतिरिक्त प्रस्ताव सदन में आता है तो इससे बजट का सन्तुलन बिगड़ जाता है । दूसरी परेशानी यह है कि सदन उस पर तर्कसंगत ढंग से विचार नहीं कर सकता । ये अनुपूरक मागें सम्भवत: निर्धारित से अधिक व्यय की मांगे ही हैं । वे वर्ष के अन्त में हमारे सामने रखी गयी हैं । निर्धारित धन तो पहले ही खर्च हो चुका है लेकिन अतिरिक्त धन की आवश्यकता से उत्पन्न परेशानी से बचने के लिए सरकार ने उन्हें सदन की औपचारिक संस्तुति के लिए प्रस्तुत करना अधिक सुविधाजनक समझा है । इनमें से बहुत मांगें सितम्बर में ही संसद में प्रस्तुत की जा सकती थीं, यहां तक कि यह प्रस्ताव भी इस सदन में रखा जाना चाहिए था, और मेरे विचार से ऐसे मामलों में शासन को सदन से परामर्श लेना चाहिए था । सरकार को अपना प्रस्ताव सदन में रखना चाहिए था; और उसके सिद्धांतों से सहमत होने पर भी गैर सरकरी तमाम प्रश्नों पर अपने सुझाव दे सकते थे, मसलन जांच की प्रक्रिया विशेषज्ञों को सौंपे जाने वाले विषयों का औचित्य और आय-कर विभाग से सम्बन्धित तमाम प्रश्नों को सुलझाने के लाभप्रद तरीकों के बारे में । लेकिन सरकार ने इसे न केवल सदन के सामने प्रस्तुत किया, बल्कि इसे स्थायी वित्त समिति के सामने भी नहीं रखा । स्थायी वित्त समिति की

नियमावली में स्पष्ट लिखा है कि :

"इस समिति का निम्नलिखित कार्य होगा :
(क) भारत सरकार के समस्त अधीनस्थ विभागों के समस्त मतदेय व्यय प्रस्तावों की समीक्षा करना, एकमुश्त अनुदानों की राशि का आवंटन करना, मितव्ययिता और छंटनी का सुझाव देना और सामान्य रूप से वित्त विभाग द्वारा सौंपे गये विषयों पर सुझाव देकर विभाग की सहायता करना ।"

यह विषय सदन में प्रस्ताव के रूप में आया । मूल रूप से प्रस्ताव में कहा गया था :

"समिति का कार्य होगा कि वह (क) भारत सरकार के समस्त विभागों के मतदेय व्यय-प्रस्तावों की समीक्षा करे ।"

इसके बाद अन्य कार्य किये जायेंगे । जैसा मैंने पहले कहा था, माननीय वित्त सदस्य वित्त समिति के निर्णयों के प्रति उतने ही उदार रहते हैं जितने इस सदन या किसी दूसरी संस्था के निर्णयों के प्रति । जब कभी वित्त समिति ने उनसे भिन्न मत रखने की दृढ़ता या धृष्टता का प्रदर्शन किया, तो वह अपने मूल प्रस्ताव पर अड़े रहे । स्पष्ट नियम होते हुए कि वित्त समिति एकमुश्त अनुदानों की राशि को आवंटित करने की स्वीकृति देगी, उन्होंने इसके विरुद्ध आवाज करते हुए एकमुश्त अनुदानों के आवंटन का कोई भी प्रस्ताव समिति के सामने नहीं रखा । फिर भी इस समय हम अनुपूरक मांगों के लिए अधिक चिन्तित हैं ।

मान्यवर, अतिरिक्त अनुदानों को स्थायी समिति में प्रस्तुत किये जाने का प्रश्न स्थायी समिति के अतिरिक्त आडीटर-जनरल द्वारा भी विचारित हुआ था, और यह स्पष्ट रूप से तय किया गया था कि अनुपूरक अनुदानों की जिन मांगों के लिए इस सदन की स्वीकृति अनिवार्य हो उन्हें पहले वित्त समिति के सामने रखा जायेगा । निर्णय को मैं पढ़कर सुनाता हूँ :

"समिति से यह सलाह भी मांगी गयी थी कि 'नयी' शब्द की क्या व्याख्या की जाय । वित्त समिति का मत था कि यदि अतिरिक्त व्यय परम्परागत है और व्यय पूर्णतया उसी मद के अन्तर्गत है जिसे सदन ने स्वीकृत किया है, तो केवल उस सेवा के अतिरिक्त व्यय की संस्तुति प्राप्त करना आवश्यक न समझा जाये । यह नियम निश्चिततः वहीं लागू होगा, जहां व्यय, भारत सरकार के पुनर्विनियोजन अधिकार के अन्तर्गत है और यदि सदन से अनुपूरक मांग पर मत

प्राप्त करने की स्थिति उत्पन्न होगी, तो इसे समिति को सन्दर्भित किया जायेगा ।"

मैं माननीय सदस्यों से अन्तिम वाक्य पर ध्यान देने का अनुरोध कर रहा हूँ । इसके बाद यह पैरा आता है :

"समिति से पूछा गया कि क्या वह नये व्ययों की यह व्याख्या स्वीकार करेगी? समिति ने वित्त विभाग के इन निर्देशक सिद्धांतों की पुष्टि की और विभाग द्वारा नये व्यय की व्याख्या को स्वीकार कर लिया ।"

सर कावसजी जहाँगीर – इसकी तिथि क्या है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – यह 1932 में प्रकाशित स्थायी वित्त समिति के प्रकार्य और प्रक्रिया सम्बन्धी पुस्तिका में है, जिसे जब हम वित्त समिति के सदस्य नियुक्त हुए थे, हमें पथ-प्रदर्शन के लिए दिया गया था । यह स्पष्ट है कि इसे शासन, आडीटर जनरल और समिति द्वारा स्वीकार किया गया था और यह अभी भी मान्य है । इस प्रकार स्पष्ट आश्वासन दिया गया था कि अनुपूरक मांगों पर सदन का मत प्राप्त करने हेतु प्रस्तुत सभी प्रस्तावों को स्थायी वित्त समिति के सम्मुख रखा जायेगा । इस सदन की कार्य-संचालन की स्थायी नियमावली के नियम सं० 50 में कहा गया है कि नयी सेवाओं सम्बन्धित सभी प्रस्ताव इस सदन में रखे जायेंगे । इसके अनुसार भी इस प्रश्न को इस सदन में आना था और इस तरह इसे स्थायी वित्त समिति के सामने भी आना चाहिए था । मेरी माननीय वित्त सदस्य से सहानुभूति है । वह स्थायी वित्त समिति की राय से सहमत होने को तैयार नहीं हो पाते । वह शायद सोचते हैं कि समिति में बहुमत आलोचकों का है । वह शायद यह सोंचते हैं कि ऐसी समिति के सामने प्रस्ताव रखना सिर्फ समय नष्ट करना है, जो उनके प्रस्तावों को आंख मूंद कर बिना किसी भेदभाव के स्वीकृत नहीं करेगी । मैं पिछले वर्षों में स्थायी समिति की बैठकों की संख्या का तुलनात्मक वक्तव्य नहीं दूंगा, और न ही मैं यह कहूंगा कि माननीय वित्त सदस्य को समय की बचत का वाकई बड़ा ध्यान है, या हमारे अन्दर लोक दायित्व की भावना नहीं है, और यह सिर्फ सार्वजनिक धन तथा उनके महत्वपूर्ण समय का दुरुपयोग है । मैं उनके इरादों और तर्कों को समझ सकता हूँ लेकिन मैं चाहता हूँ कि वह सदन से निष्कपट व्यवहार करें । इस हेतु वित्त सचिव को इस आशय का प्रस्ताव पेश करना या आज्ञप्ति जारी करनी चाहिए कि वित्त समिति की अब कोई आवश्यकता नहीं रही है और माननीय वित्त सदस्य बिना और किसी की सहायता और असुविधा के स्वयं इस देश की वित्त

व्यवस्था के सारे मामलों को निपटा सकते हैं और इस दिखावटीपन और बहाने की अब कोई आवश्यकता नहीं रही है । मैं ऐसे दृष्टिकोण को समझ सकता हूँ लेकिन जब तक यह निर्णय कायम है और नियमों में परिवर्तन नहीं किया जाता, तब तक वित्त विभाग द्वारा वित्त समिति की पूर्ण अवहेलना करना अनियमित होने के अलावा असंवैधानिक भी है । वस्तुतः वित्त समिति वित्त विभाग के प्रति अत्यधिक उदार रही है । यहां तक कि इस क्वेटा मांग के मामले में भी, हालांकि यह काफी सन्देहजनक मामला था, फिर भी जब हमें मालूम हुआ कि धन खर्च किया जा चुका है, तो हमने यह माना कि हम प्रश्न के सैद्धांतिक नहीं बल्कि व्यावहारिक पक्ष से सम्बन्धित हैं, और चूंकि धन खर्च हो ही चुका है, इसलिये हमने मांग को निरस्त नहीं किया और मात्र इस टिप्पणी से अपने को संतुष्ट कर लिया कि यह व्यय राजस्व से नहीं, बल्कि पूंजीगत भारित बजट से होना चाहिए था । उस सिद्धान्त के प्रतिपालन के अलावा हमने सोचा कि चाहे-अनचाहे हमें यह सहन करना ही होगा । इसलिए जब औपचारिक और प्रतिकारात्मक प्रकार के विरोध प्रदर्शन के अवसर आयें हैं हमने सामान्यतः अपने पर नियंत्रण रखा है, चूंकि हमने सोचा कि यह विरोध का उचित अवसर नहीं है और हमने केवल सदन में इसके वित्तीय-इतर या राजनैतिक पहलुओं पर प्रकाश डाला । मुझे आशा है कि माननीय वित्त- सदस्य में यह स्वीकार करने की सदाशयता अवश्य होगी कि अपनी ओर से हम लोग भी अपने सीमित समय के सदुपयोग के लिये इच्छुक रहे हैं । लेकिन मैं उनसे अनुरोध करूंगा कि यदि वह यह नियम या कार्य-प्रणाली बदलना चाहते हैं तो उन्हें ईमानदारी के साथ इस आशय का प्रस्ताव प्रस्तुत करना चाहिए । यह सुझाव ऐसा नहीं है कि इस सदन के किसी विशेष पक्ष को ही प्रभावित करे । मि० जेम्स यूरोपीय पक्ष के प्रतिनिधि हैं । कतिपय अन्य भद्रगण, अन्य समूहों का प्रतिनिधित्व करते हैं, और इस सदन के प्रत्येक पक्ष का स्थायी समिति में प्रतिनिधित्व है । यह सदन का दर्पण है, इसका स्वरूप छोटा अवश्य है लेकिन फिर भी यह सदन का सही दर्पण है । मैं इस सदन से सीधा प्रश्न पूछना चाहता हूँ कि क्या उसकी इच्छा है कि शासन वित्त समिति की अवहेलना करे और माननीय वित्त सदस्य इस सदन के मान्य सिद्धांतों तथा निर्णयों के विरुद्ध आचरण कर अपनी सहज साहसिकता के साथ वैसा ही व्यवहार होता रहे जैसा वह आचरण कर अपनी सहज साहसिकता के साथ अपनी शूरवीरता दिखाते रहे और वित्त समिति के साथ वैसा ही व्यवहार होता रहे जैसा वह अब तक करते रहे हैं? यह सीधा सा प्रश्न इस सदन के सम्मुख है । किसी प्रस्ताव विशेष की गुणवत्ता से मुझे कुछ लेना देना नहीं है । यह सहज सम्भव था कि वित्त समिति ने इसे स्वीकृत किया होता और यह भी सम्भव था कि समिति ने इस पर कतिपय उपयोगी सुझाव दिये होते । जब हमने प्रस्तावों को स्वीकार भी किया है,

तब भी हमने प्रस्तावों के विवरण सम्बन्धी कतिपय सुझाव भी दिये हैं । यह सम्भव था कि हमने इस प्रसंग पर कतिपय ऐसे सुझाव दिये होते जो इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर विचार करने वाले विशेषज्ञों के लिए उपयोगी होते । लेकिन इस समय तो इस सदन के सम्मुख सीधा प्रश्न यह है कि वित्त विभाग की अनियमित और संवैधानिक कार्यप्रणाली और प्रक्रिया को देखते हुए क्या यह सदन अपनी ही एक समिति द्वारा बाद में पेश किये जाने वाले प्रस्तावों के परीक्षण के अधिकार और स्वयं अपनी स्थिति की एकमत से रक्षा नहीं करेगा?

●

वर्ष 1937 के चुनाव हेतु निर्वाचन-क्षेत्रों का परिसीमन

मान्यवर, मैं प्रस्ताव करता हूँ :

"कि एसेम्बली द्वारा नियुक्त भारतीय परिसीमन समिति की संस्तुतियों की परीक्षा करने वाली समिति की रिपोर्ट को स्वीकार किया जाये ।"

मान्यवर, मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि सरकार ने पहले ही इस रिपोर्ट के सारांश को तार द्वारा लन्दन भेज दिया है । मान्यवर, मैं एक कृतज्ञता-भाव के साथ ही यह प्रस्ताव रख रहा हूँ । मैं इस तथ्य से अनभिज्ञ नहीं हूँ कि इस समिति की नियुक्ति के बाद ही इस प्रस्ताव की विषय-वस्तु से सम्बन्धित काउन्सिल (आफ मिनिस्टर्स) में रखे गये ड्राफ्ट आदेशों को संसद में प्रस्तुत कर दिया गया था । फिर भी मैं इस समिति की उपलब्धियों से सन्तुष्ट हूँ । यह इस सदन द्वारा निर्मित विशालतम समितियों में से एक थी । समिति के सदस्यों की संख्या लगभग 20 थी । देश और इस सदन में प्राप्त सभी विचारधाराओं को समिति में स्थान मिला था । इन समिति के विचारार्थ प्रस्तुत प्रश्न जटिल प्रकृति के थे और कतिपय मुद्दों पर हितों के बिलगाव या टकराव की बात भी सम्भव थी । इस सबके बावजूद समिति ने लगभग सर्वसम्मत प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है और यह कोई सामान्य उपलब्धि नहीं है । यह स्पष्टतः इस बात को प्रमाणित करता है कि इस सदन के सदस्य पूर्वाग्रहों और भावावेशों से ऊपर उठ सकते हैं, आदान-प्रदान की वास्तविक और उदात्त भावना से प्रेरित होकर कार्य कर सकते हैं, अपने मतभेदों का उचित निराकरण कर सकते हैं और यह देश के भविष्य के लिए एक शुभ लक्षण है । इन संस्तुतियों की नियति की चिन्ता किये बगैर मैं समिति के परिश्रम की प्रशंसा करता हूँ और यदि इसे अनुचित न माना जाये तो मैं समिति के प्रत्येक सदस्य को हार्दिक धन्यवाद देना चाहता हूँ ।

मान्यवर, मुझे विश्वास है कि इस तथ्य के बावजूद कि हाउस आफ कामन्स के सम्मुख काउन्सिल (आफ मिनिस्टर्स) के आदेशों का प्रारूप प्रस्तुत है, महामहिम की

भारतीय परिसीमन (हैमण्ड) समिति की रिपोर्ट पर विचार करने के लिए गठित समिति की रिपोर्ट पर विचार करने की मांग करते हुए पंत जी द्वारा लेजिस्लेटिव असेम्बली में प्रस्तुत प्रस्ताव के अवसर पर 28 मार्च, 1936 को दिया गया भाषण ।

सरकार इस प्रतिवेदन में वर्णित संस्तुतियों का ध्यान रखेगी और जैसा कि मैंने इस समिति के गठन की प्रक्रिया का विवरण दिया हैं, उससे स्पष्ट है कि इसकी संस्तुतियां महत्वपूर्ण मानी जानी चाहिए । समिति इस देश की स्थिति के सम्बन्ध में हैमंड समिति की अपेक्षा अधिक जानकारी रखती थी, उसे उन कर्तव्यों का अधिक ज्ञान था जो नये संविधान के अधीन विधायिका को प्राप्त होंगे और उसे इस देश की विभिन्न विचारधाराओं तथा परिस्थितिगत आवश्यकताओं की अपेक्षाकृत अधिक अच्छी जानकारी थी । इन सभी कारकों पर विचार करने के पश्चात् समिति ने कुछ निष्कर्ष निकाले जिसमें सभी की सहमति थी । मुझे आशा है कि महामहिम की सरकार इन प्रस्तावों के साथ वैसा व्यवहार नहीं करेगी, जैसा उसने इस सदन से पारित अथवा गैर—सरकारी सदस्यों के प्रस्तावों के साथ किया है । यह एक त्रासद तथ्य है कि स्वायत्त शासन की बात करने वाली सरकार उस जनता की इच्छा के प्रति सुनिश्चित, उदासीन और योजनाबद्ध अवहेलना का रुख अपनाये, जिसके लाभ हेतु योजना बनाने की बात कही जाती है । यह वाकई एक विडम्बना है कि एक ओर तो हमें बताया जाता है कि इसके द्वारा हम स्वतंत्र राज्य की नियति के बहुत निकट पहुंच जायेंगे, और दूसरी ओर ऐसे क्षुद्र मामलों में भी, जो संविधान के सार तत्व को कहीं से प्रभावित नहीं करते, जनता की इच्छाओं की अवहेलना होती है । मुझे आशा और विश्वास है कि इन मामलों का निर्णय लेने वाले अधिकारियों में विवेक जागृत होगा और इस समिति के सुझावों का उचित अनुपालन होगा । मैं नये आने वाले वायसराय का परीक्षण इस बात से करूँगा कि वह इस समिति के सुझावों को कितना महत्व देते हैं । जहां तक वर्तमान सरकार का सवाल है, मुझे आशा नहीं है कि उसके द्वारा इन संस्तुतियों को संगत और पर्याप्त महत्व मिल सकेगा क्योंकि उसका सन्तुलन और सापेक्षता का समस्त विवेक समाप्त हो चुका है ।

मान्यवर, समिति की संस्तुतियाँ लोकहित के व्यापक मुद्दों तक ही सीमित हैं । समिति को हैमण्ड समिति के प्रतिवेदन का विस्तृत ज्ञान था, जिसका प्रतिवेदन गम्भीर रूप से आपत्तिजनक था फिर भी उसने इन विस्तृत सुझावों पर अपने दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति नहीं की है । मैं व्यक्तिगत रूप से मानता हूँ और जहां तक मेरे प्रान्त की बात है, मुझे इसकी अच्छी जानकारी है कि चुनाव क्षेत्रों के परिसीमन और सम्बद्ध मामलों में योजनाबद्ध रूप से यह प्रयास किया जा रहा है कि केवल विचार विहीन, दब्बू और चाटुकार व्यक्ति ही निर्वाचित हो सकें और दबंग तथा दृढ़ विवेक वाले व्यक्तियों को बाहर ही रखा जा सके । चुनाव योजना को इस तरह व्यवस्थित करने का प्रयास किया गया है ताकि नौकरशाही के मित्रगण ही

सफल हो सकें । लेकिन हमने फिर भी इन विस्तार के विषयों को नहीं छुआ है यद्यपि हमें यह तथ्य ज्ञात है कि खास तौर पर संयुक्त प्रांत में यहां तक कि प्रान्तीय सरकारों ने, अपने द्वारा निर्मित सिद्धांतों को लागू नहीं किया है । विशेष ध्यान के योग्य कुछ मुद्दे इस प्रकार हैं : संचयात्मक और वितरणात्मक मत, मतदान की पद्धति, चुनाव क्षेत्र परिसीमन की पद्धति-वे एक सदस्यीय होंगे या या बहुसदस्यीय, प्रत्याशियों के चुनाव सम्बन्धी प्रतिबन्धों का निरस्तीकरण, और विशेष चुनाव क्षेत्रों की अर्हताओं से सम्बन्धित कतिपय क्षुद्र मामले । मेरे विचार से केवल वितरणात्मक मत-व्यवस्था ही पूना-समझौते की भावना के अनुकूल है । प्राथमिक चुनाव के बाद संचयात्मक मतदान अकल्पनीय है क्योंकि अन्यथा प्राथमिक चुनाव अर्थहीन और मायावी मजाक बन जायेंगे । इसलिए मैं सोचता हूँ कि संचयात्मक मत को वितरणात्मक मत से विस्थापित किया जाये । संचयात्मक मत एकल-संक्रमणीय मत से थोड़ा ही फर्क होगा । संचयात्मक मत की व्यवस्था में प्रत्येक मत एक के स्थान पर दो के बराबर हो जायेगा लेकिन अनुसूचित और गैर अनुसूचित भाग का अनुपात वही बना रहता है और परिणामस्वरूप अनुसूचित और गैर अनुसूचित जातियाँ पहले की तरह ही अलग–अलग भागों में विभक्त रहेंगी । मतदान की पद्धति का भी एक प्रसंग है, विशेषकर पंजाब और संयुक्त प्रान्त में हैमण्ड समिति ने प्रस्तावित किया है कि निरक्षर मतदाता अपनी वरीयता चुनाव अधिकारी को बतायेंगे और वह अधिकारी उसे चिन्हांकित करेगा । उस निरक्षर मतदाता को अपना एक परिचित व्यक्ति ले जाने की अनुमति होगी जो मतदान अधिकारी के चिन्हांकन की पुष्टि कर सकता है । मान्यवर, मतदान की स्वतंत्रता और उसकी गोपनीयता आवश्यक है — खासकर उन व्यक्तियों से उसे सुरक्षित करने के लिए जो उस पर दबाव डालने की स्थिति में हैं । यह पद्धति मतदान व्यवस्था का मखौल और मजाक है । जब एक व्यक्ति दूसरे से अपने पक्ष में मतदान की बात कहता है, और उसे प्रभावित करने की स्थिति में होता है, तो वह उससे यह भी निश्चित करवाना चाहेगा कि वह उसे या उसके प्रत्याशी को मत दे । यदि वह उससे इन्कार कर देता है तो उसी क्षण से उसकी प्रताड़ना शुरू हो जायेगी । यदि वह राजा हो जायेगा तो वह अपने समर्थक को उसके साथ भेजेगा ताकि वह दूसरे को मत न दे पाये । इस प्रणाली में निश्चित रूप से निरक्षर मतदाताओं से जबर्दस्ती होगी । यदि सरकार इस देश की विधायिका को आंशिक रूप से भी जनमत का प्रतिनिधि स्वरूप प्रदान करना चाहती है तो मतदान की स्वतंत्रता और मतपत्र की गोपनीयता को सुनिश्चित करना आवश्यक है । इस प्रसंग में चिह्नित रंगीन बक्सों की व्यवस्था सर्वश्रेष्ठ है और उसे लागू किया जाना चाहिए । इन सीमित बातों के साथ मैं सदन से इस रिपोर्ट की सिफारिश करता हूँ और मुझे आशा है कि इसे एकमत से स्वीकृत किया

जायेगा । मैं अन्त में संशोधनों के प्रस्तावकों से अनुरोध करूंगा कि वे रिपोर्ट में अगणित परिशिष्ट लगाने की अपेक्षा मात्र अपने विचारों की अभिव्यक्ति से सन्तुष्ट हो जायें । मैं सोचता हूँ कि वे यदि सदन में केवल अपने विचारों की अभिव्यक्ति ही करते हैं तो भी उनका उद्देश्य पूरा हो जायेगा ।

●

साम्राज्यवादी अधिमान बनाम संरक्षण

माननीय उपाध्यक्ष महोदय, मि० गौबा के संशोधन को ध्यान में रखते हुए मुझे इस खण्ड की विस्तृत व्याख्या करने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती । मुझे विधेयक के मूल प्रस्ताव से सम्बन्धित कई मुद्दों पर प्रवर समिति में विस्तृत चर्चा करने का अवसर मिला था और प्रवर समिति में प्रस्तुत संशोधन के बारे में मैंने प्रवर समिति के अपने सहयोगियों के साथ, अपने दृष्टिकोण को व्यक्त किया था, जो प्रवर समिति के प्रतिवेदन के परिशिष्ट में हमारे असहमति के नोट में दर्ज है । मान्यवर, जैसा मैंने अपने असहमति के नोट में लिखा है, मैं इस विवाद को तूल देने की अपेक्षा मि० गौबा के संशोधन को स्वीकार करना अधिक पसन्द करूंगा । यद्यपि मि० गौबा के संशोधन से हमारी इच्छा की भलीभांति पूर्ति नहीं होती फिर भी हम उसे स्वीकार कर लेंगे और उसके विरुद्ध मतदान नहीं करेंगे ।

मान्यवर, मैं इस सम्बन्ध में कुछ शब्द कहना आवश्यक समझता हूँ कि हम विधेयक में प्रस्तावित तटकर की विभेदक दरों के प्रश्न को इतना महत्वपूर्ण क्यों समझते हैं? यह प्रस्ताव विधेयक के संशोधित खण्ड में भी शामिल है । जैसा कि माननीय सदस्यों को मालूम है, चूंकि वर्तमान में कोई श्रेष्ठतर विकल्प उपलब्ध नहीं है, इसलिए मैं इस देश के औद्योगिक विकास के लिए संरक्षण की वास्तविक नीति का समर्थन करने के लिए तैयार हूँ । लेकिन संरक्षण की एक सीमा है और इस सन्दर्भ में कतिपय महत्वपूर्ण मुद्दों पर सदैव ध्यान रखना चाहिए । मान्यवर, मैं संरक्षण को इस देश के आर्थिक निर्माण के उपाय के रूप में देखता हूँ, और इस तरह की नीति को स्वीकार करने के परिणामस्वरूप उपभोक्ता के कष्ट और बलिदान को, सार्वजनिक कोष से जनता के मस्तिष्क और शरीर के निर्माण के लिए शिक्षा और पर्यावरण सुधार पर हुए व्यय के समकक्ष मानता हूँ । लेकिन हर मामले में हमें यह देखना होगा कि इस संरक्षण से जनता पर पड़ने वाले भार से आखिर में उत्पादकता बढ़े और जनता को संरक्षण नीति की सफलता से अपने उस त्याग का प्रतिफल मिले जो उसे प्रारम्भ के कई वर्षों तक करना पड़ेगा । यदि इस परीक्षण पर नीति खरी नहीं उतरती है तो फिर यह संरक्षण की नीति नहीं कहला सकती, बल्कि उपभोक्ता और समाज पर अनावश्यक और असहनीय बोझ सिद्ध होगी । इसलिए संरक्षण

लेजिस्लेटिव असेम्बली में यह भाषण 22 अप्रैल, 1936 को भारतीय चुंगी (संशोधन) अधिनियम पर दिया गया था ।

नीति तो समझ में आती है और इसे कतिपय परिस्थितियों में अपनाया जा सकता है, लेकिन मुझे यह एकदम समझ में नहीं आता कि हम साम्राज्यवादी अधिमान या किसी अन्य देश को अधिमान प्रदान किये जाने को कैसे पसन्द कर सकते हैं? मैं माननीय सदस्यों को यह आश्वासन देना चाहता हूँ कि जहां तक सम्भव है, मैं इस मामले में अपनी राजनैतिक भावना का समावेश नहीं करना चाहता हूँ । मैं स्वीकार करता हूँ कि मैं इस प्रश्न पर इसकी गुणवत्ता के आधार पर विचार करते समय राजनैतिक आशंका या भीरुता से प्रभावित नहीं होऊंगा । मैं केवल गुणवत्ता के आधार पर इस पर विचार करूंगा । मान्यवर, मैं मानता हूँ कि तट कर की विभेदक दरें, जिनके अन्तर्गत एक देश से सामान आयात करने पर कम आयात कर और वही सामान दूसरे देश से मंगाने पर अधिक कर पड़ता है, उपभोक्ता को पीड़ित करती है; जबकि आयातक देश के उद्योगों को भी कोई सापेक्षिक लाभ प्राप्त नहीं होता ।

मान्यवर, मैं यह सिद्धांत निर्धारित कर पाया हूँ कि जिस सीमा तक तट कर की न्यूनतम दरें होती हैं प्रायः उसी तक संरक्षण सीमा निर्धारित होनी चाहिए, जबकि मूल्य स्तर तट कर के उच्चस्तर से निर्धारित होता है । मैं इस विषय पर अधिक विस्तार से कुछ नहीं कहूँगा लेकिन मैं एक उदाहरण अवश्य दूंगा । मान लीजिए कि एक विशेष वस्तु तीन रुपये प्रति मन के भाव से बिक रही है और हम जापान के विरुद्ध इंग्लैण्ड को अधिमान प्रदान करते हैं । यदि हम जापान से आयातित वस्तु पर दो रुपये तट कर आरोपित कर दें तो जापान से यहां आयातित वस्तु का मूल्य पांच रुपये हो जायेगा । अब यदि हम इंग्लैण्ड से आयातित इसी प्रकार की वस्तुओं पर कोई भी अतिरिक्त कर न लगायें, तो भी इन वस्तुओं के मूल्य जापान से आयातित वस्तुओं के बढ़े मूल्य की वजह से अधिक हो जायेंगे; फलतः उपभोक्ता को इन वस्तुओं के लिए अधिक मूल्य देना पड़ेगा । लेकिन इससे हमारे देश के उद्योगों के विकास में कोई सहायता नहीं मिलेगी, क्योंकि इंग्लैण्ड से आयातित वस्तुओं पर अरोपित तट कर की न्यूनतम दर से वह मूल्य निर्धारित होगा जिससे देशी उद्योग को अन्ततः प्रतियोगिता करनी होगी । इस प्रकार हम इस अवश्यम्भावी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ऐसे द्वि–पक्षीय समझौते के अतिरिक्त जबकि सुविधा प्रदान करने के एवज में समान रूप से लाभ प्राप्त होता है, शेष सभी मामलों में तट–कर की विभेदकारी दरें उपभोक्ता पर एक निश्चित सीमा तक असहनीय बोझ डालती हैं और साथ ही देशी उद्योगों के विकास में कोई सहायता नहीं मिलती है । मेरी सोच के अनुसार इस कारण से हम लोग सैद्धान्तिक आधार पर किसी एक के विरुद्ध किसी दूसरे देश को अधिमान प्रदान किये जाने के विरुद्ध हैं । सौभाग्य या

दुर्भाग्य से इस मामले का सम्बन्ध इंग्लैण्ड से है, लेकिन यदि ऐसा मामला टिम्बकटू या टिपेरी के साथ भी होता तो भी हम उसका विरोध करते । इंग्लैण्ड से इसके जुड़े होने का तथ्य मात्र एक संयोग ही है, लेकिन इस संयोग से हमारे सिद्धांत पर रंचमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ता ।

मान्यवर, कुछ और मामले भी हैं, जिन पर विचार करना चाहिए । हमें बताया गया है कि जापान से आयातित कटपीस वस्त्रों की मात्रा में हाल के वर्षों में पर्याप्त वृद्धि हुई है । मैं यह स्वीकार करने को तैयार हूँ कि ऐसे वस्त्रों के आयात में जापान का अनुपात वर्ष 1933-34 और 1934-35 में अप्रत्याशित रूप से बढ़ा है । लेकिन जहां तक पिछले 11 महीनों के आंकड़ों का मामला है, यदि हम समान वस्तुओं की तुलना करें तो पायेंगे कि जापान से आयातित कटपीस वस्त्रों में 9 लाख गज की कमी आयी है,लेकिन कतिपय अन्य देशों से भी ऐसे वस्त्रों का आयात होता है । पहले इस व्यापार पर संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रभुत्व था । वर्ष 1929-30 में हमने संयुक्त राज्य से 239 लाख गज से अधिक की खरीददारी की थी, जोकि पिछले 11 महीनों में घटकर 50 लाख गज रह गयी । इस प्रकार पिछले 11 माह में अमरीका से होने वाला आयात 239 लाख के स्थान पर 55 लाख गज रह गया । इसके अतिरिक्त मान्यवर, पिछले पांच वर्षों में इंग्लैण्ड से ऐसे वस्त्रों के आयात में पर्याप्त वृद्धि हुई है । सभी प्रकार के ऐसे वस्त्रों की आयात मात्रा वर्ष 1930-31 में 25 लाख गज हो गयी थी, लेकिन वर्ष 1934-35 में जब कि उस वर्ष आयात में कुछ कमी भी हुई थी, तब भी यह मात्रा 92 लाख से कम नहीं हुई । हम इस समय चार साल पहले की तुलना में इंग्लैण्ड से चार गुना अधिक यार्ड कटपीस कपड़ा आयात कर रहे हैं ।

एक अन्य बात भी ध्यान में रखनी चाहिए । 1930-31 के आंकड़ों में 9 गज की लम्बाई तक के सभी प्रकार के कटपीस वस्त्र शामिल हैं, जबकि 1934-35 के आंकड़ों में केवल 4 गज तक के कटपीस सम्मिलित हैं । इस तरह 1934-35 में इंग्लैण्ड से आयातित केवल 4 गज तक के कटपीस की मात्रा 1930-31 में आयातित सभी प्रकार के 9 गज तक के कटपीस वस्त्रों की मात्रा की चौगुनी थी । इस प्रकार केवल अमेरिका से आयातित माल की मात्रा में ही कमी आयी है । अब सदन को यह देखना चाहिए कि सरकार के विधेयक का मूल प्रस्ताव कितना असंगत था । सरकार इंग्लैण्ड को 25 प्रतिशत का अधिमान प्रदान करना चाहती थी और दूसरों पर तट कर में 50 प्रतिशत वृद्धि करना चाहती थी, जबकि इंग्लैण्ड से आयात में भारी वृद्धि हुई है; और सरकार संयुक्त राज्य अमेरिका के माल पर तट कर में 35

से 50 प्रतिशत की वृद्धि करना चाहती थी, जबकि अमेरिका पहले यहां के वस्त्र बाजार में प्रभुत्व रखता था और अब उसके भारत को होने वाले निर्यात में कमी आयी है । क्या यह न्यायपूर्ण है? माननीय वाणिज्य सदस्य ने कहा कि इस मामले में उन्होंने प्रत्येक देश का निर्धारण उस देश की परिस्थितियों के आकलन के आधार पर किया है । मैं यह नहीं जानता कि उनके परीक्षण और विनिश्चयन का मानक क्या है, लेकिन यह एक सामान्य व्यक्ति की समझ में नहीं आयेगा कि उस देश की दरें क्यों बढ़ाई जायें, जो पहले हमारे वस्त्र व्यापार में प्रभुत्व रखता था और जिसका स्थान अब महत्वहीन हो गया है, और उस देश की दरें कम क्यों की जायें, जो अभी चार वर्ष पहले तक हमारे देश को बहुत अल्प मात्रा में वस्त्र का निर्यात करता था और आज पर्याप्त बड़ी मात्रा में निर्यात कर रहा है । यदि कोई व्यक्ति किसी प्रकार के औचित्यपूर्ण मानक से इसका परीक्षण करेगा तो यह उसे न्यायपूर्ण नहीं लग सकता । माननीय वाणिज्य सदस्य यह स्वीकार क्यों नहीं कर लेते कि वह कमोबेश एक असहाय स्थिति में हैं; कि वह एक ऐसी सरकार के अधीन हैं जो इंग्लैण्ड की जनता का प्रतिनिधित्व करती है, और यद्यपि वह इस पाश से बाहर निकलना चाहते हैं किन्तु वर्तमान परिस्थितियों में ऐसा कर सकना उनके लिए सम्भव नहीं है और वह कोई अन्य उपाय अपना भी नहीं सकते? अन्यथा जैसा मैंने उन्हें समझा है, मैं यह मानने को तैयार नहीं हूँ कि उन्हें अपने प्रस्तावों का अनौचित्य दिखता नहीं होगा । ठीक है उन्होंने धीमे स्वर में जो कुछ कहा मैं उसे नहीं सुन पाया हूँ लेकिन यदि वह...

माननीय सर मुहम्मद जफरुल्लाह खान – मैंने कहा है कि माननीय सदस्य शायद मेरे दिमाग के बारे में मुझसे बेहतर जानते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – कदाचित मैं उनसे बेहतर उनके दिमाग की बाबत जानता हूँ । मुझे आशा है कि उनका मस्तिष्क कुछ समय में मेरी तरह सोचने का अभ्यस्त हो जायेगा । मेरी कामना है कि यह प्रक्रिया आज दोपहर से ही प्रारम्भ हो जाये ।

प्रस्ताव पर पुनः आने पर मैं इन परिस्थितियों में इस बात का कोई औचित्य नहीं पाता कि इंग्लैण्ड से आयातित वस्त्र के मामले में शेष देशों से होने वाले आयात के विरुद्ध विभेद किया जाये । हमें बताया गया है कि जापान से वस्त्र के आयात में वृद्धि हुई है, लेकिन अभी तक की इस वृद्धि का बड़ा हिस्सा कृत्रिम रेशमी वस्त्रों से

सम्बन्धित है जब कि विधेयक के खण्ड (क) का सम्बन्ध केवल सूती वस्त्र से है । इन परिस्थितियों में खण्ड (क) के अन्तर्गत आयातित विदेशी वस्त्र के तट कर में 50 प्रतिशत की वृद्धि का कोई औचित्य नहीं है । जहां तक आंकड़ों की बात है, मैं इसको और आगे नहीं बढ़ाऊंगा, लेकिन मैं माननीय सदस्यों को 30 मार्च को इस सदन में हुए मतदान की याद अवश्य दिलाऊंगा । उसमें ओटावा समझौते की स्पष्ट निन्दा थी । उसका तात्पर्य क्या था? मैं व्यवस्था का प्रश्न नहीं उठा रहा हूँ लेकिन इसका स्वाभाविक अर्थ हम सबके सामने है और वह यह है कि समान विनिमय की शर्तों और इंग्लैण्ड से 10 प्रतिशत तट कर की सुविधा के बदले में, सुविधा प्राप्त होने पर भी यह सदन अधिमान को और अधिक समय तक चालू रखने को तैयार नहीं है । इस सदन द्वारा यह सिद्धांत की स्पष्ट भर्त्सना किये जाने के बाद बिना किसी प्रतिलाभ के उस अधिमान में वृद्धि का कोई औचित्य नहीं है । मान्यवर, मेरे विचार से उस मतदान और विमिर्णय के परिप्रेक्ष्य में कोई यह तर्क नहीं दे सकता कि आज सदन को,इंग्लैण्ड को पहले मिलने वाले अधिमान में वृद्धि के प्रश्न पर विचार करना चाहिए । मेरे विचार से इस सदन के माननीय सदस्यगण इस तथ्य से भलीभाँति अवगत हैं कि पिछले महीने हमने अपना गम्भीर निर्णय रिकार्ड कराया था कि हम इंग्लैण्ड को दस प्रतिशत का अधिमान देने के लिए भी तत्पर नहीं हैं, यद्यपि हम आयातित माल पर दिये गये 10 प्रतिशत अधिमान के बदले में स्वयं इंग्लैण्ड से समान सुविधा पा रहे थे । लेकिन आज माननीय वाणिज्य–सदस्य एक दिलचस्प और आश्चर्यजनक प्रस्ताव लेकर आये हैं, मानो वह हमसे कह रहे हो :

"ओटावा समझौते के विरुद्ध मतदान की बात को भूल जाइये और दस प्रतिशत अधिमान के स्थान पर एक मामले में 25 प्रतिशत और दूसरे मामले में 20 प्रतिशत अधिमान प्रदान कीजिए और इस अधिमान के प्रतिलाभ के तौर पर कुछ भी प्राप्त न होने पर भी सन्तुष्ट रहिये ।"

यह साफ तौर पर असंगत प्रस्ताव है । (एक सम्मानित सदस्य : वाह, वाह) यदि सुविधाओं के बदले दस प्रतिशत का भी अधिमान इस सदन को स्वीकार नहीं है तो बिना किसी सुविधा के बीस से पच्चीस प्रतिशत अधिमान की बात को शायद यह सदन कभी भी स्वीकार नहीं कर सकता । मेरे विचार से एक छात्र भी, अगर वह आगरा के एक खास स्थान में न हो, इस तर्क की ताकत को समझ सकता है ।

सर कावस जी जहाँगीर – लेकिन आगरा ही क्यों?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं आगरा का सन्दर्भ वापस लेता हूँ । मेरे ख्याल से बम्बई में आगरा जैसा कोई स्थान है अतः मैं बम्बई का नाम लूँगा ।

सर कावस जी जहांगीर – मैं आपकी बात समझ नहीं पाया ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इसलिए इस सदन में प्रस्तुत मूल प्रस्ताव का कोई भी औचित्य नहीं हो सकता है । मैं यहाँ यह भी कहूँगा कि इसमें संदेह है— मैं संदेह केवल इसलिये कह रहा हूँ क्योंकि मैं फिलहाल इस बिन्दु पर बहस नहीं करना चाहता— कि ओटावा समझौते में गैर–सूती वस्तुओं को किसी प्रकार का अधिमान देने की अनुमति है । लेकिन आज मैं समझौते की शर्तों की सूक्ष्म व्याख्या नहीं करना चाहता । इसका कोई उपयोग नहीं है और वैसे भी मरणासन्न और सांस के लिए छटपटाते हुए जीव पर प्रहार करना बहादुरी का काम नहीं है । वर्तमान परिस्थितियों में ओटावा समझौता एक शव मात्र है, जिसे हम दफनाने जा रहे हैं । इसलिये हमें आवश्यकता से अधिक क्रूर नहीं होना चाहिए । इस विचार की वजह से मैं ओटावा समझौते की शर्तों का परीक्षण नहीं करूंगा । मान्यवर, मैं मि० गौबा के प्रस्ताव को मानने को तैयार हूँ । मुझे उस पर सिर्फ एक शब्द कहना है । वह यह है कि यदि मैं राज्य को तीव्र औद्योगीकरण के लिए राजी कर सकूँ तो मैं सिद्धांततः संरक्षण के बहुत पक्ष में नहीं हूँ । लेकिन इसके अभाव में संरक्षण को स्वीकार करना ही होगा । परन्तु उपभोक्ता को एक ओर संरक्षण और दूसरी ओर इम्पीरियल अधिमान के चक्के में दबा देना अनुचित है । आजकल जब भी किसी भारतीय वस्तु के संरक्षण का कोई सुझाव सामने आता है, सरकार तुरन्त ही एक प्रति–प्रस्ताव के साथ आती है कि यदि भारतीय उद्योगपति इंग्लैण्ड को और अधिक सुविधा दें, तो उनकी मांगें मानी जा सकती हैं । इस तरह बेचारा उपभोक्ता दोनों देशों द्वारा एक साथ और एक ही समय शोषण का शिकार बन जाता है । इसे हम सहन नहीं करेंगे और इसे रोकने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ हैं । यही कारण है कि हमने आज इस पर प्रकाश डाला है, यद्यपि इस प्रसंग से जुड़े विषय की प्रकृति और विस्तार को देखते हुए अपने आप में यह बहुत महत्वपूर्ण नहीं था, लेकिन पहले ऐसे मुद्दों पर हमारे देशवासी सामान्यतया ऐसी धमकियों के सामने झुक जाते थे जिससे सरकार का साहस और बढ़ता गया । हम अपनी ओर से यह बहुत स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हम भारतीय उद्योग को गुणवत्ता के आधार पर संरक्षित करना चाहते हैं और हम जानते हैं कि सरकार को कैसे मजबूर किया जा सकता है । हमारे अन्दर पर्याप्त आत्मविश्वास है और यदि सरकार हमारी इच्छाओं का सम्मान नहीं करती है तो हम अगली कार्रवाई के बारे में जानते हैं । हम आर्थिक या राजनैतिक, किसी मामले में अपने को असहाय नहीं मानते; लेकिन हम लोग सस्ता प्रतिलाभ नहीं स्वीकार करेंगे, और हम चेतावनी देते हैं कि हम इंग्लैण्ड को रियायत देकर उसके प्रतिलाभ के तौर पर नहीं बल्कि अपनी आवश्यकता के आधार पर ही भारतीय उद्योग को संरक्षण दिलवायेंगे । इसके उपरान्त मैं आग्रह करूंगा कि संरक्षण से प्राप्त राजस्व का पूरा

धन तो नहीं लेकिन उसका निश्चित भाग इस देश के ओद्योगिक विकास के लिए व्यय होना ही चाहिए, और रेशमी धागे के अवशिष्ट पर लगाये जाने वाले संरक्षण शुल्क की प्राप्तियों का एक भाग गाँवों के हैण्डलूम और रेशम उद्योगों में लगे कारीगरों पर खर्च होना चाहिए । मुझे यह भी उम्मीद है कि जहां तक कटपीस वस्त्रों का मामला है, भारतीय वस्त्र उद्योगों को ऐसी सहायता प्रदान की जायेगी कि उनका माल विदेशों से आयातित वस्त्र से कम कीमत पर बिक सके । सबसे अधिक आग्रह मेरा इस बिन्दु पर है कि आज और आगे इम्पीरियल अभिमान की बात को स्वीकार नहीं किया जायेगा, और हम लोग इसका कभी भी समर्थन नहीं करेंगे ।



कांग्रेसी दृष्टिकोण की व्याख्या

जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं मानता हूँ कि तट-कर अधिनियम में सम्मिलित अन्तर्वस्त्र जैसी कुछ वस्तुओं के मामले में सरकार ने प्रचलित शुल्क से इतने कम पर सहमति दिखायी है कि इसे कोई भी व्यक्ति सोच भी नहीं सकता था । आखिरी क्षण तक उन्होंने किसी को अपने इरादे का संकेत तक नहीं दिया और इस प्रकार उन्होंने बहुत अनुचित काम किया है ।

जहां तक कांग्रेस के दृष्टिकोण की बात है, वह किसी असंगत अथवा क्षुद्र बातों से प्रभावित नहीं होती । हम यहां अपनी बुद्धि के अनुसार अपने देश की सेवा करने के लिए आये हैं । यदि सरकार इंग्लैण्ड सहित किसी अन्य देश की तुलना में इस देश को वरीयता और प्राथमिकता प्रदान करती है, यदि वह भारत के निष्ठावान सेवक की तरह कार्यरत रहती है, और यदि वह इंग्लैण्ड के हितों के विरुद्ध जाकर भी भारतीय

यह भाषण 23 अप्रैल, 1936 को लेजिस्लेटिव असेम्बली में पंत जी द्वारा दिया गया था, जब भारतीय चुंगी (संशोधन) विधेयक पर पुनर्विचार आरम्भ हुआ और श्री एफ० ई० जेम्स द्वारा विधेयक को प्रस्तुत करने के तरीके और इसके सदन में पारित होने के तरीके के सम्बन्ध में भ्रमपूर्ण आपत्ति उठाई गई । श्री जेम्स के लिए विधेयक पर पुनर्विचार की आवश्यकता के मसले पर समस्या की शुरुआत 18 अप्रैल, 1936 को हुई, जब कुछ दलों ने षड्यंत्र करके मसले को एक चयन समिति को सौंपे जाने के प्रश्न पर कुछ भी न कहने की नीति अपनाई और यह प्रश्न सदन में उठाया नहीं जा सका । फिर भी, विधेयक को चयन समिति के सामने रखा गया और आगामी सुबह चार घंटे तक समिति की बैठक चली । यह वर्ष का सबसे गर्म दिन था । श्री जेम्स के अनुसार समिति की बैठक के बाद इसके दो सदस्यों ने कहा कि उन्हें यह समझ में नहीं आया कि अन्तिम रूप से क्या फैसला लिया गया,विधेयक पर ठीक से विचार करने का पर्याप्त समय ही नहीं था जब कि विधेयक का विषय बहुत दुरूह था और उसमें इस देश के महत्वपूर्ण हितों से सम्बन्धित तीन विशिष्ट और भिन्न-भिन्न मुद्दे शामिल थे । प्रवर समिति की रिपोर्ट सदन में मंगलवार को दिन के समय रखी गई थी और इसे सायंकाल सदस्यों के बीच वितरित किया गया था । श्री जेम्स का विचार था कि प्रवर समिति से लौटकर आया विधेयक, प्रवर समिति को मूलत: प्रस्तुत किये गये विधेयक से बहुत भिन्न प्रकार का था । संदर्भित विधेयक सदन में सर मुहम्मद जफरुल्ला खाँ द्वारा प्रस्तुत किया गया था । पंडितजी का भाषण श्री जेम्स के विचारों के पक्ष में था ।

हितों की रक्षा के लिए प्रयत्नरत रहती है तो मेरे विचार से बहुत बड़ी सीमा तक टकराव की सम्भावना कम हो जायेगी । यह प्रश्न कि क्या कोई व्यक्ति, वह चाहे कितना ही प्रख्यात क्यों न हो, उनमें इस प्रकार की सोच विकसित कर सकता है इससे जुड़ा है कि उसमें कितनी शक्ति और क्षमता है तथा उनमें समयानुसार आचरण करने की कितनी क्षमता है । यदि वे ऐसा दृष्टिकोण ऐसे ही दृष्टिकोण का प्रदर्शन किया है । बल्कि हमारे सामने की बेंचों के सरकारी प्रवक्ताओं की ओर से ही पहले यह कहा जाता रहा है कि वे हमारी प्रत्येक बात का विरोध करेंगे, क्योंकि उन्हें हमसे किसी मामले में सहयोग नहीं करना है । इसलिये मैं मानता हूँ कि दोष उनका है और यदि भविष्य में भूतकाल की अपेक्षा सहयोग की अधिक स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं, तो ऐसा इसलिये नहीं होगा कि गुजरे वक्त में हमारा रवैया अनुचित था, बल्कि इसलिए होगा कि सामने बैठे लोगों की सोच में औचित्य और सहयोगभाव उत्पन्न हुआ है ।

मि० एफ०ई० जेम्स —आप सामाजिक बहिष्कार की बात क्यों नही करते?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–मुझे नहीं लगता कि सदन की नियमावली के आधार पर इस पर यहाँ तुरन्त बहस करने को उचित ठहराया जा सकता है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – इस पर यहां इस समय बहस की आवश्यकता नहीं है । इसका विधेयक से कोई सम्बन्ध नही है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–मुझे प्रसन्नता होगी यदि मेरे माननीय मित्र मि० जेम्स इस विषय पर प्रस्ताव रखेंगे और सदन में इस पर चर्चा करवायेंगे । मैं दुहराता हूँ : हमारा सदैव ही मुख्य उद्देश्य यह रहता है कि देश का नैतिक और भौतिक कल्याण हो सके तथा इस देश को यथासम्भव शीघ्र पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हो सके । इस सन्दर्भ में जो भी हमें सहायता और सहयोग प्रदान करेगा, हम उसका हार्दिक स्वागत करेंगे लेकिन यदि किसी पक्ष को किसी प्रकार का संकोच है, और वह इस देश का कल्याण नहीं, बल्कि यह चाहता है कि यह देश किसी दूसरे देश के हित का साधन बन जाये तो फिर इसकी परिणतियों का दायित्व हमारा नहीं होगा ।

भारतीय सिविल सेवा प्रतियोगी परीक्षा बनाम मनोनयन

मैंने माननीय गृह सदस्य का भाषण सुना .....

माननीय सर हेनरी क्रेक – आपने उसका केवल आधा भाग सुना है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैंने माननीय गृह सदस्य का भाषण उस चेतावनी के बावजूद गहरी रुचि एवं काफी जिज्ञासा से सुना, जो सर मोहम्मद यामीन खान और सर मोहम्मद याकूब ने हमें दी थी । मैं जानता हूँ कि वे प्रतियोगितात्मक परीक्षा में सफलता के आधार पर ही इस पद पर हैं और मैं अभी भी इतना रूढ़िवादी तो हूँ ही कि प्रतियोगिता के लाभ को मानूँ । अतः मैंने उनका भाषण काफी जिज्ञासा से सुना, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, विशेषकर इसलिए क्योंकि मैं समझता था कि यह इतना सीधा मुद्दा है कि इस पर कोई विवाद नहीं कर सकता । अतएव मैं यह जानना चाहता था कि माननीय गृह सदस्य अपनी बात सही साबित करने के लिए कितने संसाधन और मौलिकता का उपयोग कर सकते हैं ।

मान्यवर, मैं महसूस करता हूँ कि मुझे बहुत निराशा हुई कि कुछ भी स्पष्ट नहीं हो पाया । फिर भी मैं भारत सरकार की उस बुद्धिमानी पर, जो अचानक उत्पन्न हुई है, स्तंभित हूँ । महोदय, आप इस्लिंग्टन आयोग के एक सदस्य रह चुकने के नाते भारतीय सिविल सर्विस के इतिहास से अवगत हैं । आप यह भी जानते हैं कि भारतीयों की इस मांग को कि इस सर्विस की परीक्षायें भारत तथा इंग्लैण्ड में एक साथ हों या भारतीयों को उच्च सेवाओं में अधिक संख्या में भरती किया जाय, कितना समर्थन और सहयोग मिला था । साथ ही आप इस बात से भी अवगत हैं कि इस मांग का सिविल सर्विस और नौकरशाही ने कितना विरोध किया था । साथ-साथ परीक्षायें कराने के सिद्धांत का जिस प्रकार कदम-कदम पर प्रबल विरोध किया गया था, उसे देखते हुए मैं तब बड़ी दुविधा में पड़ गया जब मैंने माननीय सदस्य को यह कहते हुए सुना कि वास्तव में वह बहुत इच्छुक हैं कि भारत

भारत और लंदन में भारतीय सिविल सेवा में भर्ती के लिए निर्मित नियमों के सम्बन्ध में भारत सरकार के रवैये और निर्णय के बारे में लोकहित के एक विशिष्ट तात्कालिक मुद्दे पर विचार करने के लिए श्री एस० सत्यमूर्ति द्वारा प्रस्तुत कामरोको प्रस्ताव के पक्ष में पंत जी द्वारा 31 अगस्त, 1936 को लेजिस्लेटिव असेम्बली में दिया गया भाषण ।

में उच्च सेवाओं में चयन हेतु "दिल्ली मुख्य माध्यम हो । मुझे याद है और आपको भी याद होगा कि प्रारम्भ में कुछ अन्य तर्क दिया गया था । तब सर विलियम मेरिस, सर जांन कैम्पबेल और भारतीय नागरिक सेवाओं में सम्माननीय पदों पर आसीन अनेक माननीय व्यक्तियों ने आपके सामने साक्ष्य देते हुए कहा था कि यदि भारतीयों को भारतीय सिविल सेवा की प्रतियोगी परीक्षाओं में सम्मिलित होने या उनकी यहाँ भरती करने की अनुमति दी जायेगी तो, इसके निश्चित रूप से भयावह परिणाम होंगे । अतः मेरा काफी मोहभंग हुआ जब मैंने सुना कि अब भारत सरकार की इच्छा है कि दिल्ली नियुक्ति का मुख्य माध्यम हो ।

माननीय सर हेनरी क्रेक – कुछ वर्षों पूर्व यह कांग्रेस पार्टी की इच्छा थी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–मेरे अनुसार यह उपाय इस देश के निर्धनों के बच्चों के हितार्थ अपनाया गया था । इसका अर्थ था कि जब भी दिल्ली को ऐसी भर्ती का एक केन्द्र बनाया जायगा, तब भी धन खर्च कर सकने की क्षमता वाले अमीर भारतीय उम्मीदवार लंदन वाले माध्यम से प्रशिक्षण प्राप्त कर यहाँ आयेंगे । महोदय, तर्क दिया गया है कि ली आयोग ने 50-50 के जिस अनुपात की बात कही, उस को माना जाय । मैं नहीं जानता कि इसका अभिप्राय क्या है? मुझे याद है कि ली आयोग ने मार्ग भत्ते, विशेष भत्ते एवं अन्य अनेक चीजों का प्रस्ताव किया था । और ऐसा सोचा गया था कि बरतानियों को यहाँ सेवाओं में आकर्षित करने हेतु उन्हें हर वह चीज देनी चाहिए जो कि इस देश के लाखों मेहनतकशों का शोषण कर प्राप्त हो सके । किन्तु फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि जो बिना किसी प्रकार के प्रतिबन्ध या अवरोध के यहाँ अपना प्रभुत्व कायम रखना और इस देश का शोषण जारी रखना चाहते हैं, उनकी इच्छायें पूरी नहीं हुई हैं । मैं माननीय गृह सदस्य को स्मरण दिलाना चाहता हूँ कि जब 50-50 के अनुपात की व्यवस्था की गयी थी तब अधिनियम में इस बात का प्रावधान किया गया था कि इंग्लैण्ड में भारतीय सिविल सेवा के सदस्यों की भर्ती प्रतियोगी परीक्षा के आधार पर होगी । तब किसका औचित्य है? अधिनियम का या कार्यकारिणी के आदेश का? अधिक प्रभावशाली क्या है? वास्तव में जो व्यवस्था की गयी थी, वह यह थी कि विधान के प्रावधानों के अनुसार 50 प्रतिशत को यहाँ सेवाओं में प्रवेश की अनुमति दी जायेगी । निश्चितत: उस व्यवस्था से न तो यह आशा ही थी और न ही उसकी यह भावना थी कि वह भारत सरकार के अधिनियम 1919 के प्राविधानों का उल्लंघन करे । और जब विधान में दी गयी शर्तों को ब्रिटिश अभ्यर्थी पूरा नहीं कर पाते, तो इस आधार पर हमें दंडित नहीं किया जाना चाहिए । जब आप समझौते के अपने भाग का निर्वाह करने में असफल रहते हैं, 50 प्रतिशत वाली व्यवस्था टूट जाती है और उसका कोई

आधार नहीं रहता । इसके लिए किसे दोषी मानना चाहिए? आप अपनी उस शर्त का निर्वाह करने में असफल हैं जो विधान में दी गयी है और आपको ही इसकी परिणतियों को झेलना होगा । अगर कोई व्यक्ति मेरे साथ यह समझौता करता है कि वह पचास रुपये लगायेगा और मैं पचास रुपये लगाऊँगा तथा हम साझेदार हो जायेंगे, और यदि दूसरा साझेदार समझौते के अपने भाग का निर्वाह करने में असमर्थ रहता है तो क्या इसका दोष मुझ पर होना चाहिये? इसके लिए कौन उत्तरदायी है? मेरा मत है कि यदि 50 प्रतिशत की व्यवस्था पूरी नहीं की गयी है और यह बात टूटती है तो इसका उत्तरदायित्व उन पर है, और इस बात का कोई कारण नहीं है । क्यों भारत इस देश के प्रशासन के लिए सही प्रकार के व्यक्तियों की आपूर्ति में उनकी असमर्थता और अक्षमता के कारण हानि सहे? एक दिन मैं गोलमेज सम्मेलन का प्रतिवेदन पढ़ रहा था जिसके अनुसार सर्विस समिति के चेयरमैन ने कहा था :

"अगर आप समझते हैं कि एक निश्चित समय तक के लिए किसी भी प्रकार सेवा में यूरोपीय तत्व वांछनीय हैं तो आप सब संभवतः इस बात से सहमत होंगे कि आपको अवश्य ही सही प्रकार के यूरोपीय तत्व मिलने चाहिए । इसका तब तक कोई लाभ नहीं जब तक उन्हें उच्च स्तर के लोगों में से नहीं लिया जाता । अतएव आपको विचार करना होगा कि इसे सुनिश्चित करने के लिए कौन से कदम उठाये जाने चाहिए । यह सिद्धान्त केवल यूरोपीय अभ्यर्थियों पर ही नहीं, वरन भारतीय अभ्यर्थियों पर भी लागू होता है कि आप उन्हें उच्चस्तर के लोगों में से ही लेना चाहते हैं ।"

"उच्च स्तर के स्थान पर आप उन्हें गंदे नालों से प्राप्त कर रहे हैं, अतः हम उन्हें नहीं चाहते । अगर आप यहाँ यूरोपीय लोगों को चाहते हैं तो आप जो चाहें सो करें, किन्तु हमें यह कहकर धोखा देने का प्रयास क्यों करते हैं कि हम समझौते के कारण बाध्य हैं, जबकि आप अपने हिस्से की जिम्मेदारी पूरी करने में असमर्थ हैं । माननीय गृह सदस्य ने हमें बताया कि यह नयी व्यवस्था भारत के हित में बनायी गयी है । जबकि सेक्रेटरी आफ स्टेट ने यह बताते हुए कि यह परिवर्तन क्यों किया गया है कहा है :"

"वर्तमान वर्षों में भारतीय सिविल सेवा में यूरोपीय अभ्यर्थियों की आयी कमी दूर करने हेतु सेक्रेटरी आफ स्टेट इस वर्ष कुछ अभ्यर्थियों का सेवा में लिखित प्रतियोगितात्मक परीक्षा के बिना चयन प्रारम्भ करने का प्रस्ताव रखते हैं ।"

इसका कोई लाभ नहीं कि हमें बताया जाये कि यह परिवर्तन हमारे हितार्थ किया गया है । वास्तव में श्रीमान् चर्चिल ने इसका स्वागत किया और सेक्रेटरी आफ स्टेट को इस परिवर्तन के लिए मुबारकबाद दी है । आप सब अवगत हैं कि सर

सैमुअल होर और अन्य ब्रिटिश प्रवक्ता कई वर्षों से यह रोना रोते रहे हैं कि भारत में नियुक्ति हेतु पर्याप्त संख्या में ब्रिटिश व्यक्ति उपलब्ध नहीं हैं । माननीय गृह सदस्य द्वारा दिये गये विवरणानुसार भी स्पष्ट है कि जो 50 प्रतिशत ब्रिटिश भर्तियाँ की जा सकती थीं, वे भी वास्तव में भारतीयों द्वारा भरी गयी हैं । अतः परिवर्तन हमारे लाभार्थ अपेक्षित नहीं है, वरन ब्रिटिशवासियों के हित में है । मैं माननीय गृह सदस्य को उनके देश के एक व्यक्ति द्वारा ऐसे ही एक समय पर दिये गये वक्तव्य का स्मरण दिलाऊँगा । जैसा कि माननीय सदस्यगण अवगत हैं, भारतीयों को इन सेवाओं से बाहर रखने हेतु कई बार सिविल सेवा में प्रवेश हेतु आयु सीमा में कमी की जा चुकी है । एक बार इस प्रश्न पर 'हाउस आफ कामन्स' में बहस हो रही थी जब लार्ड सैलिसबरी ने कहा था–"ऐसे राजनीतिक-ढोंग का क्या प्रयोजन है? जब तक आपके पास सत्ता है आप लोग हमसे आखिरी पाई तक छीनते रहेंगे और क्योंकि आपको प्रतियोगिता से योग्य व्यक्ति नहीं मिलते, अतः आप चोर दरवाजा खुला रखना चाहते हैं ताकि मूढ़मति प्रवेश पा सकें । यह सीधा सा मुद्दा है जिसे मैं सदन के सामने रखता हूँ । मुद्दा यह है इन लोगों को जिन्हें भर्ती किया जाना है, हमारे देश में सेवा करनी है, उन्हें हमारे लोगों से लिए गये कर से प्राप्त धन से वेतन अदा होना है । महोदय, भारतीयों का यह स्वाभाविक और जन्म सिद्ध अधिकार है कि उन्हें भारतीय सेवा में भर्ती किया जाय जिससे ब्रिटिश-वासियों सहित कोई भी अपरिचित उसमें प्रवेश न कर पाये । हमें हमेशा बताया गया है कि प्रतियोगिता सर्वोत्तम विधि है और परीक्षा समस्त भारतीयों के लिए खुली है । अब बात यह है कि हमारे देश में सेवा के लिए, जहां हमारे देशवासियों से जमा किये गये धन से भुगतान होना है, जब वांछित स्तर के ब्रिटिश व्यक्ति उपलब्ध नहीं है तब भारतीयों को बाहर रखने के लिए अयोग्य यूरोपियों की नियुक्ति की जाती है ताकि वे...... ।

माननीय सर हेनरी क्रेक –अयोग्य क्यों?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – अयोग्य क्यों? क्योंकि मैं विश्वास करता हूँ कि गृह सदस्य अपने आपको अयोग्य नहीं समझते क्योंकि उनकी भर्ती प्रतियोगिता से हुई है। वे अगर कहते हैं कि वह अयोग्य हैं तो मैं अपनी राय बदल लूँगा । मैं जानता हूँ कि वह इसे स्वीकार नहीं करेंगे । यदि मनोनीत करना ही सर्वोत्तम विधि है तो यूनाइटेड किंगडम अपने देश के सम्बन्ध में इसी विधि को स्वीकार क्यों नहीं करता?

माननीय सर हेनरी क्रेक –करता है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मेरे सामने नियमावली है । इसके अनुसार ब्रिटिश

सिविल सेवा में भर्ती केवल प्रतियोगितात्मक परीक्षा के आधार पर होती है । ऐसा ही कनाडा, आस्ट्रेलिया और विश्व के अन्य देशों में होता है । मुझे किंचित संदेह होता है जब लोग मुझे बताते हैं कि वे हमारे लिए विश्व की सर्वोत्तम देन सुरक्षित रखते हैं और अपने लिए निकृष्टतम छांटते हैं । मैं जानता हूँ कि माननीय सदस्य के लिए स्वर्गवत् क्या है । वे मानते हैं कि अंडमान ही स्वर्गवत् है । वह कह सकते हैं कि मनोनयन से प्रतियोगिता बदतर है किन्तु सामान्यतः यह एक राय है जिसे विकृत मस्तिष्क की उपज माना जा सकता है । यहां पर साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व का कोई प्रश्न नहीं है । हम इस देश में अपनायी जा रही भर्ती की विधि पर प्रश्न चिन्ह नहीं लगा रहे हैं । सीधा सा प्रश्न यह है : क्या भारतीय यह चाहते हैं कि जो अयोग्य ब्रिटिशवासी भारतीयों के साथ ऐसी संयुक्त प्रतियोगी परीक्षा में मुकाबला नहीं कर सकते, जो उन्हीं के देश में होती है, जो उन्हीं की मातृभाषा में होती है और जो भारतीयों के लिए अपरिचित और अनचाहे वातावरण में होती है, उन्हीं अयोग्य ब्रिटिश-वासियों को यह सुविधा प्राप्त हो कि वे भारतीयों को इन सेवाओं से बाहर रख सकें? यही मुद्दा है और मैं आशा करता हूँ कि सदन इसके प्रभावों एवं परिणामों को स्पष्टतः समझेगा । क्या हम उनसे यह कहेंगे कि हम अच्छे,बुरे और तटस्थ (इस स्थिति में बुरे और तटस्थ) रंगरूटों को जो हम पर थोपे जा रहे हैं, स्वीकार करने को इच्छुक हैं? इस सदन के सदस्यों को याद रखना चाहिए कि यह व्यवस्था उन भारतीयों को बाहर रखने के लिए है जो सफलतापूर्वक ब्रिटिश व्यक्तियों के साथ प्रतियोगिता कर सकते हैं । हमारे लोग जानते हैं कि कैसे शेर को उसी के मांद में फंसाया जा सकता है और हर प्रकार की बहानेबाजियों के बावजूद हम ऐसा ही करते रहेंगे ।

●

विश्वासघात

मान्यवर, इस सदन में विचारित हो रहे वास्तविक प्रश्न पर आने के पूर्व मैं इस प्रस्ताव के विरोधियों के तर्कों के सन्दर्भ में कुछ शब्द कहना चाहूँगा । डा० जियाउद्दीन अहमद और उनके पूर्व वक्ता से क्षमायाचना के साथ मैं कहना चाहूँगा कि उनके विचार विभ्रमित हैं । उनका कहना है कि हम इस प्रसंग पर सरकार की निन्दा नहीं कर सकते क्योंकि उसने तट-कर अधिनियम के अन्तर्गत प्राप्त अधिकार का ही प्रयोग किया है । यदि उन्होंने विधि-विरुद्ध कार्य किया होता तो हम न्यायालय जाते और निषेधाज्ञा और सम्भवत: सम्बद्ध सदस्य से क्षतिपूर्ति प्राप्त कर सकने का आदेश भी लाते । इस सदन में सरकार के अवैधानिक कृत्यों पर हम बहुत कम बोलते हैं, अवैधानिक कृत्यों के विरुद्ध कार्रवाई के लिए एक अन्य स्थान अधिक उपयुक्त है, जो शासकीय प्रभाव से परे है । हम यहां हमेशा विवेकाधीन अधिकार के दुरुपयोग पर चिंता प्रकट करते हैं । जब हम यह कहते हैं कि अधिकार रखते हुए भी शासन को बिना किसी मुकदमें के किसी को, चाहे वह डा० जियाउद्दीन ही क्यों न हों, गिरफ्तार नहीं करना चाहिए, तो हमारा मन्तव्य है कि ऐसा करना अधिकार का दुरुपयोग है । जब हम यह कहते हैं कि फलां व्यक्ति को राजकीय बन्दी की तरह कारागार में नहीं रखा जाना चाहिए तो ऐसा कहने का यह तात्पर्य नहीं कि इसके औचित्य के लिए अधिनियम नहीं हैं, बल्कि आशय यह है कि सरकार ने विवेकाधीन अधिकार का दुरुपयोग किया है । यह तो तय है कि किसी भी अधिनियम के सारे अधिकार इसी सदन द्वारा प्रदत्त होते हैं । इसलिये यह तर्क अनुचित है कि चूंकि सरकार को एक अधिनियम के अन्तर्गत एक अधिकार प्राप्त है, इसलिए हम उस अधिकार के भारी दुरुपयोग पर आपत्ति नहीं कर सकते । 'सर' खिताबधारी माननीय सदस्य, उनका पूरा नाम मैं नहीं जानता, और उन्हें मात्र 'मि० शर्मा' कहना भी उपयुक्त नहीं लगता— ने हम पर उस आपत्ति के लिए आक्षेप लगाया है, जो हमने तटकर-परिषद की संस्तुति पर सरकारी कार्रवाई के विरुद्ध की थी और जबकि हमने कल स्थायी तट-कर परिषद की मांग की थी । यह इस बात का एक दृष्टान्त है कि तदर्थ समिति से कितने खतरे उत्पन्न हो सकते हैं । इससे स्पष्ट होता

सदन की राय लिये बिना विदेशी कपड़े पर कर कम करने के मामले में विचार करने के लिये श्री टी०एस० अविनाशलिंगम् चेट्टियार द्वारा प्रस्तुत कामरोको प्रस्ताव पर लेजिस्लेटिव असेम्बली में पंत जी द्वारा 2 सितम्बर, 1936 को दिया गया भाषण ।

है कि कैसे मन चाहे निष्कर्ष निकाले जाते हैं, कैसे आंकड़ों को विकृत किया जाता है, कैसे तथ्यों की गलत व्याख्या होती हैं और किस तरह पूर्व–निर्धारित कार्य के लिए तट–कर परिषद को अपनी तरफ करके मनचाहा निर्णय प्राप्त किया जाता है । यदि मुझे आगे बोलने की अनुमति दी जाये तो मैं अपने वक्तव्य को पुष्ट कर सकता हूँ ।

आप लोगों में जिन लोगों ने भारत-ब्रिटिश व्यापार समझौते को देखा होगा, वे जानते होंगे कि मूल्यानुसार (एड-वेलोरम) शुल्क को 25 से 20 प्रतिशत कम करने का सुझाव दिया गया था और विशेष शुल्क को $4\frac{1}{2}$ आना प्रति पौंड से घटाकर $3\frac{1}{2}$ आना प्रति पौंड करने का प्रस्ताव था । यह एक विचित्र संयोग ही माना जायेगा कि पूरी विस्तृत पड़ताल के पश्चात तटकर–परिषद ने भी एड-वेलोरम शुल्क को 25 से घटाकर 20 प्रतिशत करने और विशिष्ट शुल्क को घटाकर $3\frac{1}{2}$ आना प्रति पौंड करने का वहीं प्रस्ताव स्वीकार किया, जैसी कोशिश भारत-ब्रिटिश व्यापार समझौते के समय ब्रिटिश उत्पादकों ने की थी । यह वाकई संदेहजनक और आश्चर्यजनक है कि किस तरह भविष्यवक्ताओं ने तट-कर परिषद के गठन के दो वर्ष पूर्व ही उसके निर्णयों को घोषित कर दिया था । यह प्रेरणा का सत्य उदाहरण है । मान्यवर, इससे तदर्थ तट-कर परिषद के खतरे के बारे में जानकारी मिलती है ।

ये मुख्य प्रश्न नहीं हैं, जिन पर आज हमें चर्चा करनी है । विचारणीय बात यह है–सरकार ने निष्ठापूर्वक कार्य किया है या निष्ठाहीनतापूर्वक, ईमानदारी से किया है या बेइमानी से, साफगोई की है या पाखण्ड? मैं सायास इन शब्दों का प्रयोग कर रहा हूँ । मैं आपको बताऊँगा कि क्या हुआ है । ऐसे ही एक मौके पर 1930-31 में जार्ज शुस्टर ने कमोबेश ऐसी ही बात कही थी :

"हमने ब्रिटिश सरकार को स्पष्ट बता दिया है कि गैर–ब्रिटिश सूती वस्त्रों पर 5 प्रतिशत अतिरिक्त शुल्क लगाकर ब्रिटिश वस्तुओं को वरीयता प्रदान करने के प्रस्ताव पर, अपने निष्कर्षों को साफ शब्दों में बताने के बाद हमें विधान सभा को निर्णय के लिए अधिकृत मानना चाहिए । अन्तिम निर्णय उसका ही हो सकता है ।"

यह स्पष्ट घोषणा 1930-31 में इसी सदन में सर जार्ज शुस्टर ने की थी कि ब्रिटिश वस्तुओं के ऊपर शुल्क की कमी के सभी प्रस्ताव इस सदन के सामने ही आने चाहिए, जिसपर अन्तिम निर्णय का दारोमदार है । हमें वैसे भी भारतीय–ब्रिटिश व्यापार समझौते पर बहस के समय सर जोसेफ भोर द्वारा दिया गया सुस्पष्ट

आश्वासन और गम्भीर वायदा याद आ रहा है। मैं उन्हें उद्धृत कर रहा हूँ :

"जांच के निष्कर्ष हमारे निष्कर्ष होंगे और यदि संरक्षण का सार और स्तर घटाया जाना है, तो भी यह निर्णय विधायिका ही करेगी ।"

ब्रिटिश सूती वस्त्रों पर निर्यात–कर 25 से घटाकर 20 प्रतिशत और $4\frac{1}{2}$ आना प्रति पौंड से $3\frac{1}{2}$ आना प्रति पौंड करने के संदर्भ में ही सर जोसेफ भोर ने हमें सुस्पष्ट आश्वासन दिया था । आपने प्रत्येक गम्भीर आश्वासन को भंग किया है । सरकार की स्मृति कमजोर होती है लेकिन मेरे विचार से भारत–सरकार ने कुछ महीने पूर्व प्रकाशित अपने ही वक्तव्य को विस्मृत नहीं किया होगा; जब उसने तट–कर परिषद की नियुक्ति की अधिसूचना जारी की थी, तो उसका क्या विचार था और उसने देश को क्या बताया था? मान्यवर मै सदन में अधिसूचना के पैरा संख्या–4 को पढ़ूँगा जिसके आधार पर तटकर परिषद अस्तित्व में आयी । मैं पैरा–4 को पढ़ रहा हूँ और मेरा अनुरोध है कि इसके कतिपय शब्दों की ओर ध्यान दिया जाये :

"विधेयक पर चर्चा के समय, तत्कालीन वाणिज्य सदस्य सर जोसेफ भोर ने विधेयक का प्रवर समिति के सुपुर्द करने का प्रस्ताव रखते हुए सरकार की ओर से कहा था कि यद्यपि वस्त्र उद्योग को पांच वर्ष के लिए संरक्षण प्रदान करने का विचार है, फिर भी भारत के मिल–मालिकों के संघ और लंकाशायर के प्रतिनिधि–मण्डल के मध्य सम्पन्न समझौते की शर्तों के अनुसार ब्रिटिश वस्तुओं पर तटकर रेट दो वर्ष के लिए यथावत रहेगा । समझौते के अधीन दो वर्षों की समाप्ति के बाद शेष समय के लिए ब्रिटिश वस्तुओं के लिए तटकर का निर्धारण तत्कालीन परिस्थितियों और प्राप्त अनुभवों के आधार पर किया जायेगा ।"

अब हम महत्वपूर्ण वाक्यों पर आते हैं :

"समझौते की अवधि 31 दिसम्बर, 1935 को समाप्त हो जायेगी और आगामी बजट–सत्र में शुल्कों में आवश्यक समझे जाने वाले परिवर्तन करने हेतु विधेयक पेश करना अनिवार्य हो जायेगा ।"

मान्यवर, यह भारत सरकार की स्पष्ट घोषणा थी जिसे तटकर परिषद की नियुक्ति की अधिसूचना में शामिल किया गया था । यह वह तटकर परिषद है जिसकी अव्यवस्थित संस्तुतियाँ एक क्षण के परीक्षण में ध्वस्त हो सकती हैं लेकिन

फिलहाल मैं उन संस्तुतियों पर विचार नहीं करूंगा । भारत सरकार ने वाकई भद्रता की समस्त भावनायें भुला डाली हैं और सदन में अपने जिम्मेदार प्रतिनिधियों द्वारा बार–बार घोषित वायदों को कूड़े के ढेर में फेंक दिया है । मैं सदन को इसका कारण बताता हूँ । यदि तटकर परिषद के प्रस्तावों को इस सदन के सामने रखा जाता, तो वह विवेक और परीक्षण का प्रकाश एक क्षण के लिए भी नहीं सह पाता और सरकार तटकर परिषद के निष्कर्षों का किसी भी प्रकार से समर्थन नहीं कर पाती । मान्यवर, सरकार को एक बात की जानकारी होनी चाहिए— और यह उसे है–कि जब कभी भी ग्रेटब्रिटेन को अधिमान प्रदान करने का प्रस्ताव आता है तो देश में स्वाभाविक रूप से व्यापक संदेह पैदा हो जाता है । भारत सरकार ग्रेटब्रिटेन की सरकार के अधीन है और ब्रिटिश शासन के दबाव के विरुद्ध नहीं जा सकती है । जब ग्रेटब्रिटेन को अधिमान प्रदान किया जाता है, तो यह चाहे असत्य भले ही हो, तो भी आम आदमी यही सोचता है कि भारत सरकार का यह निर्णय विदेशी प्रभावों और असंगत लिहाज के कारण हुआ है । क्या इस तटकर परिषद की नियुक्ति का कोई विशेष कारण था? मान्यवर यह माना जाता है कि यह परिषद जनवरी, 1934 के समझौते की देन है, लेकिन वह समझौता ओटावा समझौते के साथ संलग्न था जिसमें यह स्पष्ट प्राविधान था कि यह केवल ओटावा समझौते के प्रवर्तनीय रहने तक ही प्रर्वतनीय रहेगा । ओटावा समझौते की भर्त्सना की जा चुकी है, इसे जलाया और दफनाया जा चुका है, फिर आखिर सरकार इस मृत शैतान के अव्यवस्थित पद–चिन्हों पर क्यों चलना चाहती है, जिसका आज कोई चिन्ह शेष नहीं है? मैं दुहराता हूँ कि उस समय इस समझौते पर कोई कार्रवाई करने का कोई अवसर उपलब्ध नहीं था । मान्यवर, फिर आखिर सदन द्वारा ओटावा समझौता ठुकरा दिये जाने के बाद सरकार ने एकपक्षीय अधिमान क्यों प्रदान किया? यहां तक कि पिछले दिल्ली सत्र में कटपीस कपड़ों के सिलसिले में तट–कर (संशोधन) विधेयक प्रस्तुत हुआ था और सरकार भारत में आयातित कुछ ब्रिटिश वस्तुओं के लिए अधिमान प्रदान करना चाहती थी । इस सदन ने उसे अस्वीकार कर दिया और स्पष्ट कहा कि वह ब्रिटिश निर्यात को किसी किस्म का अधिमान प्रदान करने वाले प्रस्ताव का समर्थन नहीं कर सकती । अब हम थोड़ा और आगे देखें और जानें कि क्या इस तरह की कार्रवाई के लिए वह अवसर उपयुक्त था? मुझे लगता है कि माननीय वाणिज्य सदस्य इंग्लैण्ड की सरकार से या तो द्विपक्षीय समझौते की बात कर रहे हैं या करने का इरादा रख रहे हैं । क्या बिना किसी प्रतिलाभ के एकपक्षीय अधिमान प्रदान करना उचित हो सकता है? आप कुछ दिन और रुककर क्या यह जानकारी नहीं कर सकते कि जब इंग्लैण्ड भारत से सुविधा पा ही रहा है, तो भारत भी इंग्लैण्ड से वैसी ही सुविधायें प्राप्त कर सकता है? मान्यवर, क्या

आपको यह याद नहीं है कि अभी हाल में जब इंग्लैण्ड में भारतीय निर्यात का मामला उठा था, तो व्यापार परिषद के इंचार्ज सदस्य ने कहा था कि जब पूरे मामले पर विचार किया जाना है, तो अलग–अलग मामलों में विचार करने का औचित्य नहीं है? मान्यवर, हम अपनी ओर से इंग्लैण्ड को लाभ प्रदान किये जा रहे हैं । मेरे विचार से इस सदन के माननीय सदस्य यह जानते हैं कि दूसरे देशों से होने वाले आयात पर 50 प्रतिशत का आयात-कर पड़ता है जबकि ब्रिटिश वस्त्रों पर 25 प्रतिशत कर है और कमी के पहले ही दूसरे देशों की तुलना में इंग्लैण्ड को 50 प्रतिशत का लाभ था, और इसे भी अपर्याप्त माना गया था । आखिर हम नयी सुविधायें क्यों प्रदान करें? यदि भारत सरकार ने निष्कपट कहा होता कि वह तो व्यवस्था का एक छोटा पुर्जा मात्र है अतः वह कुछ और भला नहीं कर सकती, तो यह समझ में आने वाली बात थी, लेकिन उसमें स्पष्टवादिता और ईमानदारी का अभाव है, और असमर्थनीय दृष्टिकोण को उचित ठहराने के प्रयास में वह हास्यास्पद बन जाती है । मान्यवर, इस प्रसंग पर भारत सरकार का दृष्टिकोण न केवल राष्ट्र–विरोधी और इस देश के हित के विरुद्ध है, बल्कि यह विश्वासघात का स्पष्ट मामला भी है ।

•

कैण्टोनमेण्ट बोर्ड (संशोधन) विधेयक

मान्यवर, मुझे खेद है कि वर्तमान मामले में काफी बाधा महसूस कर रहा हूँ क्योंकि मुझे बताया गया है कि प्रस्ताव पेश करने वाले माननीय सदस्य और प्रवर समिति के सदस्यों के मध्य आपसी सोच-समझ स्थापित हो गयी है, अन्यथा विधेयक के बारे में उनके मत से मेरा अनुमान पूर्णतया भिन्न है। मैं वास्तव में इसे सहर्ष फेंक चुका होता। जहाँ तक माननीय प्रस्तावक का सम्बन्ध है, उनके द्वारा दी गयी धमकी एक सीधे सच्चे वक्तव्य के अतिरिक्त कुछ नहीं है, लेकिन यह मुझे इस विधेयक के सम्बन्ध में, जैसा मैं चाहता हूँ वैसा कहने से विचलित नहीं कर सकती। श्री टोटेनहाम ने हमें बताया कि पूरी रोटी न मिलने से तो आधी रोटी बेहतर है। किन्तु मैं समझता हूँ कि विधेयक तो चौथाई रोटी के समान भी नहीं है। मुझे नहीं लगता कि मेरे द्वारा प्रस्तुत तथ्य अतिशयोक्तिपूर्ण हैं। मुझे दु:ख है आपको मेरा स्वर बड़ा बेसुरा-सा लग रहा होगा, किन्तु महोदय, मैंने विधेयक पर सावधानीपूर्वक विचार किया और मेरी निश्चित राय है कि यदि विधेयक को लागू ही न किया जाये तो छावनी (कैंटोनमेंट) के लोगों की स्थिति वर्तमान से अधिक खराब नहीं होगी। महोदय, मैं इस समय न बोला होता किन्तु सेना के सदस्य ने सभी पहलुओं को समाविष्ट करना चाहा और....

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) — जहां तक वह वर्ग विशेष से सम्बन्धित है।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — जहां तक उस वर्ग विशेष का सम्बन्ध है, वह उन सिद्धान्तों का मुख्य अंग है, जिन पर यह विधेयक आधारित है। अब महोदय, मैं स्थिति को पूरी तरह समझते हुए यह बताना चाहूँगा कि मैं इसे कैसे देखता हूँ और इसके बारे में क्या सोचता हूँ। महोदय, छावनी के दो भाग हैं। (क) चिन्हित स्थल—मात्र सेना और सेना के लोगों तक के लिये सीमित है। अत: छावनी परिषद नियंत्रित क्षेत्रों से फौज का किसी प्रकार का सीधा सम्बन्ध नहीं होता है। छावनी परिषदें केवल नागरिक (सिविल) जनसंख्या से सम्बन्धित हैं किन्तु इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि नागरिक जनसंख्या वहाँ काफी सीमा तक सेना पर निर्भर करती है। वे उसके क्वार्टरों के बहुत नजदीक रहती हैं। अत: हम यहाँ फौजों या

1924 के कैण्टोनमेंट अधिनियम में संशोधन के प्रस्ताव सहित सदन में प्रस्तुत बिल पर 7 सितम्बर, 1936 को लेजिस्लेटिव असेम्बली में पंत जी का भाषण।

उन क्षेत्रों के लिए जो फौज के कब्जे में हैं, विधान बनाने नहीं जा रहे हैं वरन् उन लोगों को सुविधायें प्रदान करने की व्यवस्था करना चाहते हैं, जो यद्यपि सेना से सम्बन्धित हैं किन्तु स्वयं सैनिक या अधिकारियों का हिस्सा नहीं है । महोदय, वर्तमान विधेयक छावनी परिषद के गठन के महत्वपूर्ण प्रश्न से सम्बन्धित है, किन्तु यह 1924 के अधिनियम में कोई सुधार नहीं करता है । छावनी परिषदों का गठन 1924 में हुआ था । इनके चुने हुए एवं मनोनीत सदस्यों की संख्या समान रखी गयी थी और इनका अध्यक्ष एक सैनिक अधिकारी होता है । अतः उस अधिनियम की व्यवस्था के अनुसार जो आज लागू है और जो 1924 में पारित हुआ था, छावनी परिषदों में नामांकित सरकारी सदस्यों को एक का बहुमत प्राप्त था । 1924 से दुनियां बहुत बदल चुकी है । विश्व के भिन्न भागों में कई साम्राज्य धराशायी हो चुके हैं और कई नये गणतंत्र और नयी सरकारें स्थापित हो चुकी हैं । हमारे अपने देश में जैसा कि कहा जाता है, हम स्वराज की ओर, चाहे वह स्वराज न भी हो, अग्रसर हो रहे हैं और प्रादेशिक स्वायत्तता हमारे निकट ही है । इतना सब होते हुए हम नहीं समझ पाते कि छावनी परिषदों का गठन ही अपरिवर्तित क्यों रहे और जबकि इतने स्थानों पर नखलिस्तान बन चुके हैं, तब क्यों ये परिषदें पूर्ववत् रेगिस्तान बनी रहे? वास्तव में इस सन्दर्भ में काफी प्रतिक्रियावादी रवैया रहा है और एक विशेष जीव की तरह सेना सचिव पश्चगामी प्रवृत्ति के दिखायी देते हैं । पहले हर छावनी में जहाँ परिषद थी, न्यूनतम सात चुने हुए सदस्य थे, लेकिन अब इस योजना के अनुसार कई परिषदों में जिसमें अब सात सदस्य हैं, कम सदस्य होंगे । न केवल उसमें सरकारी सदस्यों का बहुमत होगा वरन् गैर सरकारी सदस्यों की संख्या कम हो जायेगी । मैं सोचता हूँ कि सेना के सचिव अहसास करेंगे एवं स्वीकारेंगे कि सेना के लोग अन्य कारणों के अलावा अनुशासन से निर्देशित होते हैं और यह उनका मूल चरित्र है । इन परिषदों में चार सेनाधिकारियों का मनोनयन होगा । उनसे सम्भवतः कमांडिंग अधिकारी से भिन्न सोचने की अपेक्षा नहीं है । भिन्न मत होने की बात तो अलग ही है । इसलिये चुने गये सदस्यों को सदा सशक्त विरोध का सामना करना पड़ेगा । ये चुने गये सदस्य कुछ छावनी परिषदों में दहाई की संख्या में भी नहीं होंगे, एक ही सदस्य होगा । मैं नहीं जानता कि वह कमांडिंग अधिकारी सेना सदस्य के सामने क्या कर पायेगा । मैं उसे शक्तिवान के सम्मुख निर्बल जैसा नहीं कहूंगा किन्तु उसकी स्थिति निश्चित रूप से शोचनीय होगी और उसे नाजुक मसले पर कुछ कहने से पूर्व कई बार सोचना होगा । अतः मुझे विधेयक में कोई भी लाभ नजर नहीं आता । एक सुरक्षा कवच अब तक और था और वह वास्तविक सुरक्षा कवच था । छावनी परिषद क्षेत्र व्यवहारिक तौर पर स्थानीय सरकार के निर्देशन एवं नियंत्रण में था । आम जनता एवं स्थानीय सरकार में

सम्बन्ध कही अधिक घनिष्ठ एवं समीपी होते हैं, अपेक्षाकृत उनके और उस भारत सरकार के मध्य जो शिमला की ऊँचाइयों पर मजा उड़ाती रहती है । तब स्थितियों में बहुत अन्तर हो जाता है जब छावनी के लोग न्यूनाधिक रूप से स्थानीय सरकार के नियंत्रण में थे और अब जब कि सैनिक छावनियां भारत सरकार के प्रत्यक्ष नियंत्रण में रहेगीं । सेना का शक्ति केन्द्र भारत सरकार है । इस केन्द्र के द्वारा वह पूरे भारत पर अधिकार और नियंत्रण करना चाहती है । इस प्रकार जनता की आवाज को दबाया जायेगा और किसी को इसकी प्रतिध्वनि भी कहीं सुनायी नहीं देगी । प्रान्तीय सरकार ऐसी स्थिति में नहीं है । वस्तुतः विधेयक का उद्देश्य स्थानीय शासन की सारी शक्तियों केन्द्र को स्थानान्तरित करना है, अर्थात् कमोवेश एक जिम्मेदार शासन की शक्तियों को एकदम पुरातन और निरंकुश शासन के पास स्थानान्तरित करना है । मान्यवर, यह विधेयक का मुख्य उद्देश्य है और मैं इसे बहुत खतरनाक बात समझता हूँ ।

मि०जी०आर०एफ० टोटेनहम – क्या मैं माननीय सदस्य से पूछ सकता हूँ कि स्थानीय सरकारों के पास ऐसे कौन से अधिकार हैं जिन पर भारत सरकार का नियंत्रण नहीं है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं यह कह रहा हूँ कि अभी तक छावनी परिषदें प्रत्यक्षतः स्थानीय सरकारों के नियंत्रण में थीं और भारत सरकार स्थानीय सरकारों पर केवल निगरानी का कार्य करती थी । लेकिन अब छावनी क्षेत्रों को स्वयं भारत सरकार ने अपना प्राथमिक विषय बना लिया है । इसकी दुम में विष भरा है । विधेयक के अन्तिम खण्ड में भारत सरकार के नियंत्रण पर जोर दिया गया है । (मि० जी०आर०एफ० टोटेनहम द्वारा व्यवधान) वस्तुतः सेना सचिव ने स्वयं ही विधेयक से संलग्न ज्ञापन में यह कहा है कि इस विधेयक का मुख्य उद्देश्य स्थानीय सरकारों के अभी तक प्राप्त अधिकारों को भारत सरकार को सौंप देना है । यदि उनका वक्तव्य भ्रामक था तो मैंने जो कुछ कहा उसके लिए मैं दोषी नहीं हूँ । उन्होंने जो कुछ कहा है उसके लिए उनकी ईमानदारी की मैं प्रशंसा करता हूँ और मेरी समझ में विधेयक उनके वांछित उद्देश्य को पूरा करता है । इस पर किसी संदेह की सम्भावना नहीं है । हमें बताया गया है कि छावनियों में बाजार क्षेत्र भी होंगे और बाजार समितियों में निर्वाचित सदस्यों का बहुमत होगा । ये बाजार समितियाँ स्वयं परिषद द्वारा गठित की जाने वाली उप समितियों से श्रेष्ठ नहीं होगीं । इन्हें किसी प्रकार का वैध अधिकार, शक्तियाँ या विशेषाधिकार नहीं प्राप्त हैं । वह करारोपण नहीं कर सकतीं । बाजार समितियों के गठन वाली धारा में ही

यह कहा गया है कि बाजार समितियाँ कोई उप नियम या विनियम भी नहीं बना सकतीं । यह एक ऐसी छोटी उपसमिति से बेहतर नहीं होगी, जिसे परिषद ने कतिपय कार्य करने का अधिकार प्रदान किया हो । यह बहुत कुछ छावनियों में संक्रामक रोगों से पीड़ित व्यक्तियों को रखने के लिए बनाये गये अलग स्थान जैसी चीज होगी । यह दक्षिण अफ्रीका के मूल निवासियों को अलग रखने के लिए आरक्षित स्थान जैसी होगी । इसलिये मैं इस रियायत से, जिसे सैन्य सचिव विशेष महत्व देते हैं, अधिक उत्साहित नहीं हूँ । मैं निजी तौर पर सोचता हूँ कि यह गलत काम है । वह सरकारी और गैर सरकारी व्यक्तियों के बीच कोई भेद नहीं करना चाहते । मैं उससे सहमत हूँ और उनके सम्मुख एक सुझाव रखना चाहता हूँ । इन परिषदों में सरकारी सदस्यों का बहुमत होने दीजिए । आप आठ सरकारी और सात गैर सरकारी सदस्यों को रखिये लेकिन ये सब निर्वाचित होने चाहिए और छावनी के निवासियों को यह अवसर मिलना चाहिए कि वे सरकारी व्यक्तियों में से आठ और गैर सरकारी व्यक्तियों में से सात का चुनाव कर सकें । मतदाता मण्डल संयुक्त होना चाहिए । उन्हें सेना के उच्चपदस्थ के अधिकारियों के परिषद के सदस्य के रूप में चुनने का अधिकार प्राप्त होना चाहिए । मेरे विचार से वे इसे अपना विशेष अधिकार मानेंगे यदि उन्हें मेरे सम्मानित मित्र मि० टोटेनहम को परिषद में अपने प्रतिनिधि के रूप में चुनने का अवसर मिलता है । लेकिन जब आप निर्वाचन के सिद्धान्त को ही स्वीकार नहीं करते और जब आप यह कहते हैं कि आप नामांकन के मामले में भी अपने अधिकारियों पर विश्वास नहीं करते कि वह सही व्यक्तियों का नामांकन करेंगे और उनके विवेकाधीन अधिकार को इतना सीमित कर देते हैं कि वे केवल सरकारी व्यक्तियों का ही नामांकन कर सकें, तो आपके मुंह से यह कहना शोभा नहीं देता कि आप सरकारी और गैर सरकारी व्यक्तियों के बीच कोई भेदभाव नहीं करते । यह विकराल भेदभाव है और अत्यधिक अंश में व्याप्त है । क्या परिणाम होगा यदि इस विशिष्ट प्रस्ताव द्वारा प्रस्तावित संशोधन पारित हो जाये? इनमें कुछ भी क्रांतिकारिता निहित नहीं है । यदि सभी संशोधन स्वीकार कर लिये जायं तो अधिक से अधिक यह होगा कि निर्वाचित और गैर सरकारी मनोनीत सदस्यों को मनोनीत सदस्यों की तुलना में एक का बहुमत प्राप्त हो जायेगा । क्या माननीय सैनिक सदस्य में इतना आत्मविश्वास नहीं है कि तर्क शक्ति और छावनी तथा सेना के अधिकारियों की छावनी के भीतर की शक्ति और उनके प्राधिकार रहते हुए भी वह गैर सरकारी निर्वाचित सदस्यों में से एक सदस्य को भी अपना समर्थक बना सकेंगे? मेरे विचार से वह मनोनीत सरकारी सदस्यों की बुद्धिमत्ता, उनकी क्षमता और उनकी शक्ति का बहुत कम मूल्यांकन कर रहे हैं । ये

तीनों बातें वहां एक साथ प्रभावकारी होती-हैं और मेरे विचार से यह उचित आशा रखनी चाहिए कि अगर गैर सरकारी सदस्यों की दुष्ट मण्डली आत्महत्या करने पर भी उतारू हो, तो भी वे लोग कम से कम एक सदस्य को तो अपनी ओर कर ही लेंगे, अन्यथा इस मण्डली को स्वयं इसका घातक परिणाम भोगना होगा । यदि उनके कृत्य अपने हितों के विपरीत होंगे तो उनका परिणाम भी उनके लिए हानिकारक होगा । आखिर सेना सचिव में साहस का परिचय क्यों नहीं देते? सेना अपने साहस, दृढ़ता, निर्भीकता और ऊर्जा के प्राचुर्य के लिए प्रसिद्ध है । ये उसके विशेष गुण हैं । उन्हें परिषद में गैर-सरकारी सदस्यों के मात्र एक के बहुमत से भय क्यों है? मान्यवर, यदि यह भी मान लिया जाये कि ये सदस्य यदाकदा गठबन्धन करके सरकारी दृष्टिकोण के विरुद्ध प्रस्ताव कर देते हैं, तो भी क्या इस विधेयक में इसके लिए पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था नहीं है? सर्व प्रथम तो अध्यक्ष ही ऐसे प्रस्ताव को निरस्त (वीटो) कर सकता है । कमांडिंग अधिकारी भी ऐसा ही कर सकता है । फिर, स्थानीय सरकार भी ऐसा कर सकती है । भारत सरकार भी यह कर सकती है । फिर परिषद तक को भी भंग किया जा सकता है और शायद उस एक मात्र अनिच्छुक सदस्य को भी उन तमाम कारणों के आधार पर छावनी क्षेत्र से बाहर निकाला जा सकता है जिन्हें आसानी से इस्तेमाल करने का छावनी अधिकारियों को अधिकार प्राप्त हैं । फिर ऐसी व्याकुलता क्यों? यदि ये व्यक्ति कभी-कभी विकृत और मूर्खतापूर्ण विचार अपनाते हैं, तो आप इन्हें अमान्य ठहरा सकते हैं । फिर आपके पास गैर सरकारी सदस्यों की संख्या में वृद्धि करने के विरुद्ध क्या कारण शेष रह जाता है? मेरे पास इस विषय पर 1924 में हुई बहस की रिपोर्ट है । उस समय वायसराय ने आश्वासन दिया था कि सरकार छावनी परिषदों में केवल न्यूनतम सुरक्षा अधिकार अपनायेगी जो सैनिक हितों के संरक्षण और सैनिकों के स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए आवश्यक होंगे, शेष सभी मामलों में सैनिक परिषदें नगरपालिकाओं के समान ही कार्य करेंगी । वायसराय द्वारा 1924 में दिये गये आश्वासनों को देखते हुए क्या यह अपेक्षा करना अनुचित होगा कि 12 वर्ष बीत जाने के बाद अब गैर-सरकारी सदस्यों की निर्धारित संख्या में कम से कम एक सदस्य की वृद्धि कर दी जाये? इस संशोधन प्रस्ताव के प्रस्तावक का उद्देश्य इससे अधिक कुछ भी नहीं है । मैं सेना सदस्य से अनुरोध करूंगा वह स्थिति पर पुनर्विचार करें और न्यायपूर्ण तथा उचित दृष्टिकोण अपनायें । मैंने उन्हें इस सदन के भद्र व्यक्ति की तरह मानकर सम्मानित किया है, जिन्हें हम इसलिए दुखी नहीं करना चाहते क्योंकि उन्होंने कभी भी गलत तरीका अपना कर हमें उत्तेजित नहीं किया है । मैं उनके प्रति कोमल

भावना रखता हूँ । मैंने उनसे पहले ही कहा था कि चूंकि मुझे प्रवर समिति के अन्दर के क्रियाकलापों की जानकारी है इसलिए मैं इस विधेयक को समाप्त करने का कभी भी प्रयास नहीं करूंगा । मैं इसे दुहराता हूँ कि इस विधेयक से मेरा चाहे कितना भी बिरोध क्यों न हो, और मेरे मन में इसके टुकड़े–टुकड़े कर देने और इसे समुद्र में प्रवाहित कर प्रसन्नता प्राप्त करने की चाहे जैसी भी भावना रही हो, मैं आखिरकार इसे स्वीकार करने को तत्पर हूँ । इसलिए मैं पुनः अपील करूंगा कि वह अपनी स्थिति पर पुनर्विचार करें, और अपेक्षा करूंगा कि वे कम से कम कुछ संशोधन तो अवश्य स्वीकार कर लें ताकि छोटे छोटे मामलों में विधेयक का परिष्कार हो सके ।

●

कम्पनी विधि में सुधार

मैं इस समय विवादास्पद मामलों को उठाना नहीं चाहता हूँ और नही किसी प्रस्ताव के पक्ष या विपक्ष में तर्क देना चाहता हूँ । मैं केवल विधेयक में छूटी हुई कुछ चीजों की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूँ, और उन परिवर्तनों की ओर संकेत करना चाहता हूँ जो इसे बेहतर बनाने के लिए वांछित हैं । इसके पूर्व मैं भूमिका के तौर पर एक दो टिप्पणियां करना चाहूँगा । मान्यवर, मैं इसे शुरू में ही स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यदि मुझे इस विधेयक को इसी रूप में स्वीकार करने और अस्वीकार करने के बीच में चुनाव करने को कहा जाय तो मैं निश्चित रूप से उसे स्वीकार कर लूँगा । मोटे तौर पर इससे वर्तमान स्थिति में सुधार होगा और मैं इसे प्रतिक्रियावादी कदम नहीं कहूँगा । इसके अतिरिक्त मैं यह भी समझता हूँ कि इस विधेयक में इस देश के ओद्योगिक वर्गों के ऊपर कोई दोषारोपण भी नहीं किया गया है । उन्होंने बहुत विपरीत स्थितियों में, कठिन हालतों के बीच अपने औद्योगिक संस्थानों का संचालन किया है । इसलिए हम इस विधेयक के द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उनकी निन्दा नहीं कर रहे हैं : लेकिन उन्हें यह महसूस करना चाहिए कि प्रत्येक समूह में कुछ दुश्चरित्र लोग रहते हैं और ऐसे लोगों से समाज को बचाने के लिए कानून की आवश्यकता होती है । मान्यवर, मैं यह भी स्पष्ट करना चाहूँगा कि भारत के उद्योगपतियों की छवि दूसरे देशों के उद्योगपतियों की तुलना में खराब नहीं है ।

इस विधेयक के प्राविधान संयुक्त राज्य और दूसरे देशों की कम्पनी विधियों प्राविधानों से कठोर नहीं है । हमारे यहाँ वैसे घोटाले नहीं हुए हैं जैसे घोटाले स्टावेस्की या क्रातर के नाम से जुड़े हुए हैं । इसलिए हमारे ऊपर यह आरोप नहीं लग सकता कि हमारे देश की ओद्योगिक नैतिकता का स्तर दूसरे देशों की तुलना में नीचे है । इस मामले में हमें निश्चित रहना चाहिए । लेकिन मान्यवर, समाज गतिशील है; इसमें परिवर्तन होता रहता है, प्रगति होती रहती है, जिसकी वजह से वर्तमान व्यवस्था में विनाश और बदलाव होता है तथा उसके स्थान पर श्रेष्ठतर

यह भाषण पंत जी द्वारा 8 सितम्बर, 1936 को उस समय दिया गया था जब सदन में भारतीय कंम्पनी (संशोधन) विधेयक पर चर्चा चल रही थी ।

और अपेक्षाकृत अधिक लाभप्रद चीजें आती हैं । जैसे-जैसे हम अनुभव और विवेक से समृद्ध होते जाते हैं वैसे वैसे पुरानी व्यवस्था पीछे छूटती जाती है, और इसी तरह से संसार का जीवन चलता रहता है तथा विकास और प्रगति होती है । इसलिये मान्यवर, हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि इस प्रकृति का विधेयक केवल इस देश के लिए ही असाधारण है । लेकिन हमें यह याद रखना चाहिए कि हमारे यहाँ भी समस्याएँ हैं और 1913 से हमारे देश में कम्पनियों के मामले में काफी विकास हुआ है । पंजीकृत कम्पनियों की संख्या 2,500 से बढ़कर 10,000 हो गयी है । इन कम्पनियों द्वारा चुकता और अधिकृत पूंजी 60 करोड़ से बढ़कर 300 करोड़ हो गयी है । यह उचित ही है कि माननीय विधि सदस्य इस तरह के प्रस्ताव से जुड़ें, क्योंकि बंगाल प्रेसीडेंसी में सबसे अधिक कम्पनियाँ है, जिनकी संख्या तीन से चार हजार के बीच में होगी, और ज्वाइंट स्टाफ कम्पनियों की चुकता पूंजी का सबसे बड़ा हिस्सा बंगाल में ही है । बंगाल के बाद आता है बम्बई । सन् 1913 के बाद के विस्तार ने नई समस्याएँ पैदा की है, और इसके अतिरिक्त विधियों की संहिता बद्धता की

हमारी व्यवस्था का विकास पेड़ की छालों की तरह नहीं हुआ है जैसा सामान्य विधि के मामले में हुआ है,लेकिन समय के परिवर्तित होने, हमारे विकसित होने और हमारे सामने नयी समस्यायें आने के साथ-साथ अपने वस्त्रों की तरह हमें अपनी संहिताओं को बदलना होगा । इसलिए आज जो हम कर रहे हैं वह औद्योगिक व्यवस्था की प्रगति के एक चरण की तैयारी से अधिक नहीं है । मान्यवर, मैं अनुभव करता हूँ कि हमारी इच्छा चाहे जो भी हो, वर्तमान स्थिति में हम मैनेजिंग एजेन्सी व्यवस्था को समाप्त नहीं कर सकते । हमें अनुभव होता है कि इस व्यवस्था को तुरन्त समाप्त करना देश के औद्योगिक विकास के हित में नहीं है । मुझे यहाँ 'मैं' शब्द का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि मैं जानता हूँ मेरे कुछ मित्र यह अनुभव करते हैं— और शायद बहुत तीव्रता के साथ अनुभव करते हैं कि इस व्यवस्था को समाप्त कर देना चाहिए । वे अभी तक मुझे अपने दृष्टिकोण से सहमत नहीं करा पाये हैं

मान्यवर, मैं आपको कुछ शब्दों में यह बताना चाहूँगा कि मेरी दृष्टि में इस विधेयक में क्या-क्या होना चाहिए था और किन संदर्भों में इसका सुधार किया जाना चाहिए था । जैसा कि हमें बताया गया है इस 'संशोधन प्रस्ताव' को लेकर हुए विवाद की पूरी अवधि में मैनेजिंग एजेन्सी व्यवस्था ही छायी रही । लेकिन जैसा कि सदन के नेता ने बताया है, वह इस विधेयक की परिधि में आने वाली कई समस्याओं

में से एक है और यदि उस समस्या का अपने आप में अत्यधिक महत्व है, तो भी प्रश्न के तमाम दूसरे पहलू है, जिन्हें यदि एक साथ रखा जाय तो मेरे विचार से उसका महत्व मैनेजिंग एजेन्सी व्यवस्था के सुधार से, यदि अधिक नहीं तो बराबर तो अवश्य है ।

मान्यवर, हमारे देश में एक कम्पनी संगठन में तीन समूह होते हैं– अंशधारी, निदेशक और प्रबन्धकीय अभिकर्ता (मैनेजिंग एजेन्ट) । यदि एक दूरदर्शी दृष्टि से देखा जाय, तो अंशधारियों, निदेशकों और प्रबन्धकीय अभिकर्ताओं के हितों में कोई संघर्ष नहीं होना चाहिए । लेकिन इन तीन के अतिरिक्त सामान्य जनता का भी उससे जुड़ाव है क्योंकि औद्योगिक विकास ऐक ऐसा गंभीर मामला है जिस पर देश की करोड़ों जनता की समृद्धि निर्भर है और आगे भी निर्भर रहेगी । हमारे बीच कुछ लोग मानते हैं कि केवल राष्ट्रीयकरण से श्रेष्ठतम परिणाम निकल सकते हैं, लेकिन जब तक हमारे यहां राष्ट्रविरोधी शासन है तब तक इसका प्रश्न ही नहीं उठता, और जब तक सम्प्रभु शासन के हित विपरीत प्रकार के हैं तब तक राजकीय दिशा–निर्देश और सहयोग भी प्राप्त नहीं हो सकता। इन परिस्थितियों में हमें विशेष कदम उठाने पड़ते हैं और इस कारण से मैनेजिंग एजेन्सी व्यवस्था अस्तित्व में आयी है, और यही कारण है कि जब तक हमारे देश के उद्योगों के साथ विदेशी शासन का सौतेला व्यवहार बना रहेगा तब तक यह व्यवस्था भी चलती रहेगी । दूसरे स्थानों पर लोगों को जो प्रेरणा राज्य से मिलती है वह हमें केवल उद्योगपतियों के साहस और संसाधन से ही प्राप्त हो सकती है, और इसे बिना किसी असाधारण प्रयास से गतिशील नहीं किया जा सकता । मेरे विचार से यही कारण है कि इस देश में मैनेजिंग एजेन्सी व्यवस्था का विकास हुआ है । हमारे देश में संरक्षणवादी नीति के लागू होने के कारण यह आवश्यक है कि उत्पादन की लागत कम हो और बिचौलियों को अधिक लाभ मिले ताकि उद्योगों में किफायत हो सके, संरक्षण के स्तर को नीचे लाया जा सके और औद्योगिक प्रगति को तेज किया जा सके । इसलिए, मान्यवर, यद्यपि प्राथमिक रूप से यह अंशधारियों, निदेशकों और प्रबन्धकीय अभिकर्ताओं का मामला है फिर भी प्रत्येक कम्पनी समस्त जनता के लिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि वे जो कुछ भी करते हैं, सामान्य जनता पर भी उसका प्रभाव पड़ता है । मान्यवर, मैंने इस प्रश्न पर विचार करते समय इन बातों का ध्यान रखा है ।

मैं अब बताना चाहूँगा कि मेरी दृष्टि से इस विधेयक को कैसा होना चाहिए था । निदेशकों के मामले में मूल प्राविधान यह था कि एक तिहाई निदेशकों का नामांकन मैनेजिंग एजेन्टों द्वारा होना चाहिए । अब विधेयक में प्राविधान है कि एक

तिहाई की नियुक्ति प्रबन्धकीय अभिकर्ताओं द्वारा और एक तिहाई की नियुक्ति अंशधारियों द्वारा होनी चाहिए । भाषा थोड़ी अनगढ़ है और इस पर आपत्ति हो सकती है, मैंने एक संशोधन के द्वारा भाषा की कठिनाई को समाप्त करने का प्रयास भी किया है । मेरा दृष्टिकोण है कि कम से कम दो तिहाई निदेशकों की नियुक्ति अंशधारियों द्वारा होनी चाहिए और मैंने प्रस्ताव किया है कि दो तिहाई निदेशक ऐसे हों जो हटाये जा सकें या क्रम से रिटायर होते रहें । इससे सम्भवत: तकनीकी बाधा समाप्त हो जायगी । सारभूत बिन्दु बहुत स्पष्ट है; जब आप कहते हैं कि एक तिहाई से अधिक निदेशक मैनेजिंग एजेन्टों द्वारा नामांकित नहीं होंगे तो इसके साथ यह सकारात्मक प्राविधान भी जोड़ दीजिए कि कमसे कम दो तिहाई निदोकों का चुनाव अंशधारियों द्वारा होना चाहिए । मैं इसे लागू करना चाहता हूँ....

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – क्या मैं माननीय सदस्य से यह प्रश्न पूछ सकता हूँ : दो तिहाई निदेशकों का चुनाव अंशधारियों द्वारा करने के बारे में मेरे माननीय मित्र ने जो संशोधन रखा है, क्या वह भूतलक्ष्यीय प्रभाव वाला है या केवल नवागन्तुकों के लिए है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इसे विधेयक के लागू होने के साथ ही लागू करना चाहिए । मैं इसे भूतलक्ष्यीय प्रभाव नहीं देना चाहता ।

मिस्टर एम०ए० जिन्ना – क्या मैं माननीय विधि सदस्य का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित कर सकता हूँ कि सदन के इस ओर बैठे हुए सदस्यों को एक शब्द भी सुनाई नहीं दे रहा है ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार : मुझे खेद है । मैं अपनी कही हुई बातों को दोहरा रहा हूँ । मेरे माननीय मित्र पं० गोविन्द बल्लभ पन्त ने मुझे सूचित किया था कि उन्होंने अपने संशोधन में सुझाव दिया है कि कम से कम दो तिहाई निदेशकों का चुनाव अंशधारियों द्वारा होना चाहिए । मैंने उनसे पूछा था कि क्या वे इसे इस 1936 के अधिनियम के बाद निगमित नयी कम्पनियों पर लागू करंना चाहते हैं या वे इसे भूतलक्ष्यीय बनाना चाहते हैं । पर उन्होंने उत्तर दिया कि वे इसे नयी कम्पनियों पर ही लागू करना चाहते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त : मैं इसके पश्चात एक प्रस्ताव और लाना चाहूँगा जिसे कि थोड़ा-बहुत क्रांतिकारी माना जा सकता है । मैं इस धारणा को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ और चूंकि यह क्रांतिकारी है इसलिए मैं इसे और अधिक पसन्द करता हूँ क्योंकि केवल क्रांति के द्वारा ही सामान्यतया जनकल्याण के लिए वास्तविक और महान परिवर्तन लाया जा सकता है । इस संदर्भ में मेरे क्रांतिकारी प्रस्ताव में यह प्राविधान है कि गवर्नर जनरल को इस तरह की शक्तियाँ दी जाने वाली धारा के अन्तर्गत, नियमों की संगति में एकल असंक्रमणीय मत के द्वारा निदेशकों का चुनाव

आनुपातिक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था के द्वारा होगा । मुझे यह औचित्यपूर्ण लगता है कि जिस समूह में भी एक निदेशक निर्वाचित करने की शक्ति हो उसे इसकी अनुमति होनी चाहिए । जैसा मैंने प्रारम्भ में बताया था, मैं फिलहाल इस संदर्भ में कोई तर्क नही दूंगा । मैं केवल अपनी दृष्टि में वांछनीय सुधारों का संदर्भ दे रहा हूँ । इसके अतिरिक्त मान्यवर, इस विधेयक में कुछ ढीलापन भी रह गया है । इसमें निदेशकों को ऋण देने पर प्रतिबन्ध है, लेकिन निदेशकों द्वारा फर्म के साझेदारों को ऋण दिये जाने पर रोक नहीं है, और नहीं ऐसा फर्म पर रोक है जिसमें स्वयं निदेशक एक साझीदार हो । इसमें उन निजी कम्पनियों को ऋण देने पर रोक नहीं है जिनको बहुत कठिनाई से ही फर्मों से अलग किया जा सकता है । और एक कम्पनी का निदेशक निजी कम्पनी का निदेशक भी हो सकता है । इसके अतिरिक्त इसमें ऋण पर तो रोक है लेकिन इसमें निदेशक द्वारा लिए गये ऋण पर कम्पनी द्वारा गारण्टी दिये जाने पर कोई रोक नहीं है । इन सारे मामलों में मेरा सुझाव है कि संशोधन के द्वारा इसके ढाँचे को कसा जाना चाहिए ।

इसके अतिरिक्त मान्यवर, एक और महत्वपूर्ण मामला है जिस पर शासन को विचार करना चाहिए । वर्तमान अधिनियम में, और इस विधेयक में केवल इतना प्राविधान है कि एक निदेशक सम्बन्धित संविदा में कम्पनी को सूचना दी जानी चाहिए और सम्बन्धित निदेशक को मतदान नहीं करना चाहिए । मेरे विचार से इस तरह के क्रिया कलापों को प्रोत्साहन देना नैतिकता के सभी नियमों के विरुद्ध है जिसमें कर्तव्य और स्वार्थ के बीच संघर्ष अवश्यम्भावी है । निदेशक की एक वित्तीय स्थिति होती है, और उसे अपनी ओर से अपने लाभ के लिए किसी कम्पनी से सम्बन्ध बनाने की अनुमति देना निन्दनीय है । इसलिए मैं इस व्यवहार को पूर्णतः प्रतिबन्धित करना चाहता हूँ लेकिन कम से कम इतना तो किया ही जाना चाहिए कि सामान्य सभा में सामान्य अंशधारियों की अनुमति के बिना कोई निदेशक किसी कम्पनी से किसी प्रकार की व्यवस्था या संविदा न कर सके । मेरे विचार से कम से कम इतना तो किया ही जाना चाहिए । मान्यवर, निदेशकों के पास अपनी कम्पनियों के शेयर की सट्टेबाजी करने के साधन उपलब्ध होते हैं । वे शेयर के मूल्यों में दांवपेंच कर सकते हैं । इसलिए इन स्थितियों से बचने के लिए निदेशकों को यह आदेश होना चाहिए कि वे प्रतिवर्ष सामान्य सभा को अपने क्रय–विक्रय और शेयर के क्रय–विक्रय का लेखा–जोखा प्रस्तुत करें । इससे अंशधारियों को यह जानने में सरलता होगी कि वास्तविक व्यवसाय हुआ है या सट्टेबाजी ।

मान्यवर, इसके पश्चात् मैं संक्षेप में मैनेजिंग एजेन्टों के बारे में कुछ कहना चाहूँगा । विधेयक में प्रवर समिति द्वारा कतिपय ऐसे परिवर्तन किये गये हैं जिन्हें मैं

खेदजनक मानता हूँ। मूल विधेयक में प्राविधान था कि अंशधारियों की सामान्य सभा की स्वीकृति प्रत्येक मैनेजिंग एजेन्ट की नियुक्ति में आवश्यक है, लेकिन अब संशोधित विधेयक में कहा गया है कि यदि नियमावली में मैनेजिंग एजेन्ट की नियुक्ति का प्राविधान है, और यदि उसकी नियुक्ति तदनुसार हुई है तो अंशधारियों की सामान्य सभा की स्वीकृति अनावश्यक है। इसके अतिरिक्त मान्यवर, एक अन्य प्राविधान के अनुसार वेतन इत्यादि के मामले में भी नियमावली में उल्लिखित इस तरह की संविदा की शर्तें बाध्यकारी होंगी। विधेयक के मूल अनुच्छेद में कहा गया था कि इस तरह की प्रत्येक संविदा अंशधारियों की सामान्य सभा में प्रस्तुत की जायगी। अन्ततः कम्पनी का वैधानिक स्वामित्व अंशधारियों की सामान्य सभा के पास है और मेरे विचार से उन्हें ऐसे महत्वपूर्ण मामले पर सामूहिक रूप से विचार विनिमय और निर्णय करने का अवसर मिलना चाहिए। मैं माननीय विधि सदस्य को उनके आज के उस वक्तव्य के लिए धन्यवाद देना चाहता हूँ जिसमें उन्होंने यह कहा है कि वे मैनेजिंग एजेन्टों को लाभ में प्रतिशत के अलावा अन्य किसी प्रकार का पारिश्रमिक नहीं देना चाहते। इससे एक निश्चित सीमा तक भ्रम की आशंका समाप्त हो जाती है, तथापि मैं मूल अनुच्छेद को वापस लाया जाना अधिक पसन्द करूंगा। इसके अतिरिक्त मैं प्रवर समिति के द्वारा किये गये दो अन्य परिवर्तनों की ओर संकेत करना चाहूँगा। प्रस्तावित विधेयक में यह प्राविधान है कि यदि इस अवधि के नियमानुसार 20 वर्ष की सीमा के कारण मैनेजिंग एजेन्ट का कार्यकाल समाप्त हो जाता है तो उसे क्षतिपूर्ति प्रदान की जायगी। मुझे यह तर्कसंगत नहीं लगता कि कानून में एक ओर तो यह प्राविधान है कि मैनेजिंग एजेन्ट का कार्यकाल 20 वर्ष में स्वतः समाप्त हो जायगा और दूसरी ओर यह नियम है कि मैनेजिंग एजेन्टों को क्षतिपूर्ति दी जायगी। इसे मैं अनुचित मानता हूँ। इसके अतिरिक्त, मान्यवर, एक अन्य अनुच्छेद में कहा गया है कि कम्पनी के बन्द होने की स्थिति में भी मैनेजिंग एजेन्ट को क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार है। मैं इसे हास्यास्पद तो नहीं, किन्तु तर्क से परे अवश्य कहूँगा कि एक ओर तो मैनेजिंग एजेन्ट की वजह से कम्पनी कष्ट में रहे और दूसरी ओर इसे उनको क्षतिपूर्ति भी प्रदान करना आवश्यक माना जाये। मुझे याद आ रहा है कि यह नियम बनाया गया है कि यदि उसकी ओर से लापरवाही-या कोई दूसरा शब्द है जिसे मेरे माननीय मित्र मि० सेन बता सकते हैं—या कुप्रशासन है, तो इन दो मामलों में उसे मुआवजे का अधिकार नहीं है।

मि० सुशील चन्द्र सेन (भारत सरकार : नामांकित अधिकारी)-प्रयुक्त पदावली है "लापरवाही या डिफाल्ट"

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त —हां। यदि अक्षमता के कारण ऐसा हुआ है, तो उसे

मुआवजा क्यों मिले? अक्षमता न तो लापरवाही है और न ही डिफाल्ट फिर भी ऐसे सभी मामलों में उसे क्षतिपूर्ति का अधिकार है । मेरा मत है कि यदि दुर्घटना या दुर्भाग्य के कारण भी विघटन हुआ है तो भी चूंकि उस व्यक्ति को अन्यथा लाभ का बड़ा हिस्सा मिलता, इसलिए उस घाटे को अंशधारियों के साथ उसे भी सहन करना चाहिए । मुझे यह अत्यधिक अनुचित लगता है कि उसे उस स्थिति में भी मुआवजा मिले, जबकि असलियत में कम्पनी के विघटन के लिए, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से वह स्वयं जिम्मेदार है । यदि वह पर्याप्त समझदार है और उसके अन्दर पर्याप्त ऊर्जा है तो वह दूर से ही दुर्घटना को देख सकता है और उससे बचाव कर सकता है । मान्यवर, मेरी दृष्टि से यह अत्यन्त अनुचित है कि कम्पनी के विघटन के लिए उसे मुआवजा दिया जाय ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार — क्या मैं अपने माननीय मित्र से विचारार्थ यह बात कह सकता हूँ कि एक बिल्कुल दूसरी स्थिति भी हो सकती है जिसमें कम्पनी को कोई वास्तविक कठिनाई न हो, किन्तु केवल मैनेजिंग एजेन्ट को हटाने के लिए उसका स्वैच्छिक विघटन कर दिया जाय ।

मि० एम० अनन्तशयनम् आयंगर — इस स्थिति में इतना और जोड़ सकते हैं : "स्वैच्छिक विघटन के मामले के अलावा ।"

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इस स्थिति में कम्पनी को अपने शेयरों का अच्छा मूल्य मिलेगा और चूंकि मैनेजिंग एजेन्टों के पास सदैव कम्पनी के शेयर रहते हैं, इसलिए उन्हें उसके मूल्य में वृद्धि का लाभ तथा अन्य कई प्रकार का लाभ मिलेगा।यदि कोई दांवपेंच करता है और यदि सम्पत्ति का वास्तविक मूल्य है,तो मैनेजिंग एजेन्ट को शेयरों की बढ़ी हुई कीमत अवश्य मिलेगी । इस तरह किसी भी स्थिति में उसका नुकसान नहीं होगा । इसके अलावा, मान्यवर, आखिरकार शेयरहोल्डर सदस्य इतने मूर्ख नहीं होंगे कि अपने ही हितों पर प्रहार करने वाला आत्मघाती कार्य करेंगे । इस ऐसी दूरस्थ सम्भावनाओं पर विचार नहीं कर सकते । यह जीवन की सामान्य शैली नहीं है । हम यह नहीं मानते कि लोग इतने विक्षिप्त हो जायंगे कि आत्महत्या कर बैठें । माननीय विधि सदस्य को उचित सम्मान देते हुए भी इसे अन्ततः एक अपवाद ही मानना होगा ।

इसके अतिरिक्त मेरे विचार में विधेयक में तमाम बातें छूट गयी हैं । उनमें एक बात में मेरी बहुत दिलचस्पी है । इस विधेयक के अन्तर्गत मैनेजिंग एजेन्ट कम्पनी से अपने लाभ के लिए संविदाएं और व्यवस्थाएं कर सकते हैं । यह मेरी समझ के बाहर है कि— जैसा कि खंड—2 में परिभाषित है — एक व्यक्ति कम्पनी की सारी गतिविधियों का प्रभारी है और उसे कम्पनी की नीतियों को इस तरह से

तोड़ने – मरोड़ने का अधिकार है जिससे वह कम्पनी की कीमत पर अपने लिए अधिक से अधिक लाभ ले सके । जैसा मैंने अभी बताया है, इससे पुनः व्यावसायिक औचित्य और नैतिकता का खुला उल्लंघन होता है और मेरे विचार से एक अनुच्छेद जिसके लिए मैंने एक नोटिस भी दी है —और जोड़ा जाना चाहिए कि "इस अधिनियम के लागू होने के बाद मैंनेजिंग एजेन्ट कम्पनियों के मामले में अपनी ओर से कोई कार्य नहीं कर सकेंगे ।" मुझे खेद है कि मैंने इसके आगे जाने की कोशिश नहीं की क्योंकि मुझे लगता है कि माननीय विधि सदस्य को मैं सहमत नहीं कर पाऊंगा ।

सर कावसजी जहांगीर — अनुबन्ध करना ?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–अनुबन्ध होने या न होने का मेरे लिए अधिक महत्व नहीं है । मैं कहता हूँ कि यदि कार्य अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए कम्पनी की कीमत पर किया जा रहा है तो इसकी अनुमति नहीं मिलनी चाहिए । इसके अतिरिक्त एक और महत्वपूर्ण मामला है जिस पर माननीय विधि सदस्य और सदन को अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए । इसका सम्बन्ध वर्तमान मैंनेजिंग एजेंसियों से है । मैं यह मानने को तैयार हूँ कि आज की एजेंसियों को उन एजेंसियों के समकक्ष नहीं रखा जा सकता, जो इसके बाद बनायी जायेंगी । जैसा कि माननीय सदस्यों को मालूम है, यह विधेयक मेरे माननीय मित्र, मि० सेन के परिश्रम का परिणाम है । उन्हें इसका विशेष दायित्व दिया गया था और उन्हें स्थानीय शासनों समेत सभी हितों की रपटों को पढ़ने का अवसर मिला है । उनका विचार था कि इस अधिनियम के लागू होने के एक वर्ष बाद सभी वर्तमान कम्पनियों के पदों का कार्यकाल समाप्त हो जाना चाहिए । सम्भवतः मेरे माननीय मित्र का मत ठीक था । उनका प्रतिवेदन ऐसा है जिसे मैं सामान्यतया ठीक मानता और यदि उसका पालन होता तो मैं उसका स्वागत करता । लेकिन मेरा प्रस्ताव है कि यदि आप उस सीमा तक नहीं भी जाते और उस विधेयक से सम्बद्ध अनुच्छेद को नहीं हटाते तो उसे कम से कम इस तरह संशोधित कर दें, जिससे इस अधिनियम के लागू होने के 5 वर्ष बाद अंशधारी, यदि चाहें तो, एक प्रस्ताव के द्वारा मैंनेजिंग ऐजेन्ट को हटा सकें — बशर्ते एजेन्ट ने अपनी पहली नियुक्ति से उस समय तक 30 वर्ष पूरे कर लिये हों । इस तरह आप उन्हें इसके बाद नियुक्त होने वाले एजेन्टों की तुलना में 10 वर्ष का समय अधिक दे रहे हैं और आप उन्हें इस अधिनियम के पारित होने के 5 वर्ष बाद तक सुरक्षा भी प्रदान कर रहे हैं, और उनका कार्यकाल अगले बीस वर्ष बाद तक स्वतः समाप्त भी नहीं होगा । उनका कार्यकाल केवल इसी स्थिति में समाप्त होगा जब अंशधारियों के

बहुमत से ऐसा कोई प्रस्ताव पारित हो जाये ।

मान्यवर, इसके अलावा दो–तीन और मामलों पर मैं सदन का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ । विधेयक के मूल प्राविधान में व्यवस्था थी कि भारत से बाहर निगमित कम्पनियां यदि यहाँ व्यापार करती हैं तो उन्हें उसी पद्धति से अपना संतुलन–पत्र प्रस्तुत करना होगा जिस तरह से भारत में निगमित कम्पनियों को करना पड़ता है । मैं यहाँ यह भी बताना चाहूँगा कि वह अनुच्छेद इस अंग्रेजी अधिनियम से लिया गया है जिसके आधार पर वर्तमान विधेयक का निर्माण हुआ है । लेकिन प्रवर समिति ने इसमें परिवर्तन कर दिया और भिन्न प्रकार के सन्तुलन–पत्र की व्यवस्था कर दी । मेरे विचार से प्रवर समिति का कार्य ठीक नहीं था । मैं ऐसी बात इसलिए कह रहा हूँ, क्योंकि मैं भी प्रवर समिति का सदस्य था । मेरा मत है कि हमें अंग्रेजी अधिनियम की भाषा का प्रयोग करना चाहिए, और यदि कलकत्ता, लाहौर या बम्बई में निगमित किसी कम्पनी को ग्रेट ब्रिटेन में व्यवसाय करने पर, ग्रेट ब्रिटेन में पंजीकृत कम्पनियों के लिए निर्धारित प्रपत्र पर ही अपना लेखा–जोखा प्रस्तुत करना पड़ता है, तो मुझे यह समझ में नहीं आता कि फिर हम क्यों नहीं अपने देश में इस मामले में पारस्परिकता के बहु–चर्चित पवित्र सिद्धान्त को लागू न करें । मान्यवर, केवल हमारी कम्पनियों को ही नहीं बल्कि न्यूयार्क या टिम्बकटू या टिप्पेरेरी में निमित कम्पनियों को भी लन्दन में व्यवसाय करने पर उसी प्रपत्र पर अपना लेखा–जोखा देना पड़ता है । कोई कारण नहीं है कि हम यहाँ वैसा ही नियम क्यों न बनाएं ।

●

कंपनी शेयरों का पंजीकरण

एक अन्य प्रसंग में भी मेरी इच्छा है कि इस अधिनियम में उसके लिए कोई कानून बनाया जाय ताकि विदेशी कम्पनियों के अंशकों को बेचकर हमारे सीधे-सादे निवेशकों को मूर्ख न बनाया जा सके । जिन्होंने मि० सेन की रपट पढ़ी है या उसे पढेंगे, उन्हें मालूम पड़ेगा कि इस तरह से कई व्यक्तियों को मूर्ख बनाया जा चुका है और यह आवश्यक है कि इसका कोई बचाव निकाला जाय, और यदि हम अंग्रेजी कम्पनी अधिनियम की विदेशों में निगमित कम्पनियों के शेयरों के स्थान्तरण से सम्बन्धित कठोर धाराओं को ही लागू कर सकें, तो भी हम अपने निवेशकों की थोड़ी सुरक्षा कर सकते हैं ।

मान्यवर, मैं अब और अधिक समय नहीं लूंगा । मुझे आशा है कि जनता के हित की रक्षा के लिए और विधेयक को सुधारने के लिए सदन इस विधेयक का परीक्षण अवश्य करेगा । यहां इन हितों को सर्वोच्च महत्व मिलना चाहिए । विधेयक ने औपचारिक अनुबन्ध की पवित्रता के गये-गुजरे सिद्धान्त के स्थान पर सामाजिक कल्याण के सिद्धान्त को स्वीकार किया है । और इसे बुनियादी सिद्धान्त मानते हुए, हमें इस विधेयक पर विचार करना चाहिए ताकि हम इस विधेयक से समाज को अधिकतम लाभ दे सकें, और इस उद्देश्य के लिए हमें आवश्यक संशोधन अवश्य करना चाहिए ।

इस संशोधन के तुरन्त पश्चात् मेरे नाम से एक संशोधन है । मैं जानना चाहूँगा कि आप मुझे कब अपनी बात कहने का अवसर देना चाहेंगे? क्या मैं सत्यमूर्ति के संशोधन में इस आशय का संशोधन पेश करूँ कि उनके संशोधन के अन्त में "जिस पर कम्पनी का कोई धारणाधिकार अथवा प्रभार नहीं है" पढ़ा जाय । या आप चाहेंगे कि मैं अलग से अपना संशोधन प्रस्तुत करूँ, या मैं श्री सत्यमूर्ति के संशोधन का निस्तारण होने की प्रतीक्षा करूँ ।

माननीय उपाध्यक्ष (मि० अखिल चन्द्र दत्त)– मेरे विचार से अच्छा यह होगा कि आप इसी समय अपने संशोधन को श्री सत्यमूर्ति के संशोधन में संशोधन की तरह प्रस्तुत करें ।

यह भाषण पं० गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा, अपने संशोधन प्रस्ताव के समर्थन में, 15 सितम्बर 1936 को लेजिस्लेटिव असेम्बली में दिया गया था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त-मान्यवर, मैं अपनी अनुमति से, प्रस्तावित करता हूँ कि श्री सत्यमूर्ति के संशोधन में निम्नांकित शब्द जोड़े जाएं:—

"जिस पर कम्पनी का कोई धारणाधिकार या प्रभार नहीं है" ।

तब संशोधन का स्वरूप इस प्रकार हो जायगा—

"अथवा कम्पनी को ऐसे अधिकार प्रदान करना जिसके द्वारा वह ऐसे चुकता शेयरों या शेयरों को जिस पर कम्पनी का कोई धारणाधिकार या प्रभार नहीं है, स्थान्तरित करना अस्वीकार कर सकें" ।

मान्यवर, मैंने जो संशोधन प्रस्तुत किया है वह श्री सत्यमूर्ति के संशोधन को और अधिक सीमित करता है और उस सीमा तक वह कम्पनी को यह अधिकार देता है कि वह पूरी तरह से ऐसे चुकता 'शेयरों' के स्थान्तरण को भी, जो धारणाधिकार या प्रभार के अन्तर्गत नहीं आते, अस्वीकृत कर सकती है । इसके पश्चात् मैं चाहूँगा कि माननीय सदस्यगण एक-दो प्रारम्भिक बातों पर ध्यान दें ।

पं० लक्ष्मी कान्त मैत्र-मान्यवर, एक व्यवस्था का प्रश्न है । मैं जानना चाहता हूँ कि इस समय हम लोग किस संशोधन पर चर्चा कर रहे हैं? मुझे ज्ञात है कि मेरे माननीय मित्र श्री सत्यमूर्ति ने एक संशोधन प्रस्तुत किया है और पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त ने भी एक संशोधन रखा है । मान लीजिए प्रस्ताव पर मतदान होता है तो हम यह कैसे जान सकते हैं कि हम किस प्रस्ताव पर मतदान कर रहे हैं?

पं० गोविन्द बल्लभ पन्त-सारतः यह मेरा संशोधन है, लेकिन नाम पर श्री सत्यमूर्ति के है। इसलिए आप हम दोनों को अपना समर्थन और सहयोग दे सकते हैं ।

माननीय उपाध्यक्ष (मि० अखिल चन्द्र दत्त)-दो संशोधन प्रस्तुत किये गये हैं और अब उन पर एक बिस्तृत चर्चा होगी ।

पं० गोविन्द बल्लभ पन्त-मैं अभी यह कह रहा था कि मैंने जो संशोधन प्रस्तुत किया है वह केवल सार्वजनिक कम्पनियों के शेयर्स से सम्बन्धित है । इसका निजी कम्पनियों के शेयर्स से कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि निजी कम्पनियों की जो परिभाषा है उनके अनुसार वे इस प्रकार के अधिकार से युक्त हैं और वस्तुतः उनके लिए ऐसी बाध्यता है कि उनके शेयरों का स्थानान्तरण नहीं किया जा सकता है ।

हम यहाँ केवल उन शेयर्स के स्थान्तरण के बारे में विचार कर रहे हैं जिन्हें क्रय करने के लिए कम्पनी के अधिकारियों ने जनता को आमंत्रित किया है । वस्तुत: इसी सार्वजनिक आमंत्रण के आधार पर ही किसी व्यक्ति को यह प्रेरणा मिलती है कि वह सार्वजनिक कम्पनी के शेयर्स को क्रय करने के लिए अपना धन लगाये, और यह संशोधन भी केवल सार्वजनिक कम्पनियों के शेयर्स के सन्दर्भ में ही प्रासंगिक है । इसके अतिरिक्त प्रारम्भ में ही मैं एक और बात कहना चाहता हूँ जो इसी तरह से बहुत बुनियादी बात है । सामान्य नीति के अन्तर्गत, संविदा की स्वतंत्रता को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए । प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सम्पत्ति को स्थान्तरण का जन्मजात अधिकार प्राप्त है और उसे प्रतिबन्धित करना सार्वजनिक नीति के विरुद्ध है । मान्यवर, हमें देखना है कि यदि ऐसा नियम बनाया जाय कि कम्पनियों को चुकता शेयर्स के स्थान्तरण को स्वीकार करना आवश्यक रहे, तो क्या यह कम्पनियों के हित के विरुद्ध होगा? जैसा कि मेरे संशोधन में है या जैसा श्री सत्यमूर्ति के संशोधित संशोधन में कहा गया है, यदि उस मामले में कम्पनी पर कोई धारणाधिकार या प्रभार है, तो कम्पनी की इच्छा के विरुद्ध स्थान्तरण नहीं होगा । लेकिन पूर्णत: चुकता शेयर्स के मामले में कम्पनी को यह अधिकार नहीं मिलना चाहिए । जब हिस्सा पूँजी पूरी अदा कर दी गयी हो तो ऐसे शेयरों पर कम्पनी और धन की माँग नहीं कर सकती । कम्पनी के पावने का पूरा भुगतान हो जाने पर ही किसी शेयर को पूर्णत: चुकता शेयर का स्तर प्राप्त होता है । इस तरह इस प्रकार के स्थान्तरण से कम्पनी के आर्थिक हितों को कोई प्रत्यक्ष दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है । यह कहा गया है कि यदि एक दुष्ट व्यक्ति कम्पनी को परेशान करना चाहता है, तो वह इस तरह शेयर प्राप्त कर सकता है । मेरे विचार से यह बहुत लचर दलील है । कम्पनियों में मेरे माननीय मित्र, सर एच०पी० मोदी जैसे शक्तिशाली लोग होते हैं और वे एक दो शेयर रखने वाले निर्बल आलोचकों का आसानी से मुकाबला कर सकते हैं । मेरी समझ में नहीं आता कि वे इसके लिए इतने चिन्तित क्यों हैं? इससे तो ऐसी शंका पैदा होती है, जैसे उनकी कम्पनी की स्थिति अत्यधिक चिन्तनीय हो और वे अपने संस्थान में आँख–कान से दुरुस्त किसी व्यक्ति को आने नहीं देना चाहते हैं, ताकि वे असलियतें जाहिर न हो सकें जिन्हें कम्पनी जनता से छिपाना चाहती है । वस्तुत: मैं समझता हूँ कि जिन्होंने इस विषय का अध्ययन किया है उनमें से अधिकांश इसी प्रकार सोचते हैं । सम्भवत: नेता सदन को ज्ञात होगा 'मि० लोकनाथन' ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि कम्पनियों पर मैनेजिंग एजेन्टों का पूर्ण नियंत्रण रहता है, और निदेशक मूर्खों या गैर मूर्खों के एक ऐसे झुण्ड के अलावा और कुछ नहीं है, जिन्हें वे (मैनेजिंग एजेन्ट) प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से नामांकित करते हैं । इसलिए यदि यदा–कदा कम्पनी के मामलों पर प्रकाश पड़ता रहे तो वह

अनुपयोगी नहीं होगा और किसी भी स्थिति में कम्पनी के प्रशासन में लगे हुए भद्र पुरुषों को इसका विरोध नहीं करना चाहिए । अन्ततः यदि विरोध पक्ष से भी आलोचना होती है तो इसका अच्छा परिणाम निकलता है । और एक अकेला शेयर धारक यदि क्षति पहुँचाने के लिए कटिबद्ध है तो भी वह क्या कर सकता है? और क्या इस तरह का व्यक्ति बिना शेयर प्राप्त किये हुए शरारत नहीं कर सकता? मान्यवर, मेरा विश्वास है कि यदि लोग अपने सन्देहों का परित्याग कर खुले हृदय से एक दूसरे से मिलें, तो अच्छी और स्पष्ट समझदारी पैदा होने के मार्ग में आड़े आने वाली गलत–फहमियाँ दूर हो सकती हैं । इस प्रकार का व्यवहार किया जाय तो यदि कोई व्यक्ति आलोचना करने के दृढ़ निश्चय के साथ कम्पनी में प्रवेश करे तो इससे अन्ततः एक ईमानदार कम्पनी को लाभ ही होगा । मैं तो इसका स्वागत ही करूँगा । मैं मानता हूँ कि यदि कोई व्यक्ति अपने अज्ञान की वजह से कहीं किसी जगह अंधेरे की आशंका करता है, जब कि वहाँ पर पर्याप्त प्रकाश है, तो उसकी शंका दूर करने का श्रेष्ठतम उपाय यह होगा कि उसे वह स्थान स्वयं देखने का अवसर दिया जाय । मैं मानता हूँ कि आलोचना क्षतिकारक नहीं होती और एक सीमा तक तो इसकी उपयोगिता ही होती है, और यदि कभी–कभी कोई व्यक्ति किसी कम्पनी में इसलिए प्रवेश करता है ताकि वह उसके मामलों को बुद्धिमत्तापूर्वक समझ सके तो उसका उद्देश्य पूर्णतः उचित और वांछनीय है । हमारी कम्पनियों की बाबत यह सामान्य शिकायत की जाती है कि शेयरधारक उदासीन और बुद्धिहीन होते हैं और वे कम्पनी के मामलों में कोई दिलचस्पी नहीं लेते, फिर भी आप उन लोगों के लिए दरवाजा बन्द कर देना चाहते हैं जो उनमें बुद्धिमत्तापूर्वक दिलचस्पी लेना चाहते हैं । लोकनाथन की पुस्तक में बम्बई के एक महान व्यवसायी, मि० वाडिया का एक उदाहरण है । उन्होंने कहा था :

> "यदि एक निदेशक कम्पनी के मामलों को गहराई से देखने लगता है, तो उसका निष्कासन अवश्यम्भावी है । मैनेजिंग ऐजेन्ट या निदेशक मण्डल में उसके सहयोगी उसे अधिक समय तक सहन करने को तैयार नहीं होंगे ।"

इन परिस्थितियों में अकेला शेयरधारक क्रर भी क्या सकता है? आखिरकार उसकी आवाज कम्पनी की सामान्य सभा तक ही सीमित रहेगी और अनुमति मिलने पर वह अधिक से अधिक जोर–जोर से बोल सकता है । ऐसे में यहाँ की भांति आखिरकार सर एच०पी० मोदी की ही विजय होगी । जबकि हम उनका समर्थन प्राप्त करने हेतु उन्हें मनाने और राजी करने के लिए भरसक प्रयास करते रहते हैं । इन लोगों के साथ भी वही होगा, लेकिन क्या वास्तव में यह इतना गम्भीर मामला है । आखिरकार, यदि यह इतना ही खतरनाक मामला होता तो रिजर्व बैंक ने अपने

लिए ऐसा नियम क्यों बनाया होता ? रिजर्व बैंक अधिनियम के अन्तर्गत जो नियमावली बनायी गयी है, उसमें निदेशकों को कोई ऐसा अधिकार प्राप्त नहीं है, जिसके द्वारा वे पूर्णतः चुकता शेयर्स के स्थान्तरण को अस्वीकार कर सकें । रिजर्व बैंक के निदेशक गण ऐसे लोग हैं जो सन्देह के परे हैं और उनसे अधिक सक्षम निष्पक्ष निदेशक किसी कम्पनी में नहीं है, इसके बावजूद ऐसा नियम बनाने की आवश्यकता का अनुभव हुआ कि रिजर्व बैंक के पूर्णतः चुकता शेयर्स का स्थान्तरण निदेशक मण्डल की इच्छा पर निर्भर नहीं रहेगा। इसके अतिरिक्त मान्यवर, मैं सदन को बताना चाहूँगा कि इम्पीरियल बैंक की प्रवर समिति ने इस विषय पर एकमत से ऐसा ही विचार प्रकट किया है । उन्होंने कहा है :

"हम इस बात से सहमत नहीं हैं कि बैंक को पूर्णतः चुकता शेयर्स के स्थान्तरण को पंजीकृत करने मे इन्कार करने का अधिकार प्राप्त हो ।"

अभी तक तो यह विशेष बैंक से सम्बन्धित मामला था लेकिन अब मैं नेता सदन का ध्यान उसके आगे की पंक्ति की ओर दिलाना चाहूँगा :

"हमें यह वांछनीय नहीं लगता कि यह अधिकार स्वयं उन्हें या किसी भी सीमित दायित्व की कम्पनी को प्राप्त हो ।"

यदि मैं गलती नहीं कर रहा हूँ तो, सर कावसजी जहाँगीर भी उस प्रवर समिति के एक सदस्य थे और उनका भी यह विचार था कि किसी भी सीमित दायित्व की कम्पनी को यह अधिकार नहीं मिलना चाहिए । समिति के वे सभी 18 सदस्य तब इस सदन के सदस्य थे और उनमें से कुछ देश के शीर्षस्थ व्यवसायी और उद्योगपति थे । मेरे आदरणीय मित्र सर कावसजी जहाँगीर समेत उन सभी का यह मत था कि एक सीमित दायित्व वाली कम्पनी को यह अधिकार नहीं मिलना चाहिए कि वह पूर्णतः चुकता शेयरों के स्थान्तरण को अस्वीकार कर सके । इसलिए मान्यवर, जब इस सदन या देश द्वारा गठित की जा सकने वाली सबसे अधिक दायित्वपूर्ण समिति की यह मान्यता है तो मुझे नहीं लगता कि इस सदन को इस मसले पर और अधिक विचार या परीक्षण करने के लिए कुछ शेष रह जाता है । इस विषय पर यह अन्तिम और निर्णायक मत है । इसके अतिरिक्त, मान्यवर, कुछ कम्पनियाँ ऐसी हैं जिनके यहाँ आज भी यह नियम है कि पूर्णतः चुकता शेयर्स को सदैव पंजीकृत किया जायेगा और ऐसे पंजीकरण पर कोई आपत्ति नहीं की जायेगी और जहाँ तक मुझे जानकारी है, ऐसी कम्पनियाँ समृद्ध हो रही हैं, प्रगति कर रही हैं । इसके अतिरिक्त कुछ बड़े बैंक भी हैं जिनके यहाँ भी इस तरह के नियम हैं । सम्भवतः बाम्बे ट्राम वे कम्पनी— जिसके बार में मेरे माननीय मित्र 'सर होमी

मोदी' को सम्भवतः अवश्य जानकारी होगी— में भी इस प्रकार का नियम है । इसके अतिरिक्त और भी कम्पनियाँ है लेकिन उनकी बाबत विस्तार से विचार करने की आवश्यकता नहीं है । आपको इस पर एक दूसरे दृष्टिकोण से भी विचार करना चाहिए । यदि कम्पनियाँ पूर्णतः चुकता होने के बावजूद शेयर्स को पंजीकृत करना अस्वीकार करें तो इसका शेयरधारकों पर क्या प्रभाव पड़ेगा? मान्यवर, यदि एक शेयरधारक को धन की आवश्यकता है और वह अपने शेयर्स स्थान्तरण करता है और उसके पश्चात् आप उसका पंजीकरण नहीं करते हैं, तो यह क्रय और विक्रय करने वाले दोनों पक्षों के लिए नुकसानदेह होगा । यह सम्भव है कि इस आधार पर क्रेता और विक्रेता के बीच स्थांतरण कानूनी आधार पर निरस्त न किया जाय, लेकिन कठिनाई फिर भी बनी रहती है और कोई व्यक्ति ऐसा शेयर नहीं खरीदना चाहेगा जिसमें उसे शेयरधारकों के अधिकार और सुविधा अर्जित करने की अनुमति न हो । एक अवांछनीय व्यक्ति के पीछे ऐसे हजार अवांछनीय मामले हो सकते हैं जबकि यहाँ तक कि उचित व्यक्तियों के शेयर्स के स्थान्तरण में निदेशकों द्वारा आपत्ति उठायी गयी हो और कई बार इस कारण शेयरों के मूल्य पर भी विपरीत प्रभाव पड़ सकता है । यदि यह बात फैल जाती है कि शेयरों का स्थान्तरण नहीं होगा, और शेयर–धन की पूरी अदायगी हो चुकने के बाद भी निदेशक पंजीकरण से इन्कार कर सकते हैं, तो बाजार में कोट होने वाले शेयर रेटों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है । इसलिए मैं मानता हूँ कि यह स्वयं कम्पनियों के हित में है कि इन स्थानान्तरणों को अतिसुरक्षित प्रतिभूतियों के समान माना जाय जिनकी अपने घोषित मूल्य के बराबर कीमत बनी रहती है और जिनका कोई व्यक्ति सहज ही नगदीकरण कर सकता है, और जिसे ऐसे शेयर हस्तान्तरित होते हैं उसे शेयरधारक को पूर्ण अधिकार और सुविधाएं प्राप्त होती हैं । मुझे आशा है कि यह कार्य किया जाय तो इससे सभी सम्बन्धित पक्षों को लाभ होगा । मैं मानता हूँ कि विशेष तौर पर हमारे देश के उद्योगपतियों को कुछ प्रकाश प्राप्त करने की आवश्यकता है–उनसे भी जिनसे हमारे सम्बन्ध अमैत्रीपूर्ण रहे हैं और हैं ।

●

मैनेजिंग एजेंसी प्रणाली के दोष

जब मैंने संशोधन प्रस्तुत किया था, उस समय मैंने अध्यक्ष की अनुमति ली थी और मुझे अपनी टिप्पणियाँ आरक्षित करने की अनुमति मिली थी। यदि मुझे माननीय विधि सदस्य के पश्चात् बोलने का अवसर मिला होता तो यह अधिक अच्छा होता। लेकिन मैं अनुभव करता हूँ कि चर्चा में पर्याप्त समय व्यय हो चुका है, फिर भी ऐसे कतिपय सन्दर्भ हैं, जिन्हें मैं इस मौके पर भी उनके सामने प्रस्तुत करना चाहूँगा क्योंकि मुझे विश्वास है कि इस प्रश्न पर अभी भी वे खुले दिमाग से सोच रहे हैं। जब यह प्रस्ताव सदन के सम्मुख रखा गया था तो, हमने सोचा था कि यह नयीं बात है जिसकी वजह से थोड़ी बहुत आलोचना और यहाँ तक कि विरोध किया जाना भी सहज रूप से सम्भव है, लेकिन विषय के महत्व को देखते हुए मैंने कभी यह अनुमान नहीं लगाया था कि इस पर इतनी हल्की और लापरवाही भरी चर्चा होगी, जिसमें मूर्खता और असहिष्णुता का भी थोड़ा पुट होगा। यह प्रश्न अत्यधिक महत्वपूर्ण है और सदन को इस पर निष्पक्ष रूप से विचार करना चाहिए। मैं उन तमाम वक्ताओं का व्यक्तिगत रूप से उल्लेख नहीं करूंगा जिन्होंने इस संशोधन का विरोध किया है, लेकिन मैं 'मि० ग्रिफिथ्स' को धन्यवाद अवश्य देना चाहूँगा क्योंकि उन्होंने मुझे और मि० सत्यमूर्ति को लाबी में आमंत्रित करने की कृपा की ताकि वे हमें आनुपातिक प्रतिनिधित्व के बारे में कुछ बातें बता सकें। इसके लिऐ मैं वास्तविक रूप में उनका कृतज्ञ हूँ। लेकिन इससे भी अधिक वांछनीय और महत्वपूर्ण मेरे लिए यह है कि मैं मंगलवार की दोपहर के लिए उन्हें बधाई दूँ जब उन्होंने मुझसे और मेरे मित्र, मि० पालीवाल से यह पूछा था कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व क्या होता है? और वह संक्रमणीय और असंक्रमणीय एकल मतदान के बीच के अन्तर को भी जानना चाहते थे।

श्री पी० जे० ग्रिफिथ्स—मैंने पंडित पन्त से यह नहीं पूछा था कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व का अर्थ क्या है, मैंने उनसे पूछा था कि उनका आशय आनुपातिक प्रतिनिधित्व की किस प्रणाली विशेष से है।

लेजिस्लेटिव असेम्बली में पंत जी द्वारा 17 सितम्बर, 1936 को यह भाषण उस समय दिया गया था जब भारतीय कम्पनी (संशोधन) विधेयक पर चर्चा चल रही थी।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त—मैं श्री ग्रिफिथ्स को धन्यवाद देता हूँ— जब मैंने प्रक्रिया की व्याख्या की थी तो वह पूर्णतया संतुष्ट दिखायी दिये थे और उन्होंने बताया था कि श्री पालीवाल ने जो व्याख्या की थी, उससे स्थिति स्पष्ट नहीं हो पायी थी । फिर भी यह किसी प्रकार से उनके लिए अपमानजनक नहीं है कि उनमें रातों–रात विषयों में दक्षता प्राप्त कर लेने की आश्चर्यजनक क्षमता है और मैं उन्हें बधाई देता हूँ कि उन्होंने भारतीय जादूगर की तरह तुरन्त आम्र–वृक्ष पैदा करने का चमत्कार दिखाया । जैसा कि मैंने कहा था, इस प्रश्न पर अत्यन्त सावधानीपूर्वक विचार किया जाना अपेक्षित है, और मुझे दुःख है कि बहुत से वक्ताओं ने आकाश में उड़ने और हवाई बातें करने की कोशिश तो की, किन्तु ठोस जमीन पर विचरण करने वालों की संख्या बहुत कम थी । अब तक हम लोगों ने प्रजातंत्र, भारत सरकार, मंत्रिमण्डल और अन्य विशिष्ट महत्व के प्रश्नों पर चर्चायें की हैं, लेकिन कम्पनी प्रबन्ध, निदेशक मण्डल जैसी संस्था और प्रबन्ध की प्रचलित विधियों के बारे में कि वे सक्षम हैं या नहीं और इस दिशा में किसी सुधार की जरूरत है या नहीं, हमने बहुत समय नहीं दिया है । जहाँ तक आनुपातिक प्रतिनिधित्व— जो कि पी०आर० नाम से जाना जाता है— का सम्बन्ध है, मेरे मित्र महोदय हेयर, हिल तथा अन्य नामों से अवश्य ही अवगत होंगे । अगर श्री ग्रिफिथ्स को अभी भी किसी सहायता की आवश्यकता है तो वे इसे पी०आर० सोसाइटी लन्दन के सचिव हौस्टन एवं एसेम्बली सचिव से प्राप्त कर सकते हैं । एसेम्बली सचिव को, जब भी वित्त या लेखा प्रवर समिति के चुनाव होते हैं, इस समस्या का सामना करना पड़ता है । ऐसे मामलों में चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व के प्रावधानों के अनुसार होते हैं, एवं इस विधि की वहाँ चर्चा एवं व्याख्या हो चुकी है । अतः यदि कोई व्यक्ति इस बारे में और जानना चाहता है तो वह श्री रफी से, जो इसमें पारंगत हैं, जानकारी ले सकता है । और यदि वह और अधिक जानकारी चाहता है तो अन्य पुस्तकों से ले सकता है । यहाँ हमने लोकतंत्र, कार्यकारी संगठनों, विमर्श परिषदों एवं अन्य बातों के बारे में बहुत कुछ सुना है । किसी सज्जन ने पूछा कि भारत सरकार कार्य कैसे करेगी यदि उसका चुनाव इस विधि से हो? क्या वास्तव में भारत सरकार का गठन इसी विधि से हुआ है? यदि चुनाव बहुमत से सीधे मत के आधार पर होता तो क्या सर हेनरी क्रेक, सर जेम्स ग्रिग, मेरे माननीय मित्र,विधि सदस्य और सर मुहम्मद जफरूल्लाह, कुवँर सर जगदीश प्रसाद यहाँ आ पाते? मैं सदन को बताना चाहूँगा कि हर कैबिनेट वास्तव में आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त पर आधारित है । हो सकता है इसका स्वरूप ऐसा न दिखायी पड़ता हो । बहुमत प्राप्त दल द्वारा कैबिनेट के सदस्यों का चुनाव नहीं होता । दल का नेता दल के विभिन्न प्रभावशाली समूहों के नेताओं को अपनी कैबिनेट का सदस्य बना लेता है । यह आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के

अतिरिक्त और कुछ नहीं है । मेरे मित्रों ने यहाँ इसके विपरीत सिद्धान्त रखे हैं । जहाँ तक प्रजातांत्रिक संगठनों का प्रश्न है, आनुपातिक प्रतिनिधित्व वांछनीय नहीं है; और जहाँ तक कार्यकारी तथा प्रशासनिक संगठनों आदि का सम्बन्ध है,आनुपातिक प्रतिनिधित्व सर्वाधिक सुरक्षित तरीका है । आनुपातिक प्रतिनिधित्व के कट्टर विरोधियों के भी यही विचार हैं । मेरे सामने आनुपातिक प्रतिनिधित्व पर हॉरवेल की एक पुस्तक है । वह इस व्यवस्था के कट्टर शत्रु हैं, किन्तु वे भी कहते हैं कि जहाँ तक प्रशासकीय तथा कार्यकारी संगठनों का सम्बन्ध है यह व्यवस्था सर्वोत्तम है और इसके द्वारा हम उच्चतम दक्षता प्राप्त कर सकते हैं । किन्तु जहाँ हम उस राजनैतिक चिन्तन से अवगत होना चाहते हैं वहाँ आनुपातिक प्रतिनिधित्व अनुपयुक्त है और बेमौक़े की चीज हो जाती है । कल्पना करें इस विधान सभा का चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त पर हुआ हो और हमारी सरकार उत्तरदायी हो, तो हमारे पास अनेक समूह होंगे जिनमें कोई भी शायद बहुमत में नहीं होगा और हर एक की अपनी अलग विचार धारा होगी, परिणामतः कोई भी सरकार स्थाई नहीं होगी । जैसा कि माननीय सदस्य अवगत हैं, अधिकांश देश अपनी सरकार में आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रारम्भ कर चुके हैं एवं 'वीमर संविधान' इसी पर आधारित है । किन्तु आम धारणा यह है कि जहाँ तक प्रजातांत्रिक सरकार का सम्बन्ध है, आनुपातिक प्रतिनिधित्व पूर्णतया उपयुक्त नहीं है क्योंकि तब दलीय सरकार की व्यवस्था नहीं हो सकती । तब हमारे यहाँ विविध दल समूह होंगे और कोई सरकार स्थाई नहीं होगी और सत्ता में अधिक समय तक नहीं रहेगी, किन्तु जहाँ तक प्रशासनिक और कार्यकारी संगठनों का सम्बन्ध है, आनुपातिक प्रतिनिधित्व सर्वोत्तम विधि है । अब मैं इस सदन की स्थाई वित्त समिति के गठन के तरीके पर संक्षेप में टिप्पणी करूँगा । स्थाई वित्त समिति के सदस्यों का चुनाव इस सदन के बहुमत की अपेक्षा एकल हस्तांतरणीय मत से होता है, क्या इस कारण उसकी कार्य क्षमता में किसी प्रकार की कमी आ जाती है?

सर एच०पी० मोदी – वह कैसे जानते हैं?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–तो मेरे दोस्त, सर होमी मोदी कहते हैं– "वह कैसे जानते हैं?" मैं केवल इतना बता सकता हूँ कि पहले हमारे यहाँ आनुपातिक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था थी और यह पाया गया कि यह काम ठीक नहीं करती और अनुभव के बाद इस विधि को बदला गया, जो कि सिद्ध करती है कि यह विधि उन लोगों द्वारा स्थापित की गयी थी जो निर्णय लेने व फैसला करने की स्थिति में थे कि सीधे मत की विधि अनुचित है और यह विधि बेहतर है । यही हम अपनी स्थाई

वित्त समिति एवं लोक लेखा समिति में भी करते हैं और इसी कारण इस सदन का हर ग्रुप वित्तीय कार्यकलापों से अवगत है । अन्यथा वे लोग जो स्थाई वित्त समिति या लोक लेखा समिति के सदस्य नहीं होते हैं, सरकार के उन कार्यों को, जो वित्त विभाग से सम्बंधित हैं, नहीं जान पाते । ऐसा केवल यहीं नहीं हैं । मैं माननीय सदस्यों को याद दिला सकता हूँ कि राज्यों में-कम से कम मेरे राज्य में-जिला परिषदों एवं नगरपालिकाओं के सदस्यों का चुनाव यद्यपि सीधा होता है, किन्तु समस्त प्रशासकीय और कार्यकारी निकायों जैसे शिक्षा समिति, सार्वजनिक निर्माण उप समिति, सफाई समिति आदि के चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त पर होते हैं । मैं केवल यही कहना चाहूँगा कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व की विधि प्रशासकीय एवं कार्यकारी निकायों के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है किन्तु बड़ी प्रजातांत्रिक विधान सभाओं आदि के लिए वह उतनी ही उत्तम नहीं होती । हमसे पूछा जाता है कि मतभेद की स्थिति में क्या होगा? बात यह है कि छोटे संगठनों में जब लोग प्रशासनिक मामलों सम्बन्धी बातें करने के लिए एक साथ बैठते हैं तब टेढ़े-मेढ़े मामलों को सुलझा लिया जाता है और मतभेद दूर कर लिये जाते हैं जबकि मंत्रिमण्डल भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण रखने वालों से गठित होता है । अगर मेरे माननीय मित्र सर नृपेन्द्र सरकार, सर जेम्स ग्रिग, सर फ्रेंक नोयी, सर मुहम्मद जफरूल्लाह खान के साथ बैठते हैं तो अपने भिन्न विचारों के बावजूद, मैं सोचता हूँ कि वे किसी ऐसे निर्णय पर पहुँचेंगे जो उन सभी को स्वीकार्य होगा जो अन्तिम निर्णय लेने के लिए सामूहिक तौर पर उत्तरदायी होंगे । अतः मेरा कहना है कि यह सर्वोत्तम विधि है । अनुभव ने सिद्ध कर दिया है एवं इसका अध्ययन करने वाले इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि यह विधि अधिकतम दक्षता प्राप्ति के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है । मान्यवर, और अधिक महत्वपूर्ण विषयों पर आते हुए हमें यह देखना अवश्य चाहिए कि संशोधन क्या है,? कम्पनियों के प्रबंध की वर्तमान व्यवस्था क्या है? एवं क्या यह सर्वोत्तम है या कि सुधारी जा सकती है, और यह कि क्या यह सुधार की सर्वोत्तम विधि है? सबसे पहले मैं मानतीय सदस्यों को याद दिलाना चाहूँगा कि संशोधन वास्तव में है क्या? तीन प्रकार के संशोधन प्रस्तावित हैं एक मेरे बायीं ओर वाले मित्र का, उनका सुधार कम्पनी के नियमों में वर्तमान का अधिकार देता है किन्तु वे चाहते हैं कि इन प्रावधानों के अन्तर्गत कम्पनी अपने निदेशकों का चुनाव एकल हस्तान्तरणीय मत के अनुसार करें । दूसरा संशोधन मेरे मित्र श्री बजोरिया ने सुझाया है । इसके दो भाग हैं । पहले में वह चाहते हैं कि हर निदेशक की कार्य अवधि तीन वर्ष हो । मैं समझता हूँ कि यह नियम विरुद्ध है, क्योंकि विनियम 78, 79 एवं 80 को अनिवार्य बना देने के बाद, जिनके अधीन प्रतिवर्ष चुनाव आवश्यक हो, ऐसा प्रस्ताव नहीं रखा जा सकता । फिर वह एकल

हस्तान्तरणीय मत के अनुसार चुनाव के लिए कहते हैं । यह बात भी कम्पनी को ऐच्छिक अधिकार देती है । तीसरे संशोधन का प्रस्ताव मेरा है, एवं मुझे आशा है कि सर एच०पी० मोदी स्वीकार करेंगे कि यह सर्वोत्तम है ।

सर एच०पी०मोदी—यदि आप दोनों आपस में मान जाते हैं तो शायद मैं भी मान लूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त-आप हम दोनों के मध्यस्थ बन जायें । हम आपकी बात मानेंगे । तीसरा संशोधन अहस्तान्तरणीय मत द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त लागू करने की मांग करता है, जिसे मैंने प्रस्तावित किया है । इन सभी प्रस्तावों में एकरूपता यह है कि एक व्यक्ति, जिसे निर्धारित मत मिलते हैं, वह चुना जायेगा । हस्तान्तरणीय प्रणाली के अधीन यदि कुछ मत बच जाते हैं तो वे द्वितीय प्राथमिकता वाले व्यक्तियों को मिल जायेंगे । अहस्तान्तरणीय प्रणाली में ऐसा नहीं होता । अहस्तान्तरणीय प्रणाली का लाभ यह है कि इसमें उस व्यक्ति का आना सुनिश्चित हो जाता है जिसे कुछ निश्चित व्यक्तियों का समर्थन प्राप्त हो । साथ ही यह बहुत ही सुविधाजनक है । अब मान्यवर, मैं चाहूँगा कि सदन ध्यान दे कि श्री सत्यमूर्ति के संशोधन से कम्पनी को यह अधिकार प्राप्त होता है कि वह आनुपातिक प्रतिनिधित्व माने या नहीं । श्री बजोरिया के संशोधन में भी ऐसा ही है । तीसरे प्रस्ताव में, जिसे मैंने रखा है, बिना किसी अपवाद के यही बात कही गयी है ।

सर कावसजी जहाँगीर— आप चाहते क्या हैं?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त-मैं चाहता हूँ कि यह अनिवार्य बना दिया जाय कि बोर्ड के चुनाव एकल अहस्तान्तरणीय मत के सिद्धान्त पर हों । डा० जियाउद्दीन ने एक आपत्ति की है । मैं नहीं जानता था कि चुनाव से सैकड़ों या हजारों लोग सम्बन्धित हों तो इससे किसी गणितज्ञ के लिए कठिनाई उत्पन्न हो जायेगी, किन्तु प्रतीत होता है कि वह भ्रम में हैं ।

मान्यवर, मैं ऐसा सुझाव नहीं दे रहा हूँ कि यदि किसी शेयरधारक के एक सौ मत हों तो वह केवल एक ही बार मत का प्रयोग करे । सिद्धान्त बहुत सीधा है एवं इसका आशय है कि बोर्ड में स्थानों की संख्या कुछ भी हो, शेयरधारक को स्थानों की संख्या में गुणित नहीं किया जा सकेगा । यदि किसी व्यक्ति के पास एक सौ मत हैं तो मतदान हस्तान्तरणीय या अहस्तान्तरणीय प्रकार में विभेदक विधि से किया जा सकता है । यदि विभेदक विधि अपनाई जाती है तो यह होगा कि यदि रिक्त स्थान तीन हैं तो हर वह व्यक्ति जिसके पास एक सौ मत हैं, सभी स्थानों को मत देने का अधिकार रखेगा, किन्तु यदि हम एकल अहस्तान्तरणीय मत प्रणाली को अपनाते हैं

तो वह व्यक्ति जिसके पास एक सौ मत हैं, उतने ही मतों का एक बार प्रयोग कर सकेगा यद्यपि रिक्त स्थान तीन हैं । वह सौ–सौ मत उनमें से प्रत्येक को नहीं दे सकेगा । यही इस विधि का लाभ है । हर व्यक्ति को अपने शेयरों के अनुसार मतदान करने का अधिकार होगा, किन्तु इन्हें बोर्ड में रिक्त स्थानों की संख्या से गुणित करके बढ़ाया नहीं जा सकेगा । इससे यह सुनिश्चित होगा कि अल्प समर्थन वाला व्यक्ति भी बोर्ड में चुना जा सके ।

डा० जियाउद्दीन अहमद – मैं अपनी स्थिति स्पष्ट करना चाहूँगा । मैंने कहा था कि यदि आप संचयी मत प्रणाली अपनाते हैं तो आप उन व्यक्तियों के हितों की रक्षा कर सकेंगे जिनके पास कदाचित 25 प्रतिशत शेयर हों किन्तु आप उन व्यक्तियों के हितों की रक्षा नहीं कर पायेंगे जो एक या दो शेयरधारक हों जब तक कि आप विधि द्वारा निदेशकों के शेयरों की संख्या निर्धारित नहीं कर देते ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – आप ऐसा तभी कर सकते हैं जब प्रत्येक शेयरधारक को निदेशक बना दिया जाये, किन्तु जब तक आप शेयरधारकों द्वारा निदेशक मण्डल चुनते हैं, एक शेयर दुर्भाग्यवश एक ही मत गिना जायेगा । डा० जियाउद्दीन के साथ मेरी सहानुभूति है । मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ कि वह हमसे सहानुभूति रखते हैं । तो मान्यवर, जहाँ तक सदन के समक्ष प्रस्ताव का सम्बन्ध है, इस पन्थ को ठोस तथ्यों के आधार पर देखना होगा । यह प्रक्रिया काफी सरल है । हमें बताया गया था कि निदेशक मण्डल में अल्पसंख्यक आ जायेंगे जो बहुसंख्यकों के हितों के विपरीत होगा । मैं वाणिज्यिक प्रतिष्ठान में अल्पसंख्यक या बहुसंख्यक के विचार अपनाने को नापसन्द करता हूँ । मुझे इसका कोई कारण दिखलाई नहीं देता कि व्यावसायिक शेयरधारक हैं एवं उन सभी की एक ही चिन्ता है कि वे संस्था को सर्वोत्तम विधि से चलायें । यदि दस या पन्द्रह लोग सोचते हैं कि "अ" उनके कार्य को सर्वाधिक दक्षता से कर सकता है तो आप क्यों नहीं चाहते कि वह चुना जाय । आप बहुमत का विचार तभी तक रख सकते हैं जब तक कि प्रत्यक्ष चुनाव की व्यवस्था हो, किन्तु जब आप एकल अहस्तान्तरणीय मत की व्यवस्था अपनाते हैं तो ऐसे विवाद का कोई आधार नहीं रहता । फलतः बहुमत का विचार ही समाप्त हो जाता है और तब हर जीतने वाले व्यक्ति को— वह तब शेयरधारकों के बहुमत के विचार से न तो बचा रहेगा और न अल्पमत के प्रति विरोधी अथवा आक्रामक रूप ही अपनायेगा-कम्पनी के हित के विचार से ही कम्पनी पर ध्यान केन्द्रित करना होगा । यह इस आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त की विशेषता है । यह विवाद की सम्भावना को समाप्त कर देता है । यह (संशोधन) अवसर प्रदान करता है कि प्रबंध में सर्वाधिक दक्ष व्यक्ति चुने जायें जो कम्पनी से सम्बन्धित व्यक्तियों के विचार में कम्पनी के कारोबार सर्वोत्तम प्रकार से चला सकते हों, मैं समझ नहीं पाता कि किसी व्यक्ति

को इस पर आपत्ति क्यों हो? हम से पूछा जाना है कि मैं इस पर जोर क्यों दे रहा हूँ । मैं इसका कारण बताऊँगा । इसके लिए हमें नयी जानकारियों की ओर ध्यान देना होगा। पुरानी जानकारियों का हमें पर्याप्त अनुभव है । नयी जानकारियों से मेरा आशय भी लोकनाथन की पुस्तक से है । ऐसा करने से पूर्व मैं कुछ बातें स्पष्ट करना चाहूँगा । पहली बात श्री जेम्स से सम्बन्धित है, क्योंकि अपनी शोध में वह तय नहीं कर सके कि तीर किस दिशा से छोड़ा गया है । यदि वे पेपर संख्या 7 देखें—जो उस बम्बई शेयरहोल्डर्स एसोसिएशन का नहीं है, जिसका पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण रहता है, वरन् चेम्बर आफ कामर्स जैसे सम्मानित संस्था का है—तो पायेंगे कि बम्बई के गुजरातियों की तुलना में चेम्बर आफ कामर्स जैसी उच्चस्तरीय संस्था से श्री जेम्स एवं सर लेसली हडसन का अधिक नजदीकी सम्बन्ध है । यह मारवाड़ी चेम्बर आफ कामर्स का मेमोरेंडम है । इस मेमोरेंडम में पृष्ठ संख्या 80 पर उल्लिखित है :

"इसलिए समिति निदेशकों के चुनाव में एकल हस्तान्तरणीय मत की विधि को स्वीकार करने की पुनः जोरदार तरीके से अनुशंसा करती है ।"

मान्यवर, मारवाड़ी चैम्बर्स आफ कामर्स की जन्मदाता कांग्रेस संस्था नहीं है और जहाँ तक हमारी बात है, हमारी जितनी कटु आलोचना मारवाड़ी चैम्बर्स ने की है, अन्य किसी ने नहीं की ।

मान्यवर, मैं सदन से अनुरोध करूंगा कि वह इस मुद्दे पर शान्तचित्त होकर विचार करें । अब मैं इस मुद्दे के एक अन्य पहलू का सदन में जिक्र करूंगा । सर्वप्रथम यह याद रखना चाहिए कि मैनेजिंग एजेन्ट हमारी औद्योगिक मशीन का एक आवश्यक अंग है । इस बात को सदैव दिमाग में रखना चाहिए । विधेयक में मैनेजिंग एजेन्ट की परिभाषा दी गयी है । उसी के एकाकी चार्ज में कम्पनी के सभी मामले होते हैं और जो अधिकार निदेशकों को प्राप्त नहीं होते वे सब भी उसको प्राप्त होते हैं । वही सब बातों का कर्ताधर्ता होता है । वास्तव में मैनेजिंग एजेन्ट ही एक ऐसा व्यक्ति है जो सब काम-काज चलाता है और जहाँ तक समझौते के अधीन उसे प्राप्त अधिकारों का प्रश्न है वह निदेशक मण्डल के अधीन नहीं रहता । हमारी औद्योगिक व्यवस्था की इस मुख्य बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए । दूसरी बात याद रखने की यह है कि हमारे निदेशक मण्डल ज्यादातर अक्षम सिद्ध हुए हैं । वे केवल अक्षम ही सिद्ध नहीं हुए हैं वरन् अपने काम में कोई दिलचस्पी नहीं लेते हैं और साथ ही वे ऐसे व्यक्ति होते हैं जो या तो मैनेजिंग एजेन्ट द्वारा चुन लिए जाते हैं या नामांकित कर दिये जाते हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि कदाचित् माननीय विधि

सदस्य मेरी बात से सहमत नहीं हैं ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – आप ऐसा क्यों कहते हैं?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–क्योंकि आप (नकारने की मुद्रा में) सिर हिला रहे थे ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – इसका सम्बन्ध आपकी बात से नहीं था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – अब मैं नयी जानकारी देने वाली पुस्तक से कुछ पढ़कर सुनाऊँगा । इसमें निदेशक मण्डल के बहुवाद में व्याप्त बुराइयों का वर्णन किया गया है । इस वाक्यांश में कहा गया है :

"ऐसी स्थिति का एक कारण स्वयं मैनेजिंग एजेन्सी व्यवस्था है । व्यवहारत: मैनेजिंग एजेन्ट ही अपनी कम्पनियों के निदेशकों को नामांकित करते हैं और वे आपस में एक-दूसरे को नामांकित कर लेते हैं । फलत: भारतीय औद्योगिक कम्पनियों के निदेशक मण्डलों में प्राय: मैनेजिंग एजेन्ट के प्रतिनिधि ही भरे रहते हैं । जो थोड़े से लोग मैनेजिंग एजेन्सियों से बाहर के होते हैं वे भी अनेक प्रकार से मैनेजिंग एजेन्सियों से बाहर होते हैं । वे अनेक प्रकार के एजेन्टों के व्यवसायों से जुड़े होते हैं, परिणामस्वरूप भारतीय उद्योगों के मैनेजमेन्ट बोर्ड में विविध हितों के अनुभव के ऐसे व्यक्ति नहीं होते हैं जो सफल तथा दक्षतापूर्ण प्रबन्ध के लिए आवश्यक होते हैं । ब्रिटिश मैनेजिंग एजेन्टों के अधीन औद्योगिक कम्पनियों के निदेशक मण्डलों में जो नाममात्र के भारतीय नामांकित किये जाते हैं वे सभी प्रकार के प्रतिष्ठानों के स्टाफ डायरेक्टर मात्र ही बनकर रह जाता हैं ।"

मैं एक अन्य वाक्यांश भी पढ़ता हूँ :

"इसलिए व्यवहारत: मुख्य व्यक्ति वही होते हैं जो मैनेजिंग एजेन्ट होते हैं और जहाँ तक तक्नीकी तथा प्रशासकीय दक्षता का सवाल है, उनकी मात्र अपनी दक्षता महत्व रखती है ।"

आगे वह कहते हैं :

"बम्बई की कुल सूती मिल कम्पनियों के 195 निदेशकों में से 95 एजेन्सी निदेशक (डायरेक्टर) हैं । इनमें बम्बई की एक या दूसरी एजेन्सी फार्म के हिस्सेदार या अन्य प्रकार से उनसे सम्बन्धित व्यक्ति हैं, और 80 ऐसे बाहरी व्यक्ति हैं जो किसी मैनेजिंग एजेन्सी से सम्बन्धित नहीं हैं, वे व्यवहारत: मैनेजिंग एजेन्टों द्वारा नामांकित रहते हैं । ये बाहर के निदेशक यदि योग्य तथा अनुभवी व्यक्ति भी हों, तो भी उन्हें उद्योग हेतु लाभदायक सिद्ध होने के लिए कोई अधिकार और प्रोत्साहन प्राप्त नहीं होते ।"

मेरे पास अहमदाबाद की मिलों, कोयला कम्पनियों, चाय कम्पनियों और कुछ अन्य कम्पनियों के आंकड़े हैं । मैं आपको बताना चाहूँगा कि वहाँ 52 कोयला कम्पनियों के कुल 50 निदेशक मात्र हैं क्योंकि एक के मैनेजिंग एजेन्ट दूसरी कम्पनी के निदेशक बना दिये जाते हैं । यही हाल अहमदाबाद की कपड़ा कम्पनियों का है । निदेशकों में से 104 या तो स्वयं मैनेजिंग एजेन्ट हैं या फिर उनके पुत्रगण या

भ्रातागण हैं जब कि 64 अन्य वास्तविक रूप में उनके द्वारा नामांकित व्यक्ति हैं । यही हाल अन्य कम्पनियों का है। मेरे पास एक वक्तव्य भी है । इसके अनुसार निदेशक मण्डल मैनेजिंग एजेन्टों के बेनामीदार हैं । निदेशक मण्डलों में स्वतंत्र विचार रखने वाले व्यक्ति नहीं हैं । मुझे इसकी भी चिन्ता नहीं है। मैं तो और भी अधिक बड़ी कठिनाई से चिन्तित हूँ । बात यह है कि आज दुनिया में उद्योग बड़ी तीव्रगति से आगे बढ़ रहे हैं । हमें प्रतिदिन नयी तकनीकी प्रगति, उत्पादन की नयी विधियों तथा ऐसी अन्य बातों का दिग्दर्शन होता रहता है । यदि हमारे मैनेजिंग एजेन्ट ही निदेशक मण्डलों में भरे रहते हैं या उनके नामांकित व्यक्ति ही उनमें स्थान पाते हैं तो हमारे उद्योग कैसे प्रगति कर सकते हैं? मान्यवर, उद्योगों की प्रगति के हित में मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि कुछ ऐसी व्यवस्था की जाय जिसके फलस्वरूप निदेशक मण्डलों में नया रक्त, नयी प्रतिभा, नयी बौद्धिकता और नयी शक्ति को स्थान मिल सके। कुछ अन्य तथ्य भी हैं जिन्हें ध्यान में रखना होगा । श्री लोकनाथन की यह मान्यता है कि मैनेजिंग एजेन्टों का स्वार्थ शेयरधारकों के हित के बिल्कुल विपरीत होता है । उनका कहना है :

"मैनेजिंग एजेन्सी व्यवस्था किसी अर्थ में भी पूर्णता को प्राप्त नहीं होती । इसका ऋण प्रदान करने का तरीका ऐसा है जिससे मैनेजिंग एजेन्टों तथा शेयरधारकों के हितों में भेदभाव और टकराव पैदा होने की आशंका रहती है । दुनिया भर में बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठानों में उद्यमियों और शेयरधारकों के हितों में विभेद बने रहने की सम्भावना रहती... मैनेजिंग एजेन्ट को उन निधि–पत्रों के अलावा, जिनमें समय–समय पर बदलाव आता रहता है, अन्य कार्यकलापों तथा क्षेत्रों से भी आय होती रहती है । अतः वे शेयरों से होने वाली आय को प्रमुखता नहीं देते । इसी कारण (शेयरधारकों और उनके) हितों में विभेद बना रहता है । वास्तविकता यह है कि मैनेजिंग एजेन्टों को ज्ञात हो गया है कि कम्पनियों के शेयरों पर मिलने वाला लाभ उतना महत्व का नहीं होता जितना कि तत्सम्बन्धी अन्य कार्यों से मिलने वाला लाभ होता है ।"

मान्यवर, हमारे सामने यह ठोस तथ्य मौजूद हैं । पहला यह है कि किसी कम्पनी के प्रबन्ध सम्बन्धी मामलों में मैनेजिंग एजेन्ट सर्वेसर्वा होता है, दूसरा यह कि कम्पनी के कानूनी मालिक शेयरधारक होते हैं और अन्ततः नफा–नुकसान उन्हें भुगतना पड़ता हैं । तीसरा यह कि निदेशक मण्डल जो आंशिक रूप में शेयरधारकों के हितों की देखभाल कर सकता है, वह मैनेजिंग एजेन्टों अथवा उनके अपने द्वारा नामांकितों से अधिक कुछ नहीं होता । ऐसी स्थिति का हल क्या हो सकता है? हम इन मुश्किलों को कैसे पार कर सकते हैं । मैं यह भी बताना चाहूँगा कि टैरिफ बोर्ड का वर्तमान प्रबन्ध मण्डल और निदेशकों के सम्बन्ध में क्या कहना है । इसका कथन है :

"बम्बई और अहमदाबाद दोनों ही स्थानों पर मिलों का निदेशक–मण्डल भारी आलोचना का शिकार बनाया गया और हमारी राय में आलोचना काफी हद तक उचित थी । कहा गया कि यदि ये तो थोड़े से ही ऐसे निदेशक थे, जिन्होंने उन मिलों के कामकाज में, जिन मिलों से वे सम्बन्धित थे, सक्रिय दिलचस्पी ली हो, और उनकी संख्या और भी कम थी जो इन पदों पर नियुक्त किये जाने की तकनीकी योग्यता रखते हों ।"

श्री के०अहमद – लेकिन उन्होंने कांग्रेस को फंड प्रदान किये ।

श्री सत्यमूर्ति – बेहूदी बात मत करो ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – हम आपसे भी कुछ इन्कार नहीं करेंगे । आज सदन त्यागने से पहले आपको भी अपनी बात कहने का अवसर देंगे । हम आपको कृतज्ञ करेंगे ।

निदेशक मण्डल की अन्य विशेषता उसका अक्षम होना है । किसी और दिन माननीय विधिसदस्य ने कहा था कि हमारे यहाँ औद्योगिक प्रतिभा की कमी है । मैं इस कथन को सही मानता हूँ, लेकिन फिर भी हम उद्योग–क्षेत्र का विस्तार चाहते हैं । जब तक आप वर्तमान गुटों से बाहर के लोगों को निदेशक मण्डल में नहीं लाते और उन्हें देश की औद्योगिक गतिविधियों में तेजी लाने हेतु मिलों के कामकाज के सम्बन्ध में जानकारी और अनुभव प्राप्त करने का अवसर प्रदान नहीं करते, तब तक किसी प्रकार की औद्योगिक प्रगति नहीं हो सकती । इसको हासिल करने का क्या तरीका है? इस दृष्टि से भी यह अत्यावश्यक है कि जो लोग औद्योगिक कार्यकलापों और ऐसी कम्पनियों के भाग्योदय में दिलचस्पी रखते हैं उन्हें इनके निदेशक मण्डलों में प्रवेश का अवसर मिले ताकि वे उनके लाभार्थ तथा सामान्यत: उद्योग क्षेत्र की उन्नति और विकास के लिए काम कर सकें ।

अब फिर नवीन ज्ञान–पुस्तक की ओर मुड़ते हुए मैं कहना चाहता हूँ कि इसमें एक बात और कही गई है कि जो सदन का ध्यान आकर्षित करने योग्य है । श्री लोकनाथन का कहना है कि वर्तमान परिस्थितियों में निदेशक मण्डल दक्षतापूर्वक कार्य नहीं कर सकते । वास्तव में मण्डल कमोबेश व्यर्थ की संस्था है । इसकी स्थिति को एक कोच के पांचवे पहिए के समान है । मान्यवर, वर्तमान स्थिति यह है कि मैनेजिंग एजेन्ट सर्वशक्तिमान हैं । जहाँ तक कम्पनी के प्रबंधकीय मामले हैं, यदि वह नीचतापूर्ण तरीकों को अपनाना चाहे तो उसे इतना अवसर प्राप्त होता है कि वह कम्पनी की कीमत पर निजी लाभ अर्जित कर सकता है । तब तरीका क्या शेष रह जाता है कि शेयरधारकों के हितों की सुरक्षा की जा सके? निदेशक ही ऐसा कर

सकते हैं । श्री लोकनाथन तो इससे भी आगे चले जाते हैं । उनका कहना तो यह है कि हमारी व्यवस्था में निदेशक मण्डल का कोई स्थान नहीं है, उसके बजाय मण्डल (बोर्ड आफ सुपरवाइजर) होना चाहिए । मैं उस बात को यों ही छोड़ दूंगा । अब स्थिति स्पष्ट है — वह यह कि मैनेजिंग एजेन्टों को निरीक्षणाधीन रखने की आवश्यकता है । उनकी बेहूदगियों को काबू में रखना होगा और उनकी अतिवादिता पर अंकुश लगाना होगा । आज मैनेजिंग एजेन्टों का कम्पनी पर वर्चस्व कायम है । मेरा उनसे कोई कलह नहीं है । यह निस्संदेह सत्य है कि सब नहीं तो अधिकांश शेयरधारक मैनेजिंग एजेन्ट के कब्जे में होते हैं । ऐसे में यदि सभी कुछ बहुमत के निर्णय पर छोड़ दिया जाय तो आप यह आशा नहीं कर सकते कि अंधेरे से ढके कोनों पर प्रकाश पड़ सकता है । ऐसी हालत में कौन सा उपाय अपनाया जाय । सरकार ने पर्यवेक्षक मण्डल या दक्षता–निरीक्षक जैसा संगठन स्थापित करने का कोई सुझाव नहीं दिया है । यदि उनसे ऐसा किया होता तो हम उस पर विचार कर सकते थे । तब मैं स्वयं कुछ सुझावों पर विचार करने को सहमत हो जाता, क्योंकि इसके फलस्वरूप तब निदेशकों के कार्यकलापों को स्पष्टतः परिभाषित किया जा सकता था और उनकी स्वतंत्रता को सुनिश्चित रखा जा सकता था। इसलिए मान्यवर, आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली आरम्भ करने का सुझाव देता हूँ ताकि निदेशक मण्डल को उपयोगी बनाया जा सके और शेयरधारकों के हितों को यथा-सम्भव सुरक्षा प्रदान की जा सके । इसका क्या प्रभाव होगा? मैं इसे भी स्पष्ट करूंगा । जैसा मैंने प्रारम्भ में कहा था, उसके अनुसार निदेशकों का चुनाव चक्रावृत्ति प्रणाली से किया जा सकता है । वर्ष के अन्त में केवल एक तिहाई निदेशक रिटायर किये जायेंगे । अब मान लीजिए कि ये तीन रिक्त स्थान आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा भरे जाते हैं तो इस प्रकार जो व्यक्ति निदेशक मण्डल के लिए चुने जायेंगे उन्हें शेयरधारकों के कम से कम एक तिहाई और एक चौथाई के बीच समर्थन प्राप्त होगा । यह कार्य ऐसा नहीं होगा कि किसी शेयरधारक की भेंट किसी से चौराहे पर हो जाती है और उसे निदेशक नियुक्त कर दिया जाता है । इसके विपरीत उसे निदेशक चुने जाने के लिए शेयरधारकों के कम से कम एक तिहाई या एक चौथाई का समर्थन प्राप्त करना होगा । क्या कोई निदेशक ऐसा कदम उठा सकता है कि कम्पनी ही तहस–नहस हो जाय? यदि देश में ऐसी स्थिति रहे तब तो औद्योगिक पुनर्जीवन की कोई आशा नहीं की जा सकती । लेकिन मैं न तो कभी इस भाँति सोच ही सकता हूँ और न कल्पना ही कर सकता हूँ कि जो व्यक्ति इस प्रकार चुना जाय और जिसे एक तिहाई शेयरधारकों का समर्थन प्राप्त हो, वह कभी इस प्रकार का व्यवहार करेगा । इसलिए किसी को आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा निदेशक चुने जाने के लिए भी एक तिहाई शेयरधारकों का समर्थन

प्राप्त करना आवश्यक होगा । क्या मैं मालूम कर सकता हूँ कि सरकार ने निदेशकों की संख्या दो से बढ़ाकर तीन क्यों कर दी है? पिछले अधिनियम द्वारा निदेशकों की संख्या कम से कम दो की क्यों रखी गयी थी? संख्या क्यों बढ़ाई गयी है? इससे स्पष्ट है कि निदेशक आवश्यक होते हैं और सरकार यह समझती है कि निदेशकों को बुद्धिमत्ता तथा दक्षतापूर्वक कार्य करना चाहिए और यदि उनकी संख्या कम होगी तो वे ऐसा नहीं कर सकते । आप चाहें तीन निदेशक रखें, या दस, या तीस लेकिन यदि वे सभी मैनेजिंग एजेन्टों द्वारा नामांकित किये जाते हैं तो कुछ मतलब हल नहीं हो सकेगा । एक पेड़ में 10 कौए बैठे हों या 100 बैठे हों, लेकिन यदि एक बार ताली बजाने पर सब उड़ जाते हों तो संख्या कोई अर्थ नहीं रखती । वास्तविक वस्तु तो व्यक्ति की अपनी शक्ति, अपने साहस, अपनी स्वतंत्र विचार प्रणाली और अपनी योग्यता पर निर्भर करती है । संख्या मात्र न तो कोई अर्थ रखती है और न किसी काम की होती है । इसलिए मेरा दावा है कि मैंने सदन के सम्मुख जो सुझाव रखा है वह अति तर्कसंगत है । मैं सदन को आश्वस्त करना चाहता हूँ । मैंने अत्यधिक नेकनीयती के अपना सुझाव रखा है ताकि इस देश की औद्योगिक प्रणाली को सुधारा जा सके । मैं अब और आंकड़े पेश नहीं करना चाहता लेकिन मैं समझता हूँ कि मुझे यह सिद्ध करने का पुनः अवसर प्राप्त होगा कि हम कितने पिछड़े हैं और हमारी स्थिति कितनी शोचनीय है । क्या आप इसमें सुधार नहीं लाना चाहते हैं? क्या आप पक्षपातपूर्ण और दुराग्रहपूर्ण निहित वर्गों का समर्थन करेंगे और इस देश की लाखों-लाख जनता के हितों की अवहेलना करेंगे? क्या इसी प्रकार आप अपने देश और अपने रुतबे की तरक्की करेंगे? और देश के स्वयं अमीर वर्गों की तरक्की करेंगे? मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि वे दुराग्रहों का परित्याग कर ऊँचा उठें और इस देश में चारों ओर जो अस्थिपंजर दृष्टिगोचर हो रहे हैं उनके विषय में सोचें और ऐसे तरीके खोजें, ताकि यहाँ अधिक सम्पदा उपार्जित की जा सके, और जो लोग भूख से तड़प रहे हैं उन्हें दिन में दो बार नहीं तो कम से कम एक बार तो भोजन मिल सके ।

●

कम्पनियों के प्रबन्ध अभिकर्ता प्रणाली खत्म हो

मान्यवर, मैं प्रस्ताव करता हूँ कि विधेयक के अनुच्छेद 42 की प्रस्तावित धारा 87 ए, उपधारा (2) में 'उल्लिखित' अधिनियम के शब्द के पश्चात् आने वाले समस्त शब्दों के स्थान पर निम्नांकित को प्रतिस्थापित कर दिया जाय :

"और यदि कम्पनी अपनी साधारण सभा में पारित प्रस्ताव द्वारा इसकी सेवाएं समाप्त करने का निर्णय करती है तो उस अधिनियम के लागू होने के पांच वर्षों बाद किसी समय उसका पदासीन रहना समाप्त हो जायगा, बशर्ते ऐसा कोई प्रस्ताव तब तक पारित नहीं होगा जब तक कि मैनेजिंग एजेन्ट या उसके किसी उत्तराधिकारी द्वारा उस पद को सर्वप्रथम ग्रहण करने के बाद तीस वर्ष बीत न गये हों । किन्तु मैनेजिंग एजेन्ट को पुनः नियुक्त करने अथवा कम्पनी के नियमों के प्रावधानों या कम्पनी के साथ हुई किसी संविदा के अनुसार निर्धारित अवधि के पूर्व उसके कार्यकाल को सीमित करने के कम्पनी के अधिकार इस उपधारा द्वारा भी समाप्त नहीं होंगे ।"

सदन के सामने मैंने जिस विचारणीय नियम को रखा है, उसके आशय और अर्थ को मैं पूरी तरह समझता हूँ । माननीय विधि सदस्य द्वारा प्रवर समिति की रिपोर्ट पर विचार करने के प्रस्ताव के समय दिये गये भाषण के अन्त में जो शब्द कहे गये थे, वे अब भी मेरे कानों में गूंज रहे हैं । मेरे माननीय मित्र जो यूरोपियन गुट के नेता हैं, द्वारा लाये गये संशोधन का उत्तर देते हुए उन्होंने अपना दृष्टिकोण एकदम स्पष्ट कर दिया कि वे इस संशोधन के बारे में क्या सोचते हैं । मैं सदन को आश्वस्त करना चाहूँगा कि मैंने इस संशोधन के प्रावधानों की बारीकी से जांच की है और यह कि माननीय विधि सदस्य की टिप्पणियों तथा लोक सूचना विभाग द्वारा गत एक दो सप्ताहों में जारी किये गये प्रचारात्मक लेखों पर बारम्बार विचार करने के बाद ही मैंने यह संशोधन पेश किया है । मैं विवशतापूर्वक यह स्वीकार करता हूँ कि मैं अब भी अविचलित हूँ और यदि मेरा यह दृढ़ विश्वास न होता कि यह अनुच्छेद आवश्यक और अनिवार्य है, तो मैं माननीय सदस्यों का ध्यान आकर्षित करने या इस सदन का समय लेने का इस समय प्रयास न करता । मैं मानता हूँ कि यह संशोधन दूरगामी प्रकृति का है और यदि इसे स्वीकार कर लिया गया तो इस देश के उद्योगों की प्रबन्ध प्रणाली में महान परिवर्तन हो जायेंगे । यह बहुतेरों में आशा का संचार कर देगा ।

भारतीय कम्पनी (संशोधन) बिल के अनुच्छेद 71 की उपधारा (2) की धारा 42 को बदलने के उद्देश्य से प्रस्तुत किये गये अपने संशोधन के प्रस्ताव के पक्ष में 25 सितम्बर, 1936 को लेजिस्लेटिव असेम्बली में दिया गया पंत जी का भाषण ।

इससे औद्योगिक विकास, विस्तार तथा उन्नति के युग का सूत्रपात होगा । इन्हीं आस्थाओं के कारण मैं आश्वस्त करना जरूरी समझता हूँ कि ऐसा मैंने दायित्व भावना से ही किया है ।

इससे पहले कि मैं संशोधन की चर्चा करूं कि वास्तव में इसके क्या अर्थ हैं या सदन से इसे स्वीकार करने का आग्रह मैं क्यों कर रहा हूँ, मैं इन दो-एक टिप्पणियों की बात कहना चाहूँगा जो सर लेस्ली हडसन और श्री चैपमैन मार्टिमर द्वारा की गयी हैं । मैं यूरोपियन गुट के माननीय नेता द्वारा अपने संशोधन के पक्ष में पेश किये गये तर्कों के दौरान कही गयी बातों की ओर सदन का ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा । उन्होंने कहा कि विधेयक में इस प्रावधान के अपरिवर्तित रहते जिसे वे परिवर्तित कराना चाहते थे, कोई भी मैनेजिंग एजेन्ट भविष्य में अपने चार्ज की कम्पनियों का वित्त पोषण नहीं करेगा । मैनेजिंग एजेन्ट के चार्ज वाले प्रतिष्ठानों को उनसे वित्तीय सहायता मिलनी बन्द हो जायगी । महोदय,यही मुख्य आधार है जिस कारण मैनेजिंग एजेण्ट प्रणाली को जारी रखने का आग्रह किया गया है । मुख्यत: इस आधार पर इसके समर्थन में दलील दी गयी है कि मैनेजिंग एजेन्ट कम्पनियों को वित्तीय सहायता करते रहे हैं और यदि वे इन प्रतिष्ठानों से मैनेजिंग एजेन्ट के रूप में जुड़े न रहे, तो वित्तीय कठिनाइयाँ पैदा हो जायेंगी । अब जैसा कि सर लेस्ली हडसन पहले ही सदन को आश्वासन दे चुके हैं कि चाहें आप इस प्रावधान को वर्तमान रूप में अपनाये रखें या इसका रूप परिवर्तित कर दें, इस स्रोत को अब सूख ही जाना है और इससे कोई वित्तीय सहायता नहीं मिलनी है । इसलिए इस बारे में अब कोई भय नहीं होना चाहिए । जिस आधार पर इस प्रणाली को उचित ठहराया जा रहा था, उसे उन्होंने ही समाप्त कर दिया है जो उसे अपनाये हुए थे । अत: जहाँ तक वर्तमान कम्पनियों का प्रश्न है, मैनेजिंग एजेन्ट प्रणाली को जारी रखने का कोई कारण ही नहीं रह गया है । एक और टिप्पणी श्री चैपमैन मार्टिमर द्वारा की गयी थी, उसकी ओर भी मैं सदन का ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा । संक्षेप में उनका तर्क यह था कि सभी औद्योगिक प्रतिष्ठान शेयरधारकों के नियंत्रण में होते हैं और इन मामलों में उन्हीं की इच्छा देखी जानी चाहिए । मैं उनकी टिप्पणी से पूरी सहमति व्यक्त करता हूँ और यदि वह सूची में मेरे नाम के संशोधन पर गौर करें तो वह पायेंगे कि यह निर्णय करने का अधिकार मैं केवल शेयरधारकों को ही दे रहा हूँ कि वे ही तय करें कि वर्तमान मैनेजिंग एजेन्ट व्यवस्था बनी रहे अथवा नहीं । उन्होंने ठीक ही कहा था कि अन्तिम निर्णय शेयरधारकों पर ही छोड़ दिया जाना चाहिए । मुझे विश्वास है कि इस लाभकारी सिद्धान्त पर दृढ़ रहते हुए और उनके सहयोगी मेरे संशोधन का समर्थन करेंगे ।

अब संशोधन की बात शुरू करते हुए कुछ शब्दों में मैं यह बताना चाहूँगा कि इसका आशय वास्तव में क्या है । दरअसल मैंने संदेह की कोई गुंजाइश ही नहीं रहने दी है । यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है । इसका आशय है कि मैनेजमेंट अपदस्थ होने से पूर्व कम से कम तीन वर्षों का कार्यकाल अवश्य पूरा कर चुका होगा । यह पहली बात है । दूसरी बात यह है कि इस अधिनियम के लागू होने के बाद पांच वर्ष पूरे होने के पहले उसकी शर्तों या कार्यकाल के बारे में कोई हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा । और तीसरी बात यह है कि इसके बाद भी उसका कार्यकाल स्वत: समाप्त नहीं होगा बल्कि इस बात का निर्णय शेयरधारकों पर ही छोड़ दिया जायेगा कि क्या जिस उद्योग से अमुक मैनेजिंग एजेन्ट सम्बद्ध हैं उसके हितों को ध्यान में रखते हुए मैनेजिंग एजेन्ट का कार्यकाल समाप्त करना वे वांछित और उपयुक्त समझते हैं । मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधन पूरी तरह न्यायोचित है । जैसा कि अब मैं बताने जा रहा हूँ, यह संशोधन उदार है और किसी भी मैनेजिंग एजेन्ट को इस संशोधन पर या इसे लाने के लिए मुझ पर व्यर्थ लांछन नहीं लगाना चाहिए । महोदय, मैं उस विशेषज्ञ के मौलिक सुझावों की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा, जिसे यहाँ की अनेक बैठकों की अपेक्षा इस विषय पर निरपेक्ष भावना से विचार करने का अधिक अवसर मिला, जिसके पास हमारी तुलना में कहीं अधिक संदर्भ सामग्री थी और जिसके पास न केवल कलकत्ता जैसे शहर के अपने स्वयं के अनुभवों का लाभ था बल्कि उसे राज्य सरकारों तथा अपने सार्वजनिक कार्यों और विभिन्न हैसियतों के नाते इस प्रकार के मामलों से सम्बद्ध अन्य अनेक व्यक्तियों के सुझाव तथा मार्गदर्शन भी प्राप्त हुए थे ।

सर एच०पी० मोदी –तब उसकी शिक्षा अपूर्ण थी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – तब तक वह आप द्वारा शिक्षित नहीं किये गये थे । (हंसी) श्री सेन ने जो कुछ कहा वह उनकी रिपोर्ट के पृष्ठ 34 पर अंकित है । वे कहते हैं :

"नियमों अथवा संविदा में चाहे जो भी लिखा हो, जहां तक वर्तमान मैनेजिंग एजेंसियों का प्रश्न है, मेरा सुझाव है कि संशोधन अधिनियम के लागू होने के एक वर्ष बाद उनके साथ हुई पुरानी शर्तें समाप्त हो जानी चाहिए ।"

सर एच०पी० मोदी –शर्म की बात ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त –"और उसके बाद शर्तें नये सिरे से तै की जायें, मानो मैनेजिंग एजेन्ट पहली बार नियुक्त किया जा रहा हो ।"

महोदय श्री सेन का दृष्टिकोण यह था और प्रारम्भ में ही उन्होंने कहा था कि :

"पहली नजर में मेरी कई सिफारिशें बहुत कठोर और कई बहुत उदार लग सकती हैं मगर बारीकी से गौर करने पर यह पाया जायेगा कि अपनी सिफारिशों को मैंने ऐसा बनाने का प्रयत्न किया है जिसमें और कमी नहीं की जा सकती ।"

महोदय श्री सेन ने स्पष्ट शब्दों में अपनी संस्तुतियाँ प्रस्तुत की हैं जिसमें और कमी नहीं की जा सकती । मैं उन्हें सूक्ष्म विचारों और सही निर्णय के लिए बधाई देता हूँ । इस मामले में मैं माननीय विधि सदस्य के काफी निकट रहा हूँ और यहाँ तक कि उनकी ओर से भी मैं पूरी तरह निराश नहीं हुआ हूँ । मैं एक दुस्साहसी आशावादी हूँ और मुझे विश्वास है कि सत्य निष्ठा अपने-आप में बलवान होती है और यदि मेरे द्वारा सबके सामने रखा जा रहा प्रस्ताव लाभकर और विवेकपूर्ण है, मुझे विश्वास है कि वह ऐसा ही है, तो ऐसा कोई कारण नहीं कि वह इस सदन के माननीय सदस्यों के स्वीकार न करने योग्य सिद्ध हो । महोदय, मैंने श्री सेन की अन्तिम, तर्कपूर्ण और सुविचारित राय अभी आपके सामने प्रस्तुत की । इसके बाद दूसरा चरण है सरकार का अपना फैसला । सरकार के सामने श्री सेन की रिपोर्ट तथा इस प्रश्न से सम्बन्धित सारी सामग्री प्रस्तुत हो चुकी है, जिसमें पंजीकृत कम्पनियों के वार्षिक प्रशासन से सम्बन्धित रिपोर्टें, उनके बेलेंसशीट और सम्भवतः मैनेजिंग एजेन्ट को दिये गये अभिनन्दन भी शामिल थे । अभिनन्दन पत्रों की बात मैंने मात्र औपचारिकतावश नहीं कही है । मैंने ऐसे भाषणों को देखा है और वे यदा कदा प्रकाशित भी हुए हैं ।

महोदय, पहले कही गयी बात को मैं दुहराना चाहूँगा । मैं यह अनुभव तो करता हूँ कि मैनेजिंग एजेन्ट ने उपयोगी कार्य किये हैं और देश उनका कृतज्ञ है । असहमति के अपने नोट में भी मैंने ऐसा ही कहा है और प्रवर समिति की रिपोर्ट पर चर्चा के समय जब मुझे भाषण करने का अवसर मिला था तब भी सदन में मैंने यही कहा था और मैं यह भी मानता हूँ कि मैनेजिंग एजेन्टों में अत्यन्त सम्माननीय व्यक्ति भी शामिल हैं लेकिन मैं यह चाहता हूँ कि मैनेजिंग एजेन्ट यह महसूस करें कि उद्योग आज एक व्यक्ति अथवा किसी समूह का एकाकी प्रतिष्ठान मात्र नहीं रह गया है । मैं चाहता हूँ कि वह यह समझें कि शोध समन्वय मानकीकारण तथा उद्योग के अन्य अनेक क्षेत्रों में दिन–प्रतिदिन इतनी प्रगति हो रही है कि यदि इन महत्वपूर्ण प्रतिष्ठानों को इन व्यक्तियों की ही सुपुर्दगी में छोड़ दिया गया, जिनके पास इसके सिवा और कोई योग्यता नहीं कि संयोगवश वे अमुक पिता के पुत्र हैं, तो हम गम्भीर खतरे में पड़ जायेंगे और इस बात की पूरी सम्भावना है कि तमाम उद्योग रोजाना सामने आ रही कठिन प्रतिस्पर्धा में अपना नामोनिशान खो बैठेंगे । मैं चाहता हूँ कि

इस समस्या पर वे भी इस दृष्टिकोण से देखें न कि कुछ रुपयों और आनों या कुछ पौंड और शिलिंग के संकीर्ण और निम्नस्तर के दृष्टिकोण से । यह प्रणाली क्या अधिकतम कुशलता प्राप्त करने में सहायक है? क्या यह ऐसा सुनिश्चित करती है? यदि नहीं तो क्या यह वांछनीय है कि अनुपयोगी सिद्ध हो चुकी प्रणाली पर ही जोर दिया जाये, जो अपनी असंख्य त्रुटियों के कारण उद्योग के विकास को कुंठित कर चुकी है, साथ ही वह और भी त्रुटियाँ उत्पन्न करने वाली है । महोदय, यही वह मूल कारण है जिसे मैं इस सदन के माननीय सदस्यों के सामने रखना चाहता हूँ । लेकिन यह तो विषयान्तर होने जैसी बात है । इससे पहले कि सरकार उन निहित स्वार्थों के अंधेरे संसार में फंसकर रह जायें जो आमतौर पर दूरदृष्टि रख पाने और आगे देख पाने में असमर्थ हैं, मैं अब सरकार की खुद की स्थिति की चर्चा करना चाहूँगा; क्योंकि अन्ततः हितों का कहीं टकराव नहीं है और यदि आप काफी ऊँचाइयों से दूर बहुत दूर देखें तो आप पायेंगे कि वे सारे अवरोध जो आपकी दृष्टि को उस समय बाधित कर रहे थे, पूरी तरह गायब हो गये हैं और आप अच्छी सम्भावनाओं को दूर तक व्याप्त देख सकेंगे । मैं चाहता हूँ कि सरकार इन बातों की ओर दूर दृष्टि अपनाए । महोदय, इस सम्बन्ध में सरकार के यही विचार थे; अनौपचारिक समिति के सदस्यों के सम्पर्क में आकर दिग्भ्रमित किये जाने से पहले भारत सरकार का फैसला यही था ।

सर नृपेन्द्र सरकार — या उसके सुधारे जाने से पहले?

श्री एम० सत्यमूर्ति — सर होमी मोदी के मिलने से पहले ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — मान्यवर, सारणीकृत प्रतिवेदन के पृष्ठ बीस पर सरकार के स्थायी प्रस्ताव में कहा गया था कि

"कम्पनी के नियमों (आर्टीकिल्स आफ एसोसिएशन) अथवा उसके साथ हुई संविदा में इसके विपरीत चाहे कुछ भी लिखा हुआ हो, इस अधिनियम के लागू होने से पूर्व नियुक्त हुआ किसी भी कम्पनी का मैनेजिंग एजेन्ट इसके लागू होने की तिथि के पांच वर्षों के बाद अपने पद पर बना नहीं रह सकेगा ।"

ऐसा स्पष्ट, शर्तविहीन और अर्हताविहीन प्रावधान किया गया था । पांच वर्ष और उसके बाद सारी मैनेजिंग एजेन्सियों को समाप्त कर दिया जाना चाहिए । किन्तु मैं इतना कठोर निःशर्त और अर्हताविहीन प्रस्ताव नहीं कर रहा । मेरे विचार से मैनेजिंग एजेन्ट के प्रति सरकार के इस अस्थायी निर्णय की अपेक्षा मेरा प्रस्ताव कहीं अधिक न्यायोचित है । अपने माननीय मित्र द्वारा प्रस्तावित अवधि की अपेक्षा मैं उससे कहीं अधिक का सुझाव पेश कर रहा हूँ । मेरा कहना है कि प्रत्येक मामले में उन्हें पांच वर्षों का समय तो अवश्य मिलना चाहिए, लेकिन पांच वर्षों के

बाद भी उन्हें उतने वर्षों का समय और मिलना चाहिए, ताकि एजेन्सी मिलने की तिथि से वे कम से कम तीस वर्षों का भी समय अवश्य पूरा कर लें । सरकार ने इस तरह की कोई शर्त या बन्धन नहीं रखा था । महोदय, मुझे आशा है कि सरकार अब भी अपनी राय पर पुनर्विचार कर सकती है । जब वह स्वयं अपने विशेषज्ञ सलाहकार के सुझावों से ही पूरी तरह निर्देशित होने को तैयार नहीं और जब उसके बाद अनौपचारिक समिति में किये गये विचार-विमर्श को ध्यान में रखकर उसने अपनी राय बदल दी, तो मैं नहीं समझता कि स्थिति पूरी तरह निराशाजनक है और जैसा कि सरकार पहले भी कितनी बार अपने विचार बदल चुकी है, मैं अपेक्षा करता हूँ कि सरकार अब भी इस प्रश्न पर निरपेक्ष ढंग से विचार करने को तैयार होगी और यदि वह समझती है कि इस विधेयक में निहित निर्णय को और बेहतर बनाया जा सकता है, तो वह मेरे संशोधनों को स्वीकार करने को तैयार होगी । मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से आग्रह करूंगा कि अगर उन्हें मेरे माननीय मित्र श्री सेन पर विश्वास हो तो वह मेरे संशोधन को स्वीकार कर लें । श्री सेन चाहते थे कि वे केवल एक वर्ष का ही समय दें । उन्हें इस हकीकत को अवश्य मान लेना चाहिए कि सारे प्रपंचों से मुक्त रहते हुए जब सरकार पहली बार एक निष्कर्ष पर पहुँची थी तो वह किसी के भी भ्रष्ट प्रभाव से कलुषित हुए बिना, आदर्श से इन बातों का निपटारा करने के लिए बेहतर स्थिति में थी । (हर्षध्वनि)

श्री एस० सत्यमूर्ति – किसके, श्री मोदी या श्री चैपमैन मार्टियर के प्रस्ताव से?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – महोदय, सरकार द्वारा तब किये गये फैसले को मैं स्वीकार करता हूँ । मैं न केवल उनके दृष्टिकोण से सहमत हूँ बल्कि उससे भी आगे बढ़कर मैं यह कहता हूँ कि पाँच साल का कार्यकाल पूरा हो जाने के बाद भी अगर किसी मैनेजिंग एजेन्ट ने अपने कार्यकाल के कुल तीस वर्ष न पूरे किये हों, तो उसे उतनी अवधि तक और कार्य करने दिया जाय जिसे मिलाकर वह न्यूनतम तीस वर्षों का सम्पूर्ण कार्यकाल पूरा कर सके । महोदय, तब इस अनुच्छेद पर कोई आपत्ति क्यों होनी चाहिए? इस संशोधन पर क्या महज इसलिए आपत्ति की जायेगी क्योंकि अब सरकार सर होमी मोदी की सुविधा हेतु एक अन्य निर्णय पर पहुँच चुकी है । मैं अच्छी तरह अनुभव करता हूँ कि श्री सेन की सिफारिशों और सरकार के मूल निर्णय के प्रकाशित होने के बाद मैनेजिंग एजेन्टों ने राहत की सांस ली होगी ।

स्वामित्व हरण की अनेक चर्चाएं होती रही हैं । इसके बारे में विस्तार से तो मैं बाद में कहूँगा, लेकिन इस समय मैं सदन का ध्यान उस बिन्दु की ओर आकर्षित करना चाहूँगा, जिसका उल्लेख माननीय विधि सदस्य पहले ही कर चुके हैं । प्रवर

समिति द्वारा सौंपे गये वर्तमान विधेयक के पृष्ठ 63 पर यदि माननीय सदस्य गौर करें तो उन्हें यह प्रावधान मिलेगा:

"भारतीय कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1936 के लागू होने की तिथि के दो वर्षों बाद कोई भी बैंकिंग कम्पनी अपने प्रबंधन के लिये मैनेजिंग एजेन्ट नियुक्त नहीं रखेगी ।"

महोदय, यह प्रावधान प्रवर समिति की सामूहिक राय और बुद्धिमत्ता का प्रतिनिधित्व करता है । यहां इस बात पर आप गौर करें कि चाहे वह कोई मौजूदा बैंक हो या इसके बाद अस्तित्व में आने वाला अन्य कोई बैंकिंग प्रतिष्ठान हो, वह दो वर्षों के बाद कोई भी मैनेजिंग एजेन्ट न रख सकेगा । यहां तक कि अगर किसी मौजूदा बैंक का मैनेजिंग एजेन्ट शेयरधारकों को उसे हटाने का अधिकार दिये बिना, स्थायी रूप से भी नियुक्त हुआ हो और यद्यपि वह ऐसे बैंक या कम्पनी को खड़ा करने की सारी तकलीफें उठाने के बाद, अधिनियम लागू होने के समय मात्र एक ही वर्ष तक अपने पद पर रह पाया हो, तो भी उसे दो वर्षों बाद अपना पद छोड़ना पड़ेगा । ऐसा नहीं है कि मुझे इसका खेद हो— मैं इसका स्वागत करता हूँ...

सर नृपेन्द्र सरकार – किसी बैंक में मैनेजिंग एजेन्ट नहीं हैं । अभी तक हम केवल एक ही को खोज...

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – एक तो कम से कम मैं जानता ही हूँ । वह है वार्ष्णेय एण्ड कम्पनी । अन्य और भी हो सकते हैं । सरकार जब ऐसा अनुच्छेद लायी है, तो मैं अनुमान करता हूँ कि कोई बुराई मौजूद है, जिसका निदान किया जाना है अन्यथा केवल कल्पना के आधार पर और बेकार में ही वह इसे न जोड़ती । ऐसे मामले अवश्य होंगे जिन पर यह अनुच्छेद लागू होता हो और लागू किया जा सकता हो और किसी उद्देश्य को प्राप्त करने की दृष्टि से ही विधेयक में इस प्रावधान को लाया गया है । इसलिए जहां तक स्वामित्वहरण के तर्क का सम्बन्ध है, वह इस अनुच्छेद के द्वारा समाप्त हो जाता है।उसे हटाये जाने के लिए अगर सन्तोषप्रद कारण मौजूद हैं तो केवल यह तर्क की संविदा होने के कारण उसे तो मैनेजिंग एजेन्ट बने रहना ही है, उसे इस पद पर बनाये रखने का पर्याप्त आधार नहीं है और इस प्रश्न पर सार्वजनिक हित और आवश्यकताओं की दृष्टि से ही विचार करना होगा । महोदय, जैसा कि शायद माननीय सदस्यगण को विदित होगा, हमारे देश में पंजीकृत कम्पनियों की एक तिहाई बीमा और बैंकिंग कम्पनियां हैं । लगभग दस हजार पंजीकृत कम्पनियों में से तीन हजार से अधिक की संख्या में बीमा और बैंकिंग की कम्पनियाँ हैं । इस तरह यह प्रावधान लगभग एक तिहाई बीमा और बैंकिंग

कम्पनियों में से उतनों को तो प्रभावित करेगा ही, जिनमें मैनेजिंग एजेन्ट हैं । हम देखते हैं कि शेष दो तिहाई कम्पनियों में आधे से अधिक इस समय मैनेजिंग एजेन्टों द्वारा चलायी जा रही हैं और वे सभी प्रतिष्ठान, जो महत्वपूर्ण हैं और जिनमें जनता की अधिक दिलचस्पी है, वे मैनेजिंग एजेन्टों के हाथों में हैं । उदाहरण के लिए केवल चार को छोड़कर शेष समस्त कपड़ों के प्रतिष्ठान मैनेजिंग एजेन्टों के हाथों में हैं– लोहा, इस्पात, कोयला, इस्पात, सीमेन्ट तथा इसी प्रकार की अन्य लगभग सारी कम्पनियाँ भी उन्हीं के हाथों में हैं । ये सभी आज भारतीय उद्योग की रीढ़ की हड्डी स्वरूप हैं । अब मैं चाहूँगा कि माननीय विधि सदस्य बंगाल केमिकल एण्ड फार्मेस्यूटिकल वर्क्स की प्रगति की तुलना देश के अन्य प्रतिष्ठानों से करें । यह राष्ट्रीय प्रतिष्ठान अगर मैनेजिंग एजेन्ट के नियंत्रण में होता या अगर आचार्य राय सरीखे महान सन्त और देश भक्त के निःस्वार्थ परिश्रम से सींचा न गया होता, तो क्या वह इतनी उल्लेखनीय प्रगति कर सकता था? (कांग्रेस सदस्यों द्वारा ताली की गड़गड़ाहट) । मेरे ख्याल में यह उस देश का एकमात्र प्रतिष्ठान है जहां दो सौ से अधिक स्नातक कार्यरत हैं, जिसने अत्यन्त मूलभूत आवश्यकताओं में से एक की पूर्ति कर दी है तिस पर भी यह कभी धनलोलुपता की दृष्टि से नहीं चलाया गया । इसकी प्रगति और विकास तथा महान उपलब्धि इस बात के निर्विवाद और अकाट्य प्रमाण हैं कि प्रत्यक्ष मैनेजिंग एजेन्सी प्रणाली से श्रेष्ठ है ।

मान्यवर, स्वामित्व हरण का झूठा बहाना बनाया जा रहा है । संविदा की पवित्रता का तर्क भी दिया जा रहा है । मैं उन लोगों में नहीं हूँ जो संविदा को कागज का एक टुकड़ा भर मानते हैं । मैं इंग्लैण्ड के आचरण का अनुकरण नहीं करूंगा जैसा कि उसने अपने लेनदार देशों से किया है । जिनकी बार-बार की अपीलों के बावजूद उसने उन्हें प्रतीक भर भी भुगतान करने से इनकार कर दिया है । मैं उन लोगों में नहीं हूँ जो ऐसे मामले में ग्रेटब्रिटेन के पद चिन्हों पर चलना चाहते हैं । संविदा को कुछ महत्व मैं अवश्य देता हूँ लेकिन स्वामित्वहरण की बात क्या यहां भी उचित लगती है? क्या कभी किसी ने इस प्रश्न पर उसके समग्र व वास्तविक रूप तथा प्रभाव को ध्यान में रखकर विचार करने का कष्ट किया है? अपने वर्तमान अस्तित्व के लिए ये प्रतिष्ठान किसके ऋणी हैं यही मुख्य प्रश्न है । यह प्रश्न अगर वर्ष 1922 के पहले हमारे सामने आया होता तो कोई भी अहस्तक्षेप के सिद्धान्त को उछाल सकता था लेकिन चूंकि उस वर्ष से अब तक बहुत बदलाव आ चुका है और प्रत्येक उद्योग जो आज अपना अस्तित्व बनाये रख सकता है, वह केवल समाज के स्वैच्छिक त्याग के बूते ही ऐसा करने में समर्थ हो सका है, अन्यथा वह बहुत पहले ही समाप्त हो गया होता । महोदय, उद्योगों के मामले में विभेदक

संरक्षक नीति अहस्तक्षेप के सिद्धान्त पर पूरी तरह पानी फेर देती है । क्या कभी किसी ने वह गणना करने का कष्ट किया है कि इन उद्योगों के रख-रखाव के लिये जनता कितना धन दे रही है? अगर संरक्षणात्मक कर हटा लिये जायें तो क्या एक भी सूती या कपड़ा मिल, या लोहा और इस्पात के प्रतिष्ठान यहाँ एक दिन भी चल पायेंगे? संरक्षणात्मक करों का बोझा किन लोगों पर पड़ता है? हम देखते हैं कि आज भी हमें संरक्षणात्मक करों के रूप में बारह करोड़ रुपये इसलिए देने पड़ रहे हैं ताकि वे वस्तुएं यहाँ न आने पायें जिनसे हमारे उद्योग कोई मुकाबला नहीं कर सकते । जिन महानुभावों ने भारत में आयात-कर की समस्या पर श्री हीरेन्द्र नाथ डे द्वारा लिखी गयी पुस्तक "द इन्डियन टैरिफ प्राब्लम" जो इस विषय की प्रारम्भिक पुस्तक है और जिसकी केवल एक प्रति मैं अपने साथ लाया हूँ-पढ़ी है, उन्होंने अवश्य देखा होगा कि सामान्य करदाता पर संरक्षणात्मक कर के रूप में कितना बोझ पड़ रहा है । मैं केवल सूत पर लगने वाले आयात-कर के सम्बन्ध में ही इस पुस्तक के पृष्ठ 90 का हवाला देना चाहूँगा । यह वर्ष 1927-28 से सम्बन्धित है और जैसा कि मेरे माननीय मित्र श्री होमी मोदी अच्छी तरह जानते हैं कि उस समय आयात कर आज की अपेक्षा लगभग एक चौथाई या इससे भी कम हुआ करता था । श्री डे इस पुस्तक में लिखते हैं :

"भारतीय उत्पादकों के शुद्ध लाभ के रूप में दर्शायी गयी धनराशि को मिल मालिकों और हथकरघा बुनकरों के बीच क्रमशः साठ और चालीस प्रतिशत के अनुपात में विभाजित किया जाय तो मिल मालिकों का हिस्सा चार करोड़ पैंसठ लाख रुपये प्रतिवर्ष का होता है । हाल के वर्षों में भारतीय सूत उद्योग की कुल शुद्ध चुकता पूंजी लगभग चालीस करोड़ रुपयों में आंकी जा सकती है । इसलिये प्रश्नगत अवधि में भारत के सूत उद्योग को ऊँचे दामों के रूप में उपभोक्ताओं ने जो धन दिया, वह भुगतानशुदा पूंजी का लगभग ग्यारह से बारह प्रतिशत के बीच होता है ।"

श्री एच०पी० मोदी — क्या इन आर्थिक नीतियों को आप स्वीकार करते हैं?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — किसी भी व्यक्ति के विचारों या सिद्धान्तों को मैं आंख मूंद कर स्वीकार नहीं करता । मैं स्वयं तार्किक विवेचन करता हूँ और मुझे जो जंचता है वही मानता हूँ । यहाँ तक कि मैं अपने माननीय मित्र श्री होमी मोदी के आर्थिक सिद्धान्तों को भी अंशतः स्वीकार करता हूँ, जिनमें संरक्षण देने की नीति भी शामिल है और जिस पर मैं उनसे हमेशा संघर्ष करूंगा । लेकिन इसके साथ ही मैं यह भी अनुभव करता हूँ कि उत्पादन लागत न्यूनतम करने और न्यूनतम सम्भव मूल्य पर होने वाले उत्पादन को बढ़ावा देने के बहाने हम पर एक प्रतिकूल कर लगा

दिया गया है क्योंकि निर्धन, भूखों मर रही देश की जनता की मुखाकृति हमेशा मेरे सामने रहती है । आज भारतीय सूत उद्योग को वास्तव में कौन पोषित कर रहा है? मैं उसे हतोत्साहित नहीं करना चाहता । क्यों मैनेजिंग एजेन्ट की तिजोरियाँ भरने के लिए उससे इतना धन लिया जाना चाहिए जो उद्योग के संरक्षण की वास्तविक आवश्यकताओं से अधिक हो । एक ओर गाँवों में भूखे—नंगे किसानों या शहरी मजदूरों के चेहरों को देखिए और दूसरी ओर यहाँ उपस्थित मेरे कुछ मित्रों के चेहरों को देखिए जो माननीय विधि—सदस्य द्वारा किये गये आपरेशनों के बावजूद अब भी किसी दीर्घाकार जानवर की तरह सदैव की भाँति पूरे हर्षोत्साह से अपनी बेंचों पर बैठे आनन्द लेते प्रतीत हो रहे हैं ।

मान्यवर, इसलिये मैं चाहता हूँ कि यह सदन इस प्रश्न पर सही दृष्टिकोण तथा सही परिप्रेक्ष्य में विचार करे । इसमें स्वामित्वहरण का कोई प्रश्न ही नहीं उठता । ये उद्योग अगर आज जीवित हैं तो इसके लिए उन्हें असेम्बली के उन कार्यों के प्रति आभार प्रकट करना चाहिए, जो इसने 1924 से अब तक किये हैं । ये उद्योग आज जीवित रह सके हैं तो उसका कारण मात्र विभेदक संरक्षण नीति है, जिसके फलस्वरूप हम पर प्रत्यक्षत: या परोक्ष रूप से आज तक कम से कम तीन सौ साठ करोड़ का भार पड़ा है । इसी के कारण ये उद्योग आज तक कायम हैं । सूत उद्योग में आज कितनी धनराशि निवेशित है? लगभग चालीस करोड़, और आयात होने वाले कपड़ों पर हम कितना आयात कर चुकाते हैं? दस करोड़, इस तरह कुल निवेशित पूंजी का पचीस प्रतिशत मेरे देश के अन्य निर्धनों द्वारा हर साल दिया जा रहा है ताकि कपड़ा उद्योग चलता रह सके । इस तरह नुकसान केवल दस करोड़ का नहीं है । संरक्षणात्मक कर अच्छी गुणवत्ता वाली वस्तुओं का मूल्य स्तर भी निश्चित रूप से बढ़ा देते हैं और इस मद में अगर आप ज्यादा से ज्यादा सिर्फ दस करोड़ रुपये ही जोड़ें तो भी जनता को इस उद्योग के रखरखाव के लिए हर साल कम से कम बीस करोड़ रुपये निस्संदेह देने ही पड़ते हैं, जबकि इसमें कुल निवेश चालीस करोड़ रुपयों का है जिसमें मैनेजिंग एजेन्ट का हिस्सा पाँच या दस करोड़ से अधिक का नहीं है । मात्र इतना हिस्सा होने पर क्या उसको यह अधिकार है कि वह हम पर स्वामित्वहरण का आरोप लगाये जबकि हम केवल यही राय देते हैं कि शेयरधारकों को यह अधिकार मिलना चाहिए कि वे यह निर्णय कर सकें कि मैनेजिंग एजेंट की प्रणाली वर्तमान शर्तों पर पाँच वर्षों बाद चलती रहनी चाहिए या नहीं । उस व्यक्ति पर जो आज वास्तव में सूती कपड़ा उद्योग को संभाल रहा है, यह आरोप लगाना नितान्त अन्यायपूर्ण है । अब लोहा और इस्पात उद्योग को ही लें । पिंडो छड़, लौह पाइप तथा दूसरे देशों से आयात होने वाली अन्य समस्त वस्तुओं पर

प्रतिदिन हम चालीस से साठ रुपये तक दे रहे हैं । इस पर कुल संरक्षणात्मक कर लगभग एक करोड या पचहत्तर लाख रुपये होते हैं । इसे देने वाले कौन है? जब आपको संरक्षण की जरूरत होती है तो आप हमारे पास आकर अपील करते हैं कि "इस बच्चे को संभालो,वरना यह मर जायगा, इस मरणासन्न व्यक्ति को आक्सीजन दो अन्यथा यह मर जायगा । यह बहुत ही कठिन परिस्थितियों का शिकार बन चुका है, अपनी खुराक में से अगर तुम इसे हिस्सा नहीं दोगे तो यह बचाया न जा सकेगा ।" लेकिन अब आप कहते हैं कि इस पर आपका अधिकार नहीं है. । यह तो स्वामित्वहरण के समान है यह बेहयाई, अशिष्टता और अहसान फरामोशी नहीं तो और क्या है? जब आप यह जानते हैं कि इस उद्योग से सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्ति का रख–रखाव समाज करता है, तो इस स्वैच्छिक त्याग के लिए तो दरअसल मैनेजिंग एजेन्ट को जनता का कृतज्ञ होना चाहिए । उसे इस एसेम्बली का कृतज्ञ होना चाहिए जिसने उसे अब तक जिन्दा रखने योग्य बनाया । हम अब भी उसे आगे जीने का अधिकार देने को तैयार हैं । चाहे वह यूरोपियन हो या भारतीय, हम किसी भी एजेन्ट के प्रति कड़ाई बरतना नहीं चाहते । लेकिन मेरे मित्रगण कहते हैं कि "हमारे रख–रखाव के लिए तुम सब कुछ देने को बाध्य हों, लेकिन मालिक केवल हमीं हैं इसलिए हमें हमारा पैसा मिलना ही चाहिए ।" यह ऐसा तर्क है जिसे शायद ही कोई समझदार व्यक्ति स्वीकार करे । अब आइए चीनी उद्योग को देखें । चीनी उद्योग में कुल कितनी राशि निवेशित है? यह तीन करोड़ से भी कम है । और हम क्या दे रहे हैं? आयात–कर के रूप में हम प्रति "हंडरवेट" लगभग आठ या नौ रुपये दे रहे हैं ताकि चीनी का मूल्य बढ़ जाने पर ये एजेन्ट अपनी चीनी मिलें चलाते रह सकें । चीनी उद्योग में निवेशित कुल पूंजी से भी अधिक राशि इस देश के भूखों मर रहे गरीब उपभोक्ता से हर मौसम में ली जा रही है ताकि यह उद्योग बना रहे और उस पर भी आप कह रहे हैं कि मैनेजिंग एजेन्टों को बिक्री पर दो से तीन प्रतिशत, कुछ राशि क्रय पर कुल लाभ पर दस प्रतिशत, निवेशित धनराशि पर छः प्रतिशत और इसके अलावा एक हजार से दो हजार रुपये तक प्रतिमाह मिलना ही चाहिए । इन सब को अगर आप जोड़कर देखें, तो आपको ज्ञात होगा कि शेयर-धारकों को मिलने वाले लाभ और मैनेजिंग एजेन्टों को मिलने वाले कमीशन, ब्याज और दूसरी चीजों के बीच कोई भी अनुपात नहीं है । यह कोई मजाक की बात नहीं है । मैं अपने कथन के समर्थन में अनेक प्रमाण प्रस्तुत करने को तैयार हूँ । जैसा कि पिछले अवसर पर मैंने लोकनाथन की किताब के अंश पढ़कर सुनाये थे, ये लोग लाभांश की बहुत अधिक चिन्ता नहीं करते क्योंकि सहायक सेवाओं तथा अन्य स्रोतों से उनको बहुत अधिक आय हो जाती है । मान्यवर, इन तमाम तथ्यों को प्रस्तुत करने के बाद क्या कोई ऐसी वजह शेष रह जाती है कि आप उत्पादन लागत कम

करने और इन उद्योगों का 'यथासम्भव' लोकतंत्रीकरण करने के लिए आप इनके पुनर्गठन का प्रयास न करें । मान्यवर, स्थिति आज यह है । अब तक हमारे औद्योगिक प्रतिष्ठान कमोबेश पारिवारिक प्रतिष्ठान ही रहे हैं और उत्तराधिकार प्रणाली की बुराई ने तरक्की की रफ्तार अवरुद्ध कर दी है । इसलिए मान्यवर, हमें व्यापक दृष्टिकोण अपनाना होगा । तो स्वामित्व हरण की बात क्यों की जाय ।

मान लीजिए कि आज हम आयात पर लगने वाले संरक्षणात्मक कर हटाने का फैसला कर लेते हैं । मैं अपने माननीय मित्र श्री एच०पी० मोदी से पूछना चाहूँगा कि तब कपड़ा, चीनी या लोहा –इस्पात की कम्पनियों के उस शेयर का कल क्या मूल्य होगा जिस पर शेयर बाजार में आज दस हजार रुपये की बोली लगती है तब उसका मूल्य शून्य हो जायेगा । जाहिर है कि इसका इतना मूल्य उस योगदान के कारण है, जो मैं करता हूँ । अगर किसी का हक अनधिकार रूप से छिना है, तो वह मैं हूँ । मेरे पास जो कुछ भी थोड़ा–बहुत था, वह आप द्वारा उसी समय छीन लिया गया, आपने ऐसे उद्योगों की नींव रखी, जो मेरे सहारे के बगैर अपने पैरों पर खड़े भी नहीं रह सकते थे । लुटा मैं हूँ, कोई और नहीं । अपने को बनाये रखने के लिए आपने हमसे ही कुछ लिया है । यदि अपहरण सिद्धान्त को लागू ही किया जाना हो तो सबसे अच्छा यह होगा कि भारत में एक राष्ट्रीय सिंडीकेट गठित किया जाय, ताकि जनता इन सभी उद्योगों को अपने अधीन ले सके, जिसके लिए उसने अपने खून–पसीने की कमाई से अर्जित इतनी धनराशि दी है जो उसमें निवेशित कुल पूंजी से भी कहीं अधिक है । लेकिन मैं यह सुझाव नहीं दे रहा हूँ । मेरा कहना केवल इतना है कि मैनेजिंग एजेन्टों द्वारा तीस वर्ष पूरे कर लिए जाने पर इस विषय में शेयरधारकों को विवेकानुसार निर्णय करने दिया जाय ।

इन उद्योगों का इतिहास क्या रहा है? अगर वास्तव में आज ये हानि उठा रहे हैं तो क्या मैनेजिंग एजेन्टों के पहले अच्छे दिन नहीं थे? अच्छे दिन तो उन्होंने लाभ कमाया ही, बुरे समय भी क्या उन्होंने अपनी कमाई नहीं की? उन्होंने हमेशा ऐसा किया । 1915 से 1922 के बीच उनकी कमाई कितनी रही? माननीय सदस्यों को मैं सर चार्ल्स इन्नेस के भाषण का स्मरण कराना चाहूँगा, जिसमें उन्होंने कहा था कि इन आठ वर्षों में शेयरधारकों ने इन उद्योगों में निवेशित अपनी पूंजी पर इक्यावन प्रतिशत प्रतिवर्ष अर्जित किया और मुझे विश्वास है कि इस अवधि में मैनेजिंग एजेन्टों ने लगायी गयी अपनी धनराशि पर कई सौ प्रतिशत अर्जित किया है । यही कारण है कि इनमें से कुछ उद्योगों में हम अत्यधिक पूंजीनिवेश देखते हैं । उनके पास

धन था, जिसका वे किसी अन्य प्रकार से उपयोग नहीं कर पा रहे थे अतः उस धन को उन्होंने अपने प्रतिष्ठानों में लगा दिया । दरअसल हुआ यही है । सदन को याद होना चाहिए कि प्रत्येक उद्योग को एक निश्चित अवधि के लिए संरक्षण दिया गया था, मिसाल के तौर पर कपड़ा उद्योग के मामले में यह संरक्षण 1939 को समाप्त हो जायगा, लोहा और इस्पात उद्योग का संरक्षण 31 मार्च, 1941 को पूरा हो जायगा । अब इस बारे में हम क्या रवैया अपनाने जा रहे हैं? माननीय सदस्यों को ज्ञात है कि मैनेजिंग एजेन्टों द्वारा वित्त पोषण किये जाने के बारे में बहुत कुछ कहा जा चुका है और अहमदाबाद के मैनेजिंग एजेन्टों के बारे में माननीय विधि सदस्य बहुतेरी इधर–उधर की बातें हमें सुना चुके हैं । दरअसल सच्चाई क्या है? सच्चाई यह है कि जहां कुल भुगतानशुदा पूंजी पांच करोड़ रुपयों से भी कम है, पूंजीगत ऋण और अल्पावधि ऋण मिलकर दस करोड़ रुपयों से भी अधिक के हैं । अहमदाबाद में वित्तीय स्थिति ऐसी ही है । मान्यवर, मैं कहना चाहूँगा कि सदन के सामने एक अति गम्भीर समस्या यह है कि 1939 और 1941 के बाद सदन इन प्रश्नों का फिर से निपटारा करते समय क्या रवैया अपनायेगा? इन उद्देश्यों की हालत आगे और भी बिगड़ जाने का मौका देकर क्या वह और भी ऊँची दरों पर कर लगाने का खतरा मोल लेगा अथवा वह उन तरीकों को अपनायेगा जो अनुचित या अन्यायपूर्ण तो न हों किन्तु इन उद्योगों का लाभप्रद ढंग से चलाया जाना सुनिश्चित करते हैं? मैं अपने माननीय मित्र सर एच०पी० मोदी से पूछता हूँ कि क्या उन्हें पूरा यकीन है कि अगर वर्तमान मैनेजिंग एजेन्टों को उनके पदों पर बना रहने दिया जाय तो 31 मार्च, 1939 के बाद बिना किसी संरक्षण के ये उद्योग दुनिया के अन्य उद्योगों से मुकाबला करने में समर्थ हो जायेंगे । यदि वे इससे सहमत हों और यह आश्वासन दे दें तो मैं अपना संशोधन वापस लूँगा ।

सर एच०पी० मोदी — कुछ मामलों में ऐसा ही होगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — 'कुछ' में तो चौथाई भी हो सकता है और सोलवाँ या सौवां हिस्सा भी हो सकता है । मैं जानता हूँ मेरे माननीय मित्र बहुत चतुर हैं । मैं पूछता हूँ कि क्या वे हमें यह आश्वासन देने जा रहे हैं कि 1941 के बाद लोहा और इस्पात पर कोई संरक्षणात्मक कर नहीं लगाया जायगा? क्या वे हमें यह आश्वासन देंगे कि 1939 के बाद चीनी पर लगने वाला कर नहीं रह जायगा? यदि नहीं तो मैं आपको आगाह करता हूँ कि इस अहम सवाल को स्वामित्वहरण की काल्पनिक बात की आड़ में इतने सरकारी तौर पर नहीं निपटाया जाना चाहिए । यह प्रश्न ऐसा है जो सारे समुदाय को प्रभावित करता है । क्योंकि वास्तव में यह समुदाय ही है जो आज इन उद्योगों को कायम रखे हुए है और मैनेजिंग एजेन्ट क्या करते रहे हैं? जैसा

कि मैंने पहले ही निवेदन किया, मैं यह लांछन नहीं लगा रहा कि सभी एक ही तरह के हैं, उनमें से कुछ तो परम आदरणीय महानुभाव हैं जिनका सर्वत्र सम्मान होता है, लेकिन इन सवालों पर व्यापक और गैर व्यक्तिगत दृष्टिकोण से विचार करना होगा । मैं आपसे यह विचार करने के लिए कहता हूँ कि इनमें से कुछ मैनेजिंग एजेन्ट क्या करते रहे हैं? इसे दिमाग में बिठाल लीजिए कि मेरी टिप्पणियाँ सभी पर लागू नहीं होतीं । अहमदाबाद के उद्योगों की निदेशिका (डायरेक्टरी) मेरे सामने है और मेरे ख्याल से माननीय विधि–सदस्य ने इसका अध्ययन भी किया होगा क्योंकि पिछले दिन उन्होंने इसके कुछ पैराग्राफों को उद्धृत किया था । यदि वे इसके प्रासंगिक प्रतिवेदनों को देखें तो वे पायेंगे कि मैनेजिंग एजेन्टों को मिला कमीशन, सारे शेयरधारकों को मिले कुछ लाभांश के लगभग बराबर है । किन्हीं मामलों में मैनेजिंग एजेंट एक व्यक्ति होता है तो किन्हीं मामलों में–मिसाल के तौर पर करीम भाई के मामले में–एजेन्सी के कई साझीदार होते हैं और कभी–कभी एक एजेंट की मृत्यु हो जाने पर उसके अनेक उत्तराधिकारी हो जाते हैं । स्पष्ट है कि उनकी दक्षता और प्रवीणता समान नहीं हो सकती ।

सर एच०पी० मोदी – जैसा बाप वैसा बेटा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मेरे मित्र सर होमी मोदी यह बताने की कृपा करें कि कितनी बार स्थिति इसके विपरीत होती है । उसके बाद 1929 से 1933 तक के आंकड़े जोड़ने पर मैं देखता हूँ कि मैनेजिंग एजेन्टों को उनके कमीशन के रूप में ही एक करोड़ 66 लाख रुपये मिले जब कि शेयरधारकों को लाभांश के रूप में दो करोड़ अट्ठारह लाख रुपये दिये गये । यह लेखा–जोखा केवल पाँच वर्षों का है । इसके अलावा मैनेजिंग एजेन्टों को बिक्री पर कमीशन और खरीद पर कमीशन तो मिला ही, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किये गये उनके दस करोड़ रुपयों के निवेश पर उन्हें छः प्रतिशत की दर से ब्याज भी मिला । इस प्रकार उन्हें इस अवधि में छः प्रतिशत की दर से कम से कम तीन करोड़ रुपये और मिले होंगे । यहां पर यह भी पता चलता है, जिससे सम्भवतः माननीय विधि सदस्य अवगत भी होंगे, कि निपुण मैनेजिंग एजेन्ट अक्सर छः प्रतिशत की दर पर लम्बी अवधि के लिए कर्ज देते हैं और जब कम्पनी के पास इसका कोई उपयोग नहीं होता तो वे कम्पनी के लाभार्थ इससे ढ़ाई प्रतिशत ब्याज की राजकीय प्रतिभूति खरीद लेते हैं ताकि यह धन निरुपयोगी ही पड़ा न रह जाय । कम्पनी के कोष की ऐसी देख–रेख के लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ ।

इसके बाद एक बात और है जिस पर चिन्ता होना लाजिमी है । यह है शेयरों के दिन–प्रतिदिन गिरते भाव । कई मिलों के शेयर कुछ पहले की अपेक्षा आज बहुत

कम मूल्य के रह गये हैं । यह इस बात का संकेत है कि अगर प्रबन्ध नहीं सुधरा तो उद्योग और भी अधिक कठिनाइयों में फंस जायेंगे । फलस्वरूप हमसे आयात कर और अधिक बढ़ाने को कहा जायगा । देश क्या इसमें समर्थ है? अगर नहीं तो क्रमश: बिगड़ती जा रही स्थिति को रोकने के लिए आप क्या करने जा रहे हैं? उत्पादन प्रक्रिया को सस्ती बनाने, उद्योगों के आधुनिकीकरण तथा अन्य बातों को सरल बनाने हेतु कौन से उपाय अपनाने होंगे? मान्यवर, आखिरकार सारे उद्योगों का, विशेषकर हमारे देश में एक ही उद्देश्य है जिसे हमेशा ध्यान में रखना होगा । यह है औसत नागरिक के जीवनस्तर को अधिक सुविधाजनक बनाना, सम्पदा का निर्माण करना और बेरोजगारी कम करना । अगर वर्तमान प्रणाली अपरिवर्तित रूप में ही चलती रही तो क्या इन तीनों उद्देश्यों में से एक भी मुनासिब तौर पर प्राप्त हो सकेगा? जहां तक बड़े उद्योगों में से तीन चौथाई के मैनेजिंग एजेन्टों का प्रश्न है, मेरे माननीय मित्र सर लेस्ली हडसन, 'हैबर्ड एण्ड कम्पनी' 'बेयर्ड एण्ड कम्पनी' तथा दूसरी सारी कम्पनियां इंग्लैण्ड से ही लोगों को बुलवाती हैं, और ये यहां के एक भी व्यक्ति को अपना साझीदार नहीं बनातीं । इस मामले में यद्यपि सर आर०एन० मुखर्जी भाग्यशाली रहे हैं, लेकिन ऐसे उदाहरण कितने दुर्लभ है, बावजूद इसके कुछ कम्पनियों में साठ प्रतिशत तक शेयर भारतीयों के पास हैं । लेकिन उन कम्पनियों के साझीदार वही हो सकते हैं जिन्हें वे चाहें या जिन पर उन्हें भरोसा हो । इस तरह भारतीयों की नियुक्ति का सवाल ही पैदा नहीं होता है । और यह एक सच्चाई है कि कलकत्ता और अन्य स्थानों पर चल रही वर्तमान मैनेजिंग एजेन्सी भारतीयों को रोजगार मिलने में बाधक है । अगर शेयरधारकों द्वारा चुने गये संचालक-मंडल रहते तो निश्चय ही विभिन्न प्रतिष्ठानों में भारतीयों की संख्या अधिक होती । पिछले एक दिन माननीय विधि सदस्य ने ठीक ही इस तथ्य पर जोर दिया था कि हमारे देश में औद्योगिक प्रतिभाओं की बहुत कमी है । इसे आप कैसे पा सकते हैं? इन विदेशी वंशानुगत मैनेजिंग एजेन्टों के रहते कोई भी भारतीय, चाहे वह कितना ही प्रतिभाशाली क्यों न हो, कैसे अवसर पा सकता है? ऐसे में औद्योगिक प्रतिभा का क्या भविष्य हो सकता है? उसका तो गला घोंट दिया जाता है और अवसर के अभाव में वह व्यर्थ हो जाती है । ऐसा नहीं है कि हमारे पास ये प्रतिभाएं हैं नहीं, बल्कि उन्हें अवसर प्राप्त नहीं है । इस प्रकार स्वदेशी औद्योगिक प्रतिभा कुपोषित और लुंजपुंज रखी जा रही है । आइये, अब संविदा की पवित्रता सम्बन्धी तर्कों की जांच की जाय । हमें यह देखना चाहिए कि ये तर्क कहां तक ठीक है? आखिर कौन सी संविदा पवित्रतायुक्त होती है । मान लीजिए कि आज मैं अपने चुनाव क्षेत्र की जनता से वायदा कर दूं कि जनहित की देखरेख, सुरक्षा तथा उसके विकास के लिए विधायिका में मैं, मेरे बाद मेरा पुत्र, मेरे पुत्र का

पुत्र, मेरे पुत्र के पौत्र तथा उनके प्रपौत्र उनका प्रतिनिधित्व करते रहेंगे । क्या यह संविदा उचित है और क्या इससे कोई बाध्य होता है? या मान लीजिये कि सर होमी मोदी न्यू थियेटर्स से यह संविदा कर लें कि साठ वर्षों की आयु प्राप्त करने तक वे यहाँ नाचते रहेंगे, और उनके बाद उनका लड़का वहाँ नाचेगा, उसके बाद उसका लड़का वहाँ नाचेगा, इसी तरह आगे भी नाच चलता रहेगा, तो क्या यह संविदा न्यायसंगत होती? क्या वे इससे बाध्य होंगे?

सर एच०पी० मोदी – अवश्य, बशर्ते मैं नाच सकूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मान लीजिये अगर सर होमी मोदी नाच नहीं सकते तब क्या होगा? शायद कोई उत्तर देना चाहे, मैं चुप हो जाता हूँ (ठहाके) मान लीजिये सर होमी मोदी का पुत्र नाचना नहीं चाहता, तब क्या होगा? यहाँ यह बात ध्यान देने की है कि मैनेजिंग एजेन्टों से सम्बन्धित सारी संविदाएं उनकी उचित क्रियाशीलता, उनके व्यक्तिगत गुणों, बुद्धिमत्ता, औद्योगिक प्रतिभा, साधन सम्पन्नता और साख पर निर्भर करती हैं । इस प्रकार ये संविदाएं शायद उतने ही समय तक वैध रह सकती हैं जब तक कोई व्यक्ति इन गुणों को धारण कर सकता है । यही कारण है कि मैंने तीस वर्षों की अवधि का सुझाव दिया है । हम सभी जानते हैं कि हर आदमी आमतौर पर तीस वर्षों बाद अपनी शक्ति और सामर्थ्य खो बैठता है । यहां तक कि राजकीय सेवा में भी मेरे ख्याल से अधिकतम सेवा अवधि तीस वर्ष की होती है । इस सीमा के बाद उसमें वृद्धावस्था की कमजोरी आ जाती है । मान्यवर, इसीलिए मैंने मैनेजिंग एजेन्टों के लिए तीस वर्षों की अवधि रखी है और तीस वर्षों बाद मैनेजिंग एजेन्टों के पास वह शक्ति, सामर्थ्य और ऊर्जा नहीं रह जाती, जो बड़े प्रतिष्ठानों की देखरेख, उन्हें नियंत्रित और व्यवस्थित करने के लिए आवश्यक है । इसका खामियाजा कौन भुगतता है? केवल शेयरधारक ही नहीं, उनकी मुझे इतनी चिन्ता नहीं, बल्कि पूरा समाज भुगतता है । हम दुविधा में डाल दिये गये हैं । जब कभी हमें किसी नवजात या या पुराने उद्योगों को, जो किसी खतरे या कठिनाई में फंस गया हो, संरक्षण देने को कहा जाता है, तो हमारी प्रवृत्ति हमें एक ही प्रेरणा देती है कि हर कीमत पर उसे संरक्षण देना है । दूसरी ओर फिजूलखर्च तरीकों और अबुद्धिमत्तापूर्ण प्रबंध के कारण आप अनुचित मूल्य वृद्धि करते हैं जो प्रायः हमारी सामर्थ्य से बिल्कुल बाहर होती है । चूंकि मैं यह चाहता हूँ कि प्रबन्धक एक असली प्रबन्धक ही हो इसीलिये मेरा अनुरोध यह है कि अवांछनीय अभिकर्ताओं के कार्यकाल को समाप्त कर सकने का विकल्प आपको शेयरधारकों को देना ही चाहिए । यूरोपियन गुट के सदस्य, सर होमी मोदी तथा व्यापार क्षेत्र के अनुभवी अन्य सदस्य, मेरे विचार से यह स्वीकार करेंगे कि इस क्षेत्र में स्वयं उद्यमी तथा उस व्यक्ति के जो प्रबन्धतंत्र का मुखिया हो, निजी गुणों पर काफी कुछ निर्भर करता

है । फोर्ड कैसे इतना बड़ा प्रतिष्ठान बढ़ाकर पाया? जिन्होंने फोर्ड मोटर वर्क्स की प्रगति का इतिहास पढ़ा होगा वे उसकी विलक्षण प्रतिभा से प्रभावित हुए बिना रह नही सके होंगे । यह पढ़कर मैं चकित रह गया कि वहाँ श्रमिकों का न्यूनतम वेतन सात डालर है । यहाँ तक कि हमारे अपने ही देश में भी टाटा जैसे योग्य और समर्थ प्रबन्धक मौजूद हैं, जिन्होंने जर्जर हो चुके कपड़ा उद्योग को अपने प्रबन्ध में लेकर न केवल उसे जीवनदान दिया बल्कि उसे एक समृद्धिशाली प्रतिष्ठान भी बना दिया । मुझे ज्ञात है कि श्री कस्तूरी भाई लालभाई ने एक ऐसी मिल का चार्ज लिया था जिसको दिवालिया घोषित कर दिया गया था । उन्होंने उसका पुनरुद्धार किया । आज वह अत्यन्त समृद्ध मिलों में से एक है । ऐसा इसलिये सम्भव हो सका क्योंकि योग्य व्यक्ति को अवसर मिला जिसने अपना काम दिखाया । लेकिन जब आप औद्योगिक प्रतिष्ठानों को उस जीवनदायी ऊर्जा से वंचित कर देंगे, तो वे कैसे शक्तिशाली बनेंगे, कैसे प्रगति कर पायेंगे? मान्यवर, यह स्वीकार करना ही होगा कि तीस वर्षों से अधिक के लिए हुई ऐसी कोई भी संविदा जननीति के विरुद्ध, अतएव प्रारम्भ से ही अवैध होगी । 'यूनाइटेड किंगडम' में अड़तालिस के मुकाबले हमारे देश में जैसा कि माननीय सदस्यों को ज्ञात है, औसत आयु केवल 23 वर्षों की है, तो भी मेरा प्रस्ताव न्यूनतम तीस वर्षों के कार्यकाल की अनुमति देता है । मैं अब भी तीस सालों का मौका दे रहा हूँ जो इंग्लैण्ड तक में सक्रिय सेवा की सामान्य अवधि है ।

मान्यवर, अब यह स्पष्ट करने के लिए कि कुछ मैनेजिंग एजेन्ट जनसाधारण और शेयरधारकों के हितों के प्रति कितने जागरूक हैं, मैं मैनेजिंग एजेन्टों में से कुछ की संविदा शर्तों का उल्लेख करूंगा । मैं उनमें से कुछ का ही हवाला दूंगा जो कुल मिलाकर सारी स्थिति के द्योतक माने जा सकते हैं । इन संविदाओं के सार तत्व का विवरण प्रस्तुत करने के बाद ये कितनी उचित और न्यायपूर्ण है और इनमें कोई रद्दोबदल करना कितना अनुचित होगा, इस पर अपनी जबान से कुछ भी कहे बिना इस बात का फैसला मैं इस सदन से ही करवाना चाहूँगा । मैं मिलों के नाम नहीं लूँगा; तो भी यदि कोई इसे जानने को उत्सुक ही हो तो मैं आशा करता हूँ कि सर होमी मोदी इस दस्तावेज की प्रामाणिकता की पुष्टि करेंगे; बहरहाल मैं स्वयं यहां कोई नाम लेना नहीं चाहता . . . . . .

सर एच०पी० मोदी —आप सिर्फ अहमदाबाद या बम्बई कह दीजिये ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त —मेरे पास कुछ मामले अहमदाबाद के हैं, कुछ बम्बई के और कुछ कलकत्ता के । मैं अहमदाबाद की एक मिल का बयान कर रहा हूँ । सारी शर्तों को मैं नहीं पढ़ूँगा केवल एक या दो को ही पढ़कर सुनाऊँगा । इसमें कहा गया

है कि एजेन्ट को धागे और कपड़े की बिक्री पर चार प्रतिशत या इस बिक्री पर तीन पाई प्रति पौंड की दर से कमीशन और अन्य बिक्रियों पर दस प्रतिशत की दर से कमीशन मिलेगा । कमीशन का पैसा एजेन्ट के उस खाते में जमा किया जाता रहेगा जिससे छः प्रतिशत वार्षिक दर से त्रैमासिक ब्याज दिया जाता है । यदि किसी कम्पनी का दीवाला निकल जाय तो भी दस वर्षों का कमीशन उसे दिया जायगा । कम्पनी की सहमति से मैनेजिंग एजेन्ट के त्यागपत्र दे देने पर उसे बारह वर्षों का कमीशन मिलेगा । इससे भी अधिक दिलचस्प बात यह है कि त्याग–पत्र दिये जाने के बावजूद फर्म को दिये जाने वाले कमीशन को कभी जब्त नहीं किया जा सकेगा । न उसको वापस किया जा सकेगा । त्यागपत्र दे देने पर भी एक व्यक्ति को मुआवजे के रूप में बारह वर्षों का कमीशन मिल जायगा और उसके बाद भी बिना किसी प्रकार की सेवा के उसे कमीशन मिलता रहेगा । इससे अधिक न्यायपूर्ण, उचित और पवित्र बात क्या कुछ और भी हो सकती है! सर एच०पी० मोदी के जवाब देने के लिए मैं चुप होता हूँ ।

सर एच०पी० मोदी – मैनेजिंग एजेन्ट के लिए यह बिल्कुल न्यायपूर्ण है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – न्याय के बारे में अगर आपके यही विचार हैं तो मैं प्रणाम करता हूँ । अब समझ में आया कि हममें मतभेद क्योंकर रहा है । अब मैं दूसरा दस्तावेज पढ़ता हूँ । उसी तरह यह भी .....

एक माननीय सदस्य —क्या यह अहमदाबाद का है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – ये सभी अहमदाबाद के हैं । अगर कोई मेरे बयान के सम्बन्ध में सत्यान्वेषण करना चाहे तो उसका स्वागत है । मेरे पास अनेक उदाहरण हैं लेकिन सदन का समय बचाने के उद्देश्य से मैं इतना ही कहूँगा कि उनमें से अधिकांश की शर्तें लगभग एक समान हैं । उनमें यह कहा गया है कि मैनेजिंग एजेन्ट को बिक्री पर चार या पांच प्रतिशत कमीशन, खरीद पर दस प्रतिशत कमीशन, कम्पनी का दिवाला निकलने पर दस वर्षों का कमीशन मिलेगा । इसके अलावा त्यागपत्र दे देने के बाद भी, यद्यपि कम्पनी से उसका कोई सरोकार नहीं रह जायगा, उसे शुरू में दिये गये वचन के अनुसार कमीशन मिलता रहेगा । शर्तें ऐसी हैं । इन समझौतों में कुछ बातें हर मामले में एक जैसी हैं, जिनमें पहली बात यह है कि सारी मैनेजिंग एजेन्सियाँ स्थायी होंगी । अगर कहीं उससे छुटकारा पाने का कोई प्रावधान है भी, तो उसका एकमात्र तरीका जिसे अत्यन्त चतुराई से ही किसी ने बनाया होगा, वह है कि आपको छः महीनों की नोटिस देकर एक असाधारण बैठक आहूत करनी होगी । ध्यान दीजिये, विज्ञापन के द्वारा नहीं, बल्कि इसी सूचना के पत्र शेयरधारकों को व्यक्तिगत रूप से दिये जायेंगे । वे केवल "डाक द्वारा नहीं" वाक्यांश जोड़ना भर भूल पाये । उन्हें इसकी सूचना कम से कम छः महीने पूर्व मिल

जानी चाहिए ताकि वे इस बीच अच्छी तरह सोच-विचार करके इस विषय में सही राय बना सकें । तदुपरान्त, उन मामलों में, जहाँ बहुत उदारता बरती गयी हो, तीन चौथाई और जहां उदारता न बरती गयी हो ऐसे अन्य मामलों में 7/8 के अनुपात में शेयर धारक प्रतिनिधि के माध्यम से नहीं वरन् स्वयं उपस्थित होकर मैनेजिंग एजेन्ट की निष्कासित करने का प्रस्ताव पारित कर सकते हैं । क्या इससे भी सरल या आसान कोई और बात हो सकती है? यह उन संविदाओं की न्यायपूर्ण प्रकृति का एक और लक्षण होगा, जिसे हमको मानना होगा भले ही हमारा देश खाक में मिल जाय—या नरक के गर्त में पहुँच जाय.....

सर कावसजी जहाँगीर — यह सभी छः मामले जिनका आपने उल्लेख किया है और जिनकी आप विवेचना कर रहे हैं, मेरे ख्याल से अहमदाबाद के ही हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत — बम्बई की भी कम से कम एक मिल, बिके हुए माल के मूल्य के प्रतिशत के रूप में मैनेजिंग एजेन्ट को देने के लिए आज तक पारिश्रमिक पा रही है.....

सर एच०पी० मोदी — वह बहुत कम पा रही है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — मैं जानता हूँ कि ऐसी मिलें नाममात्र हैं जो कुछ पा रही हैं, क्योंकि कभी-कभी लापरवाही स्वयं प्रतिशोधक होती है । कोयला प्रतिष्ठान का एक उदाहरण दे रहा हूँ जो यहाँ बैठे मेरे मित्रों को दिलचस्प लगेगा । इसमें कहा गया है :

"एक हजार पांच सौ रुपयों का मासिक भत्ता और लाभ इत्यादि पर उतना कमीशन, जितना अभिकर्ता द्वारा समय-समय पर वांछित समझा जाय ।"

एक अन्य मामले में यह तीन हजार रुपये और लाभ पर दस प्रतिशत का कमीशन है । आगे कहा गया है कि सारी खरीद और बिक्री एजेन्ट द्वारा ही की जायेगी, जिस पर उन्हें अलग से कमीशन मिलेगा । उसे हटाने का तरीका वैसा ही है जैसा अन्य मामलों में । दूसरे और भी समझौते हैं जिन्हें अब मैं पढ़ने जा रहा हूँ । कलकत्ता में एक जूट मिल है, जिसका नाम जरूरत पड़ने पर मैं बता सकता हूँ लेकिन मैनेजिंग एजेन्ट का नाम मैं नहीं बताऊँगा । पारिश्रमिक है सकल बिक्री का दो प्रतिशत, पन्द्रह सौ रुपये प्रति माह, शुद्ध लाभ पर दस प्रतिशत, बीमा खर्चे की जिम्मेदारी कम्पनी पर होगी, सारी खरीद और सारी बिक्री मैनेजिंग एजेन्ट द्वारा की जायेगी । देश भर में होने वाली जूट की सारी बिक्री अन्य किसी के भी द्वारा नहीं बल्कि केवल मैनेजिंग एजेन्ट की एजेन्सियों द्वारा ही की जायगी । अन्य और भी कम्पनियाँ और प्रतिष्ठान हैं जिनके बारे में हमारे पास ऐसी ही सूचनाएँ हैं । एक कम्पनी बंगाल प्रान्त की है । उसके बारे में शायद श्री सेन को दिलचस्पी हो, जिसके मामले में मैनेजिंग एजेन्ट को सभी तरह के धागों और कपड़ों की सकल बिक्री

पर चार प्रतिशत, प्रेसिंग, रंगाई और ब्लीचिंग के सारे बिलों पर पांच प्रतिशत, हर छमाही छः प्रतिशत की दर से ब्याज, दीवाला निकालने पर कमीशन का दसगुना और त्यागपत्र देने पर बारहगुना दिये जाने की शर्तें हैं । एक अन्य कम्पनी तो पैंतालिस हजार रुपये वार्षिक और लाभ पर पांच प्रतिशत.....

एक माननीय सदस्य – वह कम्पनी कहाँ की है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–कलकत्ता की । मेरे ख्याल से इतना सब कुछ पढ़कर मुझे सदन का धीरज खत्म नहीं कर देना चाहिए । सारी कम्पनियों में कमोबेश एक जैसी ही शर्तें हैं –लाभ पर चार प्रतिशत,रंगाई और प्रेसिंग आदि के बिलों पर पांच प्रतिशत, दीवाला निकालने पर दसगुना और त्यागपत्र स्वीकार होने पर बारहगुना मुआवजा... मैं सदन का बहुत अधिक समय ले चुका हूँ ।

नारायण दास बाजोरिया के हस्ताक्षर वाली यह पुस्तिका कल हमें मिली है । मैं नहीं जानता कि इसमें कितनी सत्यता वर्णित है....

सर नृपेन्द्र सरकार – एक अन्य बाजोरिया ने हमें सूचना दी है कि इसका 7/8 भाग गलत है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–इसके अर्थ हैं कि 1/8 भाग सही है, और जो मैं बयान कर रहा हूँ उसे इसी 1/8 हिस्से वाला माना जाय ।

1- गर्म लोहे के नीचे दबाकर समतल और सलवटविहीन करना ।

2- वह रासायनिक प्रक्रिया जिसमें कपड़े का रंग उड़ाकर उसे एकदम बेदाग सफेद बना दिया जाता है ।

सर नृपेन्द्र सरकार – अपने माननीय मित्र को मैं सूचित करना चाहूँगा कि जैसा कि (सदन की) कार्यवाही से स्पष्ट हो जायगा, यह बाजोरिया कम्पनी से पारिश्रमिक लेना चाहता था, जिसे अस्वीकार कर दिया गया । पुस्तिका निकलने का यही कारण है ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – जब डाकू आपस में लड़ पड़ते हैं तभी ईमानदार व्यक्ति कुछ कर पाते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–इस पुस्तिका में सच्चाई कितनी है, शपथ लेकर उसकी पुष्टि तो मैं कर नहीं सकता ।

सर नृपेन्द्र सरकार – मैं इसकी गलतियों को इंगित कर सकूंगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–मैंने कुछ व्यक्तियों से विचार विचार-विमर्श चाहा था । उन्होंने मुझे बताया कि ऐसी ही पुस्तिकाएं पहले भी प्रकाशित हुई हैं और उन सारे तथ्यों को प्रसारित किया गया था । लेकिन प्रकाशन पर न तो हर्जाने का दावा हुआ और न ही मानहानि की कोई कार्यवाही हुई । मैं तो इतना भर ही

जानता हूँ ।

बाबू बैजनाथ बाजोरिया—इससे यह तो साबित नहीं होता कि पुस्तिका की विषय-वस्तु सही है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त—मैं तथ्यों का वर्णन कर रहा हूँ । उससे कोई बात सही साबित होती है या गलत यह और बात है । मैं एक तथ्य कह रहा हूँ जिसे आप ध्यान में रख सकते हैं ।

माननीय अध्यक्ष (सर अब्दुर्रहीम)— तथ्यों को अगर स्वीकार नहीं किया जाता तो उनका उपयोग करना, मेरे विचार से ठीक नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त—उन्हें स्वीकार भी किया जा सकता है और अस्वीकार भी । लेकिन उससे जो व्यक्ति सम्बन्धित हैं, वह यह बाजोरिया महाशय नहीं, बल्कि कोई और हैं, जो इस समय यहाँ मौजूद नहीं । आप कैसे .....

माननीय अध्यक्ष—रखे गये तथ्यों की सच्चाई पर माननीय सदस्य को पूरा विश्वास नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त—इतना तक विश्वास तो मुझे है ही कि मुझे बताया गया है कि इसी तरह के तथ्य समय-समय पर पहले भी प्रकाशित हुए हैं और सम्बन्धित व्यक्ति के खिलाफ कभी कोई कार्यवाही नहीं हुई है ।

सर नृपेन्द्र सरकार—लेकिन उनका खण्डन किया गया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त—संदेहास्पद प्रकृति वाली किसी भी बात का हवाला देना मैं नहीं चाहता । मैं किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध कुछ कहना या छोटा-मोटा लांछन भी नहीं लगाना चाहता । लेकिन यदि मुझसे ऐसा हो गया अथवा मेरी बात से यदि किसी भी व्यक्ति की साख को किसी प्रकार का आघात लगा तो उसके लिए मुझे खेद है । अपने सार्वजनिक दायित्वों का निर्वाह करने और कुछ बातों को प्रकाश में लाना आवश्यक हो जाने के कारण मुझे कुछ ऐसी बातों का हवाला देने पर मजबूर कर दिया गया है, जो मेरे लिए बहुत ही अरुचिकर है । एक-दो बातें और, उसके बाद मेरा काम पूरा । माननीय सदस्यों को ज्ञात है कि हमारे उद्योग आयात, कर के रूप में कोई संरक्षण प्राप्त किये बिना ही, पुराने समय में स्थापित किये गये थे । तब सही अर्थों में हमारे पास अग्रणी व्यक्ति थे, जिन्होंने इन मिलों की स्थापना की थी और सारे विश्व में प्रतिस्पर्धा की थी, फिर आज इन सारे संरक्षणात्मक करों के बावजूद हमारे उद्योग क्यों खराब हो रहे हैं? मैं किसी हद तक मानता हूँ कि आर्थिक मन्दी है, परन्तु इतना ही काफी नहीं है । जिन्होंने भी इन चीजों का अध्ययन करने का कष्ट

किया होगा, उन्हें सर्वत्र एक सामान्य बात जरूर दिखलाई दी होगी । वह यह है कि जब तक उद्योग का पहला अगुआ, जो वास्तव में उसका सही कप्तान होता है, जीवित रहता है तब तक तो वह उद्योग समृद्ध होता है और वट वृक्ष की तरह प्रगति करता है लेकिन जब वह नहीं रह जाता और ये दायित्व उसके ऐसे उत्तराधिकारियों को मिल जाते हैं जिनमें कप्तान जैसी निपुणता नहीं होती, तब उन उद्योगों की स्थिति खराब होने लगती है और प्रायः वे नष्ट हो जाते हैं । अगर कोई व्यक्ति अपनी योग्यता सिद्ध किये बिना, महज वंशानुक्रम के फलस्वरूप मैनेजिंग एजेन्ट बन जाता है तो उद्योग में हानि होने का कारण यही है कि मैनेजिंग एजेन्ट बना व्यक्ति उपयुक्त नहीं है । मान्यवर, इन महानुभावों द्वारा वित्त उपलब्ध कराने के बारे में हमें बहुत कुछ बताया जा चुका है । मैं इस मामले का व्यापक विश्लेषण तो नहीं करूँगा लेकिन मैं कुछ सार्वजनिक तथ्यों की ओर माननीय विधि सदस्य का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ । करीम भाई समूह क्यों नष्ट हो गया? वित्तीय सहायता की इस विषैली प्रणाली के कारण ही क्या ऐसा नहीं हुआ? बारह में से आठ मिलों का दिवाला निकल गया, जिसमें जनता के तीन करोड़ रुपये डूब गये । यह धनराशि लगभग उतनी ही है जितनी कि अहमदाबाद के मिलों की समस्त पूँजी है । पुनः, कुछ अन्य मिलों को भी इसी तरह से नुकसान हुआ । मेरे ख्याल से हमें उन बातों में नहीं पड़ना चाहिए जो सबको ज्ञात हैं । एक अन्य मिल थी, जिसकी पूँजी बीस लाख रुपये थी । लेकिन मैनेजिंग एजेन्टों ने इसे रकम उधार दी थी जिससे कि बीस लाख रुपयों की पूँजी घटकर दो लाख रुपये रह गयी । और अब मैनेजिंग एजेंटों का कर्ज चुकाने के लिए शेयर जारी किये गये । इसी प्रकार एक अन्य मामले में कम्पनी पर मैनेजिंग एजेंटों के कर्ज बकाया थे और कम्पनी से यह कहा गया कि वह इन क़र्जों को ऐसे ऋण-पत्रों और शेयरों में बदल दें जिन पर सामान्य की अपेक्षा तीन गुना मताधिकार हो । मेरे अपने प्रान्त के एक मामले में एक रुपये के शेयर पर दो मतों का अधिकार एक व्यक्ति ने पा लिया, जब कि मूलतः दस रुपये के शेयर पर भी एक से अधिक मतों का अधिकार नहीं था । यदि मैनेजिंग एजेंट धन का कोई निवेश करता है तो यह बात समझ लेनी चाहिए कि यह उस फर्म के गले में फांसी का फंदा है । घाटे को पूरा करने के लिए आप पाँच या दस प्रतिशत जमा करके किसी के साथ भी सट्टा कर सकते हैं । जितनी रकम आप दाँव पर लगाना चाहते हों उसका दस प्रतिशत आप उसे दें, वह उसे स्वीकार कर लेगा । बात यह है कि शेयरों पर मैनेजिंग एजेंट का अधिकार होता है । जब वह अग्रिम धन देता है तो घाटा होने की स्थिति में अपनी रकम के लिए वह शेयर पूँजी पर निर्भर रहता है, मैनेजिंग एजेंट पर किसी प्रकार का दोषारोपण नहीं करता । वास्तव में मैं इस वित्तीय सहायता के लिए उसे धन्यवाद देता हूँ लेकिन असल बात यह है कि ऐसी वित्तीय सहायता देना उसके

अनुकूल है । चूँकि प्रतिभूति उसके पास ही रहती है और शेयर के धन पर उसका पूरा नियंत्रण रहता है इसलिए वह जो भी रकम उधार देता है उसकी भरपाई के लिए आमतौर पर वह सदा आश्वस्त रहता है । अन्यथा क्या कारण है कि कर्ज के रूप में रकम देने के बजाय मैंनेजिंग एजेंट शेयर नही खरीदता? वे आसानी से शेयर खरीद सकते हैं और ऐसा न करने का कोई कारण अवश्य होगा । ऐसा इसलिए है क्योंकि वह इन शेयरों को अपने कर्ज की जमानत के तौर पर रखता है । हमारे देश में औद्योगिक प्रगति किसी हद तक ऐसी वित्तीय सहायता और ऐसे तरीकों के कारण ही अवरुद्ध है । टैरिफ बोर्ड तथा अन्य सभी ने इसे स्वीकार किया है । अन्त में केवल एक ही बात रह जाती है जिसे मैं कहना चाहता हूँ और वह यह है कि वर्तमान मैंनेजिंग एजेंसी प्रणाली ने अकुशलता और अदक्षता को ही बढ़ावा दिया है । दीवालिया घोषित होने की बहुतेरी घटनाएं इसी अकुशलता और अदक्षता के कारण हुई हैं । टैरिफ कमेटी की रिपोर्ट का एक अंश मैं पढ़ने जा रहा हूँ ।

"हमें सन्तोष है कि भारत की कोई भी मिल, जिसे उचित निपुणता और मितव्ययिता से चलाया गया हो, वह आर्थिक मन्दी के कारण दीवालिया घोषित किये जाने के लिये अब तक बाध्य नहीं हुई है । अब तक दीवालिया घोषित हुई मिलों में एक के भी पुनरुद्धार की तब तक थोड़ी भी सम्भावना नहीं है जब तक की बाजार में उछाल न आ जाय । अहमदाबाद में हमें मिले प्रमाणों के अध्ययन इस सम्बन्ध में शिक्षाप्रद सिद्ध होंगे । वहां उसके आसपास के केन्द्रों में दीवालिया घोषित हुई मिलों की एक लम्बी सूची हमारे सामने रखी गयी और लगभग सभी मामलों में इस बात के स्पष्ट प्रमाण मिले कि उनका दीवालिया घोषित होना अकुशलता और अदक्षता का परिणाम था और कुछ मामलों में बेईमानी का ।"

संक्षेप में मेरा निवेदन यह है कि उद्योग शेयरधारकों और केवल मैंनेजिंग एजेंटों से ही ताल्लुक नहीं रखता । देश की सारी जनता, उनकी आर्थिक स्थितियाँ, रोजगार, जीवन स्तर, और वे सारी चीजें इनसे प्रभावित होती हैं जिनसे भौतिक कल्याण हो सकता है । इसके साथ विभेदक संरक्षण नीति के सम्मिश्रण से इस मामले का सम्बन्ध समस्त जनता से हो जाता है । अगर ये उद्योग खुद अपने पैरों पर खड़े होने लायक नहीं हैं तो आप जनता से इन्हें बनाये रखने को नहीं कह सकते, और तब तो और भी नहीं जब दूसरी ओर आप ऐसा तरीका अपना रहे हैं जो फिजूलखर्ची का है और जो इन्हें निपुण व्यक्तियों की सेवाओं से वंचित कर देता है । मैं चाहता हूँ कि हमारे उद्योगों का विस्तार हो और उनकी संख्या बढ़े । मैं चाहता हूँ कि वह नया सवेरा जल्द से जल्द आये जब हमें विदेशों से कोई भी वस्तु आयात करने की आवश्यकता ही न रहे । मैं चाहता हूँ कि हमारे उद्योग इतनी उन्नति कर लें कि हम

खुले बाजार में शेष संसार से प्रतिस्पर्धा करने में समर्थ हो सकें । ऐसा तभी सम्भव है जब कि 'मानव–कारक' पर उचित ध्यान दिया जाय और इस मानव–कारक पर तभी उचित ध्यान दिया जा सकता है जब मैनेजिंग एजेंसी की इस पुरानी और बेकार प्रणाली को इतना महत्व देना बन्द कर दिया जाय ।

मान्यवर, यह आशा करते हुए कि औद्योगिक उन्नति और न्याय के हित में तथा नये उद्योगों के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए, मेरे द्वारा उनके समक्ष रखे गये प्रस्तावों को, माननीय विधि सदस्य के विरोध के बावजूद, इस सदन के माननीय सदस्य स्वीकार कर लेंगे, मैं अपना संशोधन–प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ ।



मैनेजिंग एजेण्ट को क्षतिपूर्ति क्यों ?

मैं समझता हूँ कि माननीय विधि सदस्य को विदित होगा और यदि उन्हें न भी विदित हो तो मैं उन्हें बताना चाहूँगा कि कलकत्ता की अधिकांश कम्पनियों (की संविदाओं) में ऐसा कोई अनुच्छेद नहीं हैं जिसमें कम्पनी के दिवालिया घोषित होने की स्थिति में मैनेजिंग एजेन्टों को क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार मिलता हो ।

सर नृपेन्द्र सरकार – अनुच्छेद की आवश्यकता ही नही, यह तो सामान्य कानून के अन्तर्गत है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – तब भी मुझे ऐसे किसी मामले की जानकारी नहीं है जिसमें किसी एजेंट ने क्षतिपूर्ति का दावा किया हो, और मैं यह विश्वास करने को तैयार नहीं कि ऐसा सामान्य कानूनों के ज्ञान के कारण हुआ । लोगों ने ऐसा कोई कदम नहीं उठाया और कोई हलचल नहीं की । अगर ऐसे मामले हों भी तो उनकी संख्या बहुत ही कम होगी, जबकि उन मामलों की संख्या, जिसमें मैनेजिंग एजेंटों के क्षतिपूर्ति दावे का भुगतान करने के लिए अपनी जेब से कम्पनी को पैसे देने की मांग शेयरधारकों से की गयी हो, कहीं अधिक होगी । अगर वर्तमान स्वरूप में ही इस अनुच्छेद को बनाये रखा जाय तो, इसका क्या परिणाम होगा । कल्पना करिये कि किसी कम्पनी ने अपने शेयर धारकों से शेयर मूल्य के मात्र पच्चीस प्रतिशत की ही मांग की हो और खरीदे गये शेयरों पर पचहत्तर प्रतिशत और उन्हें देना अभी शेष हो । अब अगर यह कम्पनी प्रबन्ध तंत्र और मैनेजिंग एजेंट की अकुशलता और अक्षमता-जोकि लापरवाही या चूक के अन्तर्गत न आते हों-के कारण दीवालिया

यह भाषण 30 सितम्बर, 1936 को लेजिस्लेटिव असेम्बली की कार्यवाही की सूची में क्रम संख्या38 पर प्रस्तुत अपने संशोधन के समर्थन में पंतजी द्वारा दिया गया था । यह संशोधन 87-बी० की विषयवस्तु से सम्बन्धित था । अपने इस संशोधन के माध्यम से पंतजी भारतीय कम्पनी (संशोधन) बिल, जिस पर उस समय विचार चल रहा था, की धारा 42 में सम्मिलित अनुच्छेद 87- बी के उप अनुच्छेद (डी) के कुछ हिस्सों को निरस्त करवाना चाहते थे ।

घोषित हो जाय और करार की शर्तों के अन्तर्गत मैंनेजिंग एजेंट 10 वर्षों के कमीशन का दावा इस आधार पर करता है कि समझौते के अनुसार दीवालिया घोषित होने की दशा में वह इस क्षतिपूर्ति का अधिकारी है। ऐसी दशा में शेयर-धारकों से उनके शेयरों की बकाया पचहत्तर प्रतिशत राशि माँगने के अलावा उनसे नयी मांग भी उठ सकती है ताकि मैंनेजिंग एजेंट को मुआवजा दिया जा सके। ऐसी व्यवस्था को इस सदन में कोई भी स्वीकार करेगा, यह मेरी समझ से परे है।

अब एक क्षण के लिए आप कल्पना करें कि कोई व्यक्ति भारी संख्या में शेयर बटोर लेता है। वह किस प्रकार ऐसा कर सकता है? किसी भी अन्य व्यक्ति की अपेक्षा शेयर के मूल्यों में हेराफेरी मैंनेजिंग एजेंट अधिक कारगर ढंग से कर सकता है। अगर वह यह देखता है कि ऐसे लोग शेयर खरीदने जा रहे हैं जिनका खरीदना उसे पसन्द नहीं तो वह शेयरों के मूल्य बड़ी सरलता से बढ़ा सकता है। मैं लोकनाथन की पुस्तक 'ओल्ड टेस्टामेन्ट' पढ़ने नहीं जा रहा, मुझे लगता है कि माननीय विधि सदस्य इसमें उन प्रासंगिक अंशों को पढ़ चुके होंगे जिनमें मैंनेजिंग एजेंट द्वारा शेयरों में हेराफेरी का उल्लेख है। अगर कोई व्यक्ति शेयरों को बटोर ले जाता है तो वह क्या करता है? उसे शेयर पाने के लिए उनके सामान्य और औसत मूल्य से अधिक देना होता है। फलस्वरूप शेयरधारकों और मैंनेजिंग एजेंटों को उनके शेयरों के पूरे मूल्य से भी अधिक मिल जाता है। अगर इतनी असाधारण घटना हो भी जाय तो भी मैंनेजिंग एजेंट की कोई हानि नहीं होगी। मैं सदन से यह विचार करने का आग्रह करता हूँ कि क्या अधिकांश मामलों में कम्पनी के अपने मैनेजिंग एजेण्ट ही (अपने निकम्मेपन के कारण) कम्पनी डूबने के दोषी नहीं हैं? अगर कम्पनी तरक्की करती है और फलती-फूलती है तो मनेजिंग एजेंट को ही लाभ में भारी हिस्सा मिलता है और अगर कम्पनी दीवालिया हो जाती है तो भी उसे ही शेयरधारकों की पूँजी का बड़ा हिस्सा मिलता है। यह तो वही पुरानी 'चित भी मेरा, पट भी मेरा' वाली कहानी हुई। दोनों ही हालत में शेयरधारकों को मैनेजिंग एजेण्ट की जेबें भरनी होंगी। अगर कम्पनी चलती रहती है तो उसे लाभ मिलना सुनिश्चित है और अगर कम्पनी ठप हो जाय तो भी उसे मुआवजा मिलेगा ही। मैं चाहूँगा कि सदन इस बात पर विचार करे कि कम्पनी के डूबने का दोष शेयरधारकों का अधिक है या उसके मैंनेजिंग एजेंटों का, क्योंकि अन्ततः मैंनेजिंग एजेंट को जो कुछ भी दिया जाता है वह शेयरधारकों से ही तो लिया जाता है। उसे चाहे आप पूँजी की रकम से दें, निवेशों से दें या कम्पनी की सम्पत्ति से दें या इसके लिए शेयरधारकों से नई मांग करें, प्रत्येक मामले में उसे आप शेयरधारकों की

आस्तियों (एसैट्स) में से ही देते हैं । अगर आप मैनेजिंग एजेंट को कुछ देना चाहें तो आपको वह शेयरधारकों से ही लेना होगा । इस विधेयक में किया गया प्रस्ताव दूरगामी प्रकृति का है । मैनेजिंग एजेंट की चूक और लापरवाही के अलावा कम्पनी डूबने का और भी कोई कारण क्यों न हो, वह उस कम्पनी को मुआवज़ा देने पर बाध्य कर देता है । यह तय कर पाना कि 'चूक और लापरवाही' किसे कहा जाय, अत्यन्त कठिन है । इसलिए मेरा अनुरोध है कि कम्पनियों के दीवालिया घोषित होने के मामलों में मैनेजिंग एजेंट को कोई भी मुआवजा पाने का हकदार नहीं होना चाहिए । मैं माननीय विधि के सदस्य से उनके सामने एक अन्य उदाहरण रखने की अनुमति चाहूँगा इसकी ओर भले ही उनका ध्यान न गया हो तो भी यह विचार करने योग्य है । उन्होंने इस कठिन स्थिति का उल्लेख किया है जो बहुत कम ही उत्पन्न होती है । ऐसी परिस्थिति में एक व्यक्ति किसी मैनेजिंग एजेंट को नीचा दिखाने के उद्देश्य से एक षड्यंत्र रचता है और पूरी कम्पनी तथा प्रत्येक शेयर-धारकों को गुमराह करता है ताकि कम्पनी का दीवाला निकल सके, लेकिन ऐसी कठिन परिस्थितियों के आधार पर बनाये गये कानून कभी अच्छे कानून नहीं होते । ऐसा हो पाना मेरी कल्पना से परे है । इसके विपरीत क्या यह सम्भावना अधिक नहीं है कि, अगर कोई मैनेजिंग एजेंट कम्पनी को चलाते रहने की अपेक्षा मुआवजा ले लेना ज्यादा फायदेमंद समझे तो वह कम्पनी के मामलों में ऐसी हेरा–फेरी कर दे कि कम्पनी का दीवाला निकल जाय । इसके फलस्वरूप मुआवजे के रूप में उसे एक बड़ी रकम मिल जायेगी । इसलिए कठिनाई से ही उत्पन्न हो सकने वाली ऐसी परिस्थितियों की उपेक्षा कर दी जानी चाहिए । आपको यह सिद्धान्त स्वीकार होना चाहिए कि–भले ही वह दुर्भाग्य की अत्यन्त दुर्लभ घटना हो,आमतौर पर मैनेजिंग एजेंट ही दोषी होता है, और उसे हानि की स्थिति में शेयर धारकों से हिस्सेदारी करनी चाहिए, न कि कम्पनी का दीवाला निकलने पर अपने मुआवजे का दावा कर उसे शेयरधारकों की विपत्ति को और बढ़ा देना चाहिए ।



चुनाव में सरकारी हस्तक्षेप

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम)—सदन में प्रस्ताव पर अब पुनः बहस शुरू होगी ।

श्री एस० सत्यमूर्ति— महोदय, मैं प्रस्तावित करता हूँ कि प्रश्न अब रखा जाय ।

सर हेनरी क्रैक (गृह सदस्य) — महोदय, खेद है कि मेरी वक्तृता का सूत्र मुझसे कहीं छूट गया है — मैं भाषण के बीच में ही था और पक्के तौर पर मैं नहीं कह सकता कि मैं इसे दुबारा शुरू करने की स्थिति में हूँ ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) — यदि सदन और देर तक नहीं बैठना चाहता तो मैं स्थगित कर दूँगा ।

माननीय सदस्यगण — हमें बात जारी रखनी चाहिए ।

सर हेनरी क्रैक — महोदय, मेरा ख्याल है कि मैं चुनाव के कुछ पहलुओं के बारे में सरकार की नीति प्रतिपादित कर रहा था । मेरे विचार से मैं उस मुद्दे को समाप्त भी कर चुका था । अब मैं उन आरोपों पर आऊंगा जो सरकारी अधिकारियों द्वारा चुनाव में व्यक्तिगत हस्तक्षेप किये जाने के बावत मेरी जानकारी में लाये गये हैं । मैंने इन आरोपों के सम्बन्ध में सभी राज्य सरकारों से पूछताछ कर ली है और मोटे तौर पर जो जवाब हमें मिले हैं, वे इस प्रकार हैं । बर्मा सरकार ने कहा कि सिर्फ एक आरोप लगाया गया था, जिसकी जाँच की गयी और गलत पाया गया । पंजाब सरकार ने कहा कि एक मामले में यह आरोप लगाया गया कि एक सरकारी कर्मचारी ने चुनाव को प्रभावित करने के लिए अपने सरकारी पद का इस्तेमाल किया । सम्बंधित सरकारी कर्मचारी एक अधीनस्थ जज था और उसकी पत्नी नयी विधान सभा के लिए किसी महिला सीट की उम्मीदवार है या थी । मैं समझता हूँ कि सदन सहमत होगा कि यह सज्जन कठिन परिस्थिति में फँस गये थे — एक ओर

प्रान्तों में नवगठित विधायिकाओं के लिए होने वाले चुनावों में सरकारी कर्मचारियों द्वारा हस्तक्षेप के मुद्दे पर चर्चा के लिए डा० खान (सीमान्त गांधी, खान अब्दुल गफ्फार खाँ, के बड़े भाई) ने 24 सितम्बर, 1936 को एक कामरोको प्रस्ताव पेश किया था । बार-बार हो रहे हस्तक्षेप के मध्य पंत जी ने 1 अक्टूबर, 1936 को ये विचार व्यक्त किये थे ।

थी पत्नी के प्रति निष्ठा तो दूसरी ओर सरकारी कर्मचारी के आचरण सम्बन्धी नियमावली । तथापि यह इन्हें स्मरण करा दिया गया कि यह उनका कर्तव्य है कि वस स्वयं को हर तरह के हस्तक्षेप से मुक्त रखे । आगे मैं बिहार पर आता हूँ, जहाँ मौजूदा मंत्रियो के चुनाव दौरों में भाग लेने की कुछ सामान्य आलोचनाओं के अतिरिक्त अधिकारियों के विरुद्ध बहुत कम शिकायतें थी । कुछ शिकायतें की गयी जैसे कि कुछ जिला मजिस्ट्रेटों ने जिलो में मंत्रियों के दौरों के समय स्थानीय लोगों को मुलाकात के लिए आमंत्रित कर रखा था । इस तरह के लांछन के खण्डन की भी शायद कोई आवश्यकता नहीं है, और मुझे नही लगता कि यह सरकारी कर्मचारी के आचरण के उल्लंघन सम्बन्धी कोई आरोप भी है । फिर कुछ आरोप व्यक्तिगत रूप से महामहिम राज्यपाल के विरुद्ध लगाये गये है, लेकिन मेरे द्वारा इन पर कोई विचार इस एसेम्बली के नियमो के विरुद्ध होगा । मैं इनका उल्लेख सिर्फ यह बताने के लिए कर रहा हूँ कि ये आरोप कितने हवाई है और यदि मेरे द्वारा इन पर विचार नियमान्तर्गत होता तो मैं समझता हूँ कि मैं पूरी तरह इनका खण्डन कर सकता था ।

इसके बाद हम संयुक्त प्रान्त पर आते है, जहाँ मैं देखता हूँ कि एक पत्र द्वारा कई आरोप लगाये गये हैं, जो इस एसेम्बली के अधिकांश सदस्यों को रफी अहमद किदवई नामक किसी सज्जन द्वारा भेजे गये हैं । मेरे विचार से वह संयुक्त प्रान्त की प्रदेशीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष हैं ।

श्री श्रीप्रकाश–आखिरकार आपको सही सूचना दी गयी ।

सर हेनरी क्रेक–सामान्यतः मुझे सही सूचनाएं दी जाती हैं । (हँसी) ।
माननीय सदस्य पायेंगे कि आमतौर पर मेरी सूचनाएं सही होती हैं । मैंने संयुक्त प्रान्त की सरकार से पूछा था कि इन सज्जन द्वारा लगाये गये आरोपों के सम्बन्ध में उन्हें मुझसे कुछ कहना चाहिए तो मुझे जो उत्तर मिला, वह यह था कि उनके द्वारा लगाये गये आरोप अधिकांशतः मात्र झूठे थे । मैं समझता हूँ कि इन सज्जन की पार्टी अपने चुनाव अभियान में अधिकांशतः इस तर्क का सहारा ले रही है कि उनके विरोधी सरकार समर्थित पार्टी से सम्बन्धित है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – जो कि सच है ।

सर हेनरी क्रेक – और उन्हें ऐसी आशा है कि इस प्रचार द्वारा वे अपने विरोधियों की लोकप्रियता कमजोर कर सकेंगे और साथ ही यदि वे खुद चुनाव हार

गये तो उनके समक्ष एक अच्छा बहाना रहेगा, इस तरह के प्रचार के लिए तर्क जुटाने में वे अत्यन्त व्यस्त हैं । इसी तरह की बहस संयुक्त प्रान्त की विधान परिषद में कुछ दिन पहले हुई थी, जब इसी तरह के आरोप लगाये गये थे, लेकिन इनका सम्बन्ध विधायिका के चुनावों से न होकर स्थानीय चुनावों से था । यह इसी वर्ष के जून की बात है और सरकारी पक्ष के सम्बन्धित सदस्य ने अपनी लम्बी वक्तृता में इसका जवाब देते हुए यह सिद्ध किया कि आरोप के अधिकांशतः हिस्से पूरी तरह निर्मूल थे......... ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या उत्तर प्रदेश की विधान परिषद में कोई कांग्रेसी सदस्य भी है?

सर हेनरी क्रेक – मुझे नहीं मालूम । रफी अहमद किदवई के इस पत्र में एक ठोस आरोप लगाया गया था, जो मिस्टर हाबर्ट तथा मिस्टर डार्लिंग नाम के दो सज्जनों के विरुद्ध था, जो संयुक्त प्रान्त में कमिश्नर के पद पर नियुक्त थे । पत्र में कहा गया है, "सर्वश्री हाबर्ट तथा डार्लिंग जैसे कमिश्नरों ने कभी भी स्वयं को इन प्रतिबंधों से बंधा नहीं पाया", प्रतिबंध जो कि सरकारी कर्मचारियों के आचरण से सम्बन्धित हैं । "हाल ही में मिस्टर हाबर्ट बस्ती गये, जहाँ उन्होंने सभी संभावित गैर कांग्रेसी उम्मीदवारों से साक्षात्कार किया और एक को जिले के एक चुनाव क्षेत्र के लिए चुन लिया और दूसरों को अपने उम्मीदवार के पक्ष में बैठा दिया । खलीलाबाद की सीट पर चुनाव लड़ रहे उम्मीदवारों में जब उन्हें कोई भी कांग्रेस के विरुद्ध चुनाव जीतता न दिखा तो उन्होंने एक सज्जन (जिनका नामोल्लेख न करना ही बेहतर होगा) को उस चुनाव क्षेत्र से चुनाव लड़ने के लिए तैयार किया जो कि मेरी राय में नेशनलिस्ट एग्रीकल्चरिस्ट पार्टी के उम्मीदवार के रूप में ग्रहण कर लिये जायेंगे ।" इन सज्जन के बारे में और भी बहुत कुछ है । संयुक्त प्रान्त की सरकार की रिपोर्ट है कि चुनाव के सम्बन्ध में मिस्टर हाबर्ट ने जो एकमात्र कदम उठाया वह था अपने मण्डल में प्रतिद्वन्द्वी उम्मीदवारों के बीच कुछ मतभेद समाप्त करना........ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह उचित है?

सर हेनरी क्रैक – मैं नहीं समझता कि कानून की शाब्दिक परिभाषा के अन्तर्गत यह अनुचित है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–क्या यह चुनाव में दिलचस्पी लेने का द्योतक नहीं है?

सर हेनरी क्रैक – मैं ऐसा नहीं समझता । यदि दो उम्मीदवारों ने अपने मतभेदों को कमिश्नर के समक्ष रखा, जैसा कि मैं समझता हूँ कि इस मामले में हुआ, तो मैं समझता हूँ कि कमिश्नर के लिए यह अनुचित नहीं है......... ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – उन्होंने उनको एम्पायर के रूप में नियुक्त किया?

सर हेनरी क्रैक–मैं समझता हूँ कि उन्होंने अपने मतभेदों को उनके सामने रखा और उनसे हल करने को कहा............. ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकारी कर्मचारियों को इसकी अनुमति है?

सर हेनरी क्रैक – मैं नही समझता कि यह अनुचित है । यह निश्चित रूप से न तो हस्तक्षेप है और न ही किसी दल विशेष से स्वयं को जोड़ना है । मैं यह कहूँगा कि नियमों को कड़ाई से पढ़ने पर भी, मुझे नहीं लगता कि इससे नियमों का शब्दशः उल्लंघन हुआ है अथवा नियमों के पीछे अन्तर्निहित भावना का उल्लंघन हुआ है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–तो क्या इस तरह सरकारी कर्मचारियों का यह हस्तक्षेप उचित है?

सर हेनरी क्रैक – श्री रफी अहमद किदवई के पत्र में मिस्टर हार्बर्ट के विरुद्ध लगाये गये आरोपों का यही एकमात्र आधार है । जहां तक दूसरे अधिकारी का प्रश्न है, राज्य सरकार का कथन है कि जहां तक उसकी जानकारी है इन आरोपों का कोई आधार नही है । उसने तो उतना हानिकारक काम भी नहीं किया है, उसने चुनाव में किसी भी रूप में किसी तरह की दिलचस्पी नहीं ली । पत्र में आगे यह भी कहा गया है कि ग्राम सुधार में लगे सरकारी अमले को चुनाव प्रचार के साधन के रूप में इस्तेमाल किया गया । मुझे बताया गया है कि यह पूरी तरह से गलतबयानी है और इसका कोई आधार नही है । अन्त में मैं उन आरोपों पर आता हूँ, जो कोर्ट आफ वार्ड्स द्वारा जारी परिपत्र से सम्बन्धित हैं, लेकिन यह ऐसा मसला है जिसमें कुछ समय लगेगा । अब मुझे अनुमति दी जाय कि मैं अपनी टिप्पणी को बहस के अगले दिन की शुरुआत तक के लिए सुरक्षित रख सकूँ ।

●

पंजीकृत लेखाकार तथा चार्टर्ड लेखाकार

मान्यवर, मैंने माननीय विधि सदस्य का भाषण उसी तल्लीनता और समादर के साथ सुना, जो इस दायित्वपूर्ण पद पर बैठे सज्जन को प्राप्य है । मैं इस प्रश्न पर बिना किसी लाग–लपेट के विचार करना चाहता हूँ । तथापि मुझे खेद है कि माननीय विधि सदस्य ने दारुण स्थिति में रह रहे इन निरीह लेखाकार (एकाउंटेंट) वर्ग पर आरोप लगाये, जिनका अपराध मात्र इतना है कि उन्होंने एक पदनाम हासिल करने का प्रयत्न किया, जिसके अभाव में उन्हें धोखेबाज, तिकड़मी, जालिया, अवसरवादी आदि–आदि कहलाने की असुविधाजनक स्थिति से होकर गुजरना पड़ता है । उन्होंने अपने व्यंग्य-बाण इन लोगों पर छोड़े हैं । मैं समझता हूँ कि उन्होंने मक्खी को मारने के लिए भारी भरकम तोप का इस्तेमाल किया है । यहाँ दूसरे ऐसे लोग हैं जिनके विरुद्ध वे अपने अद्वितीय व्यंग्य एवं उपहास के शब्द–सामर्थ्य का इस्तेमाल कर सकते है, लेकिन एकाउन्टेंट का यह छोटा सा समूह, जो कठिन श्रम से किसी तरह अपना जीवन-यापन करता है और जिसका अपराध मात्र इतना है कि उसने अपने स्तर को उठाने के लिए सरकार से सीधी अपील की और प्रतिवेदन दिया तथा सदन का समर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया । वह विधि सदस्य के व्यंग्य-उपहास की जानी–पहचानी शैली का शिकार हुआ । महोदय, इस प्रस्ताव के सन्दर्भ में मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से निवेदन करना चाहता हूँ कि न तो वे उन लोगों द्वारा मातृभूमि – मुझे आशा है कि जिससे यहाँ किसी को नफरत न होगी – के नाम पर की गयी इस अपील के बहाव में ही बह जायें और न ही इससे सिर्फ इसलिए बिदक जायें कि यह अपील इस ढंग से की गयी है । आज की स्थिति इस प्रकार है । इस देश में कोई लेखाकार या आडिटर जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य कर सकता है, या उससे करने को कहा जा सकता है, वह कम्पनियों के आय-व्यय के लेखे–जोखे से ही सम्बन्धित है । इन पंजीकृत लेखाकारों को कानून द्वारा यह

यह भाषण पंतजी द्वारा लेजिस्लेटिव असेम्बली में 6 अक्तूबर, 1936 को दिया गया था जब सदन में श्री सुशील चन्द्र जैन द्वारा प्रस्तुत और उस दिन सदन की कार्यवाही में क्रम संख्या 81 पर अनुसूचित संशोधन पर विचार किया जा रहा था । श्री सेन का संशोधन बिल की धारा 75 की धारा(बी) को निरस्त करने और धारा (सी) को धारा (बी) कर देने के बारे में था ।

अधिकार प्राप्त है और उसे इस योग्य माना भी जाता है कि वे मेसर्स टाटा एण्ड कम्पनी सरीखी कम्पनियों के करोड़ों के आंकड़ों का परीक्षण और सत्यापन करें । इसलिए जहां तक उनकी योग्यता और विश्वसनीयता का सम्बन्ध है, इसमें कोई विवाद नहीं है, क्योंकि किसी भी व्यक्ति को इन पंजीकृत लेखाकारों से लिये गये कार्य से अधिक दायित्वपूर्ण कार्य नहीं सौंपा जा सकता । उन्हें इस देश में स्थित किसी भी फर्म, चाहे वह कितनी भी बड़ी हो उसका व्यापार कितना भी विस्तृत हो, के हिसाब-किताब की जाँच करने और उसे सत्यापित करने के सुयोग्य माना जाता है । इन हालात में, मैं समझता हूँ कि इस परिणाम पर पहुँचना कि जहाँ तक क्षमता, योग्यता, दायित्वबोध और प्रतिष्ठा का प्रश्न है, वे लेखाकारों के किसी अन्य वर्ग से पीछे नहीं है । आप किसके लिए बेहतर और ऊँची स्थिति चाहते हैं? वे लोग कौन सा उत्कृष्ट कार्य करते है, जिन्हें बेहतर और अधिक सम्माननीय पद दिये गये हैं? क्या इस देश में टाटा आयरन और स्टील वर्कस के ममले मे सम्बन्धित लेखा–जोखा के परीक्षण से अधिक दायित्वपूर्ण और श्रमसाध्य अन्य कोई कार्य हो सकता है? यदि इस तरह की फर्मों का परीक्षण इन लेखाकारो और आडीटरो की कार्य सीमा में है तो मैं कोई कारण नही पाता कि आखिर क्यों इन्हें शैक्षिक योग्यता, क्षमता या कार्य कुशल्ता में कमतर माना जाये । क्या इस देश में लेखाकारों या आडीटरों के किसी समूह द्वारा, जिन कम्पनियों का मैंने जिक्र किया है उनके हिसाब–किताब के परीक्षण से अधिक दायित्वपूर्ण कार्य की कल्पना आप इस समय या इसके बाद कर सकते हैं? जब उन्हें ऐसा काम सौंपा जा सकता है तो मेरा कहना है कि वे इस बेहतर से बेहतर पदनाम के सर्वथा हकदार हैं जो हम उन्हें दे सकते हैं और इन परिस्थितियों में उनके निवेदन को उस निरादर के साथ नही देखना चाहिए, जैसा अब तक किया गया है ।

फिर, श्रीमन्, मैं समझता हूँ कि माननीय विधि सदस्य द्वारा दिये गये तर्क दो श्रेणियों में आते हैं । प्रथम तो उनका कहना है कि जिन देशों में चार्टर्ड एकाउन्टेंट है, वहां इनके लिए कानूनी प्राविधान नहीं है, इसलिए इन लोगो को भारतीय कम्पनी एक्ट में संशोधन करके चार्टर्ड एकाउंटेंट की पदवी नहीं मिलनी चाहिए । दूसरी आलोचना यह है कि हमारे यहाँ इस सम्बन्ध में कोई स्वायत्त संस्था नहीं है, सरकार पर स्वयं ही लेखा–जोखा सम्बन्धी पेशों का बोर्ड का दायित्व है । इसलिए इन लोगों को पंजीकृत लेखाकार नही कहा जाना चाहिए । अब, श्रीमन् दूसरे तर्क की बात है मुझे सचमुच यह बात समझ में नहीं आती कि सरकार आखिर उन लोगों को चार्टर्ड एकाउन्टेंट का नाम क्यों नहीं देती जो पूर्णतया उसके नियंत्रण में हैं, जबकि वह दूसरी

संस्थाओं को यह पदनाम देने के लिए अधिकृत करने को तैयार है? इसका मतलब तो यह कि महज इसलिए कि कोई व्यक्ति पूर्णतया मेरे अधीन है और चूँकि मैं लेखाकार परीक्षा से सम्बन्धित पाठ्यक्रम तथा अन्य सभी चीजों को नियंत्रित कर सकता हूँ, जो की जानी चाहिए, इसलिए उसे चार्टर्ड एकाउन्टेंट नहीं कहा जाना चाहिए, लेकिन मैं इन दायित्वों को किसी अन्य स्वतंत्र व्यक्ति को सौंप दूँ तो वह ऐसा कर सकता है । यह वास्तव में तर्क शून्य बात है । सरकार के पास लेखाकार-पाठ्यक्रम तथा परीक्षा प्रणाली को नियंत्रित करने का पूरा अधिकार है, इसलिए स्तर के नीचे गिरने का भी कोई खतरा नहीं है । इस बात का खतरा भी नहीं कि इन लोगों के प्रति नरमी का रवैया या ढिलाई बरती जायेगी, क्योंकि सरकार स्वयं ही लेखा सम्बन्धी पेशे को पूरी तरह से सम्भालती है । वह पाठ्यक्रम तैयार करती है,पाठ्यक्रम के स्तर का निर्धारण करती है, परीक्षाओं के संचालन तथा अन्य सब कुछ इस सम्बन्ध में करती है, लेकिन हमें बताया गया कि चूँकि इस पेशे की देखरेख किसी स्वायत्त संस्था के हाथ में नहीं है, इसलिए उन लोगों को निम्न दर्जा दिया जाना चाहिए । सचमुच यह अत्यन्त ही अनर्गल तर्क है । जब हमारे यहाँ स्वतंत्र स्वायत्त विश्वविद्यालय थे, जो इस देश के चिकित्सा के व्यवसाय सम्बन्धी मामलों को देखते-भालते थे और जो चिकित्सा सम्बन्धी डिग्रियाँ दिया करते थे, तब हमसे यह कहा गया था कि उन डिग्रियों को अन्य देशों में, विशेषकर ब्रिटेन में मान्यता नहीं दी जा सकती, क्योंकि इन स्वायत्त संस्थाओं के पाठ्यक्रम तथा परीक्षा प्रणाली की जांच-पड़ताल के लिए कोई उत्तरदायी राजकीय अधिकारी नहीं है उस समय चिकित्सा सम्बन्धी भारतीय डिग्रियों के विरुद्ध यह तर्क दिया जाता था कि जिन लोगों को यह डिग्रियां मिली हैं, वे ऐसी स्वायत्त संस्थाओं द्वारा दी गयी हैं जो सरकार के नियन्त्रण में नहीं थीं और परिणामस्वरूप इस बात का खतरा था कि कहीं स्तर न गिर जाय क्योंकि सरकार का इसमें कोई हस्तक्षेप नहीं था, इसलिए उन्हें ब्रिटेन से प्राप्त मेडिकल डिग्रियों के समकक्ष मानना अनुचित था । उस समय इस दलील पर जोर दिया गया था और हम जानते है कि कैसे इस देश पर चिकित्सा डिग्रियों के सम्बन्ध में एक इंस्पेक्टर को स्वायत्त संस्थाओं की कार्यप्रणाली को नियंत्रित करने के लिए थोप दिया गया था । उस समय यह दलील थी, अब हमें बताया जा रहा है कि चूँकि स्वयं यह सरकार के हाथ में है और चूँकि कोई स्वायत्त संस्था भी नहीं है, इसलिए इन लोगों को ब्रिटेन के चार्टर्ड एकाउंटेंट के समकक्ष नहीं माना जा सकता । कितना भारी वैषम्य है! कितना असगत है यह! फिर, श्रीमन्, दूसरा तर्क यह था कि हम कोई आंतमपूरित कानून भी नहीं बना रहे हैं । लेकिन इसके लिए कौन उत्तरदायी है? क्या हुआ था इस सम्बन्ध में 1930 में? मैं माननीय सदस्यों को स्मरण दिलाना चाहूँगा कि इंडियन कम्पनी एक्ट की धारा 144 के अधिकांश हिस्से को 1930 के संशोधन बिल द्वारा पेश किया

गया था और इसका एकमात्र उद्देश्य मुख्यत: आडिटर और लेखाकार के पेशों को नियमित करना था । यदि माननीय सदस्यगण धारा 144 को देखने का कष्ट करें, तो वे पायेंगे कि बोर्ड आफ एकाउन्टेंसी की स्थापना तथा इनकी परीक्षाओं द्वारा प्रमाणपत्र प्राप्त लोगों के पद के निर्धारण सम्बन्धी कोई भी अधिनियम धारा 144 से बेहतर नहीं होगा । मैं सदन को धारा 144 के उपबन्ध (२ ए) पढ़कर सुना रहा हूँ, जिसके अनुसार :

"विशेषकर, और सामान्यत: पूर्वाधिकारों को बिना किसी तरह प्रभावित किये, ये नियम— ये कार्य कर सकते हैं :
(क) ऐसे लेखाकारों के रजिस्टर रखने का प्राविधान जो प्रमाणपत्र प्राप्ति हेतु आवेदन करें;"

लेखाकारों का रजिस्टर उसी प्रकार का है जैसा डाक्टरों या अन्य योग्यताप्राप्त व्यवसायों के व्यक्तियों का होता है । अत: उक्त उपबन्ध के अधीन सभी योग्यता प्राप्त लेखाकारों के लिए एक सम्पूर्ण रजिस्टर रखने की व्यवस्था है :
(ख) "रजिस्टर में दर्ज करने हेतु योग्यता और इसकी फीस का निर्धारण;

(ग) नामांकन हेतु अभ्यर्थी की परीक्षा और उसके लिए दी जाने वाली फीस का विवरण;

(घ) एक ऐसे भारतीय एकाउन्टेंसी बोर्ड की स्थापना, संविधान और कार्यविधि की व्यवस्था जिसमें ऐसे व्यक्ति सम्मिलित हों जो मुख्य रूप से प्रभावित हितों का प्रतिनिधित्व करते हों या भारत में एकाउन्टेंसी का विशेष ज्ञान रखते हों, ताकि एकाउन्टेंसी सम्बन्धी प्रशासकीय मामलों में उसे परामर्श प्रदान कर सके और रजिस्टर में दर्ज व्यक्तियों की योग्यता और आचार के स्तर को बनाये रखने में उसे सहायता दे सके; और

(ङ) गर्वनर जनरल इन काउंसिल द्वारा चुने गये केन्द्रों पर स्थानीय एकाउन्टेंसी बोर्डों की स्थापना, उनके संविधान तथा कार्यविधि की व्यवस्था ताकि जो मामले उनके पास भेजे जाय उन पर उसे और भारतीय एकाउन्टेंसी बोर्ड को परामर्श दे सकें ।"

मेरा मत है कि यदि हम लेखाकारों के पेशे से सम्बन्धित कोई अधिनियम

पारित करते तो भी हम न तो उसमें कुछ अधिक या भिन्न जोड़ पाते, जो पहले से ही उस धारा में सन्निहित है जिसे मैंने पढ़कर सुनाया है । यही सम्पूर्ण अधिनियम होता जैसा कि पहले से ही मौजूद है । यह सम्पूर्ण पेशे को नियंत्रित तथा नियमित करता है; यह पूरे भारत के लिए बोर्ड आफ एकाउन्टेंसी के गठन, स्थानीय एकाउन्टेंसी बोर्डों के गठन॰ तथा योग्यता प्राप्त एकाउन्टेंट के पंजीयन, उनके पेशेगत आचार–संहिता के नियन्त्रण तथा इन बोर्डों की स्थापना, संविधान तथा कार्यविधि नियमन सम्बन्धी अन्य सभी आवश्यकताओं का प्राविधान करता है । अब, मान्यवर, क्या हमें इसलिए भी दोषी माना जायेगा कि यह अलग से अधिनियम का हिस्सा न होकर कम्पनी एक्ट के अन्तर्गत आता है? सिर्फ यही आपत्ति हो सकती है । अन्यथा इस तरह के मसले से सम्बन्धित हर तत्व इसमें है और यही कारण है कि यह बिल बनाया गया, पारित हुआ और अन्ततः कम्पनी एक्ट 1930 में शामिल किया गया । हमें बताया गया कि इस सम्बन्ध में कोई अधिनियम नहीं है । मैं आपको बताऊँगा कि 1930 में क्या हुआ और तब सरकार ने क्या कहा था । सरकार ने कहा कि वह इन मसलों को नियमान्तर्गत फैसले के लिए छोड़ती है ताकि कोई सख्ती सम्भव न हो सके, अन्यथा वे एक दूसरा अधिनियम बना सकते थे जिसमें अधिक विवरण शामिल होता । मैं यहाँ जार्ज रैनी की वक्तृता को उद्धृत कर रहा हूँ, जिन्होंने कहा था:

"मैं उन कारणों को स्पष्ट करना चाहूँगा कि हम क्यों एकाउन्टेन्सी बोर्ड की स्थापना एक्ट द्वारा नहीं करना चाहते, वरन् बार–बार नियमों पर छोड़ देना चाहते हैं । यह ऐसा निर्णय था जो काफी सोच–विचार और सावधानी के साथ लिया गया था । हम महसूस करते हैं कि यदि बोर्ड का गठन अन्ततः एक्ट द्वारा निर्धारित होगा, तो स्कीम बहुत कठोर हो जायेगी, आदि–आदि ।"

इस प्रकार अधिनियम तो है, अधिनियम इसी उद्देश्य से बनाये गये थे और किसी हद तक अधिनियम में लचीलेपन का भी प्राविधान था ताकि समय-समय पर होने वाले परिवर्तनों को दृष्टिगत रखते हुए इसे उनके अनुकूल बनाया जा सके । यह वैसा ही अच्छा कानून है जैसा कि दक्षिण अफ्रीका, कनाडा, रोडेशिया या किसी अन्य देश में पारित किया गया है । इन हालात में अलग से अधिनियम आवश्यक नहीं हैं । आइए आगे हम देखें कि इस अधिनियम में कैसी व्यवस्था की गयी है ।

इस धारा के अनुसार :

"इस धारा के अन्तर्गत प्राप्त प्रमाण–पत्र के धारक को पूरे ब्रिटिश भारत में कम्पनियों के आडीटर के रूप में काम करने तथा नियुक्ति पाने का अधिकार होगा ।"

फिर इस धारा के अन्तर्गत निर्मित नियम हैं, जो कि काफी विस्तृत हैं और यह प्राविधान भी करते हैं कि इस तरह जिन लोगों को प्रमाण पत्र मिलेंगे उन्हें पंजीकृत लेखाकार (एकाउंटेंट) के नाम से जाना जायेगा । हम सिर्फ यह निवेदन करना चाहते हैं कि यह आपके ऊपर है कि आप पाठ्यक्रम को विनियमित करें, यह आपके ऊपर है कि आप स्तर का निर्धारण करें, आप उन्हें पंजीकृत लेखाकार न कहें वरन् उन्हें चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट (भारत) कहें । मैं यह जरूर कहूँगा कि सरकार इण्डियन एक्सटर्नल कैपिटल कमेटी की सिफारिशों को लागू करने में असफल रही है । मैं माननीय सदस्यों को यह सूचित कर दूं कि कौन लोग उस समिति के सदस्य थे जो एक्सटर्नल कैपिटल कमेटी के नाम से सुप्रसिद्ध हैं । वे थे सर बैसिल ब्लैक्रेट, सर चार्ल्स इन्स, मिस्टर बेल, डाक्टर मैथ, मिस्टर जी०ए० नटेशन, सर पी०एस० शिवा स्वामी अय्यर, पंडित मदन मोहन मालवीय, श्री विठ्ठल भाई जे० पटेल और मिस्टर विल्सन । एक्सटर्नल कैपिटल कमेटी ने 1925 में सर्वसम्मति से सिफारिश की थी कि इस देश में चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट की संस्था की स्थापना के लिए कदम उठाये जाने चाहिए । उन्होंने यह सुझाव समाविष्ट कर दिया था "कि अखिल भारतीय चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट इंस्टीट्यूट की स्थापना से पूर्व पैराग्राफों में दिये गये डाक्टर स्लेटर के सुझावों को पूरा करने में मदद मिलेगी । हम बैंकिंग शिक्षा के विस्तृत ब्योरे में न जाकर सिर्फ इसके महत्व पर ही बल देना चाहते हैं, लेकिन हम महसूस करते हैं कि इसकी जांच-पड़ताल से हमें लाभप्रद नतीजे मिलेंगे ।" इस संस्था की यह 1925 में सर्वसम्मति से सिफारिश थी । इन सिफारिशों को अमल में लाने के लिए सरकार ने आज तक क्या किया? यदि कुछ विसंगतियां हैं तो किस पर इसका दोष है? इस समिति द्वारा 1925 में सर्वसम्मति से दी गयी सिफारिश के बावजूद उन्होंने इस देश में चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट की संस्था की स्थापना करने के कदम क्यों नहीं उठाये और तब से बारह वर्ष बीत चुके हैं, लेकिन इस देश में चार्टर्ड एकाउंटेंट की संस्था की स्थापना हेतु कोई कदम नहीं उठाया गया और इसके कारण जगजाहिर हैं । यदि आप आज विधि–सदस्य के वक्तव्य को याद करें तो आप पायेंगे कि कितनी सावधानी उन्होंने बरती है । उन्होंने कहा कि सरकार इस दृष्टि से स्थिति का जायजा लेगी कि क्या एकाउंटेंट को चार्टर्ड एकाउंटेंट के बराबर का रुतबा देने के लिए कुछ नहीं किया जा सकता है? वास्तव में उन्हें यह रुतबा तो प्राप्त है ही, वे चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट के सारे कर्तव्य पूरे कर रहे हैं । लेकिन फर्क सिर्फ यह है कि जब कि इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्यों को आई०सी०एस० कहा जाता है,

प्रान्तीय सार्वजनिक सेवाओं के सदस्यों को, जो कि अधिक कठिन और दायित्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, हमारे देश में पी०सी०एस० कहा जाता है, क्योंकि उनका रंग भूरा है और उन्हें वेतन आदि भी कम मिलता है । यही मुख्य अन्तर है । जहाँ तक कर्तव्य और दायित्वों सम्बन्धी रुतबे की बात है, मैं इन दोनों में कोई फर्क नहीं पाता । तथ्य यह है कि एक पंजीकृत एकाउन्टेन्ट भारतीय होता है— पंजीकृत एकाउन्टेन्ट मात्र भारतीय ही होता है— लेकिन जहाँ तक चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट की बात है, उस सुन्दर परियोंनुमा जादुई घेरे में चंद भाग्यशाली भारतीय ही प्रवेश पा सकते हैं । इस तरह, श्रीमन्, फर्क पूरी तरह गैर–जातीय नहीं है । अब, हमें बताया गया कि यह धोखा है । यदि यह धोखाधड़ी है तो हमें पक्के तौर पर यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कारण कुछ भी हों और हमारे इरादे चाहे जितने नेक हों, हमें इस धोखाधड़ी में हिस्सेदार नहीं बनना चाहिए । लेकिन धोखा क्या है? क्या धोखा यह है कि लोगों को अलग–अलग पद नामों से जाना जाय ताकि एक वर्ग और दूसरे वर्ग में द्वेषजनक फर्क किया जा सके जब कि दोनों ही एक ही ढंग के कार्य और दायित्व निभाते हैं, और एक प्रचलित पदनाम से वंचित कर उन्हें अपने ही देश में अपमानित किया जाय? या कि धोखाधड़ी यह मांग है कि जबकि उनके कार्य और दायित्व समान हैं तो उन्हें समान पदनाम भी दिया जाये? मैं जानना चाहूँगा कि धोखा कहाँ है? कौन, किसके साथ धोखा कर रहा है और कौन इसका जिम्मेदार है? यदि हमसे कहा गया होता कि ये लोग विशिष्ट दायित्व निभाने में असमर्थ हैं या कि कुछ ऐसी चीजें जो दूसरे लोग ही कर सकते हैं, इनकी सामर्थ्य के बाहर है और इस पदनाम के अधीन ये कुछ ऐसे अधिकार हस्तगत कर लेंगे जो कि उनके पास नहीं हैं, तो इस आलोचना का कोई आधार होता । लेकिन धोखाधड़ी तब है जब आप एक व्यक्ति को अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए आई०सी०एस० और दूसरे को पी० सी० एस० कहें । वास्तविक उद्देश्यों के अन्तर्गत पी०सी० एस० के लोग आई०सी०एस० कहलाने के अधिकारी हैं । मैं जानता हूँ कि कौन धोखाधड़ी कर रहा है और नासूर कहाँ है ।

महोदय, हमें बताया गया है कि यदि इन लोगों को चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट के नाम से पुकारा जायेगा तो दूसरे लोग दिग्भ्रमित होंगे । हमें पहली बार यह ज्ञात हुआ है कि यदि कोई व्यक्ति स्वयं को चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट–कोष्ठक में भारत–लिखे तो मुझे कोई शिकायत नहीं है । इस बिल के विशेष जानकार माननीय विधि सदस्य को मेरी बात सुनने तक की परवाह नहीं है, क्योंकि मैं जानता हूँ कि कोई भी दलील उन्हें रास न आयेगी । उन्होंने पहले से ही तय कर रखा है तथा उनके विचार परिपक्व हो चुके हैं । मुझे उनसे कोई झगड़ा नहीं करना है यदि वे मेरे तर्कों को

इसलिए नही सुनना चाहते है कि कही उनको शर्मिन्दगी का सामना न करना पडे । विषय पर लौटूं, मैं धोखेधड़ी की बात कर रहा था । अभी उस दिन मेरे मित्र श्री पालीवाल ने उन 15 देशों की सूची दी है, जहाँ हर उस व्यक्ति को चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट कहा जाता है जिसमें कम्पनी के हिसाब-किताब को आडिट करने की योग्यता होती है । महोदय, यह क्यों मान लिया जाना चाहिए कि जब हम स्वयं को 'चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट (इंडिया)' के नाम से पुकारते हैं तो हम ग्लासगो, मैनचेस्टर, लिवरपूल, किम्बर्ली और टिम्बक्टू का उल्लेख कर रहे हैं? यह क्यों नहीं माना जाना चाहिए कि मैं नोवा स्कासिया या न्यूफाउन्डलैन्ड के चार्टर के अन्तर्गत चार्टर्ड एकाउटेन्ट हो सकता हूँ । यदि इन पन्द्रह देशों के लोगो को अपने तथा दूसरे देश के लोगो के साथ धोखाधडी की अनुमति दी गयी है, तो हमें उनका अनुसरण कर वैसा ही सोल्हवाँ देश बन जाना चाहिए । लेकिन, मान्यवर, हमें बताया गया है कि उन देशों में गलतफहमी पैदा होने की कोई गुंजाइश नही रही होगी । लेकिन उन देशों में भी 'चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट' का पदनाम लोकप्रिय था और जो लोग सत्ता में थे, वे यह सोचते थे कि उनके अपने देशवासियों को एकाउन्टेन्ट के पदनाम सा वंचित कर कृत्रिम अयोग्यता का शिकार बनाया बनाया जा रहा है । उनकी हालत हमारी वर्तमान हालत जैसी ही थी और उन परिस्थितियों में उन्होंने अपने नियमों के अन्तर्गत अपने देशवासियों के लिए 'चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट' पदनाम देने का निर्णय लिया । लेकिन जब ऐसा किया गया था तब कारण बिल्कुल वैसे ही थे जिसने हमें आज बाध्य किया है । क्या सर होमी मोदी वास्तव में यह समझते हैं कि एक साधारण कम्पनी मैनेजर रजिस्टर्ड एकाउन्टेट और चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट का अन्तर जानता है? रजिस्टर्ड एकाउन्टेन्ट की कीमत पर वह चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट को तरजीह क्यों देना चाहता है?

श्री एन०एम० जोशी – दंभ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – हाँ । अन्तर इतना है कि इस व्यक्ति ने चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट का सिर्फ नाम भर सुना है । रजिस्टर्ड एकाउन्टेन्ट (लेखाकार) का नाम जाना-पहिचाना नही है, इसलिए जिन लोगों ने कठिन श्रम किया है और समान योग्यताएं रखते हैं, वे गलत पदनाम के कारण उन अवसरों से वंचित कर दिये जाते हैं जिसके वे सर्वथा योग्य हैं । और आखिर नामों में यह नफरत पैदा करने वाला फर्क क्यों रखा जाय? महोदय, हमें बताया गया कि उन सारे देशों में अधिनियम बनाये गये स्वायत्त संस्थाएं गठित की गयी । इस एक्ट में प्राविधान है कि आप यहाँ एक स्वायत्त संस्था क्यों नहीं बनाते? आपके रास्ते में क्या रुकावट है? आप स्वायत्त संस्था इसलिए नहीं बनाते क्योंकि आपको भारतीय एकाउन्टेन्टों पर विश्वास नही है । दूसरी ओर आप इस तर्क का इस्तेमाल इस पद को उन लोगों को न देने के लिए

करते हैं, जो इसके सर्वथा योग्य हैं । मान्यवर, मेरा कहना है कि आप किसी भी कोने से देखें, किसी भी दृष्टिकोण से विचार करें, ये लोग चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट (इण्डिया) कहलाने के पूरी तरह अधिकारी हैं । हमें बताया गया कि यह धोखाधड़ी है । यह धोखाधड़ी कैसे है? हमें पचास वर्षों तक इस देश में वकील को एडवोकेट का दर्जा देने के लिए संघर्ष करना पड़ा था । क्या सर होमी मोदी इसे नही जानते? हमें कहा गया था कि सिर्फ बैरिस्टरों को ही एडवोकेट कहा जा सकता है, वकीलों को नहीं ।

सर एच०पी० मोदी — क्या आप एडवोकेट को बैरिस्टर कहे जाने की अनुमति देंगे? अपने नेता से पूछिये ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — अब बैरिस्टरों को उसी तरह एडवोकेट कहा जाता है, जैसे वकीलों को एडवोकेट । मेरा अन्य किसी चीज से कोई ताल्लुक नहीं है । मैं उन सभी के लिए समान स्तर चाहता हूँ, लेकिन मैं एंक समझौते की बात भी कर सकता हूँ जो यह है । चलिये यह नियम बन जाय कि इस देश में चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट के पेशे में लगे हर व्यक्ति को रजिस्टर्ड एकाउन्टेन्ट कहा जायेगा । लेखा परीक्षण का कोई लाइसेन्स दिये जाने के पूर्व यहीं रजिस्टर में उनका पंजीकरण होगा ।

सर एच०पी० मोदी —वे पंजीकृत हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त —मैं सहमत हूँ । यदि वे पंजीकृत हैं तो उन्हें भी रजिस्टर्ड (पंजीकृत) एकाउन्टेन्ट के नाम से पुकारें । यहाँ कार्य करने के लिए चार्टर्ड एकाउंटेन्ट पदनाम को पात्रता का पैमाना न माना जाय । वे यहाँ पर पंजीकृत हैं, इसलिए उन्हें योग्यता प्राप्त है । 'चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट' का नाम हटा दीजिए, उन्हें रजिस्टर्ड एकाउन्टेन्ट के नाम से पुकारिए । जो भी स्वयं को चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट कहें उसे दंडित करें, तब मैं कोई विवाद खंड़ा नहीं करूंगा, सभी को रजिस्टर्ड एकाउन्टेन्ट ने नाम से पुकारा जाय । इससे मेरी राष्ट्रीय स्वाभिमान की वृत्ति की भी तुष्टि होगी और अन्य विदेशियों के समक्ष हमें समान अधिकार प्राप्त हो सकेगा । इन दिनों संयुक्त ब्रिटेन और फ्रांस के प्रचलनों के बारे में सर होमी मोदी शायद बेहतर जानते हों । वहाँ इस आशय के अधिनियम हैं कि आप देश में गैरवासियों को गृह मंत्रालय की अनुमति के बिना घरेलू नौकर नहीं रख सकते । फ्रांस का यह कानून है, संयुक्त ब्रिटेन का यह कानून है और दूसरे कई देशों में भी यही है और जर्मनी में तो शायद सर होमी मोदी को यहूदी समझ कर गोली का निशाना बना दिया जाय (हंसी) । इसको छोड़ भी दें तो सच यह है कि जबकि अन्य सभी देशों में अपने देश की सीमाओं के भीतर अपने ही देशवासियों के लिए सीमित रोजगार के अवसर उपलब्ध हैं, यहाँ हमें बताया जाता है.... "हमें भारतीयों के प्रति न्याय नहीं करना चाहिए क्योंकि यह इस देश के गैर–भारतीयों के विशेषाधिकारों,

लाभों और विशेष सुविधाओं की कीमत पर होगा ।" हाँ श्रीमन्, यह एक ऐसा तर्क है जो मुझ जैसे व्यक्ति को रास नहीं आता ।

मैं समझता हूँ कि महामहिम वायसराय ने अभी उस दिन अपने भाषण के दौरान कहा था कि मध्यवर्गीय रोजगार का प्रश्न उन्हें काफी चिंतित करता रहता है....

मिस्टर एम०ए० जिन्ना – क्या मैं (इन में अंतर संबंधी) कुछ सूचनाएँ प्राप्त कर सकता हूँ? चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट और रजिस्टर्ड एकाउन्टेंट के बीच कहाँ फर्क किया गया है–इण्डियन कम्पनी एक्ट या उसके किसी नियम के अन्तर्गत?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – अब तक मैं यही समझता था कि कोई भी फर्क नहीं किया गया है, लेकिन जब मुझसे कहा गया कि इन लोगों द्वारा स्वयं को चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट कहलाने की अनुमति दिया जाना धोखाधड़ी है, तब मुझे पता चला कि इसकी पृष्ठभूमि में कोई फर्क इन लोगों को नुकसान पहुँचाने के लिए जरूर है अन्यथा जहाँ तक कर्तव्य और दायित्वों के वहन की बात है, ये लोग चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट के पद के सर्वथा योग्य हैं. फर्क मात्र इतना है कि चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट को अधिक फीस मिलती है....

सर कावसजी जहाँगीर – क्या मैं इंगित कर सकता हूँ कि इनसे जो प्रश्न पूछा गया था, वह था "हमारे कम्पनी एक्ट में चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट और रजिस्टर्ड एकाउन्टेंट के बीच कहाँ फर्क है?" इस प्रश्न का उत्तर यह है कि नियम 12 के अन्तर्गत जिन्हें प्रमाण–पत्र प्राप्त हैं, उन सभी को पंजीकृत (रजिस्टर्ड) एकाउन्टेन्ट कहा जाना चाहिए ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं अपने माननीय मित्र सर कावसजी जहाँगीर का शुक्रगुजार हूँ कि उन्होंने उस प्रश्न का उत्तर दे दिया जो मिस्टर जिन्ना ने पूछा था ।

मिस्टर एम०ए० जिन्ना – मेरे प्रश्न का यह उत्तर नहीं है । मेरा प्रश्न था–क्या कम्पनी एक्ट या गवर्नर जनरल इन कौंसिल द्वारा निर्मित किसी अन्य नियम के अन्तर्गत कोई ऐसा प्रावधान है जो किसी कम्पनी को रजिस्टर्ड एकाउन्टेंट या चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट को रखने से रोकता हो?

मिस्टर सुशील चन्द्र सेन (भारत सरकार के मनोनीत सदस्य) – ऐसा कोई अन्तर नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – बहुत कुछ इस बात में...

मिस्टर एम०ए० जिन्ना – मैं सिर्फ सूचना प्राप्त कर रहा हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – जहाँ तक दायित्वों और कर्तव्यों की बात है, कुछ नहीं; जहाँ तक पद और नाम का सवाल है, हाँ ।

मिस्टर एम०ए० जिन्ना — किसकी राय में उनका स्तर ऊँचा है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — इन रजिस्टर्ड एकाउन्टेंटों की राय में, जिनके साथ गुजरे वर्षों में अत्यन्त बुरा बर्ताव किया गया है ।

मान्यवर, मैं उस भाषण का उल्लेख कर रहा था जो कुछ सप्ताह पूर्व यहाँ महामहिम वायसराय ने दिया था । अपने भाषण के दौरान महामहिम ने इस देश में मध्य वर्ग की बेरोजगारी को लेकर गम्भीर चिन्तायें प्रकट की थीं और उनका कहना था कि सरकार को इसे प्रमुख मुद्दा मान कर इस ओर ध्यान देना चाहिए । हाँ, श्रीमन्, मुझे रंचमात्र भी संदेह नहीं है कि महामहिम वायसराय पूरी तरह से ईमानदार थे, लेकिन उनकी सरकार का क्या हाल है? उनकी भावना को कार्यरूप में कैसे बदला जाये? जो भी रोजगार की सम्भावनाएँ हैं, उनके सभी दरवाजे मध्यवर्गीय शिक्षित बेरोजगारों के लिए बन्द हैं । जो इस देश के लोग नहीं हैं, उन्हें विशेषाधिकार दिये गये हैं; जो लोग बाहर से आये हैं, उनके लिए दरवाजे खुले हैं । मेरा कहना है, श्रीमन् कि वर्तमान व्यवस्था हमारे लोगों और हमारे देश के हितों के विरुद्ध है, इसलिए मैं चाहता हूँ कि इसे बदला जाय ।

महोदय, एक शब्द और । हमें बताया गया है कि वे अपने नाम के आगे 'इंड' लिखेंगे, लेकिन यह इतने छोटे अपठनीय अक्षरों में लिखा होगा, जिसे सम्भवतः माइक्रोस्कोप की मदद के बिना पढ़ना सम्भव नहीं होगा । कभी–कभी टेलिस्कोप की जरूरत आमने–सामने बैठे अपने देशवासियों के चेहरे पहचानने के लिए भी पड़ती है । मैं पूरी तरह नहीं देख पाता कि उनका रंग क्या है, चेहरा–मोहरा कैसा है, उनके दिल में क्या है,— मैं यह भी नहीं जानता कि उनके पास आत्मा नाम की कोई चीज है भी या नहीं । इसके लिए मुझे टेलिस्कोप की जरूरत होगी, यद्यपि वे ठीक मेरे सामने बैठे हैं । इसलिए इन अक्षरों को देखने के लिए माइक्रोस्कोप की जरूरत पड़ सकती है, लेकिन श्रीमन्, क्या इसका कोई निदान नहीं है, कि जहाँ ये बेईमान लोग 'इंड' का उल्लेख अत्यन्त अस्पष्ट छिपे ढंग से करेंगे, वहीं इस बात पर क्या रोक होगी कि दूसरे लोग बड़ी सुर्खियों में 'गैर–इंडियन' का विज्ञापन प्रकाशित नहीं करायेंगे जिसे 101 मील की दूरी से भी देखा जा सकता हो? श्रीमन्, हमारे यहाँ भी कैम्ब्रिज की तरह एम०ए० और एल–एल०बी० हैं, लेकिन हमारे लोग अपनी डिग्रियों के बाद 'इंड' शब्द नहीं जोड़ते और फिर मैकैनिकल इंजीनियर हैं, जो भारत की भांति इंग्लैण्ड से भी शिक्षा प्राप्त होते हैं । क्या उनके पद समान नहीं हैं? क्या इस तरह हम सेवायोजकों को धोखा दे रहे हैं? विदेशी डिग्रियों और डिप्लोमा का प्रभामंडल विदेशी शासन के सम्मोहन के अन्तर्गत चलता रहेगा । हमें कहा जाता है कि हम हीन भावना से ग्रस्त

है । मुझे हीन ग्रंथि का शिकार होने की भी चिन्ता नहीं है, यदि इससे हमें बेहतर स्थिति में जाने की प्रेरणा मिलती है, लेकिन मैं उस उच्च दम्भ को नहीं पसन्द करूंगा जो हमें निम्न स्थिति में ले जाने की दिशा में अग्रसर होगा । इसलिए मैं चाहता हूँ कि सदन निर्विकार ढंग से इस प्रश्न पर विचार करे । इस बहस के दौरान मैं स्वयं द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव तथा संशोधनों के परिणामों के बारे में अधिक चिन्तित नहीं हूँ । उनमें से कई जिन्हें हम अत्यधिक महत्व देते थे, अस्वीकृत कर दिये गये हैं और कुछ को तो गलत तक समझा गया है । हम चिन्ता नहीं करते, लेकिन सदन के समक्ष अपनी रोशनी में अपने सही विचारों के अनुसार तथ्यों को पेश करना हमारा कर्तव्य है । हम सर्वसत्यवादिता का कोई दावा नहीं करते, यह इस सदन की जिम्मेदारी है कि वह तय करे कि हम सही हैं या गलत । लेकिन अपने मित्रों से मेरी अपील यह है कि यदि आप संतुष्ट हैं कि इन लोगों का पक्ष सही है तो अवश्य उनका साथ दें ।

•

बैंकिंग तथा कम्पनी कानून

मान्यवर, मैं प्रस्ताव रखता हूँ :

"कि बिल की धारा 111 में प्रस्तावित धारा 277- एफ के अन्तर्गत उपधारा (2) का उपबंध निरस्त कर दिया जाय ।"

माननीय सदस्य देखेंगे कि उपबंध इस प्रकार है

"बशर्ते कि गवर्नर जनरल इन कौंसिल भारतीय गजट की अधिसूचना द्वारा धारा 277-ई के भाग (1) से (17) तक प्रदत्त व्यवसायों के अतिरिक्त अन्य ऐसे व्यवसाय के रूपों का विशेष उल्लेख कर सकते हैं, जो कि इस धारा के अन्तर्गत बैंकिंग कम्पनी के लिए न्यायसम्मत हों ।"

महोदय, मैं इस संशोधन को अत्यधिक महत्व प्रदान करता हूँ । माननीय विधि सदस्य द्वारा गहरी छानबीन तथा अत्यधिक सावधानी के बाद बैंकिंग सम्बन्धी यह खण्ड प्रस्तुत किया गया है । यदि माननीय सदस्य धारा 277 की उपधारा 1 से 17 तक पढ़ने का कष्ट करें, तो वे यह पायेंगे कि बैंकिंग व्यवसाय के अन्तर्गत जिस भी व्यवसाय की कल्पना की जा सकती थी, वे सारे धारा 277-ई में शामिल हैं । अब हम अधिनियम बना रहे हैं । हमारे इस कदम के कई महत्वपूर्ण परिणाम होंगे । यदि धारा 277-ई में दिये गये किसी भी प्राविधान का कोई भी उल्लंघन होगा, तो उल्लंघनकर्ता को भारी दंड दिया जा सकेगा । इसके परिणाम काफी दूरगामी हैं, लेकिन हम यह उपबंध शामिल करते हैं, तब हम विधायन कार्य करने के बजाय ऐसे महत्वपूर्ण मामलों को, जिनका सम्बन्ध गम्भीर परिणामों, दंड प्रदान करने तथा नागरिक अधिकारों से है, कार्यपालिका को सौप दे रहे हैं । मैं इस सिद्धान्त के पूर्णतः विरुद्ध हूँ । जब हम कोई कानून बनाते हैं और यदि उसमें किसी परिवर्तन की

लेजिस्लेटिव असेम्बली में 6 अक्तूबर, 1936 को स्वयं द्वारा प्रस्तावित अनुच्छेद 277 (एफ) की उप धारा (2) को बिल की धारा (3) में सम्मिलित करने के संशोधन के प्रस्ताव के समर्थन में पंत जी का भाषण ।

जरूरत पड़े तो विधायिका के सम्मुख एक संशोधन विधेयक पेश किया जाना चाहिए । इस सदन के प्रति महान आदर के बावजूद मैं नहीं समझता कि बैंकिंग सम्बन्धी कानून के मामले में धारा 277-ई ही अंतिम सच है । मैं धारा 277-ई और एक्ट के दूसरे हिस्सों में परिवर्तनों की आवश्यकता के बारे में सोचता हूँ और उन्हें स्वीकारता हूँ । इन परिस्थितियों में यही तर्क, यद्यपि उतने ही जोर के साथ नहीं, गवर्नर जनरल को जरूर आवश्यकता पड़ने पर, बाकी एक्ट में परिवर्तन करने का अधिकार प्रदान करने के बारे में दिया जा सकता है । यदि इस धारा में कोई भी कमी दिखे तो सरकार के समक्ष इस एक्ट में संशोधन करने के लिए संशोधन बिल प्रस्तुत करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए ।

मिस्टर एम०ए० अणे — अध्यादेश जारी करने का अधिकार गवर्नर जनरल को प्राप्त है, न कि गवर्नर जनरल इन कौंसिल को ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत — लेकिन मैं समझता हूँ कि गर्वनर जनरल इन कौंसिल अपने अन्तिम चरण पर हैं । उनके पैर लड़खड़ा रहे हैं । जरा कौंसिल के सदस्यों के चेहरों को देखिए, उनमें से कुछ तो असमय बूढ़े हो चले हैं तो दूसरे इस उम्मीद में जी रहे हैं कि उन्हें गले की फांसी से मुक्ति मिलेगी । कुछ भी हो, यह सच है कि गवर्नर जनरल इन कौंसिल के कदम उखड़ गये हैं और अनेक अर्थों में वह पतनशील स्थिति में है । हमारा हर दिन, हर प्रातः का यही अनुभव है । इस बात को छोड़ भी दें तो भी मैं समझता हूँ कि गवर्नर जनरल इन कौंसिल वास्तव में, यदि नाम से नहीं, तो गवर्नर जनरल को ही अध्यादेश जारी करने सम्बन्धी सुझाव देंगे । लेकिन तब गवर्नर जनरल आज से अधिक आजाद होगा क्योंकि तब उसकी अन्तरंग कौंसिल में केवल श्वेत चेहरे होंगे, भूरा एक भी नहीं । तब गर्वनर जनरल के पास रक्षा, खर्च सम्बन्धी तथा कुछ ऐसे ही अन्य विभाग होंगे । इस समय गवर्नर जनरल इन कौंसिल में मात्र तीन यूरोपियन सदस्य हैं । मैं शायद विषयान्तर होकर ऐसी टिप्पणियाँ कर रहा हूँ जो अप्रासंगिक हैं लेकिन मैं इसके लिए जिम्मेदार नहीं हूँ, मुझे इधर खींच लिया गया है । अतः इस संशोधन के विषय पर आता हूँ । स्थिति यह है कि अधिनियम संबंधी अधिकारों का, जो कि विधायिका को प्राप्त होने चाहिए, स्थानान्तरण सिद्धान्ततः अनुचित है और इसके दुष्परिणाम हो सकते हैं । हमने हमेशा गर्वनर जनरल के अध्यादेश संबंधी इन अधिकारों का विरोध किया है, लेकिन हम चाहें या न चाहें, वे तो अपनी जगह पर हैं ही जैसे कि अन्य बहुत सी बातें हैं । इस एक्ट के सौ में से निन्यानबे प्राविधान भी ऐसे ही हैं, लेकिन जब उनके पास अध्यादेश जारी करने का यह अधिकार है तो मैं इस उपबन्ध की कोई जरूरत नहीं समझता । केवल इतना अन्तर है कि अध्यादेश 6 महीने से अधिक समय तक लागू नहीं रहेगा, तब इसमें संशोधन बिल द्वारा सुधार की जरूरत होगी और जब तक

विधायिका इसे स्वीकार न करेगी, वह लागू नहीं हो सकेगा ।

सर एच०पी० मोदी – क्या गवर्नर जनरल इन मामलों में अध्यादेश जारी कर सकता है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – वह हर मामले में जारी कर सकता है ।

सर एच०पी० मोदी – नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – इसके दो खंड हैं : पहला तो शान्ति और व्यवस्था जैसे मसलों से संबंधित है । इनके संबंध में वह अपने विवेकानुसार और व्यक्तिगत निर्णयानुसार अध्यादेश जारी कर सकता है । दूसरा उन मसलों से संबंधित है जो मंत्रिमण्डलीय दायरे में आते हैं । सदन का सत्र न होने की स्थिति में इनसे संबंधित अध्यादेश वह अपने मंत्रियों की सलाह से जारी कर सकता है, लेकिन दोनों ही स्थितियों में वह अध्यादेश जारी कर सकता है, इसमें कोई संदेह नहीं है । गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट के बारे में मेरी यही धारणा है और मैं आशा करता हूँ कि मैं गलत नहीं हूँ । इस तरह वास्तव में यदि आपात् स्थिति पैदा होती है तो उसका सामना करने की व्यवस्था पहले से ही कर ली गयी है — जैसा कि अन्य सभी सम्भव आपात् स्थितियों के सिलसिले में किया गया है—लेकिन मैं फिर विषयान्तर कर रहा हूँ । इन परिस्थितियों में मेरा प्रस्ताव है कि यह उपबन्ध हटा दिया जाय । यह इस सिद्धान्त के प्रति घातक होगा कि सिर्फ विधायिका को ही विधायिनी और अधिनियम बनाने संबंधी अधिकार प्राप्त हैं । मैं आशा करता हूँ कि यह सदन इस उपबन्ध को अस्वीकार कर देगा ।

●

रुपये का स्टर्लिंग से संबंध विच्छेद करें

मान्यवर, मैं माननीय वित्त सदस्य से समस्या की गम्भीरता के बारे में सहमत हूँ । मैं मानता हूँ इस तरह के जटिल मसले पर, जो कमोबेश तकनीकी पहलू का है, इन चन्द मिनटों की अवधि में, जो कि वक्ता को सदन के कार्य स्थगन संबंधी प्रस्ताव के अन्तर्गत मिले है, विचार कर पाना कठिन है । लेकिन मैं इतना जरूर महसूस करता हूँ कि जहां इस मसले पर अनुपात संबंधी खिलवाड़ से बाज आना चाहिए, वहीं मूर्खतापूर्ण रवैया अवांछनीय है । मैं कहना चाहता हूँ कि जहां अनुपात संबंधी खिलवाड़ निश्चित रूप से एक अवांछनीय प्रक्रिया है, वहीं इसके साथ मूर्खता से पेश आना भी शुभ संकेत नहीं है । जब कि दुनिया में हालात इतने बदल गये हो तो पुराने अनुपात से विकृत, मूर्खतापूर्ण तथा अड़ियल ढंग से चिपके रहना गधेपन की निशानी नहीं तो और क्या है। हमें लीक नहीं छोड़नी चाहिए ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग – यदि माननीय सदस्य यह अहसास कर ले कि अड़ियलपन स्थिर और गतिविहीन होता है, और फिर मेरे लिए अपशब्दों का प्रयोग किया जाय, तो मुझे संतोष होगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं सोचता हूँ कि दूसरी ओर सरकार को भी यह अहसास होना चाहिए कि उसे इस देश के मसलों से खिलड़वाड़ करने का अधिकार कयामत के दिन तक नहीं मिलेगा। (विरोध पक्ष की ओर से हर्षध्वनि) । उन्हें स्वयं को हमेशा के लिए स्थिर नहीं मानना चाहिए । हमें उम्मीद है कि जल्दी ही हम उन्हें उनकी कल्पना तक से पहले, निकाल बाहर करेंगे ।

---

8 अक्तूबर, 1936 को लेजिस्लेटिव असेम्बली में भारतीय मुद्रा की विनिमय नीति में परिवर्तन की आवश्यकता तथा तत्कालीन वित्त सदस्य सर जेम्स ग्रिग के तर्कों के उत्तर में श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगर द्वारा रखे गये कामरोको प्रस्ताव के समर्थन में पंत जी का भाषण ।

जहाँ तक प्रस्ताव की बात है, कुछ प्राथमिक बातें हैं जो इस सदन के माननीय सदस्यों की जानकारी में रहनी चाहिए । एक तो यह है कि मूल्यों में ह्रास के दौर के शुरू होने से पूर्व ही, यहाँ तक कि वर्ष 1929 या 1931 से भी पहले, इस देश में आम भारतीय धारणा सर्वसम्मति से 16 पेंस के अनुपात की समर्थक थी । विश्व में अवमूल्यन और मूल्य ह्रास की स्थिति आने से पूर्व ही भारतीय जनता 16 पैंस स्टर्लिंग अनुपात (एक रुपया बराबर 16 पेंस) प्रणाली की समर्थक थी । जिन लोगों ने हिल्टन यंग की कमेटी की रिपोर्ट या इन विषयों से संबंधित अन्य आयोगों और समितियों की रिपोर्टों को पढ़ा है, वे भारतीयों की उस राय से सुपरिचित होंगे जिसने इस देश के हित में 16 पेंस अनुपात का कभी भीं परित्याग नहीं किया है । अब कुछ ऐसे तथ्य हैं जिनकी अनदेखी नहीं की जा सकती – ऐसा घटनाक्रम, जिसने अन्य सभी बातों को पीछे छोड़ दिया है, और यह भी कि आवश्यक वस्तुओं की कीमतें काफी गिरी हैं । सर्वोपरि, भारत एक कृषिप्रधान देश है, मूल्य सूचकांक नीचे आया है और सोने का निर्यात पिछले साठ वर्षों में जितना बढ़ा है, उतना कभी नहीं रहा । वास्तव में पिछले चार-पाँच वर्षों में हमने लगभग दो सौ करोड़ रुपये के सोने से हाथ धोया है........ ।

एक माननीय सदस्य – 280 करोड़........

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैं अपने वक्तव्य में हमेशा अनुदार रहता हूँ । कई देशों ने अपनी सीमाओं के पार सोने के निर्यात पर रोक लगा दी है । हम यह भी जानते हैं कि जहाँ तक इंग्लैंड की बात है, भारत एक कर्जदार देश है । हमें प्रतिदिन, प्रतिवर्ष ब्याज, समुद्र परिवहन और दूसरी कई मदों में लंबी राशि देनी पड़ती है, इसे मेरे मित्र चालीस करोड़ बताते हैं जब कि मेरा अपना अनुमान पचहत्तर करोड़ का है । लेकिन इस अवसर पर इन मसलों के विस्तार में जाने का कोई उपयोग नहीं है । हम जो पाते हैं वह यह कि इंग्लैंड ने स्वयं वास्तव में कोई स्थाई अनुपात नहीं तय किया है । इसके पास विनिमय स्थिरीकरण कोष है, वह इसकी सहायता से अनुपात में समय–समय पर हेर–फेर किया करता है । मैं हेराफेरी ठेठ अर्थों में नहीं कह रहा हूँ, लेकिन वह इस कोष का इस्तेमाल स्टर्लिंग के साथ उस समतुल्यता को बनाये रखने के लिए करते हैं, जो इंग्लैंड की आवश्यकताओं के अनुकूल हो ।

(माननीय वित्त सदस्य ने इंकार में सिर हिलाया) जैसा कि मैंने कहा कि अभी मेरे पास विस्तार में जाने या तर्क पेश करने का समय नहीं है, लेकिन मैं सदन

के बाहर वित्त सदस्य को भी संतुष्ट कर सकता हूँ कि मेरी यह टिप्पणी सही है कि स्थिरीकरण कोष की मदद से बैंक आफ इंग्लैंड और दूसरे देशों के बीच विनिमय अनुपात में हेर–फेर हो रहे हैं । स्टर्लिंग में चाहे जितना स्थायित्व दिखे, लेकिन उसमें आज पहले जैसा स्थायित्व नहीं है और हम यह भी जानते हैं कि यद्यपि हम स्टर्लिंग से जुड़े हैं, और पूरी तरह इसके रथ में जुते हैं, कई उपनिवेशों में उन्होंने अपनी मुद्रा का अवमूल्यन भी स्टर्लिंग की तुलना में 25 प्रतिशत के लगभग किया है । अब जो भी हुआ है, उसका लेखाजोखा होना चाहिए । आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड दोनों ही ने ऐसा ही किया है । हम जानते हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका अत्यन कठिनाई के दौर से गुजरा है और अपनी मुद्रा के अवमूल्यन तथा 'न्यू डील' अपनाने के बाद ही इसकी दिक्कतें दूर हो सकी हैं (आर्थिक मंदी के बाद अमेरिका द्वारा अपनायी गयी नीति 'न्यू डील' के नाम से प्रसिद्ध है) । स्वर्ण गुट (गोल्ड ब्लाक) के दूसरे देशों के साथ फ्रांस भी स्वर्ण स्टैंडर्ड को बनाये रखने तथा समतुल्यता के लिए संघर्षरत रहा है, लेकिन अन्ततः उसे फ्रैंक के अवमूल्यन के लिए विवश होना पड़ा और इस समय तो 'लिरा' (इटली की मुद्रा) में भी गिरावट आयी है । यदि माननीय सदस्य अपनी याददाश्त को सात या आठ वर्ष पीछे की ओर ले जायें तो उन्हें याद आयेगा कि एक समय मुसोलिनी (इटली का तानाशाह शासक) ने घोषणा की थी कि "लिरा ऐसी वस्तु है, जिसके लिए इटली ने अपना रक्त बहाया है और हम अन्तिम दिन तक इसके मूल्य की स्वर्ण समतुल्यता बरकरार रखेंगे ।" लेकिन इटली तक को इस बारे में मात खानी पड़ी, क्योंकि आर्थिक तथ्यों को सम्भवतः तोड़ा–मरोड़ा नहीं जा सकता और न ही उनसे खिलवाड़ किया जा सकता है, सिवाय उन देशों के जो दूसरे देशों के आधिपत्य में हैं । हम यह भी जानते है कि हमारा इटली और बेल्जियम दोनों ही देशों को निर्यात इन देशों से होने वाले आयात से अधिक है और विनिमय दरों से इस परिवर्तन से हमारे उद्योगों को भी नुकसान पहुँचेगा, क्योंकि फ्रैंक और लिरा के मूल्य में लगभग तीस से चालीस प्रतिशत तक की गिरावट आयी है । परिणामस्वरूप हम इन दोनों देशों में रुपये के बदले सस्ती दरों पर माल खरीद सकेंगे, क्योंकि फ्रैंक और लिरा दोनों के ही मूल्य में स्टर्लिंग की तुलना में, जिससे हम सम्बद्ध हैं, गिरावट आयी है, जब कि हमारे माल की कीमत उन देशों में बढ़ जायगी जिसका अनिवार्य परिणाम होगा कि हमारे व्यापार और उद्योग को क्षति पहुँचेगी । मैं इस मसले की गहराई में नहीं जाना चाहता, लेकिन क्या यह सच नहीं है और क्या कोई इस पर विवाद कर सकता है कि जब हमारे चारों तरफ आग लगी हो, हम यह नहीं कह सकते कि हम अपने को जलने देंगे, और अपने इर्द-गिर्द लगी आग पर ध्यान नहीं देंगे? मैं जो चाहता हूँ, वह यह कि रुपये को स्टर्लिंग से असम्बद्ध कर दिया जाये । हमें अपने देश की मुद्रा और

विनिमय दर को निश्चित करने का अधिकार होना चाहिए और विश्व परिस्थितियाँ जैसी वे आज हैं या भविष्य में हो सकती हैं, उनके अनुसार अपने देश की मुद्रा को देश के हित में विनियमित करने का अधिकार होना चाहिए । यहाँ तक कि फ्रांस और इटली को भी अपने देश की मुद्रा के अवमूल्यन के पहले अन्य देशों की राय को दृष्टिगत रखना पड़ा था । यह सुस्पष्ट है और मैं समझता हूँ कि माननीय वित्त सदस्य इससे असहमत भी नहीं होंगे कि लिश और फ्रैंक के अवमूल्यन का अर्थ है लिश और फ्रैंक के मामले में रुपये का अधिमूल्यन । ये निर्विवाद तथ्य हैं । रुपये की सामान्य कीमत बढ़ी है या नहीं, हमारा इससे कोई संबंध नहीं है, लेकिन लिश और फ्रैंक की तुलना में रुपये की कीमत बढ़ी है, इस पर कोई विवाद नहीं कर सकता, क्योंकि तीस-चालीस प्रतिशत लिश और फ्रैंक के मूल्य में अवमूल्यन का अर्थ है, रुपये के मूल्य में लगभग इतनी ही वृद्धि । और यहाँ तक कि ऋणदाता और कर्जदार तथा प्राथमिक उत्पादकों–उद्योगपतियों के बीच भी व्यावसायिक मूल्य स्थिरीकरण के लिए मुद्रा प्रणाली और विनिमय अनुपात में नये सिरे से तालमेल बढ़ाना जरूरी है ।

मैं यूरोपीय समूह के अपने माननीय मित्रों को मिस्टर गैविन जोन्स की यह बात याद दिलाना चाहूँगा जो अपने कुछ महीनों पूर्व कानपुर के अपने एक उल्लेखनीय भाषण में कहीं थी । उन्होंने जोर देकर कहा था कि इस देश में आर्थिक दिक्कतों का सामना करने के लिए जो तौर–तरीके इस्तेमाल किये गये हैं वे वास्तव में व्यर्थ और निष्फल हैं । जरूरी यह है कि रुपये का अवमूल्यन 16 पेंस तक कर दिया जाय और निश्चित रूप से मिस्टर गैविन जोन्स पर राजनैतिक पक्षपात का तो कोई आरोप नहीं लगाया जा सकता । उनकी राय को एक व्यवसायी की राय के रूप में लिया जाना चाहिए । श्री जमाल अहमद के तार का जिक्र पहले ही हो चुका है । फेडरेशन आफ इंडियन चैम्बर्स आफ कामर्स के अध्यक्ष की राय पहले से ही सर्वविदित है । मैं समझता हूँ कि दूसरे व्यवसायियों की भी यही राय है । मुझे विश्वास है कि यूरोपीय ग्रुप भी मेरे द्वारा प्रकट किये गये मत से सहमत होगा । मैं समझता हूँ कि समय आ गया है जबकि हमारे मुद्रा संबंधी मसलों का हल हमारे देश तथा देशवासियों की आवश्यकताओं के अनुकूल किया जाये, क्योंकि हम रुपये को स्टर्लिंग के साथ आबद्ध करना स्वीकार नहीं कर सकते और यही वह समय है जब हमें अपनी स्वतंत्र मुद्रा और विनिमय प्रणाली की जरूरत है । हालांकि मैं माननीय वित्त सदस्य की इस राय से सहमत हूँ कि वर्तमान कोटा प्रणाली तथा ऊँची शुल्क दरों जैसी बातें महान मूर्खतापूर्ण हैं, लेकिन जब तक बाकी दुनिया इन्हीं विचारों की न हो, हमें अकेले अपने स्वामियों या बाकी यूरोपीय दुनिया के लिए बलि का बकरा

न बनाया जाये । मेरा कहना है कि हमारी मुद्रा नीति हमारे देश के हितों के अनुकूल नियमित की जानी चाहिए । मुझे अपने माननीय मित्रों से सिर्फ एक ही अपील करनी है । यह पार्टी का प्रश्न बिल्कुल नही है । यह एक आर्थिक प्रश्न है, जो हमारे देश की वर्तमान सामाजिक और आर्थिक समस्याओं के मूल से जुड़ा है और मैं आशा करता हूँ कि इस सदन का हर सदस्य, चाहे यूरोपीय हो या भारतीय, और यदि यूरोपीय न सही तो कम से कम भारतीय तो जरूर ही, चाहे वह मनोनीत हो या चुना गया हो, सिर्फ उन्हें छोड़कर जिन्हें अपने विदेशी स्वामियों की आज्ञा माननी ही पड़े, इस प्रस्ताव के पेश करने वाले के साथ होगा और इस प्रस्ताव का समर्थन करेगा ।

●

भारतीय अर्थव्यवस्था का भारतीयकरण करें

मान्यवर, मैंने माननीय रेल-सदस्य का भाषण बड़े ही एकाग्रक्ति से सुना है। वह सदैव की भाँति स्पष्ट था, परन्तु मुझे उसमें जो सबसे अधिक बात खटकी, वह थी उसकी प्रपंचपूर्णता। माननीय रेल सदस्य के तर्कों की विसंगतियाँ तथा भ्रमात्मक...

सर मोहम्मद याकूब – यहाँ पर व्यवस्था का प्रश्न उठता है; माननीय रेल सदस्य के अपना भाषण आरम्भ करने के पूर्व चर्चा समापन का प्रस्ताव रखा जा चुका था और यह आशा थी कि रेल सदस्य के भाषण के बाद ही वाद–विवाद समाप्त हो जायगा। अब कोई अन्य सदस्य कैसे बोल सकता है?

माननीय उपाध्यक्ष (श्री अखिल चन्द्र दत्त) – प्राविधिक दृष्टि से स्थिति यह थी। यद्यपि चर्चा-समापन का प्रस्ताव रखा गया था परन्तु यह प्रश्न सदन के सम्मुख नहीं रखा गया था।

माननीय सर मोहम्मद ज़फ़रुल्ला खाँ – मैं निवेदन करना चाहूँगा कि व्यक्तिगत रूप से माननीय पंडितजी को अपना भाषण देने से रोकने की मेरी कोई इच्छा नहीं। माननीय भाषणकर्ता जिस दल के हैं उस दल की ओर से मुझसे यह प्रार्थना की गयी थी कि अब वाद–विवाद को समाप्त किया जा सकता है, और चूंकि वह वाद–विवाद के समाप्त किये जाने के लिए उत्सुक थे इसलिए मुझे खड़ा होना चाहिए था। फिर माननीय अध्यक्ष महोदय से परम्परानुसार यह प्रार्थना की गयी कि अब विषय पर आना चाहिए। माननीय अध्यक्ष महोदय ने यह राय जाहिर की कि प्रतिपक्ष का एक सदस्य अब भी कुछ विचार व्यक्त करने के लिए उत्सुक है। उस माननीय सदस्य ने कहा कि वह केवल दो मिनट का समय लेंगे और जब वह बैठ गये तो मैंने इसे अध्यक्ष की व्यवस्था मान ली कि अब चर्चा का समापन किया जाना है, लिहाजा मुझे अपना जवाब देने के लिये उठना चाहिए

माननीय उपाध्यक्ष (श्री अखिलचन्द्र दत्त) – स्थिति इस समय यह है कि अध्यक्ष महोदय ने पंडित पंत को अपने विचार व्यक्त करने के लिये बुला लिया है। पंतजी ने

लेजिस्लेटिव असेम्बली में रेलवे बजट पर चर्चा के अवसर पर 24 फरवरी, 1937 को दिया गया पंतजी का भाषण।

बोलना शुरू भी कर दिया है । स्थायी आदेश तथा नियमों के अनुसार विभाग के अध्यक्ष माननीय सदस्य के बाद फिर बोल सकते हैं । नियमों के विषय में अध्यक्ष की ऐसी ही धारणा है ।

कुछ माननीय सदस्य – वह ऐसा नहीं कर सकते हैं ।

माननीय उपाध्यक्ष – तकनीकी दृष्टि से, प्रश्न रखा नहीं गया था इसलिए अध्यक्ष अपनी दी गयी व्यवस्था पर कायम रहना चाहेंगे ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मेरी समझ में नहीं आता कि शासन इतना हताश क्यों हो रहा है?

माननीय सर मोहम्मद ज़फ़रूल्ला खाँ – माननीय सदस्य को बोलने से रोकने की मेरी जरा भी इच्छा नहीं । जो कुछ हुआ है मैं केवल वही स्पष्ट कर रहा था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – यह उनके अनुरूप ही है । वह बहस पर रोक नहीं लगाना चाहते परन्तु वह उसे आगे नहीं बढ़ने देना चाहते । (हँसी) ।

माननीय सर मोहम्मद ज़फ़रूल्ला खाँ – मैंने आपत्ति नही की ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – आपकी टिप्पणियों पर यही तो मेरी टीका थी ।

हाँ, तो मान्यवर, मुख्य विषय के सम्बन्ध में माननीय रेल सदस्य की दलीलों के रंग–ढंग से यह बात स्पष्ट हो जाती है । जैसा कि मैं कह रहा था, उनका भाषण प्रपंचों, तर्कों की विसंगतियों तथा भ्रमों का एक जाल सा था । मैं उसे पाखण्ड अवश्य नहीं कहूँगा । मूलभूत प्रश्नों तथा असल तथ्यों के बजाय उन्होंने अपने भाषण में फिर उन्हीं नारों का प्रयोग किया है जो उस ओर से अक्सर दोहराये जाते हैं— ट्रस्ट और ट्रस्ट्रियों का नारा, हमारे द्वारा तथाकथित व्यर्थ में उठाया जाने वाला जाति तथा राजनीति के पक्ष का नारा, हमारे द्वारा उन अवसरों पर भावनाओं का प्रश्न उठा देने का नारा । खैर, सच तो यह है कि मैं कुछ कहने के लिये कभी न उठता अगर मुझे उनके भाषण देने के ढंग से ऐसा आभास न होता कि उन्होंने मुख्य समस्याओं को सुलझाने का तो प्रयत्न किया नहीं—उन्हें एक ओर रख दिया है— और प्रस्तुत किया है केवल शब्दों का एक भ्रमजाल । उन्होंने लोक लेखा समिति के निर्णय का एक स्थान पर चलता-फिरता उल्लेख किया है और फिर अन्य वक्ताओं द्वारा यहाँ-वहाँ प्रयुक्त किन्ही शब्दों का मखौल उड़ाया है । सदन के सामने इस समय सवाल यह है—रेलवे प्रशासन के सारे विभागों का सर्वेक्षण करने का काम लोक लेखा समिति को सौंपा गया था । इसका गठन ऐसे प्रस्ताव तैयार करने के नजरिये से किया गया था जो रेलवे प्रशासन को एक ठोस तथा स्थायी आर्थिक आधार दिला सके । अब असली सवाल यह है कि क्या विदेश से बुलाकर रखे गये

व्यक्ति, जो यहाँ की परिस्थितियों से अनभिज्ञ हैं, उन राष्ट्रीय हितों के साथ न्याय कर सकते हैं जो इस तरह के सर्वेक्षण से उभर कर सामने आते हैं? मैं माननीय रेल सदस्य से इस प्रश्न का सीधा उत्तर चाहता हूँ कि क्या एक इतने महत्वपूर्ण विषय पर — जिसके लिये सारे रेलवे प्रशासन का सभी दृष्टियों से अध्ययन किया जाना आवश्यक है ताकि एक ऐसा हल निकाला जा सके जिसके द्वारा रेलवे प्रशासन स्थायी रूप से एक सुदृढ़ आर्थिक नींव पर रक्खा जा सके—इस प्रकार का सर्वेक्षण बाहर से बुलाकर रक्खे गये यहाँ की परिस्थितियों से अनभिज्ञ, व्यक्तियों के बूते का है? और क्या ऐसे अनभिज्ञ व्यक्तियों की समिति परस्पर विरोधी हितों का कोई न्यायपूर्ण हल निकाल सकती है जो उभर कर सामने आते हैं और जिनका निरीक्षण-परीक्षण आवश्यक हो जाता है?

मान्यवर, यह जाँच कितनी दक्षतापूर्ण है, इस विषय पर बहुत बढ़ाचढ़ा कर कहा गया है । ऐसे कथन का उद्देश्य क्या है, यह मैं नहीं समझ सका । क्या यह जांच यह पता लगाने की दृष्टि से की जा रही है कि किस रूप में आय—व्यय का चिट्ठा तैयार किया जाय? क्या यह जाँच द्वारा मूल की गणना करने के लिए कोई फार्मूला निकालने की दृष्टि से की जा रही है ? ये मामले बहुत कुछ विशिष्ट लेखागणना तथा लेखा परीक्षा से सम्बन्धित हैं । परन्तु यहाँ हमें मानवता के प्रश्न को भी ध्यान में रखना है इसलिये राजनैतिक तथा जातिगत प्रश्न भी उठ खड़े होते हैं । आखिर हमारी रेल व्यवस्था की मुख्य समस्यायें क्या हैं? ऊपरी प्रशासन हमारे लिए एक भारी बोझ बन गया है । उन्हें जो ऊँचे—ऊँचे वेतन दिये जाते हैं, उन्हें पूरा करना रेलगाड़ियों में सफर करने वाले औसत व्यक्ति की सामर्थ्य से बाहर की बात है । हमें बतलाया गया है कि रेल-भाड़े की दरें बहुत कम हैं । अब मैं एक दूसरा सवाल पूछना चाहूँगा — दूसरे देशों में उच्च अधिकारियों के वेतन तथा यात्री—भाड़े और माल-भाड़े का क्या अनुपात रहता है? क्या वही अनुपात यहाँ भी है? यदि नहीं, तो क्या यह जरूरी नहीं है कि उसे यहाँ भी कम किया जाय ? हम जानते हैं कि हमारे बहुत से कष्टों का कारण यह है कि इस देश में प्रशासन के जितने भी प्रमुख विभाग हैं उनमें अधिकारीगण विदेशी हैं। हमें मालूम है कि इसके लिये यहाँ 'ली—विशेषाधिकारों' का प्रश्न आ जाता है। विदेशियों को दी जाने वाली मोटी—मोटी तनख्वाहों का प्रश्न आ जाता है; प्रशासन का भारतीयकरण किये जाने का भी प्रश्न आता है । यदि आप रेलवे प्रशासन को सुदृढ़ नींव पर रखना चाहते हैं तो आपको मितव्ययिता के साथ रेलों को चलाना पड़ेगा । किफायत के साथ चलने के लिये आपको अधिकारियों के वेतनों में कमी करनी पड़ेगी । यदि आप वेतन घटाना चाहते हैं तो आपको 'ली—विशेषाधिकारों' को वापस लेना होगा । अगर

आप वेतनों को घटाना नहीं चाहते हैं तो आपको विदेशियों के बजाय यहीं के देशवासियों को उच्च पदों पर नियुक्त करना पड़ेगा । यही तरीका है जिसमें आप रेलगाड़ियों को मितव्ययिता के साथ चला सकते हैं । अब आप ही बतलाएँ कि क्या इस प्रकार राजनीतिक या जातिगत प्रश्न नहीं उठ खड़े होते? और यदि उठ खड़े होते हैं तो क्या विदेशी लोग भारतीय हितों के साथ न्याय कर सकते हैं? यही सारे प्रश्न हैं जिनका उत्तर मेरे मित्र को देना है ।

फिर एक दूसरा प्रश्न उठता है । विचारार्थ विषय सूची में कहा गया है कि समिति रेलों तथा सड़कों के परिवहन की प्रतिस्पर्धा या रेल-परिवहन तथा सड़क-परिवहन के सहयोग से सम्बन्धित समस्याओं से भी निबटेगी । यह बहुत ही अधिक जटिल विषयों में से एक है, लेकिन विभिन्न देशों में वहीं के लोगों ने इसे सुलझाया है । अगर आप और अधिक मोटर–बसों तथा मोटर-कारों आदि का आयात करते हैं तो विदेशों में अनेक ऐसे उद्योग हैं जो इनका निर्यात करने के लिये उत्सुक हैं । इसी प्रकार अनेक उद्योग हैं जो इन्जिनों, ब्वायलरों, तथा रेल के डिब्बों का निर्यात करने में रुचि रखते हैं । क्या ये सारी समस्यायें भी सामने नहीं आतीं, और क्या इस तरह के मामलों में विदेशी हितों का ध्यान रखने का प्रश्न नहीं उठ खड़ा होता ?

फिर प्रश्न यह है कि इस देश में रेल के इंजनों के निर्माण का असर अन्य देशों के रेल के इंजन निर्माताओं पर अवश्य पड़ेगा । क्या इस तरह से इस प्रश्न का कोई ऐसा उचित हल निकाला जायेगा जो भारत के हित में हो ? और क्या इस तरह समिति के सदस्य इस प्रश्न को हल करने में न्यायपूर्ण दृष्टिकोण अपना सकेंगे ? और मैं पूछता हूँ – क्या इस पृष्ठभूमि की अनदेखी करके माननीय रेल सदस्य रेलवे प्रशासन की कोई तस्वीर प्रस्तुत कर सकते हैं ? क्या कोई भी व्यक्ति जो इस देश के रहन-सहन के तरीकों से अनभिज्ञ हैं, जो यहाँ के देशवासियों के जीवन-स्तर से अनभिज्ञ है, रेलवे प्रशासन के प्रश्न पर विचार कर सकता है ? मान्यवर, जब तक कोई व्यक्ति इन आधारभूत बुनियादी बातों को नहीं जानता तब तक उसके लिये रेलवे प्रशासन को एक ठोस आर्थिक आधार प्रदान कर सकने वाले ठोस निर्णयों पर पहुँच पाना असम्भव है ।

फिर, रेल-भाड़े की दरों का भी प्रश्न उतना ही महत्वपूर्ण है। अब तक रेलवे प्रशासन ऐसी नीति पर चलता रहा है जिसके कारण निर्यात तथा आयात के व्यापार को बढ़ावा मिलता रहा है जब कि देश के भीतर के व्यापार को धक्का पहुँचा है ।

समय आ गया है कि देश की आवश्यकताओं को देखते हुए फिर से पूरी की पूरी भाड़ा नीति का पुनरीक्षण तथा सुधार किया जाय जिससे देश के आन्तरिक व्यापार को बढ़ावा मिले तथा देश में ही माल-असबाब को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने का लोगों को उत्साह मिले । इस प्रकार जाति सम्बन्धी तथा राजनैतिक दुराग्रह का प्रश्न फिर सामने आ जाता हैं । क्या और लोग भी निर्यात तथा आयात के व्यापार को सुगम बनाने तथा देश के भीतरी व्यापार को दूर रखने में रुचि नहीं रखते ? और अगर रखते हैं तो भारतीयों के हितों को ध्यान में रखने तथा यह देखने के लिए कि भारतीयों की मांगों तथा हितों के साथ न्याय किया जाता है या नहीं । इस देश के लिए बनी इस समिति में है कौन? क्या माननीय रेल सदस्य नहीं जानते कि पिछले बीस वर्षों में रेल विभाग पर व्यय तो ज्यामितीय ढंग से बढ़ा है परन्तु अपनी पूरी सामर्थ्य भर काम करते रहने पर भी रेलों की आमदनी अंकगणित के ढंग पर ही बढ़ी है । परिणाम यह हुआ है कि सन् 1933 से पीछे के बीस वर्षों में रेलविभाग की आमदनी तो केवल 110 प्रतिशत के लगभग ही बढ़ी है परन्तु खर्च 230 प्रतिशत बढ़ गया है । मान्यवर, भारतीय रेल प्रशासन की एक मूल समस्या वास्तव में यह है कि खर्च को किस प्रकार घटाया जाय । यदि आप रेल-भाड़े की दरों से बढ़ाते हैं तो आप माल-असबाब के यातायात में रुकावट डालते हैं और इस प्रकार व्यापार की उन्नति में बाधक बनते हैं । यदि आप विदेश में भर्ती किये गये लोगों के वेतन बढ़ाते हैं तो इससे खर्चा और बढ़ता है । अभी पिछले दिन कुछ आंकड़े प्रस्तुत किये गये थे जिनसे स्पष्ट प्रकट होता है कि सेवाओं में भारतीयकरण की गति इतनी अधिक धीमी है कि दो-तीन प्रतिशत से अधिक नहीं जाती, इससे रेलवे सेवा में ही यूरोपियनों के स्थान पर भारतीयों की नियुक्ति करने में अभी 50 वर्ष और लग जायेंगे ।

फिर हम यह भी देखते हैं कि पिछले दस या पन्द्रह वर्षों में ब्याज की दर लगभग 70 प्रतिशत बढ़ गयी है । जिस मूलधन पर ब्याज देना पड़ता है वह बढ़ गया है और आमदनी घट गयी है । आपको ये सभी समस्याएँ सुलझानी हैं । इनमें से प्रत्येक समस्या का सम्बन्ध एक राजनैतिक प्रश्न से है और यही संघर्ष का कारण है । यह केवल वाद-विवाद का प्रश्न नहीं है ये सब जीवन-मरण सम्बन्धी समस्याएँ हैं जिनका हल इस समिति को निकालना है और जिन पर इससे सुझावों की आशा की जाती है । वास्तविकता तो यह है कि जिस समय इस समिति के सुझाव हमारे सामने रक्खे जायेंगे उस समय कहा जायगा कि यह उन विशेषज्ञों की समिति के निर्णय हैं जो इस विषय में अपने विशिष्ट ज्ञान के कारण विदेशों से बुलाये गये हैं । फिर हम से यह भी कहा जायगा कि ये ऐसे ठोस निर्णय हैं जिन पर एक सुदृढ़ रेल्वे नीति आधारित की जा सकती है । इस प्रकार इस सदन के सामने,

पहले से ही निश्चित कर लिया गया, एक निर्णय विचार के लिए रखा जायगा जो इस सरकार के षड्यंत्र के नतीजे के रूप में होगा । इसलिए मेरा कहना है कि यह केवल स्वरूप का प्रश्न नहीं वरन् ऐसा प्रश्न है जो उन मूलभूत समस्याओं से संबंध रखता है जिनका बहुत दूरगामी प्रभाव होगा ।

फिर, मान्यवर, क्या मैं जान सकता हूँ कि क्या दक्षिण अफ्रीकी तथा युरोपियन लोग अन्य देशों में भी कभी इस काम के लिए बुलाए गये थे? क्या माननीय रेल सदस्य को नहीं मालूम कि बोलीविया, पैरागुई, आरजेण्टाइन तथा और भी अन्य अनेक देश हैं जहाँ कि रेल द्वारा यातायात तीन चार साल तक के लिए पूरी तरह से बन्द कर देना पड़ा क्योंकि रेलवे प्रशासन अपने खर्चे को ठीक से उठा नहीं पा रहा था । फिर भी इन देशों ने पड़ोस में ही स्थित दक्षिणी अफ्रीका के लोगों को अपनी समस्या सुलझाने के लिए नहीं बुलाया । यह केवल इसी देश में है कि हमने इतनी दूर से लोगों को यह बतलाने के लिए बुलाना उचित समझा कि भारतीय रेलवे में क्या खराबियां हैं । हमसे ऐसा कहा गया कि दक्षिणी अफ्रीका के बाहर इस विषय के विशेषज्ञ नहीं हैं । ठीक है, हम भी दक्षिणी अफ्रीका से बहुत कुछ परिचित हैं— वह भारतीयों को नीचा दिखलाने, उन्हें अपमानित करने तथा उनका मजाक उड़ाने में बहुत ही दक्ष है । मुझे नहीं मालूम कि इसके अलावा वह और किस बात में विशेष ज्ञान या कोई खास रुचि रखता है । माननीय रेल सदस्य ने कहा कि आप बहस में भावुकता भर रहे हैं । ठीक है, जहाँ तक हम यह जानते हैं कि राष्ट्रीय अर्थ–व्यवस्था के हल के लिए राष्ट्रीय आत्म–सम्मान ही एक मार्ग है, हमें भावुकता का सहारा लेना पड़ रहा है । वे व्यक्ति, जिनका दृष्टिकोण ही दुराग्रहपूर्ण हो, विज्ञान से सम्बन्धित प्रश्नों पर भी आपको ठोस राय नहीं दे सकते । फिर यह तो वैज्ञानिक समस्या भी नहीं है, रेलवे प्रशासन की समस्या तो एक मानव समस्या है । दक्षता की समस्या एक जन समस्या है, और यहाँ आपको देखना है कि आप इस देश में कितने अच्छे से अच्छे ढंग से दक्षता को बढ़ावा दे सकते हैं; कि कितने अच्छे तरीके से अर्थ–व्यवस्था में सुधार ला सकते हैं । फिर, शासन बराबर एक दुराग्रहपूर्ण नीति अपनाये हुए है । वह पिछले कुछ वर्षों से भाड़े की दरें बराबर बढ़ाता जा रहा है — और वह भी तब जब सभी क्षेत्रों में मूल्य घटते जा रहे हैं । और हम देखते क्या हैं कि जो रेल भाड़ा देश के भीतर ही एक निश्चित दूरी तक माल-असबाब लाने – ले जाने के लिए हमें देना पड़ता है वह उस भाड़े से बिल्कुल दुगुना है जो उतनी ही दूरी के एक बन्दरगाह से दूसरे बन्दरगाह तक पानी के जहाज द्वारा माल-असबाब लाने – ले जाने में चुकाया जाता है । सभी राजनैतिक प्रश्न हमारे सामने हैं । ऐसी स्थिति में हमसे यह कहना कि हम सदन में राजनैतिक या जातिगत दुराग्रह फैला रहे

हैं, सत्य की हत्या करना होगा । राजनीतिक दुराग्रह तो सरकार फैला रही है जो जान–बूझ कर भारतीयों को प्रशासन से अलग रख रही है । मेरा कहना यह है कि खतरनाक राजनैतिक तथा जातिगत दुर्भावना की दोषी सरकार है जिसके सारे कार्यों में यही दुर्भावनाएं देखने को मिलती हैं । सरकार ने हमेशा से अपना रवैया ही ऐसा बना रखा है । आपने आयकर के प्रश्न को हल करने के लिए विदेशों से लोगों का आयात किया......... ।

माननीय उपाध्यक्ष (श्री अखिल चन्द्र दत्त)–माननीय सदस्य के पास केवल दो मिनट का समय और है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मेरे लिए इतना समय बहुत काफी है । हाँ, तो शासन ने आय–कर की समस्या को सुझाने के लिए विदेशों से लोगों का आयात किया । क्या इस देश में कोई भी ऐसा व्यक्ति उपलब्ध नहीं था जो आय–कर के विषय को समझता हो? शासन ने हमारे बालकों की शिक्षा की समस्या का अध्ययन करने के लिए विदेशों से लोगों को बुलाया । क्या इस मामले को सुलझाने में सहायता करने के लिए कोई भारतीय उपलब्ध नहीं था? शासन ने भारतीय कृषि की समस्या को हल करने के लिए बाहर से लोगों को बुलाया । क्या इस मामले में भी मदद कर सकने के लिए इस देश में कोई उपलब्ध न था? शासन ने आर्थिक प्रशासन को सुधारने तथा बर्मा और भारत के सम्बन्धों को व्यवस्थित करने के लिए भी बाहर से ही लोगों का आयात किया । क्या हम यह कहें कि अपने डेढ़ सौ वर्षों के शासन काल में सरकार ने इस देश को ऐसी गिरी हुई हालत में ला पटका है कि कोई भी समस्या ऐसी नहीं है जिसे सुलझाने के लिए उसे इस देश में एक भी भारतीय मिल सके । इस देश में रेलों के चलते लगभग सौ वर्ष हो रहे हैं, और अन्य कई बड़े देशों से अधिक विस्तृत रेल–मार्गों का जाल यहाँ बिछा हुआ है, फिर भी शासन को सारे देश में एक भी भारतीय ऐसा नहीं मिला जो इस समिति में रखा जा सकता? माननीय रेल सदस्य ने इस सदन को बतलाया कि वह इस समिति में विदेशों से लोगों को इसलिए लाये क्योंकि कई अन्य समस्याओं पर भी विचार करना था जिसके लिए इस समिति के कार्य–क्षेत्र को काफी व्यापक बनाया जाना था । मैं आशा करता हूँ यह सदन रेल सदस्य की इन बातों से बहकावे में नहीं आयेगा ।

●

स्वतंत्रता का दिन निकट आ रहा है

मान्यवर, मुझे जो कुछ थोडा सा समय मिला है उसमें सम्भवतः मेरे लिए उस प्रश्न की कोर तक छू पाना सम्भव नही जो इस समय हमारे सामने है। फिर भी मैं प्रस्तुत किये गये बजट के वर्णनात्मक भाग पर कुछ टिप्पणियां करूँगा। तौर–तरीकों और साधनों से सम्बन्धित जो अधिक महत्वपूर्ण भाग है उस पर अपनी टिप्पणी बाद के लिए सुरक्षित रखूँगा।

मान्यवर, माननीय वित्त सदस्य ने हमें प्रतिवर्ष एक चिरस्थायी भेंट उपहार में दी है। पहले वर्ष 'शराबी की अनर्गल बकवास' जैसी भेंट के साथ उन्होंने यहाँ प्रवेश किया, और वह शब्द उन्हें सदैव के लिए स्मरणीय बनाये रखने के लिए काफी हैं। दूसरे वर्ष अर्थात् पिछले साल उन्होंने वसूली जैसे अद्भुतकर्मा शिशु को जन्म दिया जो थोड़े ही दिन जीवित रह सका। यदि कहा जाय कि वसूली का शिशु प्राणहीन पैदा हुआ तो ठीक ही होगा क्योंकि साल भर भी पूरा न होने पाया था कि वह मर गया। अब तीसरे साल माननीय वित्त सदस्य एक ढीठ अहंकारी व्यक्ति के बजाय एक परम उदार सत्पुरुष की भांति पुनर्जीवन का नारा लेकर प्रकट हुए हैं। उनका वर्तमान बजट इसी नारे से आरम्भ होता है। पहला बजट सदैव के लिए एक मद्यपी की अनर्गल बकवास के रूप में याद किया जायगा, दूसरा याद किया जायगा वसूली के झूठे वादों के रूप में और तीसरा पुनर्जीवन की मृगमरीचिका के रूप में। इस प्रकार उन्होंने हर साल कुछ–न–कुछ ऐसी बात बजट के साथ रखी है जो सदैव याद की जायेगी। मान्यवर, आज मैं कुछ अधिक कहने के लिए तैयार नहीं हूँ। मैं आशा तो करता हूँ कि पुनर्जीवन एक दिन अवश्य आरम्भ होगा परन्तु वह दिन तब तक नहीं आयेगा जब तक कि कब्रें न खुद चुकी होंगी और जब तक कि क़यामत का दिन न आ जायेगा।

लेजिस्लेटिव असेम्बली में 3 मार्च, 1937 को वर्ष 1937-38 के सामान्य बजट पर सामान्य चर्चा के अवसर पर पंतजी का भाषण।

मिस्टर एफ०ई० जेम्स– अन्तिम दिन तक ?

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मेरे विपक्षी मित्रों के सामने क़यामत का दिन जल्दी ही आयेगा और उसके बाद पुनर्जीवन की प्रक्रिया आरम्भ होगी और पुनर्लाभ आरम्भ हो जायगा । मिस्टर जेम्स के हिसाब से वह अन्तिम दिन हो सकता है और कुछ के लिए वह आखिरी क़यामत का दिन भी, परन्तु हमारे लिए वह एक नये युग का आरम्भ होगा । हम न्याय के उस दिन की प्रतीक्षा कर रहे हैं क्योंकि उसके बाद आरम्भ होगा पुनर्जीवन, पुनर्निर्माण तथा पुनर्लाभ के युग का । मान्यवर, माननीय वित्त सदस्य ने जो बजट पेश किया है उसका वर्णन शालीन भाषा में करना मेरे लिए कठिन हो रहा है ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग– यही कठिनाई मेरे सामने भी थी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त– मुझे प्रसन्नता है कि माननीय वित्त सदस्य मेरे साथ इस बात में सहमत हैं कि उनका यह बालक बिना नाम के और बिना वर्णन के छोड़ दिया जाय ।

श्री एम० एस० अणे – और उसकी मृत्यु पर न कोई रोये–धोये और न आँसू बहाए ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मुझे दुःख तो इस बात का है कि वह तब तक नहीं मरेगा जब तक कि अपनी सामर्थ्य भर हानि नहीं पहुँचा लेगा । यदि मैं कहूँ कि वह एक बर्बर बजट है तो भी यह बहुत कम होगा क्योंकि आज दुनिया के किसी भी कोने में कोई भी सभ्य शासन किसी सभ्य समाज के लिए इस प्रकार का बजट पेश करने का साहस नहीं कर सकता । मेरे पास कारण हैं जिस लिए मैं ऐसा कह रहा हूँ । मैं यह भी जानना चाहता हूँ कि इस बिषय में माननीय वित्त सदस्य मुझ से सहमत हैं । वह परिस्थितियों से मजबूर हैं और इसी कारण इससे अधिक अच्छा बजट पेश करना सम्भव नहीं पा रहे हैं । उन्हें स्वयं ऐसी परिस्थितियों का दास बनने का दुःख है । अब मैं बतलाऊँगा कि मैं इसे एक बर्बर बजट क्यों कहता हूँ ।

आज हम लौह युग में नहीं रह रहे हैं जिसमें कि किसी समाज के समस्त आर्थिक साधन मुख्य रूप से या लगभग पूर्ण रूप से विरोधी शक्तियों से अपना बचाव करने के लिए प्रतिरक्षा–व्यय के मद में डाले जायें । हम इस बजट में यही तो देख

रहे है कि लगान तथा विभिन्न अन्य करों के रूप में प्राप्त की गयी हमारी आय का लगभग 63 प्रतिशत भाग प्रतिरक्षा व्यय के रूप में रखा गया है । मान्यवर, इस बजट में दिये गये प्रतिरक्षा व्यय से संबंधित आंकड़े तथा माननीय वित्त सदस्य के बयान में दिये गये आंकड़े कुछ भूल–भुलैया में डालने वाले हैं । मेरे विचार से वे ठीक नही हैं । बजट तथा उसके साथ की इन पुस्तिकाओं के अनुसार प्रतिरक्षा पर किया जाने वाला वास्तविक व्यय कुछ इस प्रकार आता है– बजट में दिया गया कुल व्यय 51 करोड़ 26 लाख 7 हजार रुपये हैं । प्रतिरक्षा सेवाओं से होने वाली कुल आय 5 करोड़ 22 लाख रुपये आती है । आय को व्यय से घटाने पर कुल व्यय आयेगा 46 करोड़ 4 लाख 7 रुपये । इसमें 1 करोड़ 4 लाख रुपये वह जोड़ने पर जो बर्मा को अलग कर दिये जाने के कारण बचाये जाने चाहिए थे, तथा 20 लाख वह जोड़ने पर जो अदन के अलग किये जाने पर बचने चाहिए थे, कुल व्यय आयेगा 47 करोड़ 28 लाख 7 हजार रुपये । यह माननीय वित्त सदस्य द्वारा बतलायी गयी रकम से लगभग दो करोड़ अधिक है । इस प्रकार इस सीमा तक उनका बयान गलत है । वास्तव में प्रतिरक्षा व्यय के लिए किया गया यह प्राविधान चालू वर्ष की तुलना में 1 करोड़ 83 लाख अधिक है । मैं कोई कारण नहीं पाता कि क्यों कोई भी शासन ऐसे संकट के वर्ष में – जिससे होकर हम गुजर रहे हैं– इस प्रकार का बजट बनाये जिसमें इतने अधिक बढ़े हुए सैनिक व्यय का प्राविधान हो । वास्तव में, बजट के बचाव में कुछ भी कहना मुश्किल दिखा, इसलिए माननीय वित्त सदस्य को स्वयं इसे बहुत घुमा–फिरा कर रखना पड़ा और अपने आंकड़ों को इस रूप में प्रस्तुत करना पड़ा कि पूरे प्राविधानों का पता न चलने पाये । मान्यवर, इससे यह भी प्रकट हो गया कि प्रतिरक्षा अधिकारियों का भी प्रयत्न अपना बजट बढ़ा–चढ़ा कर पेश करने का रहता है । महा लेखा परीक्षक ने भी इस पर अपनी आस्था दी है; उन्होंने इस प्रकार अपने विचार क्यों प्रकट किये हैं, यह भी साफ जाहिर है । प्रतिरक्षा अधिकारी जितना भी धन अधिक–से–अधिक बन पड़े, नोच लेना चाहते हैं, और अब अर्थ–व्यवस्था की सभी मान्यताओं के विरुद्ध उन्हें यह छूट दे दी गयी है कि चालू कामों के लिए निर्दिष्ट धन–राशि के जितने भी भाग को वह चाहें बचा कर रक्षित प्रतिरक्षा कोष में हस्तान्तरित कर दें । अब यह उनकी आम आदत बन गयी है । मेरे विचार से इस प्रकार का आचरण कि इस सदन से अपने लिए एक बड़ी धन–राशि स्वीकृत करा ली जाय, फिर सबकी सब खर्च में न लाकर उसमें से कुछ बचाकर छिपा ली जाय जिसे अपनी इच्छा और सुविधा के अनुसार मनमाने ढंग से जब जी में आये खर्च किया जा सके, समाप्त कर दिया जाना चाहिए । खैर, यह तो कुछ अधिक महत्व की बात नहीं और मुझे इन विशिष्टताओं की भी कुछ अधिक चिन्ता नहीं । मैं जिस बात का जवाब माननीय वित्त सदस्य से चाहता हूँ वह यह है

कि जब सन् 1935-36 के आंकड़ों के अनुसार इंग्लैंड अपनी कुल आय के 15 प्रतिशत में अपने सैनिक व्यय का काम चला सकता है, जब जर्मनी अपनी कुल आय के 15 प्रतिशत में अपना सैनिक व्यय का काम चला सकता है, जब कनाडा अपनी कुल आय के 9 प्रतिशत में सैनिक व्यय का काम चला सकता है और आस्ट्रेलिया अपनी कुल आय के 4 प्रतिशत में ही सैनिक व्यय का काम चला लेता है तो क्या यह उचित है कि हमारे देश को – जो कि माननीय वित्त सदस्य को भी स्वीकार करना पड़ेगा कि विधाता की इस पृथ्वी के गरीब देशों में सबसे अधिक गरीब देश है— अपनी आय के इतने बड़े भाग को सैनिक व्यय के लिये स्वीकार करने पर बाध्य किया जाय? इंग्लैंड में जो ऋण उगाहा गया है उससे मैं अपरिचित नहीं हूँ परन्तु इंग्लैंड की तुलना हमारे देश से नहीं की जा सकती । इंग्लैंड को आधी दुनिया पर अपना शासन बनाये रखना है, और जितना हम सौ वर्षों में खर्च करेंगे उतना वह एक वर्ष में कमा सकता है ।

इसीलिए हम दोनों में कोई समता नहीं । जहां तक इस देश का सम्बन्ध है किसी भी शासन के लिए इतने संकट के वर्ष में – जब कि केवल शासन–तंत्र को चलाते रहने के लिए नये–नये कर लगाये जा रहे हैं — सैनिक व्यय को इतना अधिक बढ़ाना एक अपराध है । इस देश में ब्रिटिश शासन किस ढंग से कार्य कर रहा है यह हमारे सामने प्रस्तुत किये गये दस्तावेजों में से कुछ से, और भी स्पष्ट हो जाता है । माननीय वित्त सदस्य समय को पीछे और भी पीछे धकेल ले जाने के लिए तरकीबें निकालने में सिद्धहस्त लगते हैं । अगर आप लोग वित्त सदस्य के स्मृतिपत्र पर ध्यान देंगे तो पायेंगे कि मतदेय व्यय तथा अमतदेय व्यय के बीच का अनुपात घट गया है । सन् 1936-37 में कुल आय के विरुद्ध इस मद में जो व्यय दिखलाया गया है उसका केवल 48 प्रतिशत ही मतदेय व्यय था । वर्ष 1937-38 में यह प्रतिशत घटकर केवल 46 रह जायगा । फिर वह व्यय जो आय के विरुद्ध प्रभूत नहीं दिखलाया गया उसमें कुल व्यय का मतदेय व्यय वर्ष 1936-37 में 95 प्रतिशत था परन्तु अब मतदेय व्यय और कुल व्यय का अनुपात 95 से घट कर 63 पर आ गया है । मान्यवर, मेरे विचार से इस पर मेरा कुछ भी टिप्पणी करना अनावश्यक है । यही एक नमूना है जिस पर हमें इस देश में स्वायत्त शासन— जिसे संघीय शासन कहा जा रहा है – के लिए तैयार किया जा रहा है । वित्त के मामले में जो कुछ भी नाममात्र का नियंत्रण इस सदन का है वह इससे ले लिया जायगा, मतदेय मदें कम कर दी जायेंगी, मतदेय प्रतिशत घटा दिया जायेगा और अमतदेय मदें तथा प्रतिशत दोनों ही बढ़ा दिये जायेंगे । मैं जेम्स महोदय से उस दिन की कल्पना करने की बात कह रहा हूँ जिसका उल्लेख मैं ने आरम्भ में किया था ।

अब जरा उस पुस्तिका पर नजर डालिए जिसका नाम है "31 मार्च 1937 को समाप्त होने वाले वर्ष के लिए गवर्नर–जनरल–इन–काउंसिल द्वारा अमतदेय अनुदानों में वृद्धि तथा कटौतियों की स्वीकृति का विवरण ।" इस विवरण में हम क्या देखते हैं? यही न कि ऐसे वर्ष में, जिसमें शासन को अपनी आमदनी और खर्च में तालमेल्ल बैठाने में कठिनाई हो रही है, 'राजनैतिक' कहे जाने वाली मद के व्यय में कम नहीं, 26 लाख 67 हजार रुपये की वृद्धि की गयी है । इस पुस्तिका के आठ पृष्ठों में उन विभिन्न मदों का उल्लेख है जिनमें विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत धन बर्बाद करने के उन सभी सोचे या ईजाद किये जा सकने वाले तरीकों से व्यय बढ़ा देना गवर्नर–जनरल को उचित लगा । इन सभी में उन्होंने व्यय की सीमा बढ़ा दी है, नतीजतन, यदि आप इन पृष्ठों को देखें तो पायेंगे कि सार्वजनिक स्वास्थ्य, कृषि तथा अन्य कई मदों के लिए किये गये धन के प्राविधान का उपयोग नहीं किया गया, विनियोग नहीं किया गया और इसी का बहाना लेकर उसे घटा दिया गया है । इसके विपरीत राजनैतिक सेवाओं के लिए जो प्राविधान किया गया था वह गवर्नर जनरल द्वारा पर्याप्त नहीं समझा गया और उसके लिए उन्होंने स्वयं 25 लाख रुपयों के अतिरिक्त व्यय की स्वीकृति दे दी है । यह आँख खोल देने वाला एक उदाहरण है । और, जैसा कि उस उक्त पुस्तिका के पृष्ठ 19 को देखने से आपको पता चलेगा, एक ओर तो राजनैतिक मदों के अन्तर्गत व्यय में 26 लाख की वृद्धि की गयी है और दूसरी ओर गैरसरकारी माध्यमिक विद्यालयों, गैरसरकारी प्राथमिक विद्यालयों, चिकित्सा तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य, चिकित्सालयों, औषधालयों, सार्वजनिक स्वास्थ्य के विभागों आदि के अनुदानों आदि के मान में कटौती कर दी गयी है । यही नहीं, इन मदों के लिए जो धन स्वीकृत किया जा चुका था उसका भी पूरी तरह से उपयोग नहीं किया गया है । इन सब बातों पर बहस करना आवश्यक नहीं है । इनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि गवर्नर–जनरल का दिमाग किस तरह काम कर रहा है । इनसे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि माननीय वित्त सदस्य तथा उनकी सरकार के दिमाग में कि बातों का कितना मूल्य आँका जाता है । इस प्रकार मान्यवर, जब मैंने कहा था कि यह बजट एक बर्बर बजट है तो अतिशयोक्ति नहीं थी ।

माननीय उपाध्यक्ष (श्री अखिल चन्द्र दत्त) – माननीय सदस्य के पास दो मिनट और हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–मान्यवर, मैं तो चाहता हूँ कि यह दो मिनट भी किसी और को उपहार में दे दूँ । खैर, मैं दो मिनट के भीतर ही अपनी बात समाप्त कर

दूँगा ।

मान्यवर, सभी अन्य देशों में शासन अपना यह कर्तव्य समझता है कि वह अपनी आय को मुख्य रूप से रचनात्मक कार्यों में लगाये । यहाँ मेरे सामने यूनाईटेड किंगडम की ब्रिटिश गवर्नमेंट की सिविल सेवा के लिए सन् 1936 के आकलन है । इनमें हम क्या देखते हैं? इनमें हम देखते हैं कि 70 करोड़ का प्राविधान शिक्षा के लिए है, 200 करोड़ का प्राविधान स्वास्थ्य, श्रम तथा बीमा के लिए है, 20 करोड़ का प्राविधान व्यापार तथा उद्योगों के लिए है, डेढ़ करोड़ का प्राविधान पशु–संवर्धन के लिए है, तीन करोड़ का प्राविधान कृषि तथा मत्स्यपालन के लिए है, और 60 लाख का प्राविधान कृषि–शिक्षा के लिए है । चुकन्दर से शकर बनाने के उद्योग के लिए 50 लाख की राजसहायता का प्राविधान है और दो करोड़ की राजसहायता का प्राविधान दुग्ध उद्योग तथा दुग्ध उपयोग को बढ़ावा देने के लिए है । इसी प्रकार के अन्य प्राविधान भी इसमें है और 60 करोड़ का प्राविधान किया गया है स्थानीय निकायों की सहायता के लिए । मैं जानता हूँ कि हमारे यहाँ इस मामले में प्रान्तीय क्षेत्र केन्द्रीय क्षेत्र से अलग हैं, परन्तु इससे मूल तर्क पर कोई फर्क नहीं पड़ता । फिर, वह आंकड़े पिछले वर्ष के हैं । वर्तमान वर्ष के लिए हमारे सामने वास्तविक आँकड़े अभी तक नहीं आये हैं । हाँ, एक समाचार–पत्र की रिपोर्ट यह है कि

"मुख्य योग इस प्रकार है: 7,20,00,000 पौण्ड डाकघरों के लिए 5,10,00,000 पौण्ड बेरोजगारों की सहायता के लिए; 4,50,00,000 पौण्ड बूढ़े व्यक्तियों की पेंशन के लिए; 4,90,00,000 पौण्ड शिक्षा बोर्ड के लिए; पेंशन के लिए 4,00,00,000 पौण्ड; इंग्लैंड के स्थानीय निकायों के लिए राजकोष से अंशदान 4,70,00,000 पौण्ड, आदि–आदि ।"

मान्यवर, अन्य देशों में जनता से वसूले गये धन का अधिकांश भाग जनता की भलाई के कामों में खर्च किया जाता है— ऐसे कामों में खर्च किया जाता है जिनसे सामाजिक पुनर्निर्माण हो, जनता की सुविधाएं बढ़ें, और व्यापार तथा उद्योगों की उन्नति हो । हमारे देश में इसका बिल्कुल उल्टा किया जाता है । मेरा कहना है कि जब दो साल पहले वित्त सदस्य महोदय ने वेतन में कटौती किये जाने के प्रस्ताव को वापस लिये जाने की स्वीकृति दी तो उन्होंने दण्डनीय अपव्यय, भारी अविवेक और घोर अन्याय का अपराध किया । उन्होंने अधिकर अधिभार को घटाकर अविचारपूर्ण दूसरा अपराध किया । इसकी अनुमति नहीं दी जानी चाहिए थी । इन वर्गों के लोगों से जो धन लिया जाता था उसे वे आसानी से दे सकते थे । माननीय वित्त सदस्य को इस बात का पता रहना चाहिए था कि संकट के दिन आने

वाले हैं; वे जानते थे कि इस अनचाहे शासन-तंत्र के एक हिस्से के रूप में प्रान्तीय स्वायत्तता इस देश पर लादी जाने वाली है । इसलिए उन्हें उसके लिए तैयारी करनी थी । यह सब जानते हुए भी उन लोगों को — जो किसी भी प्रकार की छूट के कम से कम अधिकारी हैं — इस प्रकार की छूट देने के लिए इस अशिष्टतापूर्ण ढंग से उतावली क्यों दिखलायी गयी?

माननीय उपाध्यक्ष (श्री अखिल चन्द्र दत्त) – माननीय सदस्य का समय समाप्त हो गया है परन्तु अधयक्ष को दल के नेता ने ऐसी सूचना दी है कि वह इस विषय पर कुछ नहीं बोलेंगे और पंडित पन्त ही दल के नेता के रूप में बोलते रहेंगे । इसलिए अध्यक्ष का निर्णय है कि वह पांच मिनट और ले सकते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त –अगर आप केवल पाँच मिनट का समय दे रहे हैं तो वह दल के उपनेता को दे दें क्योंकि दल के नेता को निःसन्देह अधिक रियायत मिलनी चाहिए । (हँसी) ।

माननीय उपाध्यक्ष (श्री अखिल चन्द्र दत्त)–अध्यक्ष ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि दलों के नेताओं ने स्वयं ऐसी व्यवस्था निश्चित की थी । यदि नियमतः देखा जाय तो, अध्यक्ष इस विषय में अपनी इच्छा से कुछ नहीं कर सकता । यह रियायत कांग्रेस दल के नेता की याचना पर ही दी गयी है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मान्यवर, जिस समय भारत सरकार ने वेतनों में कटौती को समाप्त किया और अधिकर अधिभार में कमी की, उस समय शासक भली भांति जानते थे — जैसा कि वह आज जानते हैं— कि विभिन्न प्रान्तों को पूरी तरह से अलग किया जा चुका है । उस समय प्रान्तों में घाटा था, आज भी घाटा है । एक साल भी कभी ऐसा नहीं गुजरा जबकि प्रान्तों को भारी घाटे का सामना करना न पड़ा हो । अगर मुझे ठीक याद है तो वर्ष 1931-32 में सब प्रान्तों का कुल घाटा लगभग 5 करोड़ रुपये था । बम्बई, मद्रास और पंजाब को छोड़ देने पर वर्ष 1935-36 में भी घाटा 2 करोड़ से ऊपर का हुआ । अब, जब कि भारत सरकार उच्च अधिकारियों का वेतन सीधे स्वयं निश्चित करती हैं, निम्न श्रेणी के अधिकारियों का वेतन अप्रत्यक्ष रूपसे निश्चित रूप से निश्चित किया जाता है, और भारी घाटे के वर्षों में भी उच्च अधिकारियों के वेतन तथा भत्तों में वृद्धि की जाती रहती है, तो यह गरीब प्रान्त अपना काम किस तरह चलायें? भारत सरकार ने इन प्रान्तों के साथ घोर अन्याय किया है । मैं तो यह कहूँगा कि उसने उन लोगों को रियायतें देकर, जो कि इन

रियायतों के बिना भी अपना काम आसानी से चला सकते थे, दण्डनीय अपव्यय तथा अविवेक का काम किया है ।

मान्यवर, इस वर्ष घाटे की पूर्ति के लिए माननीय वित्त सदस्य ने दो तरीके निकाले हैं । मुझे नहीं मालूम कि सैनिक व्यय में बर्मा का हिस्सा यह एक करोड़ चार लाख रुपये किसने निश्चित किया है । बर्मा जैसे सीमावर्ती प्रान्त का सैनिक व्यय निश्चित रूप से एक करोड़ चार लाख रुपये से कहीं अधिक होना चाहिए, और यदि उचित दृष्टिकोण अपनाया जाय तो बर्मा के अलग हो जाने के कारण भारत में सेना का व्यय कम से कम पाँच करोड़ रुपये कम कर दिया जाना चाहिए । यह एक आश्चर्य की बात है कि केवल कागज पर ही बर्मा के लिए सेना को अलग दिखलाकर सरकार ने इतना कम — यानी केवल एक करोड़ चार लाख रुपये का ही — व्यय कम करना तय किया है । माननीय वित्त सदस्य ने इस घाटे की पूर्ति के लिए दो उपायों का सहारा लिया है । वह अब भी पुनर्लाभ के अपने पुराने जादू से चिपके हुए हैं । भारत सरकार ने इस मामले में बड़ी ही शोचनीय भूमिका अदा की है । इस संसार में जितनी भी सरकारें हैं उन सब में भारत सरकार ही एक ऐसी सरकार है जिसने पुनर्लाभ के दिन को लाने के लिए जरा भी प्रयास नहीं किया, उसने तनाव तथा गिरावट के दिनों में जरा सी भी तो सहायता नहीं की, हाँ,दुनिया के सामने इस बात की ढोल पीटने में कि 'पुनर्लाभ के दिन आ गये हैं और सारी मन्दी समाप्त हो चुकी है' वह सबसे आगे रही है । मैं जोर देकर कह सकता हूँ कि जहाँ तक भारत सरकार का संबंध है पुनर्लाभ के दिन का अस्तित्व ही कभी नहीं रहा । सरकार बराबर पनपती रही और चाहे सुख के दिन रहे हों चाहे संकट का समय वह इस देश का खून हमेशा चूसती रही । जहाँ तक शासकों का संबंध है उनके लिए समय सदैव एक सा रहा—हमेशा अनुकूल — कभी गिरावट आयी ही नहीं, इसलिए पुनर्लाभ का कोई सवाल नहीं था । अब मैं माननीय वित्त सदस्य से प्रश्न कर रहा हूँ कि क्या वह वास्तव में आश्वस्त है कि इस देश में भारी मन्दी नहीं आयी है? वे कौन सी बातें हैं जिनकी ओर उन्होंने सदन का ध्यान आकर्षित किया है? उनके कथनानुसार निर्यातों में वृद्धि हुई है और आन्तरिक व्यापार में भी वृद्धि हुई है । क्या कभी उनकी निगाह इस बात पर भी गयी है कि आय–कर में कमी आयी है, कस्टम शुल्क की वसूली में कमी आयी है, यहाँ तक कि नमक कर की वसूली में कमी आयी है । नमक के कर में ही इस वर्ष 50 लाख रुपये की गिरावट आयी है । इससे क्या प्रकट होता है? यही न कि इस देश की गरीब जनता के पास नमक तक खरीदने के लिए पर्याप्त पैसे नहीं हैं, उसे अपने दिन बिना नमक के गुजारने पड़ रहे हैं? और फिर भी वित्त सदस्य बड़ी ही चिकनी चुपड़ी भाषा में स्थिति सुधार की बातें कर रहे हैं । मैं उन्हें बतला देना

चाहता हूँ कि साधारण चीजों के दाम भी इतने गिर गये हैं कि स्थिति-सुधार की कल्पना तक नहीं की जा सकती । उनका कहना है कि दामों में वृद्धि हुई है । मेरे सामने यहाँ पर रिजर्व बैंक की सन् 1936 की जनवरी से दिसम्बर तक की रिपोर्ट मौजूद है जो इस बात की पुष्टि करती है कि वस्तुओं के दामों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है । मैं अन्य प्रमाणों की ओर ध्यान आकर्षित नहीं करूंगा । बस इतना कहूँगा कि कृषि उत्पादों के मूल्यों में वस्तुतः कोई वास्तविक परिवर्तन नहीं हुआ है.......... ।

माननीय उपाध्यक्ष (श्री अखिल चन्द्र दत्त)— माननीय सदस्य का समय समाप्त हो गया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त—बहुत अच्छा मान्यवर । हाँ, तो युद्ध की तैयारियाँ तथा पुनर्शस्त्रीकरण के कारण आज एक असामान्य परिस्थिति आ उपस्थित हुई है । कोई भी कल्पनाशील तथा सहानुभूतिपूर्ण सरकार घाटे की पूर्ति के लिए शकर और चाँदी पर टैक्स बढ़ाने के बजाय एक हजार एक अन्य तरीके निकाल लेती । वह आसानी से सोने पर निर्यात-कर लगा सकती थी । परन्तु ऐसे मामले हैं जिनके संबंध में मैं आगे चलकर तब कहूँगा जब वित्त बिल पर बहस होगी । इस समय मैं पूरे विश्वास के साथ यही कहूँगा कि यह भारी–भरकम व्यवस्था अपने ही बोझ के कारण जल्दी ही समाप्त हो जायेगी और इस देश में स्वतंत्रता का दिन, आर्थिक सम्पन्नता का दिन तथा पुनर्लाभ का समय शीघ्र ही आयेगा क्योंकि पुनर्जीवन का दिन तथा ईश्वरीय न्याय का दिन दोनों ही साथ–साथ बड़ी तेजी से निकट आ रहे हैं । (विरोधी दल की हर्षध्वनि) ।

●

विभेदपूर्ण संरक्षण

मान्यवर, मैंने पाया कि प्रातः काल से जटिल समस्याओं में से कुछ पर ही चर्चा केन्द्रित रही, किन्तु विवाद ने वैचारिक विभ्रम उत्पन्न किया है और यदि मैं दूसरे शब्दों में कह सकूँ, तो विचारों को शिथिलतापूर्वक व्यक्त किया गया है । मान्यवर, कहा गया है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है, जबकि अन्य देश कृषि प्रधान नहीं हैं, तथा यहाँ पर उत्पादक–उपभोक्ता के पारस्परिक हितों में एक अनिवार्य टकराव है । इसी प्रकार की अन्य कई बातें कही गयी हैं. । वास्तव में मैं नहीं समझता कि माननीय सदस्यगण यह कहना चाहते हैं कि एक कृषि प्रधान और एक वस्तु निर्माता देश में यथार्थतः कोई अपरिहार्य टकराव रहता है । संयुक्त राज्य अमेरिका एक कृषि प्रधान देश है या कि वस्तु निर्माता देश ? उसे किस श्रेणी में रखा जा सकता है? मेरे विचार से माननीय वित्त सदस्य इस तथ्य से अवगत हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका हमारे देश से भी अधिक बड़ी मात्रा में बुनियादी चीजों का उत्पादन करता है और दशकों से करता आ रहा है । मुझे विश्वास है कि वे जानतें हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका मात्रा में प्रतिवर्ष हमारे देश की तुलना में कम से कम आठ गुना अधिक गेहूँ पैदा करता है, साथ ही संयुक्त राज्य अमेरिका की जनसंख्या भी भारत की जनसंख्या की एक तिहाई ही है, फिर भी अमेरिका अपने गेहूँ की उतनी बड़ी मात्रा का निर्यात नहीं करता, जितना कि हम करते हैं । संयुक्त राज्य अमेरिका हमारी अपेक्षा कई गुना अधिक कपास पैदा करता है । तब भी वह इसके अधिकांश का कताई-बुनाई में इस्तेमाल अपने ही यहाँ करता है । संयुक्त राज्य अमेरिका एक कृषि प्रधान देश है या कि वस्तु निर्माता? माननीय वित्त सदस्य इस देश (अमेरिका) को किस वर्ग या श्रेणी के अन्तर्गत रखेंगे?

पुनः मान्यवर, क्या उत्पादक व उपभोक्ता के हितों में कोई अपरिहार्य संघर्ष है ? उत्पादक कौन होता है? माननीय सदस्यगण वस्तुतः 'उत्पादक' शब्द से

सामान्य बजट मांगों पर चर्चा के दौरान 9 मार्च, 1937 को पंत जी द्वारा लेजिस्लेटिव असेम्बली में दिया गया भाषण ।

क्या अर्थ लेते हैं? .... एक हलवाहा? या वह व्यक्ति जो कुल्हाड़ी व हँसिए का प्रयोग करता है? जहाँ तक अर्थशास्त्र का सम्बन्ध है, मेरा विश्वास है कि 'सेवाएँ' उत्पादन की श्रेणी में आती हैं, और व्यापार संगठित करने वाला कोई व्यक्ति उसी प्रकार एक उत्पादक है जिस प्रकार एक भूमि जोतने वाला । जब हमसे कहा जाता है कि उत्पादक व उपभोक्ता के मध्य संघर्ष है तो 'उत्पादक' शब्द का प्रयोग किस अर्थ में किया जाता है ?

साथ ही मैं यह जानता हूँ कि आज का विचित्र घटनाक्रम, जिसने माननीय वित्त-सदस्य को भी चकित किया है, क्या है? मूल तथ्य विवाद से परे है । हम वह कृषि संपदा उत्पन्न करते हैं, जो इंग्लैण्ड जापान तथा अन्य बहुत से देश प्राकृतिक प्रतिकूलता के कारण नहीं उत्पन्न कर पाते फिर भी यदि कृषि-प्रधान और वस्तु उत्पादक देशों की इस दलील को इसके तार्किक निष्कर्ष पर ले जायें तो इस नतीजे पर पहुँचेंगे कि वे देश जो कुछ भी अनाज पैदा नहीं करते, स्वतंत्रतापूर्वक आयात शुल्क लगा सकते हैं, जबकि स्वत: कच्चा माल पैदा करने वाले देशों को ऐसा आयात-शुल्क नहीं लगाना चाहिए । मेरा मत है कि इससे अधिक असंगत कुछ भी नहीं हो सकता है । यदि वे देश जो अपनी भूमि में कुछ भी नहीं उत्पन्न करते हैं, उन वस्तुओं पर भी आयात-शुल्क लागू कर सकते हैं जो उनके निर्वाह के लिए निहायत जरूरी है और जिनकी उन्हें अपनी जीवन–रक्षा के लिए नितान्त आवश्यकता है तो यह अधिक स्वाभाविक और सहज होगा कि स्वयं अपना कच्चा माल उत्पन्न करने वाले देश दूसरे देशों से आयातित माल पर आयात शुल्क लागू करें क्योंकि ऐसे देश खुद ही कच्चे माल को सरलतापूर्वक तैयार वस्तुओं में बदल सकते हैं, उनका इस्तेमाल कर सकते हैं । हमारे देश में आज जो स्थिति है वह कितनी शोचनीय है, कितनी दयनीय है! हम गेहूँ पैदा करते हैं परन्तु हमारे देशवासी भूख से मरते हैं और इंग्लैण्ड के पास गेहूँ की भरमार है । हम कपास पैदा करते हैं किन्तु हमारे देशवासियों के तन ढकने को वस्त्र नहीं है और वे आवश्यक कपड़ों के अभाव में शीत से मरते हैं, यद्यपि इंग्लैण्ड— जिसे यह नहीं ज्ञात है कि कपास का पौधा कैसा होता है— करोड़ों गज कपड़े का निर्यात करता है । क्या यह न्यायोचित है? क्या यह उपयुक्त व्यवस्था है? मेरा विचार है कि ये तथ्य वर्तमान व्यवस्था की आन्तरिक कमियों को व्यक्त करते हैं ।

मान्यवर, मेरे विचार से मेरा कथन अत्यधिक साफ तथा सरल है । परन्तु अब मैं आगे यह कहता हूँ कि इंग्लैण्ड जैसे देश ने भी किसी समय अपने देश में आयात होने वाले वस्त्र तथा दूसरी चीजों पर भारी आयात-शुल्क लगाया था— यह भारी

आयात–शुल्क का ही परिणाम था कि वे अपने देश में ही उद्योगों का विकास करने में सफल रहे– तो मैं सोचता हूँ कि यही अन्तिम तार्किक निष्कर्ष है । अत: आयात शुल्क लागू करने में कोई दोष नहीं है, वरन् दोष है इस प्रकार अर्जित सम्पत्ति के उपभोग में । उत्पादन और वितरण को आपस में मिला देने से भ्रम उत्पन्न हो जाता है । कोई भी यह नहीं कह सकता है कि अधिक सम्पत्ति का उत्पादन स्वत: वांछनीय नहीं है । जबकि देशवासी बेरोजगार हों तो एक देश दूसरे देशों मे आयातित माल पर आरक्षण शुल्क लगाने के बजाय उन वस्तुओं के विकल्प के रूप में स्वदेशी वस्तुओं का प्रसार करे तो देश की सम्पत्ति बढ़ेगी, बेकारी दूर होगी और देश के आर्थिक स्तर को निस्संदेह क्रमशः ऊँचा उठाया जायेगा । वे वस्तुएँ जिन्हें हम पहले आयात करते रहे हैं, और अब अपने देश में उत्पन्न करने जा रहे हैं, तो उससे होने वाला संपत्ति-लाभ निश्चय ही,पूर्व में प्राप्त होने वाले लाभ से अधिक होगा । प्रश्न, जिस पर माननीय वित्त सदस्य को भी ध्यान देना है, यह है कि देश के अन्दर उत्पादित अतिरिक्त सपत्ति के सर्वाधिक न्यायसंगत वितरण की क्या व्यवस्था होनी चाहिए? परन्तु अधिक संपत्ति के उत्पादन को अधिक बढ़ाने के बारे में कोई प्रश्न नहीं उठाया जा सकता है, और यदि आयात–शुल्क इस उद्देश्य की पूर्ति में सहायक हो सकता है तो इस उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए इसका उपयोग अवश्य किया जाना चाहिए । मेरे ख्याल से कोई भी स्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति इस संबंध में किसी प्रकार की आपत्ति नहीं करेगा ।

सम्प्रति विश्वव्याप्त अन्य तथ्यों का भी हमें ध्यान रखना है, और वे ये हैं : आर्थिक राष्ट्रवाद की एक लहर सी चल रही है; प्रत्येक राष्ट्र आत्मावलम्बित होना चाहता है; चुंगी की दरें ऊँची हैं, और कई देशों में और भी ऊँची होती जा रही हैं; कोटा प्रणाली तथा द्विपक्षीय अनुबंध की तथा इसी प्रकार की अन्य प्रणालियाँ लागू हैं जो व्यापार को प्रतिबंधित करती हैं तथा निर्यात को सीमित कर देती हैं; साथ ही भारत एक कर्जदार देश है जिसे नकद या वस्तुओं के रूप में प्रतिवर्ष एक भारी धनराशि विदेशों को अदा करनी होती है । क्या वह (भारत) संपत्ति उत्पादन के अभाव में ऐसा कर सकता है? क्या अतिरिक्त संपत्ति का उत्पादन न करने पर देश के निवासी इस कार्य में सहायक हो सकते हैं ? मैं समझता हूँ कि माननीय वित्त–सदस्य फासेट की उस स्थापना से परिचित हैं जिसे अन्य अर्थशास्त्रियों ने भी दोहराया है और जो एक व्यावहारिक सत्य है, कि प्रत्येक व्यक्ति द्वारा उपभोग की जा सकने वाली प्राथमिक वस्तुओं की मात्रा की एक सीमा होती है । मेरी दीर्घाकृति के बावजूद मेरे सामने चाहें कितना ही स्वादिष्ट भोजन रखा हो,मेरे आहार की मात्रा सीमित रूप से ही बढ़ सकती है, किन्तु परिधान मैं दिन भर में दस बदल सकता हूँ,

प्रातः से रात्रि तक पचास जोड़े जूते पहन सकता हूँ । अतः यदि आप देश की आन्तरिक सम्पत्ति की मात्रा और विस्तार में वृद्धि चाहते हैं तो यह कार्य केवल उत्पादन प्रक्रियाओं में विस्तार लाकर ही किया जा सकता है, केवल कृषि प्रक्रिया के माध्यम से नहीं । खास तौर से,जैसा कि माननीय वित्त सदस्य अवगत हैं, आज प्रत्येक राष्ट्र आत्मनिर्भर बनने का प्रयास कर रहा है– यहाँ तक कि कृषि उत्पादन के क्षेत्र में भी । हम चीनी उद्योग के बारे में अवगत हैं । क्या हम नहीं जानते कि इंग्लैण्ड ने मेरे विचार में 11 शिलिंग10 पेन्स प्रति हंडरवेट चीनी की दर से आयात–शुल्क लगाया था जो कि 7 रु० प्रतिमन से अधिक बैठता है और इसके साथ ही चुकन्दर आधारित चीनी उद्योग की अपने यहाँ स्थापना के लिए इंग्लैण्ड प्रतिवर्ष 4 करोड़ की अनुग्रह राशि व्यय कर रहा है जबकि यह अनुभव किया जा चुका है कि इंग्लैण्ड या स्कॉटलैंड जैसी जलवायु में इस प्रकार के उद्योग की स्थापना सम्भव नहीं है । मेरे सम्मानित मित्र यह भी जानते हैं कि सम्प्रति इंग्लैण्ड प्रत्येक जोड़ी जूतों पर एक शिलिंग से भी अधिक आयात शुल्क लगाता है । प्रत्येक देश वर्तमान समय में विदेशों में निर्मित माल के आयात पर शुल्क लागू करता है, चाहें इन चीजों का देश की सीमा में कम लागत पर बनाना सम्भव न हो । इन परिस्थितियों में हमें यहाँ क्या करना चाहिए? हमें आर्थिक सम्पत्ति का अर्जन तथा देश के आर्थिक ढांचे का निर्माण किस प्रकार करना चाहिए? मुख्य प्रश्न यह है कि आप और अधिक संपत्ति का उत्पादन कैसे कर सकते हैं, और कैसे आप औसत आदमी, आम नागरिक की क्रयशक्ति में वृद्धि कर सकते हैं? कैसे उसके जीवनस्तर को ऊँचा उठा सकते हैं? इसका उपाय क्या है? जहाँ तक संभव हो देश में ही कच्चे माल से वस्तुएँ तैयार करने की प्रक्रिया का विस्तार किया जाय, यही एक स्पष्ट समाधान है । परन्तु इनका इस्तेमाल कैसे किया जाये? हमको अन्य राष्ट्रों से,जिन्हें इसका लम्बा अनुभव है, प्रतिस्पर्धा करनी होगी । हम उनका सामना तब तक न कर सकेंगे जब तक कि अपने देश के नवजात उद्योगों को किसी न किसी प्रकार का संरक्षण या प्रोत्साहन न प्राप्त हो । अतएव आयात शुल्क लागू किया जाना एक अनिवार्यता है । मेरे मत में,यह अधिक उचित होगा कि औद्योगीकरण का कार्य राज्य अपने हाथ में लें, क्योंकि केवल उसी दशा में लघु उद्योग व्यवस्थित रूप में बड़े उद्योगों से जोड़े जा सकेंगे, घरेलू उद्योग प्रमुख उद्योगों का अनुसरण कर सकेंगे और केवल तभी कृषि तथा उद्योग एक समय में ही साथ–साथ उन्नति कर सकेंगे । किन्तु सरकार ऐसा करने से इन्कार करती है वस्तुतः इस प्रकार की योजना से ही हम पिछड़ेपन के अभिशाप से मुक्त हो सकते हैं, जो आज इंग्लैण्ड के लिए कष्टकर सिद्ध हो रहा है । परन्तु हमें इसकी अनुमति प्राप्त नहीं है। यदि अन्ततः हमें आयात–शुल्क और भारी चुंगी दरों तथा देश की सम्पत्ति के विनाश के बीच एक को चुनना हो, तो हम दूसरे की अपेक्षा पहले को तरजीह देंगे

मुझे वास्तव में दुःख होता है कि इस प्रकार के मामलों में बहुधा ऐसे मिथ्या तर्क दिये जाते हैं जो कि तर्क-परीक्षण या अर्थशास्त्रीय कसौटियों पर क्षण भर भी नहीं टिक पाते । मैं मानता हूँ कि आयात शुल्क को लागू करने के अतिरिक्त भी ऐसी विधियाँ हो सकती हैं, जिनके माध्यम से अतिरिक्त संपदा का वितरण अधिक न्यायसंगत ढंग से किया जा सकता है । परन्तु अधिक सम्पत्ति का उत्पादन वक्त का तकाजा है, जिसके बिना हम कतई आगे नहीं बढ़ सकेंगे । क्या यह अवस्था दुःखदायी नहीं है कि हालांकि हम गेहूँ का उत्पादन कर रहे हैं पर हमारे लोग रोटी के अभाव में भूखे मर रहे हैं; कि हम कपास-उत्पादन कर रहे हैं, परन्तु लोग एक लंगोटे के अभाव में ठिठुर रहे हैं । इस देश से बुनियादी कच्चे माल का निर्यात मुक्त व्यापार के अन्तर्गत या स्वेच्छा से नहीं किया जा रहा है । भूख से मरता हुआ व्यक्ति गेहूँ बेचना नहीं चाहेगा और न ही शीत से ठिठुरता हुआ व्यक्ति अपने कपास-उत्पादन से वंचित होना पसन्द करता है—वह ऐसा करने के लिए विवश है, और यह एक प्रकार से आपात व्यापार है, जैसे कि सोने का आयात–निर्यात । हमें इस प्रश्न पर सही दृष्टिकोण से विचार करना चाहिए ।

पुनः, उत्पादक व ग्राहक में टकराव कहाँ? हमसे चीनी उद्योगों के बारे में बहुत कुछ कहा गया है । मैं जानना चाहता हूँ कि क्या वस्तुतः उत्पादक–उपभोक्ता के हितों में टकराव है? वर्तमान में इसकी क्या हालत है? चीनी पर शुल्क लगाने से हाल के वर्षों में गन्ना पैदा करने वाले क्षेत्र का काफी विस्तार हुआ है, तथा गन्ना उत्पादकों की आय में लगभग नौ करोड़ रुपये की वृद्धि होने के साथ ही हजारों व्यक्तियों को रोजगार भी मिला है ।

माननीय अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम)— माननीय सदस्य के लिए केवल दो मिनट और शेष हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— राज्य आयात शुल्क में कमी की क्षतिपूर्ति कुछ सीमा तक उत्पादन कर से हो जाती है । अब अधिक उत्पादन कर कैसे प्राप्त किया जा सकता है? ऐसा चीनी को मंहगा बनाने से नहीं वरन् इसे सस्ती करने से हो सकता है जिससे कि देश में चीनी का उपभोग बढ़े, तथा निम्न वर्ग के लोग, जो अभी ऊँचे दामों के कारण चीनी क्रय करने में असमर्थ हैं, इसे खरीदने में सक्षम हो सकें । यदि आप चीनी के दाम गिराएं तो उसके उपभोक्ता–क्षेत्र का विस्तार होगा । उपभोक्ता–क्षेत्र का विस्तार निर्माता को दाम और अधिक कम करने के लिए प्रेरित करता है, साथ ही कृषक अधिक गन्ना उत्पादन करने में सक्षम होता है, जिससे वह पहले गुड़ बनाकर

प्राप्त करता था उसकी अपेक्षा अधिक मूल्य प्राप्त कर सके । अन्ततोगत्वा, यह समस्या माल के सस्ते उत्पादन द्वारा हल होगी और यह काम भारी उत्पादन शुल्क लगाकर नहीं, बल्कि अधिक सुविधाएँ देकर और देशी चीनी के व्यापक उपभोग द्वारा हल की जा सकती है । मेरा विश्वास है कि माननीय वित्त सदस्य अवगत हैं कि वर्ष 1932-33 तक इस देश में उत्पादन कर से प्राप्त आय एक करोड़ रुपये से अधिक नहीं थी । आज यह लगभग आठ करोड़ रुपये है । ऐसा किस प्रकार हुआ? यह आय उद्योगों के विस्तार के कारण ही बढ़ी है । सूती वस्त्रों का ही उदाहरण लीजिए– क्या वस्तुतः उत्पादक–उपभोक्ता के मध्य संघर्ष है? हम प्रतिवर्ष पूरे विश्व में अपने कपास उत्पादन के लिए बाजार की खोज करते रहे हैं । हमारे देश में यदि कोई वस्त्रोद्योग नहीं होता तो हमारी कैसी दुर्दशा होती? क्या हम बम्बई, अहमदाबाद और शोलापुर के कपड़ा कारखानों में उत्पादित करोड़ों गांठ कपड़े का उपभोग करने में समर्थ होते? और क्या सूती वस्त्रोद्योग के विस्तार से कपास के उत्पादकों या उपभोक्ताओं पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है? कल्पना कीजिए कि आप (उत्पादन) शुल्क वापस लेकर वस्त्र उत्पादन को घटा देते हैं– इसका क्या परिणाम होगा? हम कपास की उस मात्रा में भी खपत नहीं कर पायेंगे जितनी आज होती है और यदि विदेशी बाजारों में उसकी अधिक बिक्री न हो सके, तो देश और भी दरिद्र हो जायेगा और यह किसी भाँति किसी के लिए भी लाभदायी नहीं होगा । फिस्कल आयोग की रिपोर्ट बहुचर्चित रही है । मैं यह नहीं समझ सका कि उसमें इस बात का उल्लेख कहाँ है कि यदि आप कच्चा माल स्वयं उत्पादित नहीं करते तो आप आयात शुल्क नहीं लागू कर सकते? मैंने रिपोर्ट का अध्ययन किया है और मैं यह चुनौती देता हूँ कि कोई उस रिपोर्ट की उस शर्त को इंगित करे जिसमें यह कहा गया है कि यदि देश में विशिष्ट कच्चे माल का उत्पादन नहीं होता है तो उस माल मे निर्मित आयातित वस्तुओं पर कोई आयात शुल्क नहीं लगाया जाना चाहिए । ऐसा उल्लेख उस रिपोर्ट में कहीं नहीं है । विभेदक सरक्षण का क्षेत्र, यदि उक्त आयोग की रिपोर्ट में प्रस्थापित सिद्धान्त के अनुसार देखा जाए तो, उन प्रतिबंधित सीमाओं की अपेक्षा अधिक व्यापक है, जिनमें सरकार इसे सीमित रखना चाहती है । मैं यह निस्संकोच कह सकता हूँ कि सरकार उक्त आयोग द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों को निर्बल बना रही है, फलस्वरूप जिन उद्योगों को राज्य से सुरक्षा प्राप्त होनी चाहिए वे उससे वंचित कर दिये गये हैं । (तीव्र हर्षध्वनि)



सरकार की भर्त्सना

मान्यवर, मैं माननीय वाणिज्य सदस्य का, जो आज दोपहर ट्रेजरी बेंच की ओर से प्रमुख प्रवक्ता रहे, उनके स्पष्ट वक्तव्य के लिए हार्दिक आभारी हूँ। उन्होंने बेझिझक इन आरोपों को स्वीकार किया है कि सरकार ने इस सदन की इच्छा का सम्मान नहीं किया है; कि सरकार ने इस सदन द्वारा पारित प्रस्तावों और निश्चयों की अवहेलना की है। सदन द्वारा संवैधानिक रूप से प्रकट की गयी इच्छाओं की पूर्ति करने में सरकार के इन्कार और उसकी असफलता की हम भर्त्सना करते हैं। जहाँ तक इस प्रस्ताव का सम्बन्ध है (माननीय वाणिज्य सदस्य का) वक्तव्य पर्याप्त है और इससे अधिक उपयुक्त तर्क नहीं दिया जा सकता, और न ही इसकी आवश्यकता है। किन्तु मैं एक अन्य कारणवश भी उनका आभारी हूँ, वह यह कि उन्होंने, वर्तमान व्यवस्था के अन्यायी चरित्र के फलस्वरूप जो व्यंग्यात्मक स्थिति उत्पन्न हुई है; उसे हमारे सम्मुख स्पष्ट कर दिया है। उन्होंने कहा :

"हम आपके प्रति उत्तरदायी नहीं, हम उत्तरदायी हैं हजारों मील दूर बैठे उन लोगों के प्रति, जो हमारे प्रभु हैं; हमें उनकी इच्छा पूरी करनी है। इसके लिए आप हमें दोषी क्यों ठहराते हैं? यदि आप वस्तुत: गंभीर हैं तो आपको वर्तमान व्यवस्था अवश्य भंग करनी चाहिए। हम और आप सभी उस यंत्र–व्यवस्था के भाग हैं जो हमें तथा आपको एक साथ पीस रही है। इसे भंग करिए, नष्ट करिए और इसके स्थान पर एक श्रेष्ठतर व्यवस्था स्थापित कीजिए, तभी वे व्यक्ति, जो यहाँ होंगे, आपकी बात सुनेंगे।"

मान्यवर, मैं इस विश्लेषण तथा इसके समाधान को स्वीकार करता हूँ और इस ओर बैठे माननीय सदस्यों से मेरा अनुरोध है कि वे इस पर ध्यान दें और इसी दिशा में कार्य करें। माननीय वाणिज्य सदस्य ने हमसे निस्संकोच कहा :

"हम क्या कर सकते हैं क्योंकि हम विदेश में बैठे प्रभुओं के निर्देशों का पालन मात्र करने के लिए ही यहाँ हैं।"

परन्तु स्थिति ऐसी नहीं है जैसी उन्होंने बताई है। मैं यह मानता हूँ कि जहाँ तक सरकर के भारतीय सदस्यों का प्रश्न है, स्थिति सम्पूर्ण और नि:सार नपुंसकता की नहीं है। क्या वे सरकार द्वारा किये जा रहे प्रत्येक कार्य से संतुष्ट हैं और उनके

लेजिस्लेटिव असेम्बली में 9 मार्च, 1937 को सामान्य बजट पर चर्चा के अवसर पर पंतजी का भाषण।

सम्मुख वस्तुतः कोई अन्य विकल्प नहीं है? क्या वे ऐसे समय भी संतुष्ट हैं, जबकि बेरोजगारी के कारण सारे देश में आत्महत्याएँ और दुर्घटनाएं हो रही हैं और जीवनयापन हेतु आवश्यक वस्तुएं जुटाने में असफल होने पर हमारे युवा आत्महत्याएं कर रहे हैं, और ऐसी स्थिति होते हुए भी भारतीय सिविल सर्विस की परीक्षात्मक व्यवस्था के स्थान पर मनोनयन की पद्धति प्रारम्भ की गयी है, ताकि यदि योग्य गैर–भारतीय उपलब्ध न हों तो योग्य भारतीयों की अवहेलना कर अयोग्य गैर भारतीयों को इस देश में लाया जा सके? मेरा प्रश्न है कि क्या उनके (सरकार में भारतीय सदस्यों के) लिए कोई विकल्प नहीं है? क्या उन्हें केवल इसलिए ये सभी अत्याचार सह लेने चाहिए क्योंकि वे केवल अपने विदेशी प्रभुओं के प्रति ही उत्तरदायी हैं? क्या उन्हें इस देश में हो रही घटनाओं पर ध्यान नहीं देना चाहिए? मेरा माननीय रेलवे सदस्य से प्रश्न है कि क्या वे अपने पूर्वज की इस नीति का परित्याग करने को तैयार हैं कि रेलवे बोर्ड में कम से कम एक भारतीय सदस्य होना चाहिए, और क्या वे उस एक एकमात्र भारतीय के स्थान पर विदेशी सदस्य रखने को तैयार हैं? मैं रेलवे सदस्य से पूछता हूँ कि क्या उनके लिए यह यथोचित है कि वे बंगाल-नागपुर एवं अवध-रुहेलखण्ड रेलवे, जो कि घोषित लाभ में चल रही है और 15 से 20 प्रतिशत लाभांश दे रही है, को अधिगृहीत करने के निर्णय को मानने से इन्कार करे जबकि राज्य की अपनी रेलवे घाटे में चल रही हैं? क्या उनके लिए यह उचित है कि पी० एण्ड ओ० तथा अन्य ऐसी जहाजरानी कम्पनियों को संरक्षण तथा अनुग्रह धनराशि मिलती रहे जो कि कैडेट के रूप में भी एक भारतीय को रोजगार का अवसर नहीं देती है? क्या इसी प्रकार के सैकड़ों अन्य तथ्य नहीं हैं, जिन के कारण देश में बेरोजगारी, पीड़ा तथा दरिद्रता में वृद्धि हो रही है? क्या वह एक ऐसी व्यवस्था में भागीदारी के लिए सहमत हैं जो एक ओर तो देश से स्वर्ण के निर्यात को प्रोत्साहित कर रही है, किन्तु दूसरी ओर चांदी के वर्तमान आयात में और वृद्धि कर उसके आयात में बाधक बन रही है? क्या उनके विचार में भारत की धन-सम्पदा ही उसके विनाश का कारण है? क्या इस सम्पदा ने ही दूरस्थ विदेशियों को इस ओर आकर्षित किया ? क्या उनका यह विश्वास है कि यह देश के हित में होगा कि इसे सर्वथा दरिद्र बना दिया जाये तथा किसी मूल्यवान धातु का कोई टुकड़ा भी यहाँ न रहने दिया जाये? महोदय, यह कहना गलत है कि उनके सम्मुख कोई विकल्प नहीं कि वे कहें कि :

"हम यह स्पष्ट करते हैं कि हम ह्वाइटहॉल के इस निर्मम षड्यंत्र में भागीदार नहीं बनेंगे, हम इससे अलग हो जायेंगे ।"

वे क्या परिस्थितियाँ हैं जो उन्हें ऐसा करने से रोके हुए हैं? हमारे माननीय मित्र जिन पदों पर आज हैं यदि उन्हें ग्रहण करने के लिए एक भी भारतीय तैयार न

हों तो क्या वे सोचते हैं कि इसका कोई नैतिक प्रभाव नहीं पड़ेगा? अनैतिक व्यवस्थाओं को भी बनावटी आधार की आवश्यकता होती है जब तक कि भारतीय किसी भी तरह से सहयोग देते रहेंगे, क्रूर व्यवस्था को परिवर्तित नहीं किया जा सकेगा । अतः यदि वे वस्तुतः ऐसा अनुभव करते हैं और वर्तमान व्यवस्था के दोषों को समझते हैं तो उन्हें इस व्यवस्था को समाप्त करने में हमारे साथ शामिल हो जाना चाहिए ।

मान्यवर, हमें मात्र व्यक्ति समझ कर इस पक्ष के सदस्यों की इच्छा की अवहेलना करने से कोई लाभ नहीं है । एक व्यक्ति के रूप में मैं विपक्ष के हर सदस्य के सम्मुख नतमस्तक हो सकता हूँ, किन्तु यहाँ मैं केवल एक व्यक्ति न होकर इस राष्ट्र के करोड़ों निवासियों का प्रतिनिधि हूँ । इस सदन के सम्मुख मेरे द्वारा अभिव्यक्त किये गये विचार राष्ट्र के विचार हैं और नवीनतम निर्वाचन से यह सिद्ध हो गया है कि कांग्रेस के विचार राष्ट्र के विचार हैं । हमारे द्वारा अभिव्यक्त मत भारत की आत्मा की आवाज हैं । अतः हमें तुच्छ व्यक्ति मानकर अनदेखा करना समय की मांग को नजरंदाज करना है । सरकार को इस पर ध्यान देना होगा । हम यहाँ किसी विशिष्ट वर्ग का प्रतिनिधित्व नहीं करते । इस देश में साम्प्रदायिकता की नाव अधिक समय नहीं चलेगी । जो भी आपका मित्र इस पक्ष या विपक्ष में, सदन की लॉबी में या दर्शक दीर्घा में मौजूद है, उसे कहीं भी समर्थन नहीं मिलेगा । मुस्लिम जनता में भी निर्वाचकों ने व्यापक दृष्टिकोण वाले व्यक्तियों का ही समर्थन किया है और आज देश ने वर्तमान सरकार में घोर अविश्वास प्रदर्शित किया है तथा देश यथाशीघ्र इसे समाप्त करने के लिए प्रतिबद्ध है । सरकार को इस महत्वपूर्ण संकेतों की ओर ध्यान देना चाहिए, इन्हें गम्भीरता से लेना चाहिए । वह प्रत्येक वोट जो कांग्रेस के पक्ष में पड़ा है सरकार के प्रति भर्त्सना का प्रतीक है और हम इस सदन में उसी भर्त्सना को दोहराने के अतिरिक्त कुछ नहीं कर रहे हैं ।

महोदय, माननीय रेलवे सदस्य का कथन है कि उनका काम हमारी शिक्षा, स्वास्थ्य व चिकित्सा व्यवस्था को देखना नहीं है । उन्हें इनकी लेशमात्र भी चिन्ता नहीं है । भारत सरकार यहाँ हमारे कल्याण के लिए नहीं वरन् किन्हीं अन्य कार्यों की पूर्ति के लिए स्थापित है । मैं स्वीकार करता हूँ कि भारत सरकार कल्याणकारी उद्देश्यों की पूर्ति के लिए नहीं है । भारत सरकार यहाँ केवल राजनैतिक तिकड़मबाजी करने के लिए कायम है । यहाँ भारत सरकार विदेशों में बैठे विदेशियों की पकड़ को और कठोर तथा दृढ़ बनाने के लिए कायम है । केवल इसी एक प्रयोजन के लिए भारत सरकार को विनष्ट करना आवश्यक है । यही

वास्तविक कारण है कि भारत सरकार के साथ ऐसा व्यवहार हो कि या तो वह समाप्त हो जाये या पुनर्जन्म ले सके, और इसी एक प्रयोजन से यह निन्दा प्रस्ताव किया गया है ।

माननीय रेलवे सदस्य ने गत सत्रह वर्षों में पंजाब में हुई प्रगति का स्मरण कराया है । जनाब पंजाब में इन सत्रह वर्षों के पहले कौन प्रभारी था? क्या वर्तमान शासन का अस्तित्व मात्र सत्रह वर्ष पुराना है? क्या उनके कथन का यह आशय है कि कृषि उत्पादों के मूल्यों में गत चार वर्षों में आयी लगभग 50 प्रतिशत कमी के बावजूद कोई कृषि प्रधान प्रान्त 17 वर्ष पूर्व की अपनी स्थिति में हो सकता है? यह नितान्त असम्भव है । इसलिए उनका कथन स्वाभाविक रूप से वैसा ही दोषपूर्ण है जैसा कि वह व्यवस्था है जिसका वह प्रतिनिधित्व करते हैं । क्या उन्होंने पंजाब के किसानों और उनकी दरिद्रता के सम्बन्ध में मिस्टर डार्लिंग की किताब का अध्ययन नहीं किया है? क्या वह स्वतंत्रतापूर्वक निर्णय करने में असमर्थ हैं? बात तो यह है कि उन्हें किसी भी दशा में हमसे सहानुभूति नहीं है । उन्होंने क्या समझा है? क्या उनका कथन है कि पंजाब में भी अन्य देशों की भाँति जनसंख्या के 20 प्रतिशत से 25 प्रतिशत विद्यार्थी अध्ययनरत हैं? वास्तव में यह तीन प्रतिशत भी नहीं है । अत: अभी एक बहुत बड़ी कमी दूर करनी है, अत: वह किसी गलतफहमी में न रहें । क्या उन्हें नहीं मालूम कि पिछले सत्रह वर्षों में अन्य देशों में कैसे-कैसे परिवर्तन आ चुके हैं? पुनः, क्या वह नहीं जानते कि जापान ने इन्हीं 17 वर्षों में यांत्रिकी के क्षेत्र में कैसी अद्भुत उन्नति की है? क्या वह अनभिज्ञ है कि इन्हीं सत्रह वर्षों में ब्रिटेन में क्या हुआ? माननीय वित्त सदस्य मेरे इस कथन की पुष्टि करेंगे कि गत सत्रह वर्षों में इंग्लैण्ड द्वारा विदेशों में किये गये पूंजीनिवेश से लगभग 3,000 लाख पौंड का लाभ हुआ है, जिसके फलस्वरूप इंग्लैण्ड आज विदेशों में जहाजरानी में किये गये तथा अन्य प्रकार के पूँजीनिवेश द्वारा हमारे देश की सकल आय से भी अधिक लाभ प्राप्त कर रहा है । क्या वह नहीं जानते कि बहुत से राज्यों का जन्म इन्हीं सत्रह वर्षों में हुआ? पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया तथा अन्य कई देशों का पहले अस्तित्व ही नहीं था । माननीय वित्त सदस्य क्रोध में लाल न हों, सोवियत रूस ने तो वास्तव में कमाल कर दिखाया है । इसकी राष्ट्रीय आय में लगभग 300 प्रतिशत की वृद्धि हुई है । सभी मानते हैं कि रूस ने अपने आर्थिक कार्यकलापों में भारी परिवर्तन कर दिया है । फिर उन्होंने कहा कि प्रान्तों पर उनका कोई नियंत्रण नहीं है । क्या आप अवगत है कि हमारे सैकड़ों युवाओं की नजरबंदी के लिए कौन उत्तरदायी है? नजरबंदों द्वारा आये दिन आत्महत्या करने के लिए कौन जिम्मेदार है? स्वतंत्रता दिवस की प्रतिज्ञा पर रोक तथा उस सिलसिले में मुकदमे चलाने के लिए कौन

उत्तरदायी था? क्या आप इसके उत्तरदायी नहीं हैं कि प्रतिबंध लगाने का निर्णय आपने स्वतंत्रता दिवस की पूर्वसंध्या को नहीं लिया, ताकि इसे कोई समय पर प्राप्त न कर सकें और अवांछनीय व्यक्ति जेल में डाले जा सकें? और तब राजद्रोह के तमाम मुकदमों के लिए कौन उत्तरदायी है? एक और उत्तरदायी सरकार की स्थापना की बात करना तथा दूसरी ओर सरकार की आलोचना के अभियोग में लोगों को बंदी बनाना विरोधाभासपूर्ण है । पुनः हमें कहा गया कि अब जबकि आपको अवसर मिला है, तब प्रान्तों में जाकर अपनी प्रतिभा का परिचय दीजिए । किन्तु आपने वहाँ किसी के कुछ करने की सभावना ही नहीं रहने दी है । अपने पक्ष में ही निर्णय करवाने के लिए काफी सावधानी आपने बरती है, किन्तु मैं आपको कार्य करने की चुनौती देता हूँ ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य के पास दो मिनट और शेष हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त — संसार के किसी भी भाग से पक्षपातरहित लोगों को यहाँ आकर निर्णय करने दें कि ब्रिटिश राज्य के आविर्भाव के बाद से यहाँ आपके कारनामें कैसे रहे हैं? और उन्हें आपके कृत्यों– मैं कुकृत्य का प्रयोग नहीं करूंगा क्योंकि यह उससे भी निकृष्ट हैं— का किसी जूरी की सहायता बिना परीक्षण करने दें, और तब यदि आपके लिए मृत्युदंड से कम कोई दंड नियत किया जाये तो मैं अपने को दोषी मान लूँ । प्रान्त क्या कर सकते हैं? वस्तुतः मुख्य तथा आधारभूत तथ्य यह है कि जब तक इस देश पर आधिपत्य स्थापित करने वाली सेना के स्थान पर भारतीय सेना नहीं होगी और जब तक कि आप वर्तमान विदेशी प्रभुत्व वाली उच्च सेवाओं के स्थान पर देशवासियों के हित में समर्पित भावना से काम करने वाले पर्याप्त वेतनभोगी भारतीय लोगों वाली उच्च सेवा का गठन नहीं करेंगे, कोई भी सरकार कुछ भी नहीं कर सकेगी । बेड़ियों में जकड़कर और हाथ–पैर बांधकर हमसे दौड़ने के लिए कहना वास्तव में शुभ प्रकट करने का बड़ा अच्छा ढंग है । गवर्नर के प्राप्त विवेकाधीन तथा वैयक्तिक निर्णय–अधिकार तथा अन्य विशेष अधिकार और प्रारम्भ से ही सामने उपस्थित घाटे के बजटों की परिस्थिति के फलस्वरूप प्रान्तों से कुछ कर सकने की आशा करना उचित नहीं । आपने इस देश में प्रत्येक का गला घोंटने के लिए अपनी ओर से सर्वाधिक प्रयास किया और प्रारम्भ में प्रान्तों को ही दबाया । जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मैं जानता हूँ कि सर्वांगीण व्यवस्था का गला घोटने में, सम्पूर्ण सरकारी मशीन नष्ट करने में ही समाधान निहित है । और जब तक कि यह नहीं होता आपकी निन्दा होती रहेगी । साथ ही इस व्यवस्था को सहन करने के दोष में हम सब भी जीवन के प्रत्येक क्षण में इस निंदा के पात्र रहेंगे ।

●

चीनी उद्योग पर उत्पादन कर

मेरे सम्माननीय मित्र श्री मोहम्मद यामीन खाँ के भाषण के पश्चात् मेरे विचार में विपक्षी नेता के समर्थन में और तर्क देना किसी के लिए भी निरर्थक होगा । मैं इस विषय पर न बोलता, यदि इसकी उपयुक्तता के साथ ही इसकी वैधानिकता से मेरी भावनाएँ गहन रूप से न जुड़ी होतीं । मैं नहीं जानता कि यदि विपक्षी सदस्य यह महसूस करते हैं कि अपनी सर्वथा निस्सहाय दशा का बार–बार स्मरण होने पर हमें कितनी गहन पीड़ा और क्लेश होता है । मैं नहीं जानता कि यदि वे इसका अनुमान कर सकते हैं या इसकी गहराई को नाप सकते हैं । अन्ततः क्या हम ब्रिटिश राज की सर्वभक्षी महत्वाकांक्षाओं के अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक आखेट में सदैव मोहरे ही बने रहेंगे? यही प्रमुख समस्या है । क्या वे समृद्ध से समृद्धतर होने के लिए हमारे साथ सदैव खिलवाड़ करते रहेंगे? किन्तु मैं आज समस्या के इन आयामों पर अधिक नहीं बोलना चाहता । जैसा कि मैंने कहा मैं वस्तुतः खिन्न और दुःखी हूँ यह देखकर कि इस सदन के विधिवत् निर्वाचित सदस्यों के सामूहिक रूप से अभिव्यक्त किये गये मत की किस तरह अवहेलना की जाती है । यह अनुभूति मुझे दुःख पहुँचाती है कि इस प्रकार की घटनाएँ घटते रहने के बावजूद हमें वर्तमान व्यवस्था को सहन करना पड़ता है । प्रत्येक राष्ट्र को वैसी ही सरकार प्राप्त होती है जिसका वह पात्र होता है, और यदि हममें विद्रोह करने की शक्ति होती तो हमने अपने बंधन काफी पहले ही तोड़ दिये होते । अब भी हम पावन विरोध से तुष्ट हैं, किन्तु उसी से हम आगे नहीं बढ़ सकते । आज हमारा कर्तव्य है कि हम अपने हृदयों को कठोर बनायें, विदेशी सत्ता को समाप्त करने हेतु व्यावहारिक उपाय अपनाने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ बनें, राक्षसी विदेशी शासन को विनष्ट करें तथा और अपनी इच्छानुसार अपनी ही शासन–व्यवस्था चलाने हेतु ईश्वर प्रदत्त अधिकार को प्राप्त करें, ताकि केवल राष्ट्रीय व्यवस्था ही नहीं, वरन् देश के लिए जो हितकर हो, वैसी नीति अन्य देशों के साथ स्थापित करें ।

पुनः आज यहाँ हमें पूर्ण स्वातंत्र्य प्राप्ति के लक्ष्य को और ऐसी संविधान सभा की स्थापना हेतु अपने प्रण को दोहराना है, जो देश की जनता द्वारा निर्वाचित

---

29 मार्च, 1937 को लेजिस्लेटिव असेम्बली में इण्डियन फाइनेन्स बिल पर चर्चा के दौरान पंत जी द्वारा दिया गया भाषण ।

सदस्यों द्वारा ऐसा संविधान निर्मित कर सके जो जनता की प्रतिभा के अनुकूल संविधान हो, ताकि न केवल देश के करोड़ों भूखे व्यक्तियों की सेवा ही की जा सके, वरन् इस संतप्त संसार में शान्ति की पुनर्स्थापना भी हो सके । यह पाठ हमें आज एक बार पुनः पढ़ना है । किन्तु इस नितान्त नृशंस सरकार को अवश्यमेव समाप्त करना है, इसकी शीघ्र समाप्ति के लक्ष्य–पूर्ति के लिए प्रत्येक कदम उठाना है । हमें आज पुनः इस व्यवस्था के अत्याचार तथा अमानुषिकता का स्मरण दिलाया गया है, किन्तु बात यहीं तक सीमित नहीं है । यदि इस व्यवस्था पर विदेशी शासकों के अपने मानकों के आधार और उनके अपने संविधान के प्राविधानों के आधार पर विचार किया जाए, तब भी यह समर्थन करने योग्य नहीं है ।

मान्यवर, हमें बताया गया है कि वित्तीय स्वायत्तता समझौता एक वास्तविकता है । क्या चीनी उद्योग के प्रति शासन का यह रवैया उनकी वित्तीय स्वायत्तता की घोषणा के अनुरूप है? क्या सरकार ने बहुधा यह घोषणा नहीं की है कि जहाँ तक इस प्रकार के मामलों का सम्बन्ध है, जहाँ तक आयात–शुल्क उत्पादन शुल्क लगाने का संबंध है, इस सदन में जन-प्रतिनिधियों की इच्छाओं का सम्मान होगा, हालांकि हमारी स्थिति बड़ी निरीह है? क्या उन्होंने ब्रिटिश कपड़ों तथा अन्य वस्तुओं पर आयात-शुल्क लगाने विषयक विधेयकों को भी सदन के निर्वाचित सदस्यों के बहुमत का समर्थन न मिलने की दशा में निरस्त करने की घोषणा नहीं की है? क्या सरकार ने निर्वाचित सदस्यों का समर्थन न मिलने पर एक प्रस्ताव को वापस नहीं लिया था? क्या तब सरकार ने वित्तीय स्वायत्तता के सिद्धान्त का परित्याग कर दिया था? यदि वह नीति त्याग दी गयी है तो सरकार को यह स्पष्ट घोषणा करनी चाहिए कि वह पहले की अपनी घोषणा से पीछे हट रही है और उनके द्वारा घोषित तथाकथित स्वराज की दिशा में उनकी तैयारियाँ, हमारे बंधनों को और अधिक कठोर बनाना मात्र है । इस प्रकार के मामलों में यह सोचा नहीं जा सकता कि सरकार ने अपने सभी वायदों को हवा में उड़ा दिया है और बार–बार असंदिग्ध भाषा में स्वीकार किये समझौते को रौंद डाला है । महोदय, माननीय वित्त सदस्य ने जो किया है यह इस प्रकार है कि उन्होंने चीनी पर आयात शुल्क सापेक्षतः घटाकर उत्पादन कर बढ़ा दिया है । अतः आयात शुल्क और आबकारी शुल्क में अभी तक जो अन्तर था, वह उनके द्वारा प्रस्तावित अन्तर से कहीं अधिक था । क्या इस नीति का किसी प्रकार समर्थन किया जा सकता है? मैं माननीय वित्त सदस्य से पूछता हूँ कि उत्पादन कर की तुलना में आयात शुल्क की दरों को घटाने का क्या औचित्य है? एक दिन उन्होंने कहा था कि उत्पादन कर में आयात–शुल्क के 5 प्रतिशत के बराबार वृद्धि हुई है । मुझे ठीक से याद नहीं किन्तु उनका आशय था

कि यह वृद्धि बहुत मामूली है, परन्तु क्या वे इन्कार कर सकते हैं कि उन्होंने चीनी के देशी निर्माताओं व उत्पादकों की स्थिति बहुत खराब कर दी है? उत्पादन शुल्क में लगभग 50 प्रतिशत की वृद्धि की गयी है, जबकि आयात शुल्क में कठिनता से तीन प्रतिशत वृद्धि हुई है तथा खाण्डसारी शक्कर पर लागू उत्पादन शुल्क में 100 प्रतिशत से भी अधिक की वृद्धि की गयी है । आयात शुल्क में अल्पतम वृद्धि तथा खाण्डसारी चीनी पर अधिकतम शुल्क लगाकर उल्टा काम किया गया है । क्या वह इस प्रकार की अपनी कार्यवाही का बचाव कर सकते हैं?

महोदय, हमें बार–बार याद दिलाया जाता है कि वर्तमान भारत सरकार इस देश में रहने वाले तथाकथित मूक व्यक्तियों की ट्रस्टी है । बार–बार हमें स्मरण कराया जाता है कि सरकार कृषक वर्ग के कल्याण में विशेष रुचि रखती है । किसानों की दृष्टि से उत्पादन शुल्क में वृद्धि, से बढ़कर कोई अन्य कार्य इतना अधिक पाशविक और क्रूर नहीं हो सकता । माननीय वित्त सदस्य अवगत हैं कि प्रान्तीय शासन ने विशेषकर संयुक्त प्रान्त में गन्ना–उत्पादन को प्रोत्साहित किया है । लेकिन गन्ने की फसल अधिक क्षेत्र में बोने के फलस्वरूप भारत सरकार सिंचाई पर एक अच्छी धनराशि बलपूर्वक प्राप्त कर रही है । निर्धन कृषक, जिन्हें सरकार हमेशा अज्ञानी और अशिक्षित ही रहने देना चाहती है, गन्ना क्षेत्र में विस्तार के नाम पर उनके द्वारा छले जा चुके हैं । उन्होंने कृषकों द्वारा अपनाए हुए प्राकृतिक फसल क्रम के स्थान पर उनसे गन्ना उगाने को कहा और इस वर्ष लगभग पांच लाख टन अतिरिक्त गन्ना खेतों में खड़ा है, वर्तमान दरों पर जिनका मूल्य कम से कम 50 लाख रुपये है । माननीय वित्त सदस्य का कथन है कि चीनी उद्योग पर विपत्ति आने वाली है । यदि ऐसा नहीं है तो भी उनके सम्मुख कम से कम गंभीर संकट तो है ही । उनका कहना है कि आयकर की प्राप्ति में कमी आ गयी है और चीनी उद्योग आज संकट में है । स्पष्टतः चीनी निर्माताओं के लिए इन परिस्थितियों में उतना गन्ना खरीदना भी कठिन है जितना उन्होंने गत वर्ष खरीदा था । ऐसी दशा में किसानों को कुछ सहायता देने के बजाय ताकि उनके द्वारा पैदा किये गये गन्ने का कुछ इस्तेमाल हो सकता, सरकार ने आखिरी वक्त पर उत्पादन कर में वृद्धि कर उन्हें बिल्कुल तबाह करने का काम किया है । आज कृषक के पास गन्ना पेराई का अन्य कोई विकल्प नहीं है । ऐसी स्थिति का क्या औचित्य हो सकता है? कृषकों के प्रति इस रवैये का क्या अर्थ है? कहा जाता है कि भारत सरकार का कार्य ग्रामीण वर्ग को संरक्षण प्रदान करता है; कि वह निर्बल, भूखी और दरिद्र पीड़ित जनता के लिए चिन्तित रहती है तथापि उसकी कथनी और करनी एक दूसरे के सर्वथा विपरीत हैं । इन कृषि आयोगों की क्या उपयोगिता है? यदि इन लोगों को भूख से मरना है,

यदि इनकी फसलें नष्ट ही होनी हैं, यदि भारत सरकार की योजना को अपनाकर वे ठगे जाते हैं, इस कठिन समय में उन्हें गड्ढे में धकेल दिया जाता है तो भारी भरकम इन आयोगों की क्या उपयोगिता है? क्या कोई अन्य सरकार इस प्रकार का पाशविक, क्रूर और निर्दयी व्यवहार कर सकती है? ये गन्ना उत्पादक अब अंधकार के गर्त में धकेले जा रहे हैं? उनके पास अपना ऋण अदा करने के लिए कुछ नहीं रहेगा, उनके पास तन ढकने को कपड़ा खरीदने के लिए तथा भूख-प्यास से मरते हुए अपने बच्चों को खिलाने के लिए भोजन खरीदने तक के लिए कुछ नहीं होगा । मेरे प्रान्त में गन्ना ही एक मात्र लाभदायक फसल है । गन्ने की फसल से ही कृषक अपने भारी बोझ को आंशिक रूप से वहन कर पाते हैं, और अब इस समय ये ही कृषक पीसे जा रहे हैं । इन कृषकों को डुबोया जा रहा है और इनके हितों को निर्दयतापूर्वक कुचला जा रहा है । मैं कारखानेदारों के लिए बहुत अधिक चिन्तित नहीं हूँ, मैं उनमें रुचि रखता हूँ किन्तु वर्तमान स्थिति को सहन नहीं कर पा रहा हूँ जबकि कृषकों को कंकाल के समान बांधकर क़ब्र में फेंक दिया गया है, गो कि उन्हें बचाया जा सकता है ।

महोदय, माननीय वित्त सदस्य का कथन है कि चीनी उद्योग संकट में है क्योंकि उसका फालतू स्टाक भारी मात्रा में जमा हो गया है । यदि यह सत्य मान लें तो प्रश्न यह है कि एक राष्ट्रीय सरकार इस जैसी परिस्थिति में क्या कदम उठाती? राष्ट्रीय सरकार ने स्थिति को और अधिक जटिल बनाया होता या स्थिति को सामान्य कर, उत्पादकों को यथा वांछित सहायता उपलब्ध करायी होती? और इन चीनी कारखानादारों का क्या दोष है? केवल यही कि उन्होंने इस उद्योग को तेजी से विकसित किया ? टेरिफ बोर्ड द्वारा प्रत्याशित गति से भी शीघ्र उन्होंने इसे विकसित किया । शासन ने कम से कम सात वर्ष तक निश्चित दरों पर उन्हें संरक्षण देने का वायदा किया था, परन्तु उद्योग की सफलता ने सरकार में ईर्ष्या व द्वेष उत्पन्न कर दिये और उसने इनके प्रति सौतेला रुख अपना लिया । महोदय, भारत सरकार की गति विचित्र और अजीब है, वह अनिच्छापूर्वक किसी उद्योग को संरक्षण की स्वीकृति दे देती है । यदि उद्योग सफल रहता है तो वह इसके विरुद्ध ऐसा कुछ अवश्य कर देती है जिससे इसकी प्रगति रुद्ध हो जाय और यदि कोई उद्योग असफल रहे तो भी वह उसके विरुद्ध कार्यवाही अवश्य करती है क्योंकि शुल्क–संरक्षण की नीति इस मामले में फलप्रद नहीं सिद्ध हुई । महोदय, इस प्रकार माननीय वित्त सदस्य हर तरह अपनी अनियमित सनक भरी नीति "चित भी मेरी पट भी मेरी" के अनुसार चलते हैं । यही उनका ढंग है ।

मान्यवर, यह उत्पादन शुल्क सरकार के अतिरिक्त अन्य किस के लिए लाभकर हो सकता है? उत्पादन शुल्क लगाकर उपभोक्ता के लिए चीनी के मूल्य में वृद्धि की जा रही है, कारखानेदार के लिए मुनाफे में कमी की जा रही है क्योंकि बढ़ाए गये शुल्क के अनुपात में चीनी के मूल्य में वृद्धि नहीं होगी; और जहां तक कृषक का संबंध है, वह गन्ने के दाम में कटौती करने जा रही हैं, उसका संबंध कारखानेदार को मिलने वाले चीनी के विक्रय मूल्य से है । इन सभी तीन वर्गों को कष्ट देकर वह यह सवा करोड़ रुपया प्राप्त कर सकेंगी, किन्तु किस मूल्य पर? क्या यह किसी सरकार के के लिए लाभप्रद है कि वह धन का दोहन इस तरह करे कि धन का स्रोत ही सूख जाए?

महोदय, यह एक आत्मघाती नीति है जो सरकार ने अपनायी है । माननीय वित्त सदस्य इस धन को कई अन्य उपायों से प्राप्त कर सकते थे । यदि वहाँ पर राष्ट्रीय शासन होता तो मैं सोचता हूँ कि इस आय को आज स्वर्ण पर निर्यात शुल्क लगाकर सरलता से प्राप्त कर लिया गया होता । यदि वह उनके देश के हित में नहीं था तो मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि ऐसी दशा में उन्होंने ऐसा तरीका क्यों नहीं अपनाया ताकि स्टील तथा लोहे पर अधिक शुल्क लगाकर उन्हें यथेष्ट धन प्राप्त हो जाता? वह जानते हैं कि स्टील तथा लोहे का बाजार गर्म है और वह अवगत हैं कि इस व्यापार में असाधारण लाभ हो रहा है, तथा वह यह भी जानते हैं कि शेयरों की कीमत उछाल ले रही है और सैकड़ों गुना बढ़ रही है । इस स्थिति में वे शेयरों के अन्तरण (शेयर ट्रांसफर) पर कोई शुल्क लगा सकते थे, या लोहे और स्टील पर अतिरिक्त कर लगाया जा सकता था । इस प्रकार गांव के गरीबों को मुसीबत से बचाया जा सकता था । इस भाँति उनकी धन की आवश्यकता पूरी हो जाती और किसी को अधिक कष्ट न होता । लोहे के बाजार में आया गरमी का दौर इस उद्योग के लिए भी अधिक लाभदायक नहीं है । अतः ऐसी परिस्थितियों में उद्योग को यदि अत्यधिक लाभ के स्थान पर उचित लाभ प्राप्त होता तो फिजूलखर्ची की प्रवृत्ति पर अंकुश लगता और उद्योग ठोस आधार पर कायम रहता । अनिवार्यता की दशा में घाटे की पूर्ति अन्य तरीकों से सरलतापूर्वक धन प्राप्त करके की जा सकती थी, परन्तु क्या यह घाटा अपरिहार्य था? क्या उसके लिए यह संभव नहीं था कि वे प्रशासन की फिजूलखर्ची में कटौती करते?

महोदय, हमें बताया गया है कि बर्मा के पृथक्करण के कारण हम पर अतिरिक्त बोझ बढ़ गया है । क्या यह प्रश्न उचित नहीं है कि यदि बर्मा पृथक हो

गया है तो केन्द्रीय सरकार के बजट में तदनुकूल कितनी कमी होनी चाहिए थी? अभी तक बर्मा केन्द्र सरकार के पर्यवेक्षण, निदेशन और नियंत्रण में था । यहं कहा गया कि बर्मा अलग होने से हमें कई करोड़ की क्षति हुई है । केन्द्र सरकार ने इस पृथक्करण के फलस्वरूप अपने व्यय में कटौती क्यों नहीं की? कल्पना करें कि बर्मा अलग नहीं हुआ है वरन् भारत में मिला लिया गया है । ऐसी दशा में सरकार बर्मा के लिए हमारे सम्मुख कम से कम एक दो करोड़ के नए अनुमानित व्यय रख देती, किन्तु जबकि बर्मा अलग हो रहा है, अदन् अलग हो चुका है, उनका व्यय पूर्व की भांति चालू है । सरकार उसमें कोई मितव्ययिता नहीं करती है, वरन् दूसरी ओर उस दरिद्र जनता पर अतिरिक्त बोझ लाद देती है, जो कि एक पैसा भी नहीं दे सकती, क्योंकि उसके पास सर्वस्व के नाम पर आज केवल यही पैसा है ।

मान्यवर, मुझे शिकायत है कि वैधानिक प्रश्नों के अतिरिक्त भी अनेक अन्य मुद्दे इससे संबद्ध हैं । टैरिफ बोर्ड को इस प्रकरण की जांच करनी है, और उत्पादन तथा आयात शुल्क में इस प्रकार पहले से ही वृद्धि करना उस जांच के दृष्टिकोण से पक्षपातपूर्ण होगा । अपने होश हवास में रहने वाले किसी मनुष्य ने ऐसा कार्य न किया होता । जनता के प्रति उत्तरदायी विश्व की किसी भी सरकार ने इस प्रकार की अमानुषिक कार्यविधि न अपनायी होती, परन्तु यहां वे अनुत्तरदायी हैं । वे एक ऐसी मशीन के पुर्जे हैंजो हमें पीस रही है, और तब तक पीसती रहेगी, जब तक कि इसे हम भंग न कर दें । किन्तु दरिंद्र-जन की आहें, उनके अश्रु तथा हमारी अपनी प्रार्थनाएं और हमारी दृढ़ता इस व्यवस्था को समाप्त कर देगी (हर्ष ध्वनि) और हम पाप से मुक्ति का शुभ दिन शीघ्र लायेंगे और हम पूर्ण स्वातंत्र्य की उस स्थिति को प्राप्त करेंगे जो एक स्वाभिमानी राष्ट्र के लिए अनुकूल होती है, ऐसे राष्ट्र के जिसके सदस्य इस विश्व में सभ्यता के प्रथम संदेशवाहकों के वंशज है । मुझे आशा ही नहीं वरन् विश्वास है कि भारतीय राष्ट्र के सामूहिक प्रयास से पाप-मोचन और पूर्ण स्वातंत्र्य का वह दिवस हमारे शत्रुओं द्वारा परिकल्पित तिथि से काफी पहले ही आ जायेगा । (तीव्र हर्षध्वनि)

●

एक कुटिल नीति

मान्यवर, इस जैसे विषय पर संयम के साथ बोलना किसी भी भारतीय के लिए कठिन है । माननीय विपक्षी सदस्य सर हेनरी गिडनी जिस क्रोधावेश और उग्रता के साथ इस पर बोले, उसी से विषय के साथ हमारी भावना स्पष्ट हो जाती है । मैं यह सोच भी नहीं सकता कि कोई सदन में यह कहे कि जिन व्यक्तियों को भारतीयों से वसूले गये करों से वेतन मिलता है और जिन्हें सेवा कार्य के नाम पर भारतीयों पर लादा जाता है, उनके इलाज के लिए विदेश से चिकित्सकों को आयात करना अनिवार्य है, क्योंकि इस देश में पैदा हुए सर्वोत्तम चिकित्सा विशेषज्ञों द्वारा इन जन-सेवकों का इलाज किया जाना उनके (जन सेवकों के) लिए अपमानजनक है । यह ऐसी अपमानजनक और लज्जाजनक बात है जिसे कोई भारतीय सह नहीं सकता, कोई शिष्ट व्यक्ति सह नहीं सकता । महोदय, यह प्रकरण हमें पुनः अपनी असहाय दशा और दिन–प्रतिदिन हमारे ऊपर लादी जा रही अवमानना तथा धृष्टता की याद दिलाता है । आप लोग यहाँ आए, और अपने आप को हमारे ऊपर थोप दिया, हमारे लोगों को दूर–दूर रखा, हमारे नवयुवक रोजगार की कमी के कारण, अस्तित्व-रक्षा के अपरिहार्य साधनों को जुटाने में असमर्थ होकर मर रहे हैं । इस सबके बावजूद आप बाहर से और अधिक लोगों को देश में लाने के पक्ष में यह तर्क दे रहे हैं कि ऐसा आप उन विदेशियों की चिकित्सा के लिए कर रहे हैं, जिन्हें न तो हम बुलाते हैं, न हम उन्हें चाहते हैं और न उन्हें आमंत्रित करते हैं । ऐसे प्रस्तुत तर्क को संभवतः इस सदन का कोई भारतीय सदस्य विदेशियों के अधीन होने की दशा की गहन पीड़ा और क्लेश अनुभव किये बिना नहीं सुन सकेगा । सैनिक सचिव के तर्कों में न तो कोई सार है और न कोई शक्ति । उनके किसी कथन में कोई सार नहीं है और मेरे विचार से यदि वे मौन रहते तो उनके लिए ज्यादा अच्छा होता । उन्होंने अपने पक्ष को स्वयं बिगाड़ दिया है । उन्होंने पूछा कि आज कौन सी बात हो गयी है? आप लोग हमारी निन्दा क्यों कर रहे हैं? वे हाल में ही जारी की गयी

मिलिट्री स्वास्थ्य सेवा के भारतीय सदस्यों के विरुद्ध भारत में किये जा रहे भेदभाव पर बहस के लिए लेजिस्लेटिव असेम्बली में 31 मार्च, 1937 को पंजाब के श्री एम० गयासुद्दीन द्वारा रखे गये कामरोको प्रस्ताव पर पंत जी का भाषण ।

विज्ञप्ति को विस्मृत कर रहे हैं । इसे जारी करने का क्या कारण था? विज्ञप्ति में कहा गया है कि इसे जारी करना इसलिए आवश्यक हुआ, क्योंकि इस देश को प्रान्तीय स्वायत्तता हेतु तैयार करना है । हमें बताया गया कि प्रान्तों के चिकित्सा प्रशासन को स्वायत्तता दिया जाना आवश्यक है, अतः इसी प्रयोजन को ध्यान में रखकर समायोजन किया जा रहा है, किन्तु जो परिवर्तन हुए हैं वे और भी खराब हैं । सैनिक सचिव ने निर्लज्जतापूर्वक राउण्ड टेबिल कांफ्रेंस की रिपोर्ट उद्धृत की है, किन्तु वे यह बिल्कुल भूल गए हैं कि उनके प्रस्ताव राउण्ड टेबिल कॉंफ्रेंस सर्विस कमेटी की संस्तुति के सर्वथा विपरीत है । देश ने यह लगातार दृढ़ मांग की है कि आई०एम०एस० (इंडियन मेडिकल सर्विसेज) के अभ्यर्थियों को नागरिक सेवाओं में भर्ती, तथा भर्ती की पूरी वर्तमान व्यवस्था को समाप्त किया जाना चाहिए । राउण्ड टेबिल कॉंफ्रेंस की सेवा समिति ने सर्वसम्मति से यह स्वीकार किया था कि आई०एम०एस० को नागरिक सेवा (सिविल सर्विस) में भर्ती नहीं किया जाना चाहिए । किन्तु वह अब तक उसी पुरानी व्यवस्था पर कायम हैं । उन्होंने भारतीयों की संख्या में कमी कर दी है, परन्तु यूरोपीय लोगों की संख्या उतनी ही कायम रखी है । फिर भी वे कहते हैं वह कौन सी बात है जिसकी हम निन्दा कर रहे हैं? उन्होंने भारतीयों की अपेक्षा यूरोपियनों के वेतन बढ़ा दिये हैं और कुछ स्थान केवल उन्हीं के लिए सुरक्षित भी कर दिए हैं । उनका प्रत्येक कार्य प्रतिगामी है, फिर भी वह यही कहते हैं कि जो कुछ उन्होंने किया उससे स्थिति नहीं बिगड़ी है । निःसंदेह पिछले सप्ताह हमने प्रान्तीय स्वायत्तता का उपहास देखा था । हम अच्छी तरह इसका अर्थ जानते हैं । हम जानते हैं कि इसके पीछे असली इरादा क्या था और आज प्रत्येक व्यक्ति तथा देश के सामने यह स्वांग स्पष्ट हो गया है जबकि प्रत्येक व्यक्ति यह देख रहा है कि ताजी हवा के पहले झोंके में ही वह झीनी चादर, वे पर्दे चाक हो गये हैं । राख की गेंद छूते ही धूल धूसरित हो गयी है । आई०एम०एस० के संबंध में जो परिवर्तन किया गया है वह प्रान्तीय स्वायत्तता की धुंधली छाया की आत्मा—या उसके प्रेत के—के अनुरूप ही है । (हर्ष ध्वनि) अब वर्तमान आंकड़ों को लीजिए । सम्प्रति स्थिति यह है : आई० एम० एस० में 386 यूरोपीय हैं; इनमें से 200 मिलिट्री में हैं और 186 नागरिक सेवाओं में हैं । अब इस परिवर्तन के बाद भी उनकी संख्या 386 रहेगी । यह नहीं कि वह 386 से आगे नहीं बढ़ सकती, परन्तु 386 की गारंटीशुदा न्यूनतम संख्या है, तथा इसे कम नहीं किया जायगा । भारतीयों के बारे में क्या स्थिति है? भारतीयों की वर्तमान संख्या 263 है जो अब घटाकर 198 की जा रही है । यह प्रक्रिया है भारतीयकरण की, उस पर भी सैन्य सचिव धृष्टतापूर्वक पूछते हैं कि क्या परिवर्तन आपके लिए हानिकारक है? वह कहते हैं कि हम स्थिति को आपके लिए बेहतर बना रहे हैं । आप भारतीयों की

संख्या को 263 से 198 तक घटाकर पूछते हैं कि आपको क्या हानि पहुँची है? आपको कैसा कष्ट है, हमने 263 में केवल 65 की ही कमी की है? पुनः इन सेवाओं में भारतीयों का अनुपात लगभग 40 प्रतिशत है, अर्थात् ब्रिटिश 60 प्रतिशत हैं। इस परिवर्तन के बाद भारतीयों का अनुपात 32 प्रतिशत रह जायेगा और ब्रिटिशों का 68 प्रतिशत होगा । हमारे लिए यह परिवर्तन ऐसा लाभप्रद है कि इसके लिए हमें आपका आभारी होना चाहिए । प्रान्तीय सेवाओं में भारतीयों की वर्तमान संख्या के प्रति हम विशेषकर चिन्तित हैं—उनमें भारतीयों की संख्या केवल 109 है और अब वे इसमें 54 की कटौती करने जा रहे हैं । इस प्रकार आधे से अधिक की कमी की जा रही है, फलतः उनकी संख्या 109 के बजाय केवल 54 रह जायेगी ।

मि० जी० आर० एफ० टोटेनहम – ऐसा आवश्यक नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – हाँ यह आवश्यक नहीं है । ब्रिटिश लोगों के लिए यह संख्या 386 रखी गयी है, जो 886 तक बढ़ सकती है, किन्तु उनके लिए गारंटीशुदा न्यूनतम संख्या 386 है । मैं जानता हूँ कि हमारे लिए, न्यूनतम का क्या अर्थ है । इसका असली अर्थ है अधिकतम, आपके (ब्रिटिश लोगों के) लिए; न्यूनतम का अर्थ इस संख्या का दो, तीन या चार गुना भी हो सकता है । इसलिए जब आप 'आवश्यक रूप से नहीं' कहते हैं तो आप सही हैं । आपकी संख्या 686 या इससे भी अधिक हो सकती है किन्तु आपके पास नयूनतम 386 की गारंटी है किन्तु मेरी संख्या कभी 54 से ऊपर नहीं जायेगी, यद्यपि हमारे लिए निर्धारित न्यूनतम संख्या है । मैं इसे माने लेता हूँ ।

मिस्टर टोटेनहम – आप प्रश्नों में अपने मंत्रियों का परामर्श लीजिए । वे इस पर विचार करेंगे ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत– हाँ, आपने सावधानीपूर्वक अच्छे मंत्री रखे हैं । (हर्ष ध्वनि) सैनिक सचिव का कथन है कि उन्होंने मंत्रियों की स्वीकृति और अनुमोदन प्राप्त किया है । आखिर इतनी अधिक जल्दबाजी की क्या जरूरत आ पड़ी थी? आपने एक पखवारा या महीने प्रतीक्षा क्यों नहीं की? आप तब तक के लिए क्यों नहीं रुके जब तक अन्तरिम मंत्रियों का भी परामर्श लिया जा सकता? आपको उनकी इच्छाओं की जानकारी हासिल करनी चाहिए थी और समझना चाहिए था कि वह आपसे सहमत हैं या नहीं ।

महोदय, मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि अवशिष्ट प्रणाली का आशय क्या है, इन अवशिष्टों की संख्या लगभग 80 है । इस अवशेष (रेसिडुयरी) का क्या अर्थ है? वर्तमान संदर्भ में अवशेष का अर्थ है वह व्यक्ति जिसकी सैन्य कार्य के लिए कभी भी लामबंदी नहीं की जायगी । तब उसे मात्र नागरिक सेवा करने हेतु आई०एम०एस० में क्यों रहने दिया जाय? कोई भी यह बहाना कर सकता है कि सैनिक सेवा के लिए कुछ लोगों की आवश्यकता होती है, उन्हें सिविल सर्विस में इसलिए लिया जाता है, ताकि आपातस्थिति में उनकी सेवाएं प्राप्त की जा सकें । परन्तु इन 80 लोगों के लिए क्या नीति है? उन्हें छूना भी नहीं है और न सैन्य उद्देश्यों के लिए उनका उपयोग किया जाना है । तब आई०एम०एस० में से उनकी भर्ती क्यों होती है? इसका क्या उत्तर है? मैं सैन्य सचिव से पूछता हूँ कि ऐसा क्यों है? क्या उनके पास उत्तर है? सिर लटकाने से काम नहीं चलेगा, उन्हें यह स्वीकार करना होगा कि यह एक भयंकर भूल है । इस संख्या को तो समाप्त करना ही होगा । फिर मैं सैन्य सचिव से जानना चाहता हूँ कि क्या वह इसमें सन्निहित नैतिकता के प्रश्न से अवगत हैं? अन्य देशों में क्या हो रहा है? वह अच्छी तरह से अवगत हैं कि अन्य देशों में विदेशी चिकित्सा डिग्री व प्रमाण–पत्र धारक हमारे देश की तरह वहाँ प्रैक्टिस नहीं कर सकते, जब तक कि वे उस देश की सरकार से विशेष अनुज्ञा न प्राप्त कर लें । और यहाँ हमारे देश में आप ब्रिटिश लोगों को ला रहे हैं, ताकि वे ब्रिटिश लोगों की चिकित्सा कर सकें । क्या आप जानते हैं कि इसमें क्या शरारत छिपी हुई है? मुझे क्यों कोई वस्तु खरीदनी चाहिए......... ।

मि० जी० आर० एफ० टोटेनहम— महोदय, क्या व्यवस्था के प्रश्न पर माननीय सदस्य के लिए यह अधिक उपयुक्त नहीं होगा कि वह एक व्यक्ति के स्थान पर 'चेयर' (पीठ) को संबोधित करें?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— जी हाँ महोदय, मैं पूरे समय 'पीठ' को ही सम्बोधित करता रहा हूँ । हाँ, यदा–कदा सैनिक सचिव के साथ भी पीठासीन व्यक्ति जैसा व्यवहार कर लेता हूँ । (हँसी) मैं जानना चाहूँगा कि क्या वह स्वयं उनके द्वारा की जा रही शरारत से अवगत हैं? इससे क्या शिक्षा मिलती है? इससे यह शिक्षा मिलती है कि मुझे सर लेस्ली हडसन द्वारा चलायी जा रही दुकान से कोई वस्तु नहीं खरीदनी चाहिए, मुझे ब्रिटिश डाक्टर से चिकित्सा नहीं करानी चाहिए, मालगुजारी का भुगतान अंग्रेज कलक्टर को नहीं करना चाहिए, किसी अंग्रेज को यहाँ अपनी दुकान चलाने की अनुमति नहीं देनी चाहिए, किसी ऐसे भवन में नहीं रहना चाहिए जिसका स्वामी अंग्रेज हो । इस प्रकार स्वयं वह इस देश में विदेशियों

द्वारा किए जा रहे शोषण की जड़ों को काटते हैं । इस कार्य के लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ । हमें यह पाठ हृदयंगम करना चाहिए, और फिर यह भी याद रखना है कि इस प्रकार के मामले में जहाँ केवल मानवता ही महत्त्व रखती है, ऐसे व्यवसाय में जो पृथ्वी पर सर्वाधिक श्रेष्ठ और कल्याणकर है, जिसमें एक व्यक्ति कष्ट के शमन तथा पीड़ा-परिहरण करने का विशेषाधिकार रखता है, ऐसे व्यवसाय में भी उनकी व्यवस्था के अधीन जातीयता के गलित व्रण को स्थान मिला हुआ है । एक ऐसे मामले में जहाँ रेडक्रास तथा अन्य व्यवस्थाओं की कल्पना अन्तर्राष्ट्रीय चरित्र के साथ की जाती है, ऐसे मामले में जहाँ किसी व्यक्ति के पीड़ा के परिहार का प्रश्न संबंधित है, अंग्रेज इस सीमा तक हठधर्मितापूर्ण प्रवृत्ति रखते हैं कि वे डाक्टर देशमुख जैसे विशिष्ट चिकित्सक की चिकित्सा इसलिए नहीं स्वीकार करते कि उनका चेहरा श्वेत नहीं है । ईश्वर इस जाति की रक्षा करे । मैं सोचता हूँ कि उनकी चारित्रिक भ्रष्टता तथा स्तरहीनता की इससे निम्नतर कोई अवस्था नहीं हो सकती है, वे इससे अधिक नीचे नहीं उतर सकते । पुनः हमसे पूछा जाता है कि आखिर भारतीयों के साथ किस प्रकार दुर्व्यवहार किया जा रहा है । पुनः धूर्ततापूर्ण योजना पर ध्यान दीजिए । उन्होंने मूल वेतन घटा दिया है किन्तु समुद्रपार (ओवरसीज) भत्ता बढ़ा दिया है, और इसका क्या लक्ष्य है? इसका उद्देश्य केवल यह है कि भारतीयों को कम वेतन मिले और यूरोपीय उस वेतन से अधिक प्राप्त करें जो वे इस समय प्राप्त कर रहे हैं । अब इनकी भर्ती के ढंग को लीजिए । यूरोपीय सदस्य एक चयन–बोर्ड के माध्यम से मनोनीत होने पर नियुक्त किए जाते हैं, किन्तु यह विधि क्यों? प्रतियोगिता क्यों नहीं आयोजित होती है? वह इसलिए कि यदि यूरोपीय व्यक्ति प्रतियोगिता द्वारा अपने देश में पाँव जमाने के योग्य होंगे तो वे इस देश में नहीं आयेंगे । वे जो अपने देश में प्रतियोगिता में सफलतापूर्वक उत्तीर्ण होते हैं, यहां नहीं आते । शासन को तो चिकित्सा – व्यवसाय के तलछट को यहाँ लाना है, ताकि वे हमारा रक्त चूस कर और अधिक मोटे होते रहें । किन्तु प्रतिशोध की देवी उनका पीछा करेगी और इसके लिए उन्हें तैयार रहना चाहिए । पुनः योजना पर और विचार कीजिए हमसे पूछा जाता है कि आखिर क्या फर्क है? आई०एम०एस० में पदों का आरक्षण पूर्व में भी था । हाँ, यह था किन्तु यह अनिवार्यता नहीं थी कि आई०एम०एस० अंग्रेज ही होना चाहिए, किन्तु अब उसे अनिवार्यतः न केवल आई०एम०एस० होना चाहिए वरन् अंग्रेज भी होना चाहिए । मुझे पता नहीं कि सर हेनरी गिडनी इस श्रेणी में आते हैं या नहीं, क्योंकि अब शायद वे विधिक रूप से एक भारतीय हैं । अब उन्हें झाँसी या इलाहाबाद में स्थान नहीं मिलेगा । यदि आप भारत के सर्वश्रेष्ठ स्थानों

को जानना चाहें तो सूची के परिशिष्ट को देखें, उसे देखकर आप देश के सर्वाधिक समृद्ध नगर चुन सकेंगे और यह जान सकेंगे कि कौन से नगर अधिक फल–फूल रहे हैं ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य का समय समाप्त हो गया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – महोदय, मुझे आशा है कि छल–कपट का समय भी समाप्त हो गया है और विपक्षी बेंचों का समय भी समाप्त हो गया है ।

परिशिष्ट

1935 मे 1937 की अवधि में लेजिस्लेटिव असेम्बली में

उठाये गये प्रमुख विन्दु एवं

महत्वपूर्ण प्रश्न

द्वितीय लाहौर षड्यंत्र कांड के अभियुक्त भागराम का मामला

श्री शामलाल – (क) क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि क्या भागराम द्वितीय लाहौर षड्यंत्र कांड में अभियुक्त था ?

(ख) क्या उसके विरुद्ध मुकदमा इसलिए वापस ले लिया गया था कि उसे सुनवाई के दौरान बेहोशी के दौरे पड़ते थे?

(ग) क्या मुकदमें से बरी होने के बाद उसे सरकारी कैदी के रूप में रखा गया था?

(घ) जब वह जेल में सरकारी कैदी के रूप में रखा गया तो उसका स्वास्थ्य कैसा था?

(ङ) क्या यह सच नहीं है कि इसी दौरान उसके लगभग सारे शरीर पर पक्षाघात का हमला हुआ और वह हाथ पैर हिला डुला सकने में भी असमर्थ हो गया ।

(च) भागराम के भाई ने बीमारी के आधार पर उसे छुड़ाने के लिए कितने प्रतिवेदन दिये?

(छ) इन प्रतिवेदनों का सरकार ने क्या उत्तर दिया?

(ज) क्या यह सच नहीं है कि सरकार ने उसे तब तक मुक्त नहीं किया, जब तक वह मौत के कगार पर नहीं पहुँच गया?

(झ) क्या भागराम अपनी रिहाई के एक या दो दिन बाद ही मर गया?

(ञ) क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि सरकार ने भागराम को सरकारी कैदी के रूप में क्यों रखा, बावजूद मेडिकल बोर्ड की इस रिपोर्ट के कि वह गंभीर रूप से बीमार है और मुकदमें की कार्रवाई का सामना करने में भी असमर्थ है?

(ट) सरकार ने उसे बीमारी के आधार पर क्यों नहीं मुक्त किया, जबकि भागराम के भाई ने कई बार इस आशय का प्रतिवेदन दिया कि उसका भाई जेल में गंभीर रूप से बीमार है?

श्री शामलाल के प्रश्न संख्या 180 के पूरक प्रश्न के रूप में दिनांक 12 फरवरी 1935 को पं० गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा पूछा गया प्रश्न ।

माननीय सर हैनरी क्रेक –(क) हाँ ।

(ख) से (ङ) तक और (ज) से (ञ) : जब वह विचाराधीन कैदी था तब उसका कई बार डाक्टरी परीक्षण किया गया और डाक्टरों की राय थी कि वह बायें हाथ पैर दोनों ही में (हिस्टीरिकल) पक्षाघात तथा बायें धड़ और चेहरे पर आंशिक सुन्नावस्था से पीड़ित था। अक्टूबर,1932 के बाद से उसे दौरे आने लगे थे, इसलिए वह अदालत में अपने खिलाफ चल रही कार्रवाई को भी समझ सकने में असमर्थ था । इन परिस्थितियों में उसके विरुद्ध मुकदमा वापस ले लिया गया था, लेकिन उसकी खतरनाक आतंकवादी गतिविधियों को देखते हुए उसे सरकारी कैदी के रूप में जुलाई 1933 में हिरासत में रखा गया था । उसके मामले पर दो सेशन-न्यायाधीशों ने विचार किया जो प्रस्तुत तथ्यों के आधार पर संतुष्ट थे कि यह एक खतरनाक क्रांतिकारी आतंकवादी था और उसका कैद से छोड़ा जाना राज्य की शान्ति के लिए खतरा था ।

हिरासत में लिए जाने के समय वह गम्भीर रूप से बीमार नहीं था और वस्तुतः नवम्बर,1933 से लेकर जनवरी,1934 के मध्य प्राप्त डाक्टरी रिपोर्ट के अनुसार उसके स्वास्थ्य में सुधार के भी कुछ लक्षण दिखाई पड़े थे । फरवरी, 1934 की रिपोर्ट भी असंतोषजनक नहीं थी । उसके बाद उसकी हालत बिगड़ने लगी । अप्रैल, 1934 में उसे रावलपिंडी जिला जेल में स्थानान्तरित किया गया, जहाँ एक पूर्णकालिक डाक्टर उपलब्ध था । तथापि सरकारी कैदी के स्वास्थ्य में लगातार गिरावट आती गयी और उसे 29 जुलाई को रिहा कर दिया गया । लगभग एक महीने बाद 27 अगस्त को उसकी मृत्यु हो गयी ।

(च) (छ) और (ट) सरकारी कैदी की रिहाई के लिए उसके भाई का सिर्फ एक प्रतिवेदन प्राप्त हुआ था । इसमें एक और निवेदन यह था कि यदि सरकार उसकी रिहाई करने को तैयार न हो तो उसे लाहौर के मेयो अस्पताल में रेडियो चिकित्सा के लिए स्थानान्तरित कर दिया जाये । यह स्थानान्तरण कर दिया गया और उसके भाई को उसकी सूचना दे दी गयी । नवम्बर,1933 में सरकारी कैदी ने इलाज कराने से मना कर दिया । जब उसके भाई ने उपयुक्त प्रतिवेदन दिया था, तब वह गंभीरतापूर्वक बीमार नहीं था इसलिए उसकी रिहाई का भी प्रश्न नहीं उठता था ।

डा० टी०एस० राजन – जो व्यक्ति जेल से निकलने के एक महीने के भीतर ही मर जाय,क्या सरकार यह गम्भीरतापूर्वक सोचती है कि इस मामले में वह किसी प्रकार जिम्मेदार नहीं है? इस प्रश्न का उत्तर उस बयान में सन्निहित है जिसमें कहा गया है

कि कैदी की मृत्यु रिहाई के एक महीने के भीतर हो गयी और यह कि वह गम्भीरतापूर्वक बीमार था, यद्यपि उसकी बीमारी को वृत्तिमूलक रोग के रूप में पहचाना गया था, और यह कि उसे जेल में रखे जाने के अयोग्य घोषित किया गया था, और क्या सरकार समझती है कि वह उसे जेल में रोके रखने और परिणामस्वरूप उसकी मौत को नजदीक लाने की जिम्मेदारी से बरी हो सकती है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – कैद में रखकर उसकी मौत को निकट लाने का कोई प्रश्न ही नहीं है । जब तक उसे छोड़ा नहीं गया तब तक उसे जेल में रखे जाने के अयोग्य नहीं पाया गया ।

डा० टी०एस० राजन – लेकिन कैद से छोड़े जाने के एक महीने बाद उसकी मृत्यु हो गयी । क्या यह उत्तर नहीं दिया गया है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – मेरे विचार से सम्भवतः जेल से छोड़े जाने के बाद जो डाक्टरी सहायता उसे मिली उसकी अपेक्षा जेल में उसका इलाज अच्छा था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – भागराम की उम्र क्या थी?

माननीय सर हैनरी क्रेक – इसके लिए नोटिस की आवश्यकता है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि उसे कभी भी नियमित अदालत द्वारा नियम सम्मत ढंग से सजा नहीं दी गयी थी?

माननीय सर हैनरी क्रेक – इस विशेष मामले में उसके मुकदमें की कार्यवाही पूरी ही न हो पायी । मैं उसके पूर्व रिकार्ड के बारे में नहीं कह सकता, लेकिन इस विशेष मामले में उसके विरुद्ध मुकदमें को वापस ले लिया गया था, जैसा कि मैंने स्पष्ट कर दिया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि जिस दौरान वह सरकारी कैदी के रूप में हिरासत में रखा गया था, वह अपने बिस्तर से उठ सकने तक में असमर्थ था?

माननीय सर हैनरी क्रेक – वह आंशिक पक्षाघात से पीड़ित था और मैं समझता हूँ कि संभवतः वह चल–फिर नहीं सकता था, लेकिन मेरे विचार से सदैव ऐसी हालत नहीं रही । मैंने कहा कि एक वक्त ऐसा भी था, जब उसकी हालत में कुछ सुधार हुआ था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या वह कभी भी अपने बिस्तर से उठ सकने की हालत में था?

माननीय सर हैनरी क्रेक – मैं पक्के तौर पर नहीं कह सकता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – जब उसकी हालत खराब हुई, सरकार ने उसे क्यों नहीं छोड़ा?

माननीय सर हैनरी क्रेक – जब उसकी हालत खराब हुई, सरकार ने उसे छोड़ दिया ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच नहीं कि उसकी हालत रिहाई के पहले ही बिगड़ गयी थी?

माननीय सर हैनरी क्रेक – अप्रैल के आस-पास हालत बिगड़ने लगी और लगभग जुलाई के अन्त में उसे छोड़ दिया गया ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार यह महसूस करती है कि उसने उसकी असमय मृत्यु में योगदान दिया?

माननीय सर हैनरी क्रेक – नहीं श्रीमान् ।

●

मुजफ्फरगढ़ जेल में सरकारी कैदी श्री विद्याभूषण आजाद की रिहाई या दूसरी जेल में स्थानान्तरण

श्री शामलाल – (क) क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि विद्याभूषण आजाद मुजफ्फरगढ़ जेल में सरकारी कैदी के रूप में बंद है?

(ख) क्या मुजफ्फरगढ़ जेल की जलवायु उनके अनुकूल है, और क्या उनका स्वास्थ्य अच्छा चल रहा है?

(ग) क्या सरकार को मालूम है कि मुजफ्फरगढ़ जहाँ के श्री आजाद हैं, बनारस से काफी दूर है, और उनके रिश्तेदारों का समय समय पर उनसे मिल पाना कठिन है?

(घ) क्या सरकार श्री आजाद को बनारस के निकट की किसी जेल में स्थानान्तरित करने के लिए तैयार है?

(ङ) क्या सरकार श्री आजाद से मिलने आने वाले रिश्तेदारों को यात्रा भत्ता देने को तैयार है?

(च) श्री आजाद कितने लम्बे अर्से से सरकारी कैदी रहे हैं?

(छ) क्या यह सच है कि श्री आजाद काफी लम्बे अर्से से सरकारी कैदी रहे हैं और उनका स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं है? यदि ऐसा है तो क्या सरकार उनकी रिहाई पर विचार करने को तैयार है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – (क) और (ख) हाँ उनका वजन मुजफ्फरगढ़ उपजेल में आने के बाद से दस पौंड बढ़ गया है ।

(ग) और (घ) सरकार उनके स्थानान्तरण के लिए तैयार नहीं है ।

(ङ) नहीं ।

(च) और (छ) सरकारी कैदी को फरवरी, 1932 से जेल में रखा गया है और रिपोर्ट बताती है कि उनका स्वास्थ्य अच्छा है । इसलिए (छ) के आखिरी हिस्से का प्रश्न ही नहीं उठता ।

श्री शामलाल के प्रश्न संख्या 181 के क्रम में पंत जी द्वारा दिनांक 12 फरवरी, 1935 को पूछा गया पूरक प्रश्न ।

मि० एम० आसिफ अली – क्या सरकार बता सकती है कि श्री विद्याभूषण आजाद को सरकारी कैदी के रूप में क्यों रखा गया है? उनसे अब उनको किस खतरे की आशंका है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – नहीं मान्यवर, मैं यह सूचना देने को तैयार नहीं हूँ ।

मि० एम० आसिफ अली – क्या यह सच है कि जिस षड्यंत्र के मामले में उन पर मुकदमा चलाया गया था, उसमें उन्हें सजा नहीं हुई थी और वास्तव में उन्हें दोषमुक्त घोषित कर दिया गया था?

माननीय सर हैनरी क्रेक – हाँ, मैं समझता हूँ कि यह ठीक है ।

मि० एम० आसिफ अली – बाद में उन्हें किस आधार पर कैद में रखा गया था?

माननीय सर हैनरी क्रेक – क्योंकि उनका कैद में रखा जाना आंतरिक शान्ति के हित में है । (हँसी)

मि० एम० आसिफ अली – मुझे माननीय सदस्य से यह जानकर खुशी हुई कि उनका कैद में रखा जाना शान्ति के हित में है, लेकिन क्या अब भी उन्हें कैद में रखने का कोई आधार है? क्या आपके पास जेल के अन्दर की उनकी गतिविधियों के बारे में कोई रिपोर्ट है कि उन्होंने इस बीच सद्व्यवहार दिखाया है या नहीं दिखाया है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – जेल के अन्दर के उनके व्यवहार के बारे में जानने के लिए नोटिस दिया जाना चाहिए । सरकार मानती है कि उनको हिरासत में रखना जरूरी है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – पिछली बार कब श्री आजाद के मामले की जांच पड़ताल किसी न्यायिक अधिकरण–उच्च न्यायालय के किसी जज या सेशन जज की योग्यता प्राप्त किसी जज द्वारा की गयी?

माननीय सर हैनरी क्रेक – मैं कह नहीं सकता कि किसी तारीख को उनके मामले की सुनवाई की गई थी– वास्तव में ऐसी किसी सुनवाई की मुझे कोई जानकारी नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या समय–समय पर ऐसे मामलों की सुनवाई नहीं की जाती?

माननीय सर हैनरी क्रेक – उच्च न्यायालय के जज द्वारा नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या हाल में स्थानीय (प्रान्तीय) सरकार द्वारा इसकी सुनवाई की गई थी?

माननीय सर हैनरी क्रेक – सारे सरकारी कैदियों के मामलों पर भारत सरकार

द्वारा हर छः महीने पर नियमान्तर्गत विचार किया जाता है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – भारत सरकार द्वारा भी आजाद के मामले में पिछली बार कब विचार हुआ?

माननीय सर हैनरी क्रेक – यदि माननीय सदस्य नोटिस दें तो मैं मालूम कराऊँगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या आजाद संयुक्त प्रान्त के निवासी हैं?

माननीय सर हैनरी क्रेक – हाँ, मैं समझता हूँ कि हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार उन्हें संयुक्त प्रान्त की किसी जेल में रखने का प्रबन्ध नहीं कर सकती?

माननीय सर हैनरी क्रेक – मैंने मुख्य प्रश्न के जवाब में पहले ही इसका उत्तर दे दिया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या मैं जान सकता कि कठिनाइयाँ क्या हैं?

माननीय सर हैनरी क्रेक – कोई कठिनाई नहीं है, लेकिन सरकार स्थानान्तरण के लिए तैयार नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – सिर्फ बदले की भावना वश?

माननीय सर हैनरी क्रेक – बदले की किसी भावना का प्रश्न ही नहीं है ।

•

बाबू श्रीप्रकाश द्वारा पेश कामरोको प्रस्ताव

माननीय सर हैनरी क्रेक (गृह सदस्य) – मान्यवर, कार्य स्थगन प्रस्ताव द्वारा सार्वजनिक महत्व का अत्यावश्यक मसला पेश किया जाना चाहिए और यह हाल की किसी विशेष घटना तक सीमित रहना चाहिए । मेरा कहना है कि हाल की कोई ऐसी घटना नहीं है, जो इस प्रस्ताव के अन्तर्गत आती हो । इन दो संगठनों पर प्रतिवन्ध भारत सरकार द्वारा नहीं, बल्कि स्थानीय सरकारों द्वारा लगाया गया था, और उसे ऐसा करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है, और यह कम से कम तीन वर्ष पूर्व लगाया गया था । इसलिए मेरा मत है कि यह प्रस्ताव हाल की किसी घटना से संबंधित नहीं है । यह एक ऐसे मसले से संबंधित है जो पिछले तीन वर्षों से उसी हालत में चला आ रहा है जैसा कि आज है । इस आधार पर मेरा सुझाव है कि यह कार्यस्थगन प्रस्ताव के दायरे में नहीं आता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मान्यवर, यह प्रस्ताव माननीय गृह मंत्री द्वारा इस महीने की 14 तारीख को पूछे गये प्रश्नों के माननीय गृह सदस्य द्वारा दिये गये उत्तर का परिणाम है । इन उत्तरों को देने के बाद यह असेम्बली की पहली बैठक है । प्रतिबन्ध लगाना एक बात है, सरकार द्वारा प्रतिबन्ध हटाने से इंकार दूसरी बात है । यह हाल का मसला है और हिन्दुस्तानी सेवा दल जैसे अखिल भारतीय संगठन का मसला होने के कारण यह निश्चित रूप से अत्यावश्यक सार्वजनिक महत्व का ताजा मामला है ।

बाबू श्रीप्रकाश एक सार्वजनिक महत्व के मसले पर विचार करने के लिए कार्य स्थगन संबंधी प्रस्ताव पेश करने की अनुमति चाहते थे । सार्वजनिक महत्व का मामला था "कि सरकार का अखिल भारतीय सेवा दल और प्रेम महाविद्यालय, वृन्दावन पर से प्रतिबन्ध हटाने से इंकार करना जैसा कि मेरे द्वारा पूछे गये प्रश्नों के माननीय गृहमंत्री द्वारा विगत 14 तारीख को दिये गये असंतोषजनक उत्तरों से सुस्पष्ट है ।" पंत जी ने यह विन्दु 18 फरवरी 1935 को उठाया था ।

माननीय सर हैनरी क्रेक – महोदय, मैं स्थिति स्पष्ट कर रहा हूँ कि जहाँ तक मुझे याद है, मैंने प्रश्नों का उत्तर देते समय प्रतिबन्ध हटाने से इंकार के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा था । इसे अस्वीकार करना या स्वीकार करना भारत सरकार के अधिकार क्षेत्र में नहीं है । मसला पूरी तरह से स्थानीय सरकार पर निर्भर करता है । मैंने अपने उत्तर की टंकित प्रति में सिर्फ सुधार भर किया है । मैंने प्रतिबन्ध हटाने के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा । मुझे यह भी याद नहीं है कि यह सवाल भी पूछा गया था कि क्या सरकार प्रतिबन्ध हटाने से इंकार कर रही है ।

श्री श्रीप्रकाश – मान्यवर, मुझे आशा है कि मैं आपको संतुष्ट कर दूँगा कि यह स्थगन प्रस्ताव नियमानुकूल है । यह एक निश्चित मसला है, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता; यह कितना अत्यावश्यक है, यह मेरे माननीय मित्र पंडित गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा बताया जा चुका है; और यह सार्वजनिक महत्व का है, इससे भी इन्कार नहीं किया जा सकता ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यह अति आवश्यक है, सिर्फ इसी को लेकर आपत्ति की गयी है ।

श्री श्रीप्रकाश – माननीय गृह सदस्य ने अभी कहा कि यह प्रान्तीय सरकार का मसला है और उनका इससे कोई संबंध नहीं है । उस दिन उन्होंने यह नहीं कहा था । वस्तुतः वह अपनी परिधि के बाहर चले गये थे जबकि उन्होंने कहा कि ये संगठन क्रान्तिकारी हैं ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य मसले पर विचार–विमर्श नियमान्तर्गत करते नहीं प्रतीत हो रहे हैं । उन्हें सिर्फ अपना मत रखना चाहिए ।

श्री श्रीप्रकाश – मुझे यह कहना है कि यह अत्यन्त आवश्यक मसला है, क्योंकि सरकार का रवैया उस अन्याय को बरकरार रखने का है, जो चल रहा है । और जब तक यह अन्याय जारी रहेगा, यह मामला तात्कालिक महत्व का बना रहेगा और चूंकि सरकार द्वारा इस तरह की अन्य संस्थाओं के बारे में नीति बनाये जाने के बावजूद, यह अन्याय बरकरार है, हम समझते हैं कि यह एक ऐसा मसला है जिस पर हम कार्यस्थगन और निन्दा प्रस्ताव पेश कर सकते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मान्यवर, माननीय गृह सदस्य....

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य दुबारा भाषण नहीं दे सकते ।

यह आपत्ति स्वीकार की गयी है कि यह प्रस्ताव नियमानुकूल नहीं हैं, क्योंकि इसे अत्यावश्यक नहीं माना जा सकता । उल्लिखित संगठनों पर यह प्रतिबन्ध कुछ समय पहले ही लगा दिया गया था और इसलिए माननीय गृह सदस्य का यह निवेदन

है कि इसे हाल की घटना नहीं माना जा सकता । नियम 12 के अनुसार :

> "और प्रस्ताव हाल के किसी विशिष्ट मसले तक सीमित रहना चाहिए ।"

अध्यक्ष के रूप में मैं नहीं समझ पा रहा हूँ कि इसे कैसे हाल के किसी विशिष्ट मसले तक सीमित माना जा सकता है, जबकि प्रतिबन्ध कुछ समय पूर्व ही लगा दिया गया था । इस प्रस्ताव के पक्ष में जो दलील दी गयी वह यह है कि इस विषय पर रखे गये प्रश्नों के संदर्भ में माननीय गृह सदस्य द्वारा दिये गये उत्तरों से यह मसला तात्कालिक महत्व की ताजी घटना माना जा सकता है । अध्यक्ष के रूप में यह नहीं समझता कि इससे इसे हाल की घटना माना जा सकता है, जबकि यहाँ मसला प्रतिबन्ध लागू करने से संबंधित है, न कि प्रश्नों के रखे जाने या उत्तर पाने से । इसलिए अध्यक्ष के रूप में मैं इस प्रस्ताव को नियमों के अन्तर्गत नहीं मानता ।

अवैध घोषित संस्थाओं एवं संगठनों पर से प्रतिबन्ध का न उठाया जाना

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार उन संस्थाओं और संगठनों की सूची देने का कष्ट करेगी, जिन्हें 1932 में अवैध घोषित किया गया था और जिन पर आज भी प्रतिबन्ध लागू है?

(ख) क्या सरकार हर मामले में प्रतिबन्ध लगाये जाने का कारण बतायेगी?

माननीय सर हैनरी क्रेक – (क) और (ख) मैं चाहूँगा कि माननीय सदस्य श्री मोहन लाल सक्सेना के प्रश्न सं० 272 और 273 के संबंध में मेरे द्वारा दिये गये उत्तर को देखें ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या इन संस्थाओं और संगठनों के किन्हीं भी सदस्यों को कांग्रेस द्वारा सविनय अवज्ञा आन्दोलन की वापसी के बाद गैर कानूनी गतिविधि के लिए दोषी ठहराया गया?

माननीय सर हैनरी क्रेक – यह ऐसा प्रश्न है, जिसे संबंधित स्थानीय प्रान्तीय सरकारों से पूछा जाना चाहिए । बहरहाल मुझे इस प्रश्न के लिए नोटिस चाहिए ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या भारत सरकार ने स्थानीय (प्रान्तीय) सरकारों से इन संस्थाओं के बारे में कोई रिपोर्ट या सूचना नहीं मांगी है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – मैंने यह स्पष्ट कह दिया था कि हमें संस्थाओं के बारे में सूचना मिली थी, लेकिन माननीय सदस्यों के प्रश्न व्यक्तियों से संबंधित हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार ने इन संस्थाओं और संगठनों के नियमों का अवलोकन किया है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – नहीं श्रीमान् ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इन संस्थाओं के बारे में आपत्ति क्या है? विशेषकर, प्रतिबन्ध न हटाने के आधार क्या हैं?

---

*तारांकित प्रश्न संख्या 345, दिनांक 20 फरवरी, 1935

माननीय सर हैनरी क्रेक – मैंने पहले पूछे गये प्रश्नों के उत्तर में इसे स्पष्ट कर दिया था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या इन संगठनों के किन्हीं सदस्यों या इनसे संबंधित किन्हीं व्यक्तियों को हिंसा की कार्रवाई के लिए दोषी ठहराया गया है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – इसके लिए पुनः मैं पूर्व सूचना (नोटिस) चाहूँगा, मैं व्यक्तियों के बारे में नहीं बता सकता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या कोई ऐसा तरीका है, जिससे इस संबंध में सरकार का मोह–भंग हो सके?

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या मैं माननीय गृह सदस्य से पूछ सकता हूँ कि "हर मामले में" प्रतिबन्ध न हटाये जाने के क्या कारण हैं? मेरी जानकारी में अब तक उन्होंने इसे कभी नहीं बताया है– सिवाय दो संगठनों के, और मैं अपने माननीय मित्र पंडित पंत के प्रश्न को दोहरा रहा हूँ और माननीय गृह सदस्य से पूछ रहा हूँ कि वे हर मामले में प्रतिबन्ध न हटाये जाने के कारणों का उल्लेख करें ।

माननीय सर हैनरी क्रेक – यदि माननीय सदस्य प्रश्न संख्या272 और 273 के संबंध में पटल पर रखे गये मेरे बयानों को देखें तो उन्हें कारणों की जानकारी हो जायेगी । मोटे तौर पर कहें तो कारण यह है कि स्थानीय (प्रान्तीय) सरकारें प्रतिबन्ध इसलिए लागू किये हुए हैं कि उनकी राय में ये संगठन देश की शान्ति के लिए खतरा हैं ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या मैं जान सकता हूँ कि स्थानीय (प्रान्तीय) सरकार की इस राय का आधार क्या है? क्या भारत सरकार ने कोई जाँच-पड़ताल की है या उसने उनकी राय को बिना किसी छानबीन के मान लिया है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – भारत सरकार स्थानीय सरकारों की राय से निर्देशित नहीं होती ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या स्थानीय सरकारों ने भारत सरकार को अपनी राय के संबंध में कुछ कारण दिये हैं?

माननीय सर हैनरी क्रेक – हाँ श्रीमन्, उन्होंने ऐसा किया है ।

●

सविनय अवज्ञा आन्दोलन के बंदी अभी भी जेल में

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि अभी भी विभिन्न प्रान्तों में सविनय अवज्ञा आन्दोलन के कितने बंदी हैं?

(ख) उनके क्या नाम हैं और हर मामले में कैदी की शेष अवधि क्या है?

माननीय सर हैनरी क्रेक – (क) और (ख) : मैं पटल पर एक वक्तव्य रख रहा हूँ। कैदियों के नामों को बताना जनहित में नहीं है।

सविनय अवज्ञा आंदोलन के कैदियों की संख्या और कैद की अवधि के संबंध में ब्यौरा

प्रान्त	दंडितों की सं०	दंड देने की तिथि	कैद की अवधि
मद्रास	एक	1-2-32	6 माह का कठोर कारावास और इसके बाद 22 फरवरी, 1932 को साढ़े तीन वर्ष का आगे और कठोर कारावास ।
बम्बई	एक	4-2-32	चार वर्ष का कठोर कारावास और 150 रु० जुर्माना जिसे न देने पर 8 माह की सजा ।
बम्बई	एक	19-2-32	चार वर्ष का कठोर कारावास और 250 रुपये जुर्माना जिसे न देने पर 18 माह की सजा ।

तारांकित प्रश्न संख्या 346, दिनांक 20 फरवरी, 1935

बम्बई	एक दो अभियोगों में	16-4-32 26-7-32	तीन वर्ष का कठोर कारावास और 500 रुपये अर्थ दंड जिसे न देने पर 9 महीने 28 दिन की सजा ।
बम्बई	एक तीन अभियोगों में	28-1-32 11-2-33 12-2-32	ढाई साल का कठोर कारावास और दो सौ रुपये जुर्माना, न देने पर साढ़े तेरह महीने की सजा ।
बम्बई	एक तीन अभियोगों में	26-1-32 28-1-32 30-1-32	पाँच वर्ष
बम्बई	एक दो अभियोगों में	16-4-32 16-7-32	साढ़े तीन वर्ष का कठोर कारावास और 500 रु० दंड, न देने पर 10 माह की सजा ।
बम्बई	एक दो अभियोगों में	26-9-33 10-4-34	दो वर्ष का कठोर कारावास और 165 रुपये दंड, न देने पर 5 माह की सजा ।
बम्बई	एक दो अभियोगों में	15-11-32	(1) छः माह का कठोर कारावास और 50 रु० दंड, न देने पर 6 सप्ताह की सजा ।
		23-12-32	(2) दो वर्ष का कठोर कारावास ।
बम्बई	एक दो अभियोगों में	14-2-34	(1) छः माह का कठोर कारावास और 50 रुपये दंड, न देने पर 6 सप्ताह की सजा ।
		1-6-34	(2) दो वर्ष का कठोर कारावास और 50 रु० दंड, न देने पर तीन माह की सजा ।
बम्बई	दो	26-10-33	18 माह का कठोर कारावास और 200 रु० दंड, न देने पर 6 माह की सजा ।
बम्बई	एक दो अभियोगों में	31-7-33	18 माह का कठोर कारावास और 500 रु० दंड, न देने पर 6 माह की सजा ।

		13-9-33	6 माह का कठोर कारावास और 50 रु० जुर्माना, न देने पर डेढ़ माह की सजा ।
बम्बई	दो	31-7-33	18 माह का कठोर कारावास और 500 रु० दंड, न देने पर 6 माह की सजा ।
बम्बई	एक	20-3-33	दो वर्ष का कठोर कारावास और 300 रु० जुर्माना, न देने पर 6 माह की सजा ।
बम्बई	एक दो अभियोगों में	27-3-33 7-4-33	दो वर्ष का कठोर कारावास और 300 रु० जुर्माना, न देने पर 6 माह की सजा ।
बम्बई	एक दो अभियोगों में	24-4-33	दो वर्ष और तीन माह का कठोर कारावास दंड और 350 रु० जुर्माना, न देने पर साढ़े सात माह की सजा ।
बम्बई	एक	13-4-33	दो वर्ष का कठोर कारावास और तीन सौ रुपये दंड, न देने पर 6 माह की सजा ।
बम्बई	एक दो अभियोगों में	25-4-33	(1) 6 माह का कठोर कारावास (2) दो वर्ष का कठोर कारावास और 150 रु० दंड, न देने पर तीन माह की सजा ।
बम्बई	एक	6-11-33	दो वर्ष का कठोर कारावास
बम्बई	एक	17-7-33	दो वर्ष का कठोर कारावास
बम्बई	एक दो अभियोगों में	7-7-33 15-8-33	(1) दो वर्ष (2) छः माह
बम्बई	एक दो अभियोगों में	28-6-33	दो वर्ष का कठोर कारावास और 50 रु० दंड, न देने पर 6 माह की सजा
		1-8-33	दो वर्ष का कठोर कारावास
बम्बई	एक	26-7-33	दो वर्ष का कठोर कारावास

	तीन अभियोगों में	28-7-33 1-8-33	दो वर्ष का कठोर कारावास
बम्बई	एक दो अभियोगों में	5-9-33 16-9-33	(1) दो वर्ष का कठोर कारावास (2) एक वर्ष का कठोर कारावास
बम्बई	एक दो अभियोमों में	22-8-33 8-9-33	(1) डेढ़ वर्ष का कठोर कारावास (2) 6 माह का कठोर कारावास और 100 रु० जुर्माना
बम्बई	एक दो अभियोगों में	9-9-33 11-9-33	(1) छः माह का कठोर कारावास (2) 2 वर्ष का कठोर कारावास
बम्बई	एक दो अभियोगों में	31-8-33	(1) एक वर्ष का कठोर कारावास, चार माह का कठोर कारावास (साथ–साथ) ।
		19-9-33	(2) एक वर्ष का कठोर कारावास और 200 रु० जुर्माना, न देने पर 6 माह की सजा ।
बम्बई	एक दो अभियोगों में	17-3-33	6 माह की सजा 2 वर्ष की सजा (साथ-साथ)
बंगाल	दो	14-2-34	प्रत्येक को 1 वर्ष, 9 माह का कठोर कारावास और 50 रु० दंड, न देने पर तीन माह का कारावास
बंगाल	एक	5-3-34	एक वर्ष का कठोर कारावास
बंगाल	दो	21-4-34	प्रत्येक को एक वर्ष, 6 माह का कठोर दंड
बंगाल	एक	1-5-33	दो वर्ष और 42 दिन का कारावास (पचास रुपये दंड न देने पर 42 दिन का कारावास सम्मिलित है)
बंगाल	एक तीन अभियोगों में	17-8-33	क्रमशः तीन वर्ष का कठोर कारावास और 100 रु० तथा 50 रु० जुर्माना,

			न देने पर तीन माह का कठोर कारावास और दो माह का साधारण कारावास ।
बंगाल	एक दो अभियोगों में	17-8-33	एक वर्ष का कठोर कारावास और 50 रु० दंड, न देने पर 2 माह की सजा । एक वर्ष का कठोर कारावास और 100 रु० दंड, न देने पर तीन माह की सजा ।
बंगाल	एक दो अभियोगों में	3-8-33	एक वर्ष का कठोर कारावास और 200 रु० जुर्माना, न देने पर तीन माह की और सजा
		28-8-33	एक वर्ष की कठोर सजा।
बंगाल	एक दो अभियोगों में	7-2-34	एक वर्ष का कठोर कारावास और 100 रु० जुर्माना, न देने पर 84 दिन का कठोर कारावास
बंगाल	एक	25-9-30	धारा 302/34 और 145, 120-बी/353 भारतीय दंड संहिता के अन्तर्गत बीस वर्ष का कठोर कारावास ।
बंगाल	दो	25-9-30	प्रत्येक को सात वर्ष का कठोर कारावास । भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 और 145, 120-बी / 353 और 325 / 147 के अन्तर्गत।
बंगाल	दो दो अभियोगों में	25-9-30	प्रत्येक को बीस वर्ष का कठोर कारावास । भा०दं०सं० की धारा 302/34 और 143 के अन्तर्गत ।
		27-10-30	प्रत्येक को छः माह का कठोर कारावास । भा०दं०सं० की धारा 201 / 34 और 143 के अन्तर्गत ।
बंगाल	एक दो अभियोगों में	25-9-30	प्रत्येक को बीस वर्ष का कठोर कारावास । भा०दं०सं० की धारा

			302 / 34 और 143 और 120-बी 353 के अन्तर्गत
		27-10-30	प्रत्येक को दो वर्ष का कठोर कारावास । भा०दं०सं० की धारा 302/34 और 143 और 120-बी / 353 के अन्तर्गत ।
बंगाल	एक	26-4-34	एक वर्ष का कठोर कारावास
संयुक्त प्रान्त	तीन	2-2-34	दो वर्ष का कठोर कारावास और दो सौ रुपये दंड, या न देने पर 6 माह का कठोर कारावास
संयुक्त प्रान्त	एक दो अभियोगों में	10-8-33	ढ़ाई वर्ष का कठोर कारावास
सयुक्त प्रान्त	एक	21-3-33	दो वर्ष का कठोर कारावास और 100 रुपये जुर्माना
पंजाव	एक	20-9-33	दो वर्प का कठोर कारावास
पंजाव	एक तीन अभियोगों में	6-6-32	6 माह का कठोर कारावाम औग 100 रु० दंड, न देने पर आधे माह का कठोर दंड
		23-6-32	दो वर्प का कठोर कारावास और दो सौ रुपये दंड. न देने पर छः माह का कठोर कारावास ।
		19-11-32	तीन माह का कठोग कागवाम
बिहार और उड़ीमा	एक	28-4-34	एक वर्प का कठोर कारावाम
उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त	चार	4-9-31	प्रत्येक को पाँच वर्प का कठोर कागवाम
उत्तर पश्चिम मीमान्त प्रान्त	एक	31-1-34	पांच वर्प का कठोर कारावास और 200 रु० जुर्माना, न देने पर छः माह का कठोग कारावास
उत्तर पश्चिम मीमान्त प्रान्त	दो	21-9-33	प्रत्येक को नीन वर्प का कठोर कागवाम
उत्तर पश्चिम	एक	20-6-33	तीन वर्प का कठोर कारावास और

सीमान्त प्रान्त			दो सौ रुपये दंड, न देने पर 9 माह का कठोर कारावास
उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त	दो	13-1-32	6 वर्ष का कठोर कारावास
उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त	दो	13-1-34	तीन वर्ष का कठोर कारावास
उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त	दो	9-7-34	दो वर्ष का कठोर कारावास
उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त	दो	5-10-33	तीन वर्ष का कठोर कारावास और 100 रु० दंड, न देने पर 6माह का कठोर कारावास ।
उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त	दो	20-12-34	दो वर्ष का कठोर कारावास और दो सौ रुपये दंड, न देने पर 6 माह का कठोर कारावास ।
उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त	दो	6-6-32	चार वर्ष का कठोर कारावास
उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त	दो	27-11-34	6 माह का कठोर कारावास
कुल योग	71		

इस बीच बंगाल के दो कैदी रिहा कर दिये गये ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इन कैदियों को अब तक क्यों नहीं रिहा किया गया?

माननीय सर हैनरी क्रैक – यह एक ऐसा प्रश्न है जिसे स्थानीय (प्रान्तीय) सरकारों से पूछा जाना चाहिए ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या माननीय सदस्य ने अपने एक–दो भाषणों के दौरान यह नहीं कहा था कि यदि सविनय अवज्ञा आन्दोलन वापस ले लिया जाता है तो सरकार इस आन्दोलन के बंदियों की रिहाई में तत्परता दिखायेगी?

माननीय सर हैनरी क्रैक – मैं समझता हूँ कि माननीय सदस्य मेरे पूर्वाधिकारी के भाषणों का उल्लेख कर रहे हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं भारत सरकार के माननीय गृह सदस्यों के भाषणों की चर्चा कर रहा हूँ, चाहे पद पर कोई भी क्यूँ न रहा हो ।

माननीय सर हैनरी क्रैक – हाँ श्रीमान्, वे भाषण हुए थे और रिहाई की कार्रवाई तेज की गयी है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या माननीय सदस्य यह बताने का कष्ट करेंगे कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन के कितने बंदियों को अपनी अवधि के पूर्व पिछले दो महीनों में रिहा किया गया है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – मैं यह नहीं बता सकता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह तथ्य नहीं है कि इस आन्दोलन के संबंध में दंडित लोगों को अब रिहा नहीं किया जा रहा है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – नहीं श्रीमान्, रिहाई की प्रक्रिया अभी भी जारी है । माननीय सदस्य प्रस्तुत ब्यौरे में पायेंगे कि सारे भारत में अब केवल 69 कैदी शेष हैं । कुछ माह पूर्व कई हजार थे ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह इसलिए है कि अब और अधिक लोग अपनी गिरफ्तारी नहीं दे रहे हैं या लोगों को अपनी रिहाई की अवधि के पूर्व मुक्त किया जा रहा है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – निश्चित रूप से नहीं कह सकता, लेकिन मैं समझता हूँ कि दोनों कारण इसमें शामिल हैं ।

●

देवली बंदी कैम्प और अंडमान में नजरबंद कैदी

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार नजरबंद कैदियों के नाम बताने का कष्ट करेगी, और यह जानकारी देगी कि उनमें से कितने और कौन इन दिनों देवली कैम्प में हैं?

(ख) क्या अंडमान में कोई नजरबंदी है? यदि हाँ,तो कौन?

माननीय सर हैनरी क्रैक – 6 फरवरी, 1935 को श्री मोहनलाल सक्सेना द्वारा पूछे गये प्रश्न संख्या 86 के संबंध में अपने उत्तर पर ध्यान आकर्षित करता हूँ ।

श्री डी०के० लाहिड़ी चौधरी – क्या देवली जेल की काल कोठरी में कोई बंदी है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – जहाँ तक मेरी जानकारी है, नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या पिछले दो महीनों में देवली जेल से किसी भी कैदी को छोड़ा गया है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – हाँ श्रीमान् ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – कितने?

माननीय सर हैनरी क्रैक – मुझे संशोधन कर लेना चाहिए । कुछ कैदियों को बंगाल वापस भेज दिया गया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या पिछले दो महीनों में किसी को रिहा किया गया है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – मैं नहीं जानता, मान्यवर ।



नागरिक प्रश्न संख्या 337, दिनांक 20 फरवरी, 1935

भारतीय सिपाहियों और भारत स्थित ब्रिटिश सिपाहियों के वेतन भत्ते

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार भारतीय सिपाहियों और भारत स्थित ब्रिटिश सिपाहियों के वेतन भत्ते आदि के बारे में तुलनात्मक ब्यौरा पटल पर रखने का कष्ट करेगी?

(ख) भारतीय और ब्रिटिश सेना में शाही कमीशन के अन्तर्गत कुल कितने अधिकारी हैं और उनमें से कितने भारतीय वास्तविक कमांड की स्थिति में हैं?

मिस्टर जी०आर०एफ० टोटेनहम – (क) ब्रिटिश सिपाही का वेतन भत्ता इन दिनों लगभग 850 रुपये वार्षिक है, जबकि भारतीय सिपाही को लगभग 285 रुपये वार्षिक मिलता है । इन आंकड़ों के मूल वेतन कें अतिरिक्त भोजनालय, वर्दी आदि और सुयोग्यता तथा विलंबित वेतन भी शामिल है ।

(ख) भारतीय सेना में शाही कमीशन के अन्तर्गत (चिकित्सा और पशु चिकित्सा अधिकारियों को छोड़कर) कुल लगभग 5773 अधिकारी हैं और मेडिकल को छोड़कर सक्रिय सेवा में लगभग 195 भारतीय अधिकारी हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या एक अंग्रेज सिपाही की देखभाल पर आने वाला खर्च सिर्फ तीन भारतीय सिपाहियों के बराबर है?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – माननीय सदस्य की गणना सही लग रही है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार ब्रिटिश सिपाहियों की जगह भारतीय सिपाहियों को नियुक्त करने संबंधी उपाय अपनायेगी?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – श्रीमान, यह एक बड़ा प्रश्न है, और इस सदन में एक पूरक प्रश्न के जवाब के रूप में इसकी सूचना देने की मुझसे अपेक्षा नहीं की जानी चाहिए । यदि माननीय सदस्य इस देश में ब्रिटिश सिपाहियों की संख्या पर एक सम्पूर्ण प्रश्न उठाना चाहते हैं तो सदन की प्रक्रिया, उनके लिए मौजूद है और मैं उनसे निवेदन करूँगा कि वे इस विषय पर प्रस्ताव लायें ।

तारांकित प्रश्न संख्या 348, दिनांक 20 फरवरी, 1935

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यहाँ ब्रिटिश सिपाहियों समेत संपूर्ण ब्रिटिश सेना की व्यवस्था इसलिए की गयी है ताकि भारतीय सेना के भारतीय सिपाहियों के साथ संतुलन स्थापित किया जा सके?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – इस प्रश्न से यह बात नहीं निकलती और इस प्रश्न के द्वारा मेरी राय भी जानने की कोशिश की जा रही है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इस देश में कब तक आधिपत्य बनाये रखने वाली यह सेना बरकरार रखी जायेगी?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – मैं पूरी तरह समझ नहीं पा रहा हूँ कि माननीय सदस्य का आधिपत्य जमाये रखने वाली सेना से क्या तात्पर्य है? बहरहाल, मैं उनके इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकता ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या मैं जान सकता हूँ कि क्या कारण है कि ब्रिटिश सिपाही जिस पर भारतीय सिपाही की अपेक्षा तिगुना–चौगुना खर्च होता है, यहाँ रखा गया है? इस बात के क्या सैनिक, आर्थिक या प्रशासनिक कारण हैं कि सरकार ब्रिटिश सिपाहियों पर इतना खर्च करती है, जब कि हर ब्रिटिश सिपाही के बदले उन्हें चार भारतीय सिपाही मिल सकते हैं?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – जिन लोगों पर भारत की सुरक्षा का दायित्व है वे कुछ निश्चित संख्या में ब्रिटिश सिपाहियों का रखा जाना जरूरी समझते हैं । यही कारण है ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – वे कौन से आधार हैं जिनके चलते वे इसे आवश्यक मानते हैं?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – अगला प्रश्न । अध्यक्ष का मत है कि सदन में इस पर पर्याप्त पूरक प्रश्न हो चुके हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या भारत की सुरक्षा का अर्थ है भारत में भारतीयों की सुरक्षा या कि भारत में गैर–भारतीयों की सुरक्षा?

(कोई उत्तर नहीं)

●

नये सुधारों के अन्तर्गत प्रान्तीय विधायिका के चुनावों के लिए निर्वाचन क्षेत्र का गठन

***श्री मोहन लाल सक्सेना** – (क) क्या सरकार को जानकारी है कि विभिन्न प्रान्तों में सुधार अधिकारियों की नियुक्ति की गई है और वे नये अधिनियम के अन्तर्गत प्रांतीय विधायिका के चुनावों के लिए निर्वाचन क्षेत्रों का गठन करने में व्यस्त हैं?

(ख) क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि निर्वाचन क्षेत्रों का गठन किस आधार पर किया गया है और क्या प्रस्तावित निर्वाचन क्षेत्रों के गठन के बारे में जनता की राय ली जायेगी?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मैं चाहूँगा कि माननीय सदस्य, सरदार हरवंस सिंह ब्राट को, तारांकित प्रश्न संख्या 779 दिनांक 20 अप्रैल, 1934 के संबंध में दिये गये उत्तर को देखें, मुझे उसमें कुछ और नहीं जोड़ना है ।

श्री मोहन लाल सक्सेना – क्या माननीय सदस्य संदर्भित प्रश्न संख्या 779 के अपने उत्तर को पढ़कर सुनायेंगे?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – प्रश्न संख्या 779 का उत्तर इस प्रकार है :—

"जैसा कि माननीय सदस्य जानते हैं, निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन के बारे में श्वेत पत्र में कोई प्रस्ताव नहीं है, न ही महामहिम की सरकार ने चुनाव की इस प्रक्रिया के संबंध में अभी तक कोई निर्देश ही दिये हैं । इस बीच सिर्फ पर्यवेक्षण की दृष्टि से भविष्य में चुनावों के संसद के निर्णयों को प्रभावित किये बिना, प्रान्तीय सरकारों द्वारा निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन के बारे में कुछ प्रारंभिक जांच पड़ताल की गयी है । इन प्रारंभिक कार्यों पर भारत सरकार का नियंत्रण नहीं था । अतः वह इस स्थिति में भी नहीं है कि इस संबंध में हुई प्रगति का प्रान्तवार ब्यौरा दे सके ।"

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या सुधार कार्यालय निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन के इस मामले में कुछ कर रहा है?

---

*तारांकित प्रश्न संख्या 399, दिनांक 21 फरवरी, 1935

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – किन मामलों में?

श्री एस० सत्यमूर्ति – श्री सक्सेना के प्रश्न के खण्ड (क) से संबंधित मसलों पर जैसे निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – इसका उत्तर नकारात्मक है । कोई निर्देश नहीं जारी किया गया है ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – मैं पूछ रहा हूँ कि क्या भारत सरकार का सुधार कार्यालय प्रांतीय विधायिका के चुनाव के संबंध में निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन का कार्य कर रहा है?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मुझे नोटिस (पूर्व सूचना) चाहिए ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – प्रश्न के दूसरे खंड का कोई उत्तर नहीं दिया गया, जैसे कि क्या प्रस्तावित निर्वाचन क्षेत्रों के गठन में जनमत लिया जायगा या नहीं ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मुझे प्रश्न में यह देखने को नहीं मिला ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – यह खंड (ख) का अंतिम भाग है ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – जनमत को भुला दिया गया ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मैं अभी यह कह सकने में असमर्थ हूँ कि समय आने पर जनता की राय ली जायेगी या नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – माननीय सदस्य अभी यह कह सकने की स्थिति में नहीं हैं? यह कि कब कैसी परिस्थितियां पैदा होंगी या कि जब ऐसी परिस्थिति पैदा होगी तब जनता की राय ली जायेगी या नहीं?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – पहले तो यह कि क्या स्थिति पैदा होगी और दूसरे यह कि यदि ऐसी स्थिति पैदा होती है तो क्या होगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – दोनों ही मामलें में ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या माननीय विधि सदस्य का कहना है कि (संवैधानिक) सुधार निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन के बिना संभव है? वह यह कह सकने में असमर्थ हैं कि परिस्थिति उत्पन्न होगी या नहीं । क्या माननीय सदस्य यह सोचते हैं कि निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन के बिना सुधार हो सकता है?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – ऐसी स्थिति तभी उत्पन्न होगी, जब विधेयक पारित होकर कानून का रूप ग्रहण कर ले ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या माननीय सदस्य यह सोचते हैं कि विधेयक (बिल) के पारित होने की संभावना नहीं है?

माननीथ सर नृपेन्द्र सरकार – यह तो अपनी–अपनी राय का मामला है । मेरे माननीय मित्र मुझसे अधिक जानते हैं ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – मुझे खुशी है कि माननीय सदस्य सोचते हैं कि विधेयक पारित नहीं भी हो सकता है ।

श्री सामी वेंकटाचेलम चेट्टी – क्या माननीय सदस्य को मालूम है कि निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन के बारे में मंत्रियों की राय ली गयी है जब कि विरोधी दलों से विचार–विमर्श नहीं किया गया है और जनता को भी अपनी राय जाहिर करने का कोई अवसर नहीं दिया गया?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – भारत सरकार के कहने पर उनसे राय नहीं ली गयी है । भारत सरकार को इस बारे में कोई सूचना नहीं है ।

●

साम्यवाद के विरुद्ध केन्द्रीय सरकार के अभियान के बारे में स्थगन प्रस्ताव

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं माननीय विधि सदस्य के समक्ष एक प्रश्न रखना चाहता हूँ। मैं उनकी स्थिति पूरी तरह समझ नहीं पा रहा हूँ। क्या भारत सरकार ने इस तरह के संगठनों एवं कार्यालयों पर छापा मारने तथा गैरकानूनी घोषित किये जाने के बारे में कोई नीति निर्धारित कर ली है? यदि हाँ तो कब? यदि नहीं तो क्या मेरा यह परिणाम निकालना गलत होगा कि उनके द्वारा पहले ऐसी कोई नीति नहीं बनाई गयी और यह छापे उनके द्वारा निर्धारित नीति के अनुकूल नहीं हैं?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – इस संबंध में अपनायी गयी नीति उन अधिसूचनाओं के अन्तर्गत आती हैं जो उन संगठनों के विरुद्ध बनाये गये थे जो प्रान्तीय सरकार की राय में भारतीय अपराध संहिता अधिनियम 1908 के दायरे में आते हैं उनके विरुद्ध अधिनियम लागू किया गया था। हमारे निर्देश देने या छापा मारने का प्रश्न ही नहीं उठता। जो कुछ हुआ वह कानून के अनुसार हुआ।

●

---

9 मार्च 1935 को पंत जी द्वारा की गयी जिज्ञासा।

निजी पत्राचार पर सेंसर

श्री श्रीप्रकाश – (क) क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि किन सिद्धान्तों के अन्तर्गत निजी पत्राचार पर सेंसर लगाती है?

(ख) क्या सरकार को जानकारी है कि सेंसर के कारण अधिकतर पत्र बेहद विलंब से पहुँचते हैं । यहाँ तक कि खो भी जाते हैं या गलत लिफाफों में रख दिये जाते हैं?

(ग) क्या सरकार जानती है कि सेंसर के बाद पत्रों को पुन: गोंद से जोड़ने में इतनी फूहड़ता आ जाती है कि चिपके पत्रों को लिफाफे में से फाड़ना पड़ता है?

(घ) क्या सरकार उन्हें कोई राहत देने को तैयार है, जो यह समझते हैं कि वे पत्राचार पर सेंसर लागू किये जाने से व्यर्थ परेशान किये जा रहे हैं?

माननीय सर हैनरी क्रैक – (क) मैं माननीय सदस्य का ध्यान पोस्ट आफिस ऐक्ट की धारा 26 की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ, जिसके अन्तर्गत डाक को बीच में रोककर देखने का प्राविधान है ।

(ख) और (ग) नहीं, (घ) प्रश्न ही नहीं उठता ।

प्रोफेसर एन०जी० रंगा – क्या माननीय सदस्य को यह ज्ञात है कि इस सदन के अधिकांश माननीय सदस्यों के पत्राचार पर डाक अधिकारियों और पुलिस द्वारा गड़बड़ की जाती है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – नहीं, मान्यवर ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – वे कौन से सिद्धान्त हैं, जिनके आधार पर सरकार इंडियन पोस्ट आफिस ऐक्ट की धाराओं को लागू करके पत्राचार को सेंसर कर रही है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – मैं चाहूँगा कि माननीय सदस्य स्वयं इन प्राविधानों को देख लें ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह कैसे हो रहा है, उदाहरण के लिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्यों के पत्राचार के मामले में यह कैसे हो रहा है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – इस विषय पर जनहित में आगे कोई जानकारी देने को तैयार नहीं हूँ ।

प्रश्न संख्या 807, दिनांक 11 मार्च, 1935

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या कोई सेंसर लागू भी है या नहीं?

माननीय सर हैनरी क्रैक – मुझे कुछ नहीं कहना है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या माननीय सदस्य को यह ज्ञात है कि इस सदन के कुछ माननीय सदस्यों के पत्राचार को दिल्ली डाकखाने में सेंसर किया जाता है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – नहीं, मान्यवर, मुझे इसकी जानकारी नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार इस मसले में कोई जांच करेगी?

माननीय सर हैनरी क्रैक – मान्यवर, मैंने कह दिया है कि मैं पोस्ट आफिस ऐक्ट की कुछ धाराओं के क्रियान्वयन संबंधी प्राविधानों के बारे में आगे कोई सूचना देने को तैयार नहीं हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं कोई नई जानकारी नहीं चाहता । मेरा प्रश्न है कि क्या सरकार इस बारे में जांच करायेगी कि इस सदन के किसी सदस्य के पत्राचार पर सेंसर द्वारा गड़बड़ी की जा रही है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – नहीं, मान्यवर ।

श्री सामी वेंकटाचलम चेट्टी – क्या मैं जान सकता हूँ कि क्या गृह सदस्य के पत्राचार को भी सेंसर किया जाता है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – संभवतः ।

श्री श्रीप्रकाश – क्या सरकार डाकघरों को इस बात का निर्देश देगी कि सेंसर किये पत्रों को वर्तमान की अपेक्षा अधिक अच्छे ढंग से चिपकायें? इन पत्रों को लिफाफे से बाहर निकालना काफी कठिन होता है । यदि माननीय सदस्य चाहेंगे तो मैं ऐसे बहुत से पत्रों को पटल पर रख सकता हूँ ।

(कोई उत्तर नहीं)

•

पंडित जवाहर लाल नेहरू की रिहाई

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – सुनिए, सुनिए । कुछ अल्पावधि प्रश्न पंडित नीलकांत दास, श्री अविनाश लिंगम चेट्टियार और प्रोफेसर रंगा के हैं, जो एक ही विषय से संबंधित हैं । पंडित नीलकांत दास!

पंडित नीलकांत दास – (क) क्या संरकार बतायेगी या जानकारी करके बतायेगी कि क्या यह सच है कि सरकार ने पंडित जवाहर लाल नेहरू से यह पेशकश की है कि यदि वह अपनी पत्नी के साथ विदेश जाना चाहें तो उन्हें जेल से रिहा किया जा सकता है ।★

(ख) यदि हाँ, तो उन्हें कितने दिनों तक भारत से बाहर रहने दिया जायगा?

(ग) यहाँ से जाने, वापस आने और विदेश के व्ययभार को कौन वहन करेगा?

(घ) सामान्यतः पंडित जवाहरलाल नेहरू को वर्तमान कारावास दंड की और कितनी अवधि तक जेल में रहना होगा?

(ङ) क्या पंडित सरकार के इरादों की सूचना दे दी गयी है? यदि हाँ, तो उनका परिणाम क्या हुआ?

(च) क्या किसी कानून या नियम के अन्तर्गत पंडित के देश निकालने का विचार है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – (क) पंडित जवाहर लाल नेहरू की रिहाई या बताये गये विकल्प के दिये जाने का कोई भी प्रस्ताव भारत सरकार या संयुक्त प्रान्त की सरकार के विचाराधीन नहीं है ।

(क), (ख), (घ) और (ङ) प्रश्न नहीं उठता ।

(च) पंडित को फरवरी, 1934 में दो वर्ष का साधारण कारावास दंड दिया गया ।

अल्प सूचना प्रश्नकाल में 11 मार्च 1935 को श्री नीलकांत दास द्वारा पूछे गये प्रश्न के अनुक्रम में पूछा गया प्रश्न ।

★पंडित जवाहर लाल जी की पत्नी श्रीमती कमला नेहरू तब गम्भीर रूप से बीमार थीं । कुछ समय बाद योरप में उनकी मृत्यु भी हो गयी थी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या मैं पूछ सकता हूँ कि पंडित जवाहरलाल नेहरू की पत्नी तपेदिक से पीड़ित हैं?

माननीय सर हैनरी क्रैक – मैं समझता हूँ कि संयुक्त प्रान्त के भुवाली सैनीटोरियम में उनके स्वास्थ्य में धीरे–धीरे सुधार हो रहा है।

सेठ गोविन्द दास – क्या सरकार ने आज के समाचार-पत्र में प्रकाशित हाल का वह टेलीग्राम देखा है, जिसमें कहा गया है कि उनकी हालत में सुधार नहीं हो रहा है?

माननीय सर हैनरी क्रैक – अंतिम रिपोर्ट जो मुझे मिली है वह 8 दिसम्बर, 1934 की है।

सेठ गोविन्द दास – क्या माननीय सदस्य ने आज के समाचार–पत्र में प्रकाशित बयान को नहीं देखा है? मैं सोचता हूँ कि माननीय गृह सदस्य ने कल इसे जरूर पढ़ा होगा –बयान जो कि श्रीमती जवाहर लाल के स्वास्थ्य से संबंधित है।

माननीय सर हैनरी क्रैक – नहीं, मैंने उसे नहीं देखा है।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार ने भुवाली सेनीटोरियम के अधीक्षक द्वारा हाल में ही जारी की गयी विज्ञप्ति को नहीं देखा है?

माननीय सर हेनरी क्रेक – मान्यवर, मैं यही कह सकता हूँ कि मेरे पास जो अंतिम सूचना है, वह 8 दिसम्बर की है।

मुंशी ईश्वर सरन – क्या माननीय गृह सदस्य कृपा करके श्रीमती नेहरू के स्वास्थ्य के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे और यदि वह समझते हैं कि उनकी हालत संतोषजनक नहीं है, तो क्या सरकार पंडित जवाहर लाल नेहरू को विदेश जाकर पत्नी के इलाज कराने की अनुमति के बारे में विचार करेगी?

माननीय सर हैनरी क्रैक – यह एक परिकल्पान्तक प्रश्न है।

•

लेजिस्लेटिव असेम्बली के सदस्यों के नाम लिखे गये पत्रों पर सेंसर

श्री एस० सत्यमूर्ति (पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त की एवज में) –
(क) क्या लेजिस्लेटिव असेम्बली के किसी माननीय सदस्य या सदस्यों के पत्र व्यवहार को पोस्ट आफिस में सेंसर किया जाता है? यदि हाँ, तो क्यों और किसके आदेशों द्वारा?
(ख) क्या इसी कारण माननीय सदस्यों को संबोधित पत्र देर से मिलते हैं?
माननीय सर हैनरी क्रैक – (क) और (ख) : भारत सरकार पोस्टल सेंसरशिप की कार्य प्रणाली के बारे में कोई सूचना देना जनहित में नहीं समझती ।
श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या मैं जान सकता हूँ कि क्या इस असेम्बली के किसी सदस्य का पत्राचार सेंसर हुआ है?
माननीय सर हैनरी क्रैक – मुझे इसकी जानकारी नहीं है ।

●

तारांकित प्रश्न संख्या 965, दिनांक 11 मार्च 1935

भारतीय व्यापारिक नौपरिवहन का विकास और भारतीय जहाजरानी का तटीय समुद्रपार के भारतीय व्यापार में हिस्सेदारी

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट के पैरा 353 के रहते, जो इस प्रकार है :

"हम सोचते है कि नौपरिवहन और व्यापार के बारे में अलग से प्राविधान किया जाना चाहिए और यह कानून बनाया जाना चाहिए कि ब्रिटेन में पंजीकृत समुद्री जहाजों पर ब्रिटिश भारत के कानूनों द्वारा जहाज के बारे में, अधिकारियों या अमले के बारे में या उसके यात्रियों या माल के बारे में ऐसा कोई भेदभाव नही बरता जाना चाहिए जो ब्रिटिश इंडिया में पंजीकृत जहाजों के साथ ब्रिटेन में नहीं किया जाता ।"

(1) क्या यह संभव होगा कि सरकार राष्ट्रीय जहाजरानी का विकास उन तौरतरीकों द्वारा कर सके जो संसार के नौकायन संबंधी सभी देशों द्वारा मान्य हैं और जिसे भारतीय व्यापारिक नौपरिवहन समिति द्वारा तटीय व्यापार के राष्ट्रीय जहाजरानी तक सीमित रखने की संस्तुति मिली हुई है और,

(2) क्या सरकार के लिए भारतीय व्यापारिक समुद्री सेवा समिति की सिफारिश के अनुसार यह अधिनियम बना पाना संभव होगा, जिसके अनुसार तटीय जल में कार्यरत स्टीमरों के अपने अधिकारियों और इंजीनियरों के पचास प्रतिशत लोगों को जहाज 'डफरिन' में प्रशिक्षण प्राप्त कैडेटों तथा दक्षता प्रमाण-पत्र प्राप्त कैडेटों उपलब्ध कर्ताओं में से लेना होगा ।

(ख) यदि खंड (क) 1 का उत्तर नकारात्मक हैं तो क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि भारतीय व्यापारिक नौपरिवहन के विकास तथा भारतीय जहाजरानी को तटीय तथा समुद्र पार देशों के व्यापार में समुचित भागीदारी की व्यवस्था करने की अपनी बारंबार दुहरायी जाने वाली नीति के क्रियान्वयन के लिए कौन से कदम प्रस्तावित कर रही है?

तारांकित प्रश्न संख्या 1129, दिनांक 28 मार्च 1935

(ग) यदि खंड (ख) 2 का उत्तर नकारात्मक है तो क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि क्या यह तथ्य नहीं है कि योग्यता प्रमाण पत्र प्राप्त "डफरिन" प्रशिक्षण जहाज के पूर्व कैडेटों को तटीय व्यापार में लगी ब्रिटिश जहाजरानी कंपनियों की सेवा में उसी अनुपात में नहीं रखा गया है, जिस अनुपात में भारतीय तटों पर चलने वाले जहाजों में?

(घ) यदि खंड (ग) का उत्तर हाँ में है तो क्या सरकार को यह मालूम है कि ब्रिटिश जहाज कंपनियों में इन अधिकारियों को स्टीमर चलाने के अनुपात में नौकरियां न देने के कारण, "डफरिन" प्रशिक्षण जहाज से अधिशासी अधिकारी या मैरिन इंजीनियर का योग्यता संबंधी प्रमाण–पत्र पाने वाले बेरोजगार रह जायेंगे और इस तरह भारतीय सामुद्रिक कार्मिकों के गठन के कार्य को धक्का पहुँचेगा?

माननीय सर जोजेफ भोर – (क) मैं समझता हूँ कि मेरा उत्तर नकारात्मक है ।

(ख) श्री एन०वी०गाडगिल के प्रश्न संख्या 632 और पूरक प्रश्नों के संबंध में 27 फरवरी, 1935 को दिये गये उत्तर की ओर ध्यान आकर्षित किया जाता है ।(ग) और (घ) "डफरिन" के प्रशिक्षित कैडेट जिन्हें योग्यता संबंधी प्रमाण–पत्र पिछले वर्ष के अंत तक प्राप्त हो गये थे, उन्हें या तो जहाजरानी कंपनियों में, बंगाल पायलट सेवा में या पोर्ट ट्रस्ट में नौकरियां मिल गयी हैं । इस सम्बन्ध में भारत सरकार तटीय व्यापार में लगी सभी भारतीय और ब्रिटिश कंपनियों को प्रशिक्षण भारतीय अधिकारियों को पर्याप्त संख्या में नौकरियां देने के महत्व का अहसास करायेगी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या माननीय सदस्य पहले दिये गये उत्तरों को पढ़ने की कृपा करेंगे?

माननीय सर जोजेफ भोर – मैं नहीं जानता कि मेरे माननीय मित्र किन उत्तरों का हवाला दे रहे हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – माननीय सदस्य ने अपने उत्तर में श्री गाडगिल के प्रश्न एवं पूरक प्रश्नों के संदर्भ में दिये गये अपने उत्तर का हवाला दिया है । क्या आपके पास वे उत्तर हैं? यदि हाँ तो क्या आप उन्हें पढ़कर सुनायेंगे?

माननीय अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम)–अभी चन्द दिनों पहले ही तो इनके उत्तर दिये गये थे ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या मैं जान सकता हूँ कि क्या सरकार को इस तथ्य की जानकारी है कि इंग्लैंड में जहाजरानी मंत्रालय ने इंग्लैंड में जहाजरानी के विकास के लिए कई करोड़ राहत के रूप में दिये हैं?

माननीय सर जोजेफ भोर – मान्यवर, मैं समझता हूँ कि इस आशय की घोषणा कुछ

पूर्व समय की गयी थी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि कई देशों ने अपने समुद्र तटीय व्यापार को अपने देशवासियों तक ही सीमित कर दिया है ।

माननीय सर जोजेफ भोर – मैं समझता हूँ कि यह भी सही है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि भारत का नौपरिवहन उद्योग, इंग्लैंड द्वारा इस दिशा में की गयी प्रगति की तुलना में शैशवावस्था और पिछड़ी हालत में है?

माननीय सर जोजेफ भोर – भारतीय जहाजरानी का विकास दिनोंदिन हो रहा है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – हाँ, मुझे ऐसी उम्मीद है, लेकिन उसके बावजूद यह तथ्य नहीं है कि अब तक हुई प्रगति इंग्लैंड में जहाजरानी उद्योग की प्रगति की तुलना में सैकड़ों मील के दायरे के भीतर भी नहीं आती?

माननीय सर जोजेफ भोर – यह पूरी तरह सही है, लेकिन इंग्लैंड में नौपरिवहन की शुरुआत भारत से बहुत पहले हो गयी थी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि इन परिस्थितियों में भारतीय जहाजरानी उद्योग बिना सरकारी मदद और सुरक्षा के, ब्रिटिश जहाजरानी से प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकता?

माननीय सर जोजेफ भोर – मैं समझता हूँ कि मेरे माननीय मित्र एक अहिंसक सहयोगी हैं । उन पर कोई भी हिंसक सहयोगी होने का आरोप नहीं लगा सकता । मैं नहीं समझता कि वे आक्रामक रुख क्यों अपनाते हैं जबकि उन्हीं उद्देश्यों को, जैसा कि मैं पहले ही सदन में कह चुका हूँ, अनाक्रामक तौर-तरीकों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या मैं माननीय सदस्य से यह पूछ सकता हूँ कि उनके और सरकार के दिमाग में वे कौन से साधन हैं जिन्हें अपनाकर भारत के तटीय जहाजरानी उद्योग का विकास एवं सुरक्षा की जा सकती है?

माननीय सर जोजेफ भोर – भारत के तटीय व्यापार में लगे विभिन्न पक्षों के बीच सौहार्दपूर्ण समझौता ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – कहने का मतलब यह कि ब्रिटिश जहाजरानी कंपनियाँ राजी हो गयीं तो?

माननीय सर जोजेफ भोर – जहां तक मेरे अपने अनुभव की बात है, मैं ब्रिटिश जहाजरानी कंपनियों को उचित समझौतों के लिए सहमत करा लेना असंभव कार्य नहीं पाया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – संयुक्त संसदीय समिति के प्राविधानों को दृष्टि में रखते हुए यदि ब्रिटिश कंपनियां पारस्परिक समझौता करने से इंकार करें तो क्या सरकार द्वारा उन पर किसी प्रकार का दबाव डाल पाना संभव होगा?

माननीय सर जोजेफ भोर – मेरे माननीय मित्र अभी भी दबाव के संदर्भ में सोच रहे हैं। मैं दूसरे संदर्भों में भी सोचने को तैयार हूँ, जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या माननीय सदस्य उनकी पावन भावना पर विश्वास करना और निर्भर करना चाहते हैं?

माननीय सर जोजेफ भोर – नहीं, मैं उनकी सदाशयता पर भरोसा रखता हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – और इसके लिए मिन्नत कीजिए, जैसे कि माननीय वित्त सचिव औद्योगिक विकास के लिए करेंगे?

माननीय सर जोजेफ भोर – मेरे माननीय मित्र ऐसा करने के लिए स्वतंत्र हैं ।

श्री टी० एस० अविनाश लिंगम चेट्टियार– क्या मैं जान सकता हूँ कि अब तक सौहार्दपूर्ण समझौतों द्वारा तटीय व्यापार की सुरक्षा में क्या उपलब्धि हुई है?

माननीय अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – उसका प्रश्न ही नहीं उठता । वह एक अत्यन्त सामान्यीकृत प्रश्न है ।

डा० जियाउद्दीन अहमद– क्या मैं भारत में समुद्र व्यापार (सी बोर्नट्रेड आफ इंडिया) के पृष्ठ संख्या 236 से 574 पर ध्यान आकर्षित कर सकता हूँ, जहाँ यह कहा गया है कि भारत सीलोन को चावल निर्यात कर्ता है, और सीलोन भारत को चावल निर्यात करती है......... ।

माननीय सर जोजेफ भोर – मैं नहीं समझता कि इसका नौपरिवहन से सम्बन्ध है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या माननीय वाणिज्य सदस्य सौहार्दपूर्ण समझौते द्वारा ग्रेट ब्रिटेन के तटीय व्यापार में भारतीय नौपरिवहन उद्योग के लिए एक हिस्सा प्राप्त कर सकने का प्रयास करेंगे?

माननीय सर जोजेफ भोर – उस व्यापार में सम्मिलित होने से उन्हें कोई बात नहीं रोकती है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या माननीय वाणिज्य सदस्य उस व्यापार में भारतीयों का हिस्सा सुरक्षित रखवाने के लिए सौहार्दपूर्ण समझौता करवाने का प्रयास करेंगे?

माननीय सर जोजेफ भोर – माननीय सदस्य दो असमान बातों में तुलना कर रहे हैं । जहां तक भारत के तटीय व्यापार का संबंध है ब्रिटिश नौपरिवहन यहां कार्यरत है और सालों पहले से कार्यरत है जहां तक मुझे ज्ञात है कि आज तक किसी भी भारतीय नौपरिवहन कम्पनी ने ब्रिटिश तटीय व्यापार में कोई भागीदारी नहीं की है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – बात ऐसी ही है क्योंकि इंग्लैंड भारतीय नौपरिवहन स्थापित नहीं है इसलिए हम इंग्लैण्ड से समान व्यवहार की अपेक्षा करते हैं और सौहार्दपूर्ण समझौते द्वारा आश्चर्यपूर्ण कार्य करना चाहते हैं । मैं एक प्रश्न पूछ रहा था जिसे मैं दोहराता हूँ । अतः क्या माननीय वाणिज्य सदस्य उस भारतीय नौपरिवहन उद्योग के लिए इंग्लैण्ड के नौपरिवहन में शेयर उपलब्ध करा सकेंगे जिसे वहां काम आरम्भ करने का अभी तक अवसर प्राप्त नहीं हुआ है?

माननीय सर जोसेफ भोर – मैं इसका उत्तर पहले ही दे चुका हूँ । वह है कि दोनों बातों में कोई समानता नहीं है ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – ओह, लेकिन हम गुलाम हैं और वे स्वतंत्र हैं ।

1930 के पेशावर कांड के गढ़वाली कैदी अभी भी जेल में

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त–(क) पेशावर की 1930 की घटनाओं के लिए दंडित कितने गढ़वाली कैदी अभी भी जेल में हैं?

(ख) उन्हें कब कैद किया गया था?

(ग) क्या उन पर नागरिक या सैनिक अधिकरण (ट्राइब्यूनल) में मुकदमा चलाया गया था?

(घ) हर मामले में कितने दिनों की सजा दी गयी थी?

(ङ) क्या सरकार का उन्हें रिहा करने का इरादा है?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – (क) चार ।

(ख) 6 जून, 1930 को ।

(ग) कोर्ट मार्शल द्वारा ।

(घ) एक को आजीवन कारावास, एक को 15 वर्ष और दो को 10-10 वर्ष की सजा ।

(ङ)अभी नहीं, लेकिन कमांडर-इन-चीफ उनकी सजा के बारे में प्रतिवर्ष पुनर्विचार करते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इन लोगों को किस बात के लिए सजा दी गयी थी?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – विद्रोह के लिए ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह तथ्य है कि उन्हें पेशावर में निहत्थी भीड़ पर गोली न चलाने के जुर्म में दंडित किया गया था?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – विद्रोह का वास्तविक स्वरूप क्या था?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – कुछ आदेशों के अनुपालन से मनाही ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – वे कौन से आदेश थे, जिनको उन्होंने मानने से इन्कार कर दिया?

तारांकित प्रश्न संख्या 1130, दिनांक 28 मार्च 1935

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – मुझे इस प्रश्न के सम्बन्ध में पूर्व सूचना चाहिए । मैं आदेशों को यथावत् उद्धृत नहीं कर सकता, लेकिन वे पेशावर की गड़बड़ियों से सम्बन्धित थे ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या गढ़वाली बटालियनों ने विश्व युद्ध के दौरान विभिन्न युद्ध स्थलों पर महान वीरता का परिचय नहीं दिया है?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – हाँ श्रीमान् ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या कुछ गढ़वालियों को विक्टोरिया क्रास तक मिला है?

मिस्टर जी० आर० एफ० टोटेनहम – मुझे इसके लिए पूर्व सूचना चाहिए । संभवतः अवश्य ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि गढ़वाल सेना के लिए बड़ी संख्या में रंगरूट जुटाता है?

मिस्टर जी० आर० एफ०टोटेनहम – हाँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या वे सहानुभूतिपूर्ण विचार के हकदार नहीं हैं– खासतौर पर इस कांड से संबंधित सैनिक ?

मिस्टर जी० आर० एफ०टोटेनहम – हाँ, गढ़वाली इसके हकदार हैं और उन्हें यह मिलता भी है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि इन्हीं अपराधों के दोषी और दंडित किये गये कुछ अन्य गढ़वाली सैनिकों को उनकी कारावास अवधि के पूर्व ही रिहा कर दिया गया था?

मिस्टर जी० आर० एफ०टोटेनहम – कुल सत्रह सैनिकों को इस मामले में दंडित करके अलग–अलग अवधि की सजा दी गयी थी । उन सत्रह में से तेरह को उनकी सजा की अवधि के पूर्व ही रिहा कर दिया गया और अब चार बचे हैं । इस मामले में ये चार लोग प्रमुख थे और उन्हें लम्बी सजाएँ दी गयी थीं । मैं समझता हूँ कि माननीय सदस्य उनके अपराध की गंभीरता को महसूस करेंगे कि जिन लोगों को उम्र कैद या 15 वर्ष से अधिक की सजा दी गयी है, उन्हें अभी कैसे मुक्त किया जा सकता है, जबकि घटना को अभी केवल पांच वर्ष ही बीते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह तथ्य है कि इन सैनिकों ने एक प्रक्रिया संबंधी तकनीकी अपराध की सजा के जुर्म में पहले ही पाँच वर्ष की सजा काट ली है?

मिस्टर जी० आर० एफ०टोटेनहम – यह कोई तकनीकी अपराध नहीं था । यह विद्रोह था, जो कि अत्यन्त गंभीर अपराध है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या उन्होंने अपने हथियारों का इस्तेमाल किसी के विरुद्ध किया था? उन्होंने किस तरह का विद्रोह किया था?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – अध्यक्ष की राय में माननीय सदस्य (टोटेनहम) ने इस प्रश्न के बारे में पूर्व सूचना मांगी है ।

●

काँच की चूड़ी का उद्योग

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार को जानकारी है कि काँच की चूड़ियों के उद्योग को जापानी प्रतिस्पर्धा का कठिन सामना करना पड़ रहा है और इसे निपुण वैज्ञानिक सलाह की आवश्यकता है?

(ख) विशेषज्ञों की सलाह दिलवाने के लिए सरकार ने कौन से कदम उठाये हैं?

(ग) सरकार इस उद्योग को सहायता देने और विशेषज्ञों की राय उपलब्ध कराने हेतु और कौन से कदम उठाने जा रही है?

माननीय सर फ्रैंक नायस – (क), (ख) और (ग) ।

भारत सरकार को इस उद्योग द्वारा हाल के दिनों मे कोई प्रतिवेदन नहीं प्राप्त हुआ है और मैं माननीय सदस्य के इस मत की पुष्टि कर सकने में असमर्थ हूँ कि इसे इन दिनों जापानी प्रतिस्पर्धा का कठिन सामना करना पड़ रहा है । उद्योग को तकनीकी सलाह देने का प्रश्न स्थानीय सरकारों के कार्यक्षेत्र में आता है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह तथ्य है कि चूड़ियों का आयात बढ़ रहा है?

माननीय सर फ्रैंक नायस – नहीं । मेरी सूचना इसके विपरीत है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इन दिनों कितना आयात हो रहा है?

माननीय सर फ्रैंक नायस – उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार 1932-33 में 22 लाख रुपये मूल्य की जापानी चूड़ियों का आयात हुआ था और 1933-34 में 13 लाख का । इसके बाद की जानकारी हमारे पास नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि गत वित्तीय वर्ष में आयात राशि में वृद्धि हुई है?

माननीय सर फ्रैंक नायस – मैंने पिछले वित्तीय वर्ष के आंकड़े दिये हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – 1934-35 में ?

माननीय सर फ्रैंक नायस – यह चालू वित्तीय वर्ष है । दुर्भाग्यवश मुझे पिछले वर्ष के आंकड़े नहीं मिल पाये हैं । वे अभी उपलब्ध नहीं हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या माननीय सदस्य पिछले कैलेंडर वर्ष के आंकड़ों पर एक दृष्टि डालेंगे?

तारांकित प्रश्न संख्या 1131, दिनांक 28 मार्च 1935

माननीय सर फ्रैंक नायस – मैंने पिछले वित्तीय वर्ष के आंकड़े दिये हैं । हमें चालू वर्ष के आंकड़े नहीं मिल पाये हैं, इसे शीघ्रातिशीघ्र पाने की कोशिश कर रहा हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं वित्तीय वर्ष की नहीं कैलेन्डर वर्ष की वात कर रहा हूँ ।

माननीय सर फ्रैंक नायस – नहीं । दुर्भाग्यवश, आँकड़े वित्तीय वर्ष से संबंधित हैं, कैलेण्डर वर्ष मे नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – वास्तव में यह मसला दुर्भाग्यपूर्ण है ।

●

काँच की चूड़ी के उद्योग की मिश्रण प्रक्रिया की कार्यदशा

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार को जानकारी है कि चूड़ी उद्योग में मिश्रण प्रक्रिया निहित रूप से घातक है, उदाहरणार्थ साँस द्वारा विषैली गंध और सीसे के जहर से?

(ख) क्या सरकार को ज्ञात है कि इन कारखानों की कार्यदशा, यथा, अत्यधिक गर्मी, धुएँ की गैस और चमक आदि, कामगारों के स्वास्थ्य में काम की प्रक्रिया के दौरान अत्यन्त प्रतिकूल प्रभाव डालती है?

(ग) क्या सरकार जानती है कि कार्यदशा में सुधार किया जा सकता है यदि सेवायोजकों पर कामगारों को जरूरी उपकरण जैसे श्वास यंत्र और बचाव के चश्में आदि देने, कमरों को हवादार रखने और भट्ठियों की सुरक्षा के लिए दबाव डाला जाय ।

(घ) क्या सरकार चूड़ी उद्योग की मिश्रण प्रक्रिया में सुधार के लिए विशेषज्ञों की सलाह आमंत्रित करने और सेवायोजकों द्वारा फिरोजाबाद में गैस की व्यवस्था करने के प्रश्न पर विचार करने को तैयार है?

(ङ) क्या सरकार ने खंड (क), (ख), और (ग) के संबंध में कोई कदम उठाये हैं?

माननीय सर फ्रैंक नायस – (क) सरकार को जानकारी है कि काँच के निर्माण में कामगारों को कुछ जोखिम उठाने पड़ सकते हैं । मुझे काँच उद्योग की मिश्रण प्रक्रिया से होने वाले खतरों की विस्तृत जानकारी नहीं है ।

(ख) सरकार को जानकारी है कि संयुक्त प्रान्त की सरकार ने 1931 में फिरोजाबाद में काँच और चूड़ी उद्योग के जिसका उल्लेख माननीय सदस्य कर रहे हैं, श्रमिकों की हालत को असंतोषजनक माना था ।



तारांकित प्रश्न संख्या 1132, दिनांक 28 मार्च, 1935

गांधी इर्विन समझौते से सम्बद्धता

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – महोदय, इस बहस को समाप्त करने के इरादे से, मैं आपकी अनुमति से, विरोधी पक्ष के सदस्यों के समक्ष सिर्फ एक प्रश्न रखूँगा और यदि उसका उत्तर संतोषजनक हो तो शायद मेरे मित्र अपना प्रस्ताव वापस ले लेंगे और बहस संक्षिप्त हो जायेगी तथा समय बच जायेगा । क्या सरकार हमें यह बताने का कष्ट करेगी कि क्या वे शब्द और आत्मा दोनों ही से गांधी–इर्विन समझौता में नमक से संबंधित प्राविधानों पर कायम रहेंगे और क्या इस संबंध में कुछ नियम हैं?

माननीय सर जेम्स ग्रिग – श्रीमान्, यह आश्वासन तत्काल दिया जा सकता है । सरकार समझौते पर पूरी तरह कायम है और अपनी सुनिश्चित जानकारी के अनुसार वे नमक को गांधी इर्विन समझौते की भावना के अनुसार ही लागू करेंगे और ऐसा करने के लिए वे कृतसंकल्प हैं । लेकिन अपने माननीय मित्र को यह संकेत करना चाहूँगा कि समझौते के अंतिम पद में दुरुपयोग की हालत में छूट को वापस भी कर लेने का प्राविधान है और इसमें "प्रथम दृष्ट्या" दुरुपयोग को परिभाषित किया गया है जिसका मसौदा श्री गांधी ने तैयार किया है ।

●

---

2 अप्रैल 1935 को पूछा गया प्रश्न ।

1919 का असंतोषप्रद संविधान

सर जेम्स ग्रिग – अब मैं 7 मार्च,1935 को दिये गये श्री सत्यमूर्ति के भाषण पर कुछ कहना चाहूँगा । उन्होंने कहा था कि :

"किन्तु हमारे यहाँ होने का कुछ बड़ा उद्देश्य है । आज इस देश में सरकार की ताकत न तो ब्रिटिश थल सेना में है और न ही ब्रिटिश जल सेना में, बल्कि हमारा विश्वास है कि उसकी ताकत इस प्रतिष्ठा में है जो उसे आज भी इस देश में प्राप्त है ।" (यह एक स्वीकारोक्ति है) "हम इस देश को दिखा देना चाहते हैं कि यह सरकार अनुत्तरदायी है । (ले० कर्नल सर हेनरी गिडनी द्वारा व्यवधान किया गया) मुझे अपने माननीय मित्र से सहयोग का आश्वासन पाकर प्रसन्नता है और मुझे विश्वास है कि उनके सहयोग से हम सरकार की प्रतिष्ठा को शीघ्र नष्ट कर देंगे । कुछ लोगों को अब भी यह विश्वास है कि यह सरकार इस देश को अच्छा शासन देने में समर्थ है और यह सरकार यहाँ अच्छे इरादों से स्थापित है । हम इस सरकार के मुँह से यह सेहरा उतार कर, उसे बेनकाब करके उसकी नग्न निरंकुशता इस देश की जनता को दिखाना चाहते हैं । अब हम ऐसा करने में सफल हो सके तो हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे । हम जनता में अपनी प्रतिष्ठा निश्चित रूप से बढ़ाना चाहते हैं । जनता का दिल और प्यार जीतने के लिए हम अपनी स्थिति ठोस और मजबूत बनाना चाहते हैं ।"

मान्यवर, इसका अर्थ क्या होता है? वे ऐसी कार्यवाही करने जा रहे थे कि सरकार को अपने आपात अधिकारों का प्रयोग करने पर विवश होना पड़े ताकि उसे निरंकुश ठहराया जा सके ।

सदन को मैं एक और उदाहरण दूँगा । उनके आज सुबह के ही कथन को मैं ले रहा हूँ– मुझे पता नहीं कि श्री सत्यमूर्ति ने यह अच्छी तरह सोच–विचार कर कहा है अथवा नहीं, लेकिन उन्होंने आज सुबह पूरक प्रश्नों के दौरान एक असामान्य सी बात कही है । उनका कथन शब्दश: तो मुझे याद नहीं किन्तु उसका भावार्थ मैं भलीभाँति समझ गया, जिसकी पुष्टि के लिए मैंने उसी समय उसे अपने तीन

केन्द्रीय असेम्बली में 7 मार्च 1935 को श्री सत्यमूर्ति द्वारा दिये गये भाषण के सन्दर्भ में 6 अप्रैल 1935 को हुई चर्चा ।

सहयोगियों को दिखाया भी था । वह यह है कि "क्या सरकार सारे ब्रिटिश विरोधियों को देश निकाला देने की सोच रही है? यदि ऐसा है तो वह हममें से अधिकांश को निकाल देगी ।" मान्यवर, ऐसा है सहयोग का सिद्धान्त । क्या वास्तव में इसे गम्भीरता से नकारा जा सकता है कि विपक्ष का मात्र यही उद्देश्य रहा है कि जन कार्यों के संचालन को यथासम्भव कठिनतम बना दिया जाय? तब यह मान लेना क्या अनुचित होगा कि जब तक विपक्ष की नीति अवरोधात्मक और ध्वंसात्मक बनी हुई है, तब तक सरकार को कानून द्वारा प्राप्त विशेष अधिकारों का सहारा अवश्य लेना चाहिए और जब तक इन नीतियों में परिवर्तन का स्पष्ट संकेत न मिल जाय, जो सामान्य स्वीकार्य और व्यावहारिक हो . . . .

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – तब फिर आपने यह रवैया राजनीतिक कारणों से अपनाया है?

एक सदस्य – यह तो एकदम स्पष्ट है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – असलियत अब प्रकट हुई ।

सर जेम्स ग्रिग – मैं अपना ब्यौरा या वर्तमान संविधान के अन्तर्गत स्थिति, जो अभी थोड़े ही समय से है, के बारे में अपनी धारणा प्रकट करना चाहूँगा । जब हृदय परिवर्तन के साफ प्रमाण मिल जाय (विपक्ष की बेंचों से ओह–ओह) और हम संतुष्ट हो जांय कि वे जनता के वास्तविक हितार्थ हमसे सहयोग करने को तैयार हैं, तभी और केवल तभी, हम उनके दृष्टिकोण पर विचार करने और उतनी अधिकतम सीमा तक उसे स्वीकार करने को तैयार होंगे, कि हमारे अपने दायित्वों के आस्थापूर्ण निर्वाह से संगत हो । चर्चा के वास्तविक विवादग्रस्त अंश के बारे में मैं उतना ही कहना चाहता था ।

लेकिन अपना वाक्य मैं एक दूसरी बात पर समाप्त करना चाहूँगा । यह सच है कि सरकार और विपक्ष वर्तमान संविधान के नियमों के मजबूत बंधनों में एक दूसरे के साथ बँधे हुए हैं और फिलहाल इससे छुटकारा पाने का कोई रास्ता नहीं है । सरकार को गैर जिम्मेदार ठहराना कोई अच्छी बात नहीं । यदि किसी दूसरे लोकतांत्रिक संविधान के अन्तर्गत वित्त सदस्य वित्तीय प्रस्ताव रखते तो ऐसा कहने में उन्हें इस बात का पक्का आश्वासन होता कि दलगत सामान्य अनुशासन मात्र के कारण वे इस प्रस्ताव को पार्लियामेन्ट में पारित करा ले जायेंगे । किन्तु ऐसा कोई आश्वासन यहाँ नहीं है । हमारा अपना कोई दल ही नहीं है ।

कांग्रेस के कुछ सदस्य – आप मनोनीत सदस्यों के साथ अन्याय कर रहे हैं ।

सर जेम्स ग्रिग – लाबी में चहलकदमी करते और मौन रहने वाले सदस्यों का

समर्थन मिलने के प्रति भी स्वयं को आश्वस्त करने का कोई साधन हमारे पास नहीं है, भले ही उन्हें हमने ही मनोनीत किया हो । (हँसी) मान्यवर, यदि देश की नीतियों का निर्धारण करवाने के लिए विपक्ष सामान्य विपक्ष की समुचित भूमिका निभा पाने से वंचित है तो सरकार भी किसी हद तक उस मशीनरी से वंचित है जो अपनी नीतियों को लागू करने के लिए आमतौर पर उसके पास होती हैं । अतः हम सभी सहमत हैं कि वर्तमान संविधान अत्यन्त असन्तोषजनक है.....

अनेक माननीय सदस्य – और जो आने वाला है वह और भी खराब है ।

सर जेम्स ग्रिग – और यदि विपक्ष यह समझता है कि मुझे लगता है – मैं जो कहने जा रहा हूँ वह बहरों के सम्मुख अपनी बात कहना होगा–यदि आप समझते हैं कि वर्तमान संविधान इतना अधिक असन्तोषजनक है तो क्या आप सुनिश्चित हैं कि प्रस्तावित नये संविधान को ठुकराकर आप समझदारी ही कर रहे हैं?

श्री सत्यमूर्ति – वह तो बहुत ही खराब है ।

सर जेम्स ग्रिग – इसमें चाहे जो भी कमियाँ हों, आपको यह कितना भी असन्तोषप्रद लगे लेकिन इससे आखिरकार आपको आज की भाँति यहाँ आने और भाषण देने की आवश्यकता ही नहीं रह जायेगी....

श्री लालचन्द्र नवलराय – क्या हमारी वित्तीय स्थिति तब सुरक्षित रह पायेगी?

●

काँच उद्योग को संरक्षण देने से इन्कार

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – पंडित गोविन्द बल्लभ पंत ने काम रोको प्रस्ताव की नोटिस दिया है । आगे वर्णित अत्यावश्यक सार्वजनिक महत्व के निश्चित विषय पर चर्चा करने के उद्देश्य से असेम्बली के आज के कार्यों को स्थगित करने का प्रस्ताव रखने की वे अनुमति चाहते हैं । विषय है :

"भारतीय टैरिफ बोर्ड की सिफारिश के बावजूद काँच उद्योग को संरक्षण दिये जाने से सरकार का इन्कार ।"

मैं जानना चाहूँगा कि क्या कार्यस्थगन प्रस्ताव के द्वारा चर्चा करने हेतु ऐसा विषय उचित होगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – मैंने जो प्रस्ताव रखा है, उस प्रस्ताव का विषय निश्चित ही लोक महत्व का है । काँच उद्योग का मामला सरकार द्वारा टैरिफ बोर्ड को सौंपा गया था, जिसमें व्यापक जाँच–पड़ताल हुई और बोर्ड ने एक विस्तृत रिपोर्ट भी इसमें दी है । सरकार ने इसे इतना महत्वपूर्ण और जरूरी समझा कि इसकी जाँच टैरिफ बोर्ड से करायी, मैं समझता हूँ कि यही तथ्य इसके सार्वजनिक महत्व को उजागर कर देता है । इस विषय के सार्वजनिक महत्व का होने के बारे में कोई संशय होने का प्रश्न नहीं उठता । इस वर्ष 25 जून को सरकार ने इस विषय पर एक संकल्प की बात भी कही है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यह विषय तो विधायन का है । बिना विधायन के संरक्षण दिया ही नहीं जा सकता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – संकल्प में टैरिफ बोर्ड द्वारा की गयी संरक्षण की सिफारिशों को ठुकरा दिया गया है । इस वर्ष 25 जून को सरकार ने टैरिफ बोर्ड की सिफारिशों को प्रकाशित किया और उसके साथ ही उसने बोर्ड की सिफारिशों को अस्वीकार कर देने के अपने फैसले को भी प्रकाशित कर दिया है । मेरे विचार से, इन परिस्थितियों में, इस मामले के सार्वजनिक महत्व का होने पर कोई प्रश्न चिन्ह लगाया नहीं जा सकता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा 4 सितम्बर 1935 को रखे गये अपने कामरोको प्रस्ताव के समर्थन में अभिव्यक्त विचार ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – 'मे' की पुस्तक 'पार्लियामेण्टरी' प्रैक्टिस' के पृष्ठ 249 पर अंकित वाक्यों में कहा गया है कि विधायन से जुड़े विषयों पर कार्यस्थगन के द्वारा चर्चा नही की जा सकती ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इसके विधायन से जुड़ा होने का कोई सवाल ही नहीं है । हम गैर सरकारी सदस्य इस प्रकार के विधायन के विषयों में कोई पहल कर ही नहीं सकते । किसी के भी द्वारा कोई विधेयक लाने की सिफारिश करने वाला प्रस्ताव मैंने कभी नहीं किया । इस तरह का विधेयक लाने की इजाजत न तो मुझे है और न ही किसी अन्य गैर सरकारी सदस्य को । आज हम इस प्रशासनिक प्रश्न को लेकर चिंतित हैं कि क्या टैरिफ बोर्ड, जो इस प्रकार के विषयों की जांच करने के लिए नियुक्त अधिकृत विशेषज्ञ संस्था है, की सिफारिशों का ऐसा तिरस्कार किया जाना चाहिए और क्या ऐसे उद्योग को, जो अपनी अन्तिम सांसे ले रहा है और दयनीय हालत में पहुँच गया है, उतनी ही छूट देने से इन्कार किया जाना चाहिए जिसकी इस बोर्ड द्वारा सिफारिश की गयी है । संरक्षण दिये जाने सम्बन्धी सभी उद्योगों के मामले इस बोर्ड को आम तौर पर भेज दिये जाते हैं । इस विषय में भी बोर्ड ने मामले की पूरी जांच की और तभी सरकार को अपनी रिपोर्ट दी और सरकार ने इसकी सिफारिशों पर विचार करने में काफी समय लगा देने के बाद इसके प्रस्तावों को पूरी तरह ठुकरा दिया । मैं निवेदन करना चाहूँगा कि यह सार्वजनिक महत्व का अत्यावश्यक विषय है और इससे न केवल यह सवाल जुड़ा हुआ है कि कांच उद्योग को संरक्षण दिया जाय अथवा नहीं, बल्कि यह सवाल भी इससे जुड़ा है कि एक विशेषज्ञ संस्था की सिफारिशों पर सरकार द्वारा की गयी यह कार्यवाही कहाँ तक उचित है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या सरकार टैरिफ बोर्ड की सिफारिशें मानने को बाध्य है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – जहाँ तक प्रश्न के व्यावहारिक पक्ष का सम्बन्ध है, सरकार से बोर्ड की सिफारिशें मान लेने की अपेक्षा की जाती है । यदि सरकार वैसा नहीं करती जैसा करने के लिए वह बाध्य थी, तो उसकी कार्यवाही अवैधानिक होगी । लेकिन दूसरी ओर, मैं यह कहने को तैयार हूँ कि सरकार ने इस मामले में अपने विवेक का प्रयोग आपत्तिजनक, दुर्भावनापूर्ण और गलत ढंग से किया है। अतः तब भी यह इस सदन में चर्चा किये जाने योग्य विषय होना चाहिए । इस खास मामले में आवश्यक कार्यवाही करने की आवश्यकता है क्योंकि यदि बोर्ड द्वारा संस्तुत किया गया संरक्षण नहीं दिया जाता तो यह उद्योग पूरी तरह नष्ट हो जायेगा । मैं यहाँ इस निर्णय का हवाला देना चाहूँगा जो पृष्ठ 41 संख्या 40 पर उल्लिखित है और जो इस मामले में भी पूरी तरह लागू होता है; तब सरकार ने

"सैन्डहर्स्ट समिति" की रिपोर्ट अस्वीकार कर दी थी । इस पर कार्यस्थगन प्रस्ताव की मंजूरी दे दी गयी थी । मेरा विषय उससे भी अधिक सशक्त है । वास्तव में इस विषय में तत्काल कार्यवाही होना आवश्यक है । उस विष्य को इतना अत्यावश्यक नहीं कहा जा सकता था क्योंकि उसके साथ अनेक नीतिगत प्रश्न जुड़े हुए थे । मैं कहना चाहूँगा कि किसी विषय की जांच करने हेतु सरकार द्वारा नियुक्त किसी संस्था की रिपोर्ट को अस्वीकार किये जाने को कार्यस्थगन प्रस्ताव की ग्राह्यता का पर्याप्त आधार माना जाना चाहिए ।



भारतीयों के साथ सेना में भेदभाव

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या भारत में किंग कमीशन धारक भारतीय अधिकारियों तथा भारत में किंग कमीशन धारक ब्रिटिश अधिकारियों के वेतन और परिलब्धियों में कोई अन्तर है?

श्री जी०एफ०आर० टोटेनहम – हाँ मान्यवर, अन्तर है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – यह कितना है?

श्री जी०एफ०आर० टोटेनहम – जाने बूझे बिना मैं नहीं कह सकता कि यह अन्तर कितना है ।

सरदार मंगल सिंह – किंग कमीशन प्राप्त अधिकारियों की प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में होने वाली रिक्तियों को देखते हुए क्या सरकार देहरादून कालेज से अधिक कैडिटों को लेने पर तैयार है?

श्री जी०एफ०आर० टोटेनहम – मेरे विचार से माननीय सदस्य रिक्तियों की संख्या से सम्बन्धित पिछले प्रश्न पर दिये गये मेरे उत्तर का हवाला दे रहे हैं ।

●

---

26 सितम्बर 1935 को पूछा गया प्रश्न

क्वेटा में आये भूकम्प के बाद समाचार-पत्रों में प्रकाशित रिपोर्टों में कुछ व्यक्तियों पर आरोप

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार को कुछ लोगों के व्यवहार के सम्बन्ध में उन समाचारों और गम्भीर आरोपों की जानकारी है, जो लन्दन के 'डेली हेरल्ड' और 'डेली वर्कर' में क्वेटा में भूकम्प आने के बाद रिपोर्टों में प्रकाशित हुए हैं?

यदि हाँ तो क्या सरकार ने इस मामले में कोई जांच की है?

(ख) क्या सरकार जांच की रिपोर्ट सदन के पटल पर रखेगी?

श्री जी०एफ०आर० टोटेनहम – श्री सत्यमूर्ति के तारांकित प्रश्न संख्या 427 के मेरे 17 सितम्बर, 1935 के उत्तर की ओर माननीय सदस्य का ध्यान आकर्षित किया जाता है ।

तारांकित प्रश्न संख्या 728, दिनांक 26 सितम्बर 1935

रुहेलखण्ड और कुमायूँ रेलवे के अधिग्रहण पर

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार ने रुहेलखण्ड और कुमायूँ रेलवे के प्रवन्ध का अधिग्रहण करने का निर्णय अभी तक नहीं लिया है?

(ख) क्या यह सच नहीं है कि रुहेलखण्ड और कुमायूँ रेलवे का बहुत बड़ा भाग राज्य का है?

(ग) कम्पनी के स्वामित्व वाले शेष भाग को अधिग्रहण करने पर कितना खर्च आयेगा?

श्री पी०आर० राव – (क) यदि ऐसा निर्णय हो सका तो समापन की नोटिस 1936 की समाप्ति के पूर्व दी जानी है । विषय अभी विचाराधीन है ।

(ख) सरकार के स्वामित्व वाला भाग, अर्थात लखनऊ–बरेली मार्ग, कुल 571 मीलों में से 312 मीलों का है ।

(ग) दो और सवा दो करोड़ के बीच में ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार इस तथ्य से अवगत है कि रुहेलखण्ड और कुमायूँ रेलवे की वर्तमान प्रशासन व्यवस्था पर आमतौर पर सन्तोष है?

श्री पी०आर०राव – मान्यवर, मेरे माननीय मित्र ऐसे अनेक दृष्टान्त मेरी जानकारी में ला चुके हैं, जिन्हें वे कुप्रशासन मानते हैं ।



तारांकित प्रश्न संख्या 729, दिनांक 26 सितम्बर 1935

भारतीय तथा ब्रिटिश सैनिकों के बच्चों की शिक्षा व्यवस्था पर तुलनात्मक व्यय तथा वेतन

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार (I) भारतीय एवं (II) ब्रिटिश सैनिक के वेतन और परिलब्धियों के पूरे विवरण को दर्शाने वाला प्रतिवेदन सदन के पटल पर रखेगी?

(ख) प्रत्येक (I) ब्रिटिश एवं (II) भारतीय सैनिक, के एक बच्चे की शिक्षा पर किये जाने वाला औसत व्यय क्या है?

(ग) सेवारत ब्रिटिश सैनिकों के बच्चों की कुल संख्या कितनी है?

श्री जी०एफ०आर० टोटेनहम – (क) सदन के पटल पर प्रतिवेदन प्रस्तुत है।

(ख) (I) रु०184 प्रतिवर्ष

(I) सभी भारतीय सैनिकों के बच्चों की शिक्षा का दायित्व सरकार नहीं लेती। लेकिन उनमें से जितने सेना का व्यवसाय अपनाना चाहें, उनके लिए जालन्धर, झेलम और अजमेर के किंग जर्म्ज रायल इंडियन मिलीटरी स्कूलों में विशेष व्यवस्था की जाती है।

(ग) माननीय सदस्य द्वारा मांगी गयी सूचना अभी उपलब्ध नहीं है। किन्तु हमारे अभिलेखों के अनुसार 1 फरवरी, 1935 को ब्रिटिश सैनिकों के 3,188 बच्चे स्कूलों में पढ़ रहे थे।

प्रतिवेदन

ब्रिटिश सैनिक :

(निजी सैनिकों को अक्टूबर, 1925 के बाद सूचीबद्ध किया गया)

	शिलिंग	पेनी	
वेतन	2	0	प्रतिदिन
प्रवीणता वेतन	0	6	प्रतिदिन
भोजनालय	0	3½	प्रतिदिन
	2	9½	या

तारांकित प्रश्न संख्या 730, दिनांक 26 सितम्बर 1935

				रुपया	आना	पाई	
रु०	2-1-6	प्रतिदिन	x 30	62	13	0	प्रतिमाह
वस्त्र भत्ता				7	6	0	प्रतिमाह
				कुल 70	3	0	प्र०माह x 12
अर्थात्				842	4	0	वार्षिक

365 दिनों की गणना द्वारा कुल वार्षिक परिलब्धियाँ :–
रु० 842-4-0 + (रु० 2-1-6x5) = रु० 852-11-6 होती है ।

भारतीय निजी सैनिक

	रुपया	आना	पाई	
वेतन	16	0	0	प्रतिमाह
प्रवीणता वेतन	2	8	0	प्रतिमाह
भोजनालय भत्ता	0	10	0	प्रतिमाह
वस्त्र एवं किट भत्ता	2	10	0	प्रतिमाह
निलम्बित वेतन	2	0	0	प्रतिमाह
	23	12	0x12	
		=	285	रु० वार्षिक

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – भारतीय सैनिकों के बच्चों की शिक्षा पर सरकार द्वारा वहन किया जाने वाला प्रति सैनिक औसत व्यय क्या है?

श्री जी०एफ०आर० टोटेनहम – पूरक प्रश्न के उत्तर में मैं इसकी गणना नहीं कर सकता। सारी सुलभ सूचना मैं दे चुका हूँ । भारतीय सैनिकों के बच्चों की शिक्षा पर किया गया व्यय वह धनराशि है जो 770 बच्चों की शिक्षा के लिए रु० 367 प्रति बालक की दर से व्यय करने के लिए आवश्यक है । इनका गुणनफल ही कुल व्यय होगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच नहीं है कि प्रति सैनिक एक आना से अधिक न होगा?

श्री जी०एफ०आर० टोटेनहम – बिना देखे तो मैं नहीं कह सकता किन्तु मुझे लगता है कि इसकी सम्भावना बहुत कम है ।

●

विस्फोट के शिकार कोयला खान मजदूरों को मुआवजा देने का प्रश्न

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या यह सच है कि धनबाद की बागडिगी कोयला खान में हुए विस्फोट के फलस्वरूप खान श्रमिक बड़ी संख्या में मारे गये हैं और घायल हुए हैं?

(ख) क्या मृतकों और घायलों के आश्रितों को कोई मुआवजा देने के आदेश हुए हैं? यदि हाँ तो कितना?

(ग) विस्फोट का क्या कारण था?

(घ) इस संबंध में क्या किसी व्यक्ति के विरुद्ध कोई कार्यवाही की गयी है?

(ङ) ऐसी दुर्घटनाओं की पुनरावृत्ति रोकने के लिए सरकार क्या करने का इरादा करती है?

श्री ए०जी० क्लो – (क) बागडिगी कोयला खान में हुए विस्फोट के फलस्वरूप 19 व्यक्ति मारे गये और सात व्यक्ति घायल हुए हैं ।

(ख) मुझे इसकी कोई सूचना नहीं है, किन्तु मृतकों और घायल हुए श्रमिकों के आश्रितों को 'श्रमिक मुआवजा अधिनियम' (वर्कमेन्स कम्पेन्सेशन ऐक्ट) के अन्तर्गत अपने दावे प्रस्तुत करने का अधिकार है ।

(ग) इस प्रश्न पर बिहार एवं उड़ीसा सरकार द्वारा भारतीय खान अधिनियम की धारा 21 के अन्तर्गत नियुक्त किये गये जाँच न्यायालय द्वारा जाँच पड़ताल की जा रही है और उसकी रिपोर्ट अभी तक उपलब्ध नहीं है ।

(घ) एवं (ङ) जाँच न्यायालय द्वारा रिपोर्ट पेश करने के बाद इन प्रश्नों पर समुचित ध्यान दिया जायेगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – ऐसी घटनाओं के होने पर सरकार क्या स्थानीय अधिकारियों से कोई रिपोर्ट नहीं मांगती?

श्री ए०जी० क्लो – स्थिति यह है कि जब भी कभी अत्यन्त गम्भीर दुघर्टना होती है तो खान अधिनियम के अन्तर्गत प्रान्त की सरकार जाँच न्यायालय की नियुक्ति अवश्य करती है । इस मामले में जाँच न्यायालय सुनवाई करता रहा है । मुझे

तारांकित प्रश्न संख्या 732, दिनांक 26 सितम्बर, 1935

विश्वास है कि उसने स्थानीय सरकार को अपनी रिपोर्ट दे दी है किन्तु मैंने उसे अभी तक नहीं देखा है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – ऐसी दुर्घटनाओं के फलस्वरूप मारे गये व्यक्तियों के आश्रितों को दिये गये मुआवजे के सम्बन्ध में क्या सरकार स्थानीय अधिकारियों से कोई रिपोर्ट नहीं माँगती?

श्री ए०जी० क्लो – जी नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह वांछित नहीं है कि उसे ऐसा करना चाहिए?

श्री ए०जी० क्लो – नहीं महोदय, मैं ऐसा नहीं समझता । स्थिति यह है कि अधिनियम के प्राविधान के अनुसार उन्हीं को मुआवजा मिल सकता है जो इसके लिए आवेदन करें । एक प्राविधान कमिश्नर को यह अधिकार भी देता है कि वह मृत श्रमिकों के आश्रितों का ध्यान अपना–अपना आवेदन पत्र जमा करने की ओर आकर्षित करें । उन्हें आवेदन करना है या नहीं यह निर्णय उन्हीं आश्रितों को ही करना होता है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – श्रमिकों को संरक्षण प्रदान करना क्या उन विषयों में से एक नहीं है जो भारत सरकार के दायित्व हैं?

श्री ए०जी० क्लो – नहीं श्रीमन्, इसके लिए मुख्यतः प्रांतीय सरकार उत्तरदायी हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – और भारत सरकार नहीं?

श्री ए०जी० क्लो – भारत सरकार का दायित्व केवल आरक्षित (रिजर्व) विषयों के सम्बन्ध में ही हैं और उसे अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण के अधिकार हैं ।



प्रशिक्षण जहाज डफरिन में भर्ती हुए कैडेटों की स्थिति

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार वर्ष 1927, 1929 और 1930 में प्रशिक्षण जहाज 'डफरिन' (ट्रेनिंगशिप डफरिन) में भर्ती किये गये 99 कैडेटों के सम्बन्ध में निम्न लिखित सूचनाएँ देने वाला प्रतिवेदन सदन के पटल पर रखेगी :

(क) प्रशिक्षण जहाज 'डफरिन' पर अपना कोर्स पूरा न करने वाले कैडेटों की संख्या,

(ख) उन कैडेटों की संख्या जो इस जहाज पर अपना कोर्स पूरा कर चुकने के बावजूद नागरिक जीवन में लौट गये,

(ग) 'शाही नौसेना' (रायल नेवी) में भर्ती किये गये कैडेटों की संख्या

(घ) समुद्री इन्जीनियरिंग (मेरीन इंजीनियरिंग) अपना लेने वाले कैडेटों की संख्या,

(ङ) उन कैडेटों की संख्या, जो या तो सैंन्डहर्स्ट स्थित सैनिक महाविद्यालय में चले गये या भारत की शाही वायु सेना में,

(च) उन कैडेटों की संख्या, जो जलपोतों (स्टीमरों) पर अधिकारी के रूप में सेवारत हैं?

(छ) 'बंगाल पायलट सेवा' में जाने वाले कैडेटों की संख्या,

(ज) हुगली या इरावदी नदी पर 'नदी सर्वेक्षण सेवा' में जाने वाले कैडेटों की संख्या,

(झ) उन कैडेटों की संख्या जो सक्षमता का प्रमाण–पत्र पा लेने के बावजूद बेरोजगार हैं,

(ञ) उन कैडेटों की संख्या जिन्होंने अपनी 'सागर–अवधि' (सी टाइम] पूरी कर ली है और जिन्हें द्वितीय अधिकारी (मेट) के रूप में सक्षमता का प्रमाण–पत्र प्राप्त करने हेतु परीक्षा में बैठना है

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – माँगी गयी सूचनाओं में जितनी उपलब्ध हैं उनकी जनवरी, 1936 के अन्त तक स्थिति दर्शाने वाला प्रतिवेदन मैं सदन के पटल पर

तारांकित प्रश्न संख्या 742, दिनांक 24 फरवरी, 1936

रखता हूँ ।

वर्ष 1927, 1929 और 1930 में प्रशिक्षण जहाज 'डफरिन' में भर्ती किये गये कैडेटों सम्बन्धी सूचनाओं का प्रतिवेदन :

प्रश्न का भाग	1927 की भर्ती	1929 की भर्ती	1930 की भर्ती	योग
(क)	3	0	4	7
(ख)	1	1	1	3
(ग)	0	4	0	4
(घ)	2	2	4	8 (क)
(ङ)	0	1	0	1 (ख)
(च)	13	17	0	30
(छ)	7	2	0	9
(ज)	2 (ग)	1	1	4
(झ)	0	2	5	7
(ञ)	0	2	18	20
योग	28	32	33	93

(क) इनमें से तीन ने प्रशिक्षण पूरा नहीं किया ।

(ख) द्वितीय अधिकारी (मेट) की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद शाही वायु सेना (ग्रेट ब्रिटेन) में भर्ती हुए ।

(ग) एक छोड़ चुका है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – सरकार ने स्थायी वित्त समिति के सम्मुख जो सुझाव रखे थे क्या सरकार की नीति उन पर कायम रहने की है, चाहे स्थायी समिति की उन पर कैसी ही राय या टिप्पणी क्यों न हो?

माननीय सर जेम्स ग्रिग – इस संबंध में कोई खास नीति नहीं है । प्रत्येक मामले पर उसकी परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाता है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार ने स्थायी वित्त समिति की राय को ध्यान में रखते हुए किसी प्रस्ताव को वापस ले लिया है या बजट से विलग कर दिया है?

माननीय सर जेम्स ग्रिग – क्या आपका आशय है कि ऐसा कभी भी पिछले समय किया गया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मेरा आशय है कि क्या ऐसा माननीय सदस्य के कार्यकाल में किया गया है ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग – माननीय सदस्य जरा इंतजार करें और देखें ।

श्री एम० अनन्तशयनम् आयंगार – क्या माननीय सदस्य से यह जानकारी प्राप्त कर सकता हूँ कि दिल्ली होते हुए कराची से लाहौर डाक ले जाने का अतिरिक्त व्यय एक लाख बीस हजार रुपये कम नहीं पड़ेगा जिसे कि एक विशाल धनराशि के रूप में सहायतार्थ देने की बात कही गयी है ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग – यह एक पौंड में तीन रुपये के बजाय छै रुपये होगा ।

श्री एम० अनन्तशयनम् आयंगार – मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या यह धनराशि एक लाख 20 हजार रुपये कम नहीं पड़ेगी जिसे कि एक विशाल धनराशि के रूप में सहायतार्थ देने की बात कही गयी है ।

माननीय सर फ्रैंक नोइस – यह एक पौंड में तीन रुपये की बजाय छः रुपये होगा ।

श्री एम० अनन्तशयनम् आयंगार – मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या यह धनराशि एक लाख 20 हजार के समतुल्य होगी?

माननीय सर फ्रैंक नोइस – इस प्रश्न हेतु मुझे नोटिस चाहिए ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – जब स्थायी वित्त समिति किसी मांग को अस्वीकार कर देती है तो सरकार कौन सी प्रक्रिया अपनाती है? क्या भारत सरकार या उसकी ओर से कार्य करने वाला वित्त सदस्य यह कहता है कि "नहीं, मैं इस पर विचार नहीं कर सकता"?

माननीय सर जेम्स ग्रिग – मुझे खेद है कि मैं प्रश्न नहीं सुन पाया ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – स्थायी वित्त समिति द्वारा किसी खास मांग के अस्वीकृत किये जाने के बाद क्या प्रक्रिया अपनायी जाती है ? क्या भारत सरकार इस पर विचार करती है या भारत सरकार की ओर से कार्य करते हुए वित्त सदस्य यह कहता है कि मैं स्थायी वित्त समिति की सलाह को स्वीकार नहीं करूँगा ।'

माननीय सर जेम्स ग्रिग – यदि मुझे कहने की अनुमति दी जाय तो मैं यह कहूँगा ऐसा प्रश्न करना उचित नहीं है ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – महोदय, इसमें अनौचित्य की कौन सी बात है? मैं आपसे व्यवस्था चाहता हूँ । मैं समझता हूँ कि यह एक उचित प्रश्न का अनुचित उत्तर है ।

●

डफरिन के कैडेटों को अधिकारियों के रूप में जहाजरानी कम्पनियों में रोजगार

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क)क्या सरकार यह बताने की कृपा करेगी कि 'डफरिन' की स्थापना के समय कुछ ब्रिटिश जहाजरानी कम्पनियों ने यह आश्वासन दिया था कि प्रशिक्षण जहाज "डफरिन" में प्रशिक्षण पाये हुए कैडेटों को अपने स्टीमरों पर अधिकारियों के रूप में रोजगार देगी? यदि हाँ,तो सरकार क्या उन कम्पनियों के नाम बताते हुए प्रत्येक के (1) स्टीमरों, (2) बेड़े के अधिकारियों की संख्या (3) गत पाँच वर्षों में हुई रिक्तियों की संख्या और (4) अधिकारियों के रूप में रोजगार पाये "डफरिन" कैडेटों की संख्या, बतायेगी?

(ख) जहाजों के उन अधिकारियों की संख्या, जो "सिन्धिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी" के जहाजों में कार्यरत हैं?

(ग) "डफरिन" के कितने कैडेटों को सिन्धिया कम्पनी ने प्रशिक्षुओं के रूप में अपने यहाँ लिया है और कितने कैडेटों को उसने अभी तक अपने बेड़े में नियुक्त किया है?

(घ) क्या यह सच है कि ब्रिटिश इंडिया कम्पनी, जिसके लगभग सत्तर स्टीमर चल रहे हैं, ने अपने स्टीमरों पर डफरिन के केवल चार कैडेटों को अधिकारी के रूप में रोजगार दिया है और एशियाटिक कम्पनी ने जिन दो कैडेटों को अपने यहाँ अधिकारी बनाया था, वे भी अब उनकी नौकरी में नहीं रहे तथा "मुगल" और 'नोर्स लाइन्स' ने "डफरिन" में एक भी कैडेट को अपने यहाँ अधिकारी के रूप में नियुक्त नहीं किया है?

(ङ) क्या कोई जहाजरानी कम्पनी भारतीय तटों के बीच अथवा जलडमरूमध्य, आस्ट्रेलिया, यूरोप या अन्य देशों तक डाक लाने–ले जाने के लिए सरकार से कोई सहायतार्थ अनुदान प्राप्त करती है? यदि हाँ, तो वह कौन है?

(च) भारत से इंग्लैंड तक खजाना, भण्डार या सरकारी अधिकारियों को लाने ले जाने के लिए सरकार द्वारा आमतौर पर किन कम्पनियों की सेवायें ली जाती हैं?

(छ) इन कम्पनियों में से प्रत्येक के बेड़े पर कितने अधिकारी हैं और उनमें से कितने

तारांकित प्रश्न संख्या 743, दिनांक 24 फरवरी, 1936

'डफरिन' के कैडटों में से भर्ती किये गये हैं?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – (क) हाँ । ब्रिटिश इंडिया नेवीगेशन कम्पनी, एशियाटिक स्टीम नेवीगेशन कम्पनी और मुगल लाइन्स ने इस प्रकार का आश्वासन दिया था ।

(1) जहाँ तक सरकार को जानकारी है, इन कम्पनियों के स्वामित्व वाले स्टीमर इस प्रकार हैं :

ब्रिटिश इंडिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी	115
एशिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी	18
मुगल लाइन्स	7

(2) एवं (3) सरकार के पास कोई सूचना नहीं है ।

(4) इस बारे में मैं फरवरी, 1936 को पूछे गये पंडित कृष्ण कान्त मालवीय के तारांकित प्रश्न संख्या 8 के भाग (ग) एवं (घ) तथा श्री आसफ अली के तारांकित प्रश्न संख्या 456 के भाग (ग) एवं (घ) पर क्रमश: दिये गये अपने उत्तरों का हवाला माननीय सदस्य को देना चाहूँगा ।

(ख) सरकार के पास कोई सूचना नहीं है ।

(ग) प्रशिक्षुओं के रूप में लिये गये कैडेटों की संख्या	46
अधिकारियों के रूप में नौकरी पाये कैडेटों की संख्या	23

(घ) मैं प्रश्न के भाग (क) (4) के उत्तर का हवाला देना चाहूँगा ।

(ङ) कोई भी फर्म सहायतार्थ अनुदान नहीं पा रही है किन्तु मेरी धारणा है कि माननीय सदस्य उन फर्मों की ओर संकेत कर रहे हैं जो डाक के लाने–ले जाने के फलस्वरूप कराकर के अन्तर्गत भुगतान प्राप्त करती हैं । यदि ऐसा है तो, माननीय सदस्य को मैं डाक एवं तार विभाग के क्रिया–कलापों पर वर्ष 1934-35 की वार्षिक रिपोर्ट की परिशिष्ट -11 का हवाला देना चाहूँगा, जिसकी एक प्रति सदन के पुस्तकालय में उपलब्ध है ।

(च) संदर्भित उद्देश्य के लिए आमतौर पर जिन कम्पनियों की सेवाएं ली जाती हैं, वे हैं –पी०एण्ड ओ०, ब्रिटिश इंडिया, एलरमैन, ऐन्कर, क्लान, बिब्बी, हेण्डरसन, हाँसा और सिटी लाइन्स ।

(छ) भाग (घ) और (ङ) में वर्णित विभिन्न जहाजरानी कम्पनियों में कितने अधिकारी नौकरी पाये हुए हैं, सरकार के पास इनकी कोई सूचना नहीं है । जहाँ तक 'डफरिन' के भूतपूर्व कैडेटों का प्रश्न है ब्रिटिश इंडिया और एशियाटिक कम्पनियों ने उन्हें अपने यहाँ अधिकारी के रूप में नौकरियाँ दी हैं । इस प्रकार नौकरी पाने वालों की संख्या के बारे में भाग (अ) (4) के उत्तर की ओर ध्यान आकृष्ट किया जाता है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – "डफरिन" के कितने कैडेट अब भी बेरोजगार हैं?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – इस प्रश्न का उत्तर मैं पहले पूछे गये पूरक प्रश्नों के जवाब में दे चुका हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि मेट (अधिकारी) का प्रमाण पत्र पाते ही लगभग तीस "डफरिन"कैडेट रोजगार पाने योग्य पूरी तरह शिक्षित हो जायेंगे ।

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – एकदम ठीक तो मैं नहीं जानता, किन्तु मेरे ख्याल से लोगों की संख्या, जो यह प्रमाण–पत्र पाने वाले हैं, तेइस है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि कम से कम सात ऐसे व्यक्ति आज भी बेरोजगार हैं, जो इसके लिए अनेक बार सरकार से सम्पर्क कर चुके हैं?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – ऐसा सही हो सकता है मगर मैं उनकी ठीक-ठीक संख्या नही बता सकता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – क्या सरकार ने उन सम्भावनाओं की खोज की है कि इन तेइस व्यक्तियों को आवश्यक योग्यता प्राप्त कर लेने के बाद रोजगार पाने के कौन से अवसर उपलब्ध हो सकते हैं?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – हाल ही के कुछ समय से सरकार विभिन्न जहाजरानी कम्पनियों से पत्राचार कर रही है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि सिन्धिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी की अपेक्षा सरकार द्वारा संरक्षित जहाजरानी कम्पनियों ने डफरिन के उम्मीदवार को बहुत कम अनुपात में नौकरियां दी हैं?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – सिन्धिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी ने दूसरी कम्पनियों की अपेक्षा बहुत बड़ी संख्या में नौकरियां दी हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि सिन्धिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी को सरकार से कोई संरक्षण नहीं मिलता है जबकि अन्य ब्रिटिश कम्पनियों को यह प्राप्त है?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – यदि माननीय सदस्य का संरक्षण से तात्पर्य यह है कि उन्हें सरकार से डाक का ठेका प्राप्त है अथवा नहीं, तो मैं समझता हूँ कि उनका कथन ठीक है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत – न केवल उन्हें डाक का ठेका नहीं प्राप्त है बल्कि 'ली कमीशन' की सिफारिशों के अनुसार बाहर भेजे या इस देश में प्राप्त किये जाने वाले

सरकारी खजाने तथा सरकारी अधिकारियों को लाने–ले जाने में उनकी सेवाएं भी नहीं ली जातीं?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – मेरे ख्याल से उनके पास इस कार्य में उपयोग किये जा सकने योग्य कोई जहाज नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – तथ्य यही निकलता है कि उन्हें काम नहीं दिया जाता ।

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – निष्कर्ष यह निकलता है कि (अक्षमता के कारण) इन कार्यों के लिए उनकी सेवाएं ली नहीं जा सकतीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह 'भारतीय व्यावसायिक जहाजरानी समिति' (इण्डियन मर्केन्टाइल मेरी कमेटी) द्वारा विचार किये गये प्रमुख मुद्दों में से एक नहीं था? क्या ऐसे प्रावधान बनाने के लिए कहा गया था ताकि भारतीय तटों पर नौका परिवहन करने वाले जहाजों में अधिकारियों के पदों पर नियुक्त होने के लिए भारतीयों को प्रशिक्षित किया जा सके? क्या यह सच नहीं है कि लार्ड इरविन तथा तत्कालीन वाणिज्य सदस्य कई बार यह वचन दे चुके हैं कि 'डफरिन' से आये इन कैडेटों को रोजगार मिलेगा और भारतीय तटों पर कार्य करने वाली कम्पनियों में इन्हें नौकरियां दिलवाने हेतु सरकार नये कानून तक बनायेगी?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – यदि माननीय सदस्य, दिये गये वचन को ठीक-ठीक बता सकते हों तो मैं प्रश्न का उत्तर दे सकता हूँ । उन्हें स्वीकार होगा, इस प्रकार के सामान्य सवालों के सम्बन्ध में मैं कोई निश्चित बात नहीं कह सकता ।

सर काबसजी जहांगीर – उन कैडेटों को नौकरियां देने के लिए इन कम्पनियों पर सरकार ने क्या कोई दबाव डाला है?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – सरकार ने उन्हें राजी करने के यथासम्भव प्रयास किये हैं और अब भी कर रही है ।

सर काबसजी जहांगीर – मैंने 'दबाव' कहा है, 'प्रयास' नहीं ।

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – माननीय सदस्य किस प्रकार के दबाव का जिक्र कर रहे हैं?

सर काबसजी जहांगीर – क्या सरकार इस संबंध में स्वयं कुछ नहीं जानती कि दबाव कैसे डाला जाय ? क्या इस बारे में वह पूरी तरह अनभिज्ञ है?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – इस प्रश्न का उत्तर मैं पहले ही दे चुका हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इन जहाजरानी कम्पनियों के साथ भविष्य में करार करते समय सरकार क्या इस बात पर जोर देगी कि उन्हें वह ठेका तब तक नहीं

दिया जायगा जब तक कि वे 'डफरिन' के उस प्रत्येक कैडेट को नियुक्त नहीं कर लेते जो उनके यहाँ उपयुक्त नौकरी के लिए उपलब्ध है ।

सर मुहम्मद जफरुल्ला खाँ – इसका जवाब भी पहले ही दिया जा चुका है । करार के नवीनीकरण का समय आने पर इस प्रश्न पर विचार किया जायगा ।

●

'डफरिन के कैडेटों को रोजगार'

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार यह बताने की कृपा करेगी कि क्या यह सच है कि प्रशिक्षण जहाज "डफरिन" के कैडेटों द्वारा प्रवीणता का प्रमाण–पत्र हासिल कर लेने के बाद उनके भविष्य के रोजगार का सवाल संचालक मंडल (गवर्निंग बाडी) के सदस्यों को गहरी चिन्ता उत्पन्न करता रहा है?

(ख) सरकार क्या यह बताने की कृपा करेगी कि प्रशिक्षण जहाज "डफरिन" के संचालक मंडल के सदस्यों का कोई सन्देश, रोजगार अथवा उसके उद्देश्यों के परिवर्तन के सम्बन्ध में उसे प्राप्त हुआ है?

(ग) यदि भाग (क) का उत्तर सकारात्मक हो, तो क्या सरकार उस अभ्यावेदन की एक प्रति सदन के पटल पर रखेगी?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – (क) हाँ ।

(ख) प्रशिक्षण जहाज "डफरिन" के संचालक मंडल से सरकार को दो प्रस्ताव प्राप्त हुए हैं – एक कैडटों के रोजगार के प्रश्न से सम्बन्धित है और दूसरा जहाज की विवरण पुस्तिका में कुछ प्रस्तावित परिवर्तनों के बारे में है ।

(ग) मैं प्रश्नगत प्रस्तावों की प्रतियां पटल पर रखता हूँ ।

प्रस्ताव संख्या 205

"प्रस्ताव किया जाता है कि सरकार का ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित किया जाय कि ऐसा प्रतीत होता है कि 1929 में भर्ती किये गये पच्चीस कैडेटों में से, जो अपनी सागर अवधि पूरी करके 1935 में अधिकारी के रूप में नौकरी पाने के पात्र बन जायेंगे, 10 बेरोजगार रह जायेंगे, और सरकार से यह अनुरोध किया जाय कि वह भारत में तटीय व्यापार करने वाली जहाजरानी कम्पनियों पर इस हेतु अपने प्रभाव का उपयोग करे कि वे अपनी मालवाहक क्षमता के अनुपातानुसार अधिक संख्या में " डफरिन" के कैडटों को अपने यहाँ अधिकारी बनायें ।

"विवरण पुस्तिका के पृष्ठ पाँच पर छपी कम्पनियों की सूची संशोधित कर उसमें सिटी लाइन, ऐन्कर लाइन, क्लान लाइन जैसी जहाजरानी कम्पनियों और

तारांकित प्रश्न संख्या 742, दिनांक 24 फरवरी, 1936

स्थानीय जहाजों की भार क्षमता को भी शामिल करके आकार में वृद्धि की जाय ।

"सरकार का ध्यान इस तथ्य की ओर विशेष रूप से आकर्षित किया गया था कि पी० एण्ड ओ० कम्पनी सरकार और भारत की जनता से बहुत अधिक संरक्षण मिलने के बावजूद डफरिन के एक भी पूर्व कैडेट को अपने यहाँ अधिकारी नहीं बनाया है ।"

प्रस्ताव संख्या 213

भारत सरकार के पत्र संख्या (5) एम० दो (42)/35 दिनांक 2 दिसम्बर, 1935 पर पूरी सावधानी से विचार करने के उपरान्त यह प्रस्तावित किया जाता है कि भारत सरकार को यह सूचित कर दिया जाय कि संचालक मंडल को खेद है कि विवरण पुस्तिका में सुझाए गये परिवर्तनों पर वह सहमत नहीं हैं ।

विवरण–पुस्तिका में कोई भी परिवर्तन किया जाना उसकी राय में न तो आवश्यक है और न ही लाभप्रद ।

"संचालक मंडल का ध्यान, श्री एम० ए० मास्टर द्वारा उसे भेजे गये पत्र दिनांक 29 दिसम्बर, 1935 और उन ऐतिहासिक तथ्यों की ओर आकर्षित किया जाय, जिन पर मंडल के अनेक सदस्य सहमत थे ।

"इन सदस्यों ने प्रस्ताव के पक्ष में मत दिया–सर पुरुषोत्तम दास ठाकुरदास, श्री चन्द्रावरकर, श्री दिनशा, श्री मनुव्वर, श्री हीराचन्द, श्री मास्टर, सर मोहम्मद याकूब और श्री फ्लाक हार्ट ।"

"इन सदस्यों ने मतदान में भाग नहीं लिया : अध्यक्ष, श्री मौलवी अब्दुल कासिम तथा श्री हम्पटन ।"

"सचिव को इस आशय का निर्देश दिया गया कि वह इण्डियन चैम्बर आफ कामर्स, कलकत्ता के सेक्रेटरी को जवाब भेज दें कि संचालक मंडल उस विषय पर भारत सरकार से पत्राचार कर रहा है "

सर मोहम्मद याकूब – "डफरिन"की विवरण पुस्तिका में कोई परिवर्तन के बारे में सरकार क्या किसी निष्कर्ष पर पहुँची है?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – माननीय सदस्य संचालक मंडल का सदस्य होने के नाते यह जानते हैं कि विवरण पुस्तिका में प्रस्तावित परिवर्तन पाठ्यक्रम से संबंधित नहीं है वरन् वह यह स्पष्ट करता है कि रोजगार की कोई गारंटी नहीं होगी ।

सर मुहम्मद याकूब – मसले की जड़ तो यही है कि जिससे स्पष्ट होता है कि डफरिन की स्थापना किस उद्देश्य से हुई?

सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँ – ऐसी बात नहीं है ।

●

जहाजरानी कम्पनी के स्टीमरों में "डफरिन" कैडेटों को रोजगार

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार यह बताने की कृपा करेगी कि जिन उद्देश्यों से प्रशिक्षण जहाज 'डफरिन' की स्थापना की गयी थी क्या उनमें वह कोई परिवर्तन करने का इरादा रखती है? उद्देश्य थे :

"ब्रिटिश भारत की जनता या भारत की रियासती जनता में से भारत के व्यापारी समुद्री बेड़े के लिए उपयुक्त उम्मीदवारों को छाँटकर उन्हें ऐसा प्रशिक्षण देना ताकि उनसे विश्वासपूर्वक यह अपेक्षा की जा सके कि वे नाविक का व्यवसाय अपनायेंगे और सभी अर्थों में स्वयं को एक योग्य और कुशल अधिकारी सिद्ध कर सकेंगे?"

(ख) सरकार क्या यह बताने की कृपा करेगी कि उसने प्रशिक्षण जहाज "डफरिन" की विवरण पुस्तिका में ऐसा परिवर्तन करने का विचार किया है ताकि जनता को यह समझ में आ जाये कि "डफरिन" के कैडेटों को जहाजरानी कम्पनियों में अधिकारी के रूप में नौकरियाँ दिलवा पाने की उपयुक्त व्यवस्था कर पाने में सरकार असफल रही है?

माननीय सर मोहम्मद जफरुल्ला खाँ – (क) नहीं, माननीय सदस्य द्वारा उद्धृत किये गये शब्द प्रशिक्षण जहाज डफरिन की विवरण पुस्तिका से लिये गये हैं और सरकार या उसकी ओर से किसी के भी द्वारा इसमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन किये जाने का कोई प्रस्ताव कभी नहीं रहा ।

(ख) नहीं। माननीय सदस्य शायद विवरण पुस्तिका में अन्य प्रस्तावित परिवर्तनों का हवाला दे रहे हैं । उनमें पाठ्यक्रम या "डफरिन" पर दिये जाने वाले प्रशिक्षण में कोई परिवर्तन करने के विचार नहीं है बल्कि दिये जाने वाले प्रशिक्षण की सूचनाएं उसमें माता-पिता और अभिभावकों को और भी पूरे ढंग से देने और यह स्पष्ट कर देने का विचार है कि सरकार सभी कैडेटों के रोजगार की गारंटी नहीं देती । इन परिवर्तनों पर "डफरिन" के संचालक मण्डल ने विचार किया है, जिसकी सिफारिशें अभी ही प्राप्त हुई हैं और सरकार के विचाराधीन हैं ।

तारांकित प्रश्न संख्या 734, दिनांक 24 फरवरी, 1936

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – विवरण पुस्तिका क्या सरकार की स्वीकृति से और उसके प्राधिकार के अन्तर्गत जारी की गयी थी?

माननीय सर मोहम्मद जफरुल्ला खाँ – मैं ऐसा ही सोचता हूँ मगर इसके बारे में मैं पूरा निश्चिंत नहीं हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि विवरण पुस्तिका द्वारा जैसी आशाएँ दिलायी गयी थीं वे पूरी नहीं हुई हैं?

माननीय सर मोहम्मद जफरुल्ला खाँ – जैसा कि माननीय सदस्य के पिछले सवालों के जवाब से स्पष्ट हो चुका है, यह सच है कि कुछ कैडेट उपयुक्त रोजगार नहीं पा सके हैं ।

●

स्टीमर और शिपिंग कम्पनियों में भारतीय अधिकारियों की नियुक्ति

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार यह बताने की कृपा करेगी कि प्रश्न संख्या 1129 के उत्तर में वाणिज्य सदस्य द्वारा 28 मार्च, 1935 को इस सदन में दिये गये आगे वर्णित आश्वासन को पूरा करने के लिए उसने कौन से कदम उठाये हैं,

"तटीय व्यापार में संलग्न सारी जहाजरानी कम्पनियों को, चाहें वे भारतीय हों या ब्रिटिश, पूर्ण योग्यता प्राप्त भारतीय अधिकारियों को पर्याप्त संख्या में रोजगार देने के महत्व को स्वीकारने हेतु भारत सरकार कदम उठायेगी?"

(ख) सरकार यह बताएगी कि क्या उठाये गये उन्हीं कदमों के फलस्वरूप प्रशिक्षण जहाज "डफरिन" के कैडेट "पर्याप्त संख्या" में अधिकारियों के रूप में ब्रिटिश जहाजरानी कम्पनियों में उनके स्टीमरों पर अब नौकरियाँ पा रहे हैं? उनमें तबसे कितने पद रिक्त हुए और उनमें से कितने पद इन कैडेटों द्वारा भरे गये?

माननीय सर मोहम्मद जफरुल्ला खाँ – (क) सरकार अग्रणी कम्पनियों से अब तक लगातार व्यक्तिगत मामलों में पत्राचार करती आयी है और हाल ही में उसने उन्हें सभी के आम मसलों पर लिखा है ।

(ख) विभिन्न कम्पनियों के स्टीमरों पर रिक्त हुए पदों की वास्तविक संख्या के बारे में सरकार के पास कोई सूचना नहीं है । योग्यता प्राप्त अधिकांश पूर्व कैडेट अब तक या तो ब्रिटिश अथवा भारतीय कम्पनियों में नौकरियाँ पा चुके हैं या भारतीय सामुद्रिक व्यापारी बेड़े (इन्डियन मर्केन्टाइल मेरीन) से सम्बन्धित रोजगार पा चुके हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार ने इस सदन में आश्वासन देने के बाद विभिन्न कम्पनियों को पत्र लिखा है?

माननीय सर मोहम्मद जफरुल्ला खाँ – जी हाँ, कई अवसरों पर ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या संबंधित कम्पनियों से उसे कोई उत्तर प्राप्त हुआ है?

तारांकित प्रश्न संख्या 744, दिनांक 24 फरवरी, 1936

माननीय सर मोहम्मद जफरुल्ला खां – हां, कुछ उत्तर प्राप्त हुए हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या उन्होंने सरकार की इच्छाएँ पूरी कर दी हैं?

माननीय सर मोहम्मद जफरुल्ला खां – पूरी तरह नहीं । सरकार अब भी इस सम्बन्ध में अपने प्रयास जारी रखे हुए है ।

●

ईराक में रहने वाले भारतीयों पर वहाँ लगाये जा रहे प्रतिबन्ध

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या यह सच है कि हाल ही में ईराक में कुछ ऐसे आदेश पारित किये गये हैं और कानून बनाये गये हैं जो भारतीय व्यक्तियों के हितों के विरुद्ध हैं?

(ख) क्या ईराक की मजलिस ने ईराक में अधिकांश व्यवसायों को केवल ईराकियों के लिए ही आरक्षित कर दिया है?

(ग) क्या ईराक में बसे भारतीयों को वह देश छोड़ देने का कोई नोटिस गत वर्ष दिया गया था?

(घ) ईराक के धार्मिक स्थानों की यात्रा पर जाने वाले भारतीयों की अनुमानित वार्षिक संख्या क्या है?

(ङ) क्या सरकार को विदित है कि भारतीय तीर्थयात्रियों द्वारा ईराक में बहुत बड़ी धनराशि व्यय की जाती है अथवा धर्मार्थ दी जाती है?

(च) क्या सरकार को यह विदित है कि भारत से प्रतिवर्ष लगातार ईराक को धर्मार्थ चन्दा भेजा जाता है?

(छ) क्या यह सच है कि ईराक से निर्यात होने वाले खजूर का अधिकांश भाग भारत खरीदता है?

(ज) क्या यह सच है कि उस युद्ध में जिसके फलस्वरूप ईराक को आज स्वतंत्र देश का दर्जा प्राप्त है, हजारों भारतीय सैनिक मारे गये थे या अपाहिज हो गये थे?

(झ) भारत में रहने वाले ईराकियों और ईराक में रहने वाले भारतीयों की क्रमशः कुल संख्याएँ क्या हैं?

(ञ) क्या यह सच है कि अनेक ईराकी भारत में सरकार, रेलवे तथा अन्य सेवाओं में बहुत लाभ के पदों पर आसीन हैं और बड़ी संख्या में वे अन्य व्यवसायों में स्थापित. हैं या रोजगार प्राप्त किये हुए हैं और सम्पत्ति पर स्वामित्व के विषय में या अन्यथा भी ईराकियों पर न तो कोई प्रतिबन्ध है या उसके साथ भारत में कोई भेद–भाव बरता जाता है?

तारांकित प्रश्न संख्या 745, दिनांक 24 फरवरी, 1936

(प) क्या यह सच है कि ईराकी क्षेत्र में प्रवेश के इच्छुक भारतीय को इसके लिए ईराक सरकार से अनुमति लेनी पड़ती है जबकि कोई ईराकी ईराक स्थित "ब्रिटिश कान्सुलेट" से मात्र प्रवेश का वीसा प्राप्त करके भारत में प्रवेश कर सकता है?

(फ) क्या यह सच है कि ईराक सरकार सामान्यतया यह अनुमति तभी देती है जब आवेदक का ईराक में कोई कारोबार चल रहा हो या उसे वहाँ रोजगार की कोई गारण्टी प्राप्त हो जबकि ईराकी के भारत में प्रवेश पर ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं है?

(ब) क्या यह सच है कि ईराक में कदम रखते ही भारतीय व्यक्तियों को ईराक सरकार से निवास–अनुमति पत्र लेना पड़ता है जो आमतौर पर एक वर्ष के लिए है और प्रतिभूति के रूप में एक सौ रुपये देने के बाद ही मिलता है जबकि कोई भी ईराकी जब तक वह चाहे भारत में रह सकता है?

(भ) इस सम्बन्ध में सरकार क्या कार्यवाही करने जा रही है?

माननीय सर औब्रे मेटकाफ – (क) एवं (ख) नहीं । कुछ धंधों को ईराकियों के लिए आरक्षित करने का एक विधेयक इस समय ईराक की विधायिका के सामने है ।

(ग) हाँ । ईराक आव्रजन कानून 1923, की धारा 10 के अन्तर्गत समय–समय पर ईराक में ठहरने के अनुमति पत्रों के नवीनीकरण के लिए नोटिसें तामील की जाती रहती हैं ।

(घ) 1932, 1933 और 1934 में ईराक जाने वाले तीर्थयात्रियों की संख्या क्रमशः 3375, 3768 और 5891 थी ।

(ङ) भारत सरकार के पास कोई सूचना नहीं है ।

(च) (छ) और (ज) हाँ ।

(झ) और (ञ) ईराक में भारतीयों की संख्या लगभग साढ़े चार हजार है । भारत में रहने वाले ईराकियों की सही संख्या के बारे में सरकार के पास फिलहाल सूचना उपलब्ध नहीं है ।

(प) हाँ । ईराक आव्रजन कानून की धारा 5 के अन्तर्गत यह आवश्यक है कि सुविधाएँ प्राप्ति हेतु ईराक सरकार को आवेदन–पत्र दिया जाय ।

(फ) एवं (ब) सूचना मांगी जा रही है, जिसे प्राप्त होते ही सदन को सूचित कर दिया जायगा ।

(भ) ईराक में रहने वाले भारतीयों के हितों की सुरक्षा के लिए सरकार वह सब कुछ कर रही है जो वह कर सकती है ।

श्री एम० अनन्तशयनम् आयंगार – मान्यवर, सरकार के पास क्या उस विधेयक की

प्रतिलिपि है और क्या वह विधेयक प्रस्तुत हो चुका है अथवा प्रस्तुत होने वाला है?

माननीय सर औब्रे मेटकाफ – विधेयक प्रस्तुत किया जा चुका है, निचले सदन में किसी रूप में पारित होने के बाद अब यह ईराकी विधायिका के ऊपर के सदन के विचाराधीन है ।

श्री एम० अनन्तशयनम् आयंगार – क्या भारत सरकार के पास उस विधेयक की कोई प्रतिलिपि उपलब्ध है और क्या माननीय सदस्य उसे माननीय सदस्यों के सूचनार्थ पटल पर रखेंगे?

माननीय सर औब्रे मेटकाफ – मेरे ख्याल से हमारे पास इस विधेयक की प्रतिलिपि मौजूद है जो मूल रूप में प्रस्तुत किया गया था लेकिन मैं समझता हूँ कि विधायिका में पारित किये जाने के दौरान उसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन किये जा चुके हैं । मेरा सुझाव है कि इसके अंतिम रूप में पारित होने तक प्रतीक्षा कर लेना अधिक अच्छा होगा । यदि माननीय सदस्यगण चाहें तो, मैं उस विधेयक की प्रतिलिपि प्रस्तुत कर सकता हूँ परन्तु इससे उन्हें पूरी जानकारी नहीं मिल पायेगी क्योंकि उसमें काफी परिवर्तन हो चुके हैं ।

श्री एम० अनन्तशयनम् आयंगार – किये गये परिवर्तन भारतीयों के पक्ष में हैं या उनके विरुद्ध?

माननीय सर औब्रे मेटकाफ – ऐसा कुछ भी नहीं है, वे केवल भारतीयों को ही नहीं बल्कि सारे विदेशियों को प्रभावित करते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मूल विधेयक में किये गये संशोधन क्या सरकार को विदित हैं?

माननीय सर औब्रे मेटकाफ – इस विषय में हमें केवल तार द्वारा कुछ सूचनाएँ मिली हैं, किये गये संशोधन मैं ठीक–ठीक नहीं बता सकता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार यह सुनिश्चित करने हेतु कदम उठायेगी कि प्रस्तुत किये गये विधेयक के अन्तर्गत ईराक में रहने वाले भारतीयों के विरुद्ध भेदभाव कर पाना ईराक सरकार के विवेकाधीन नहीं रहेगा?

माननीय सर औब्रे मेटकाफ – मान्यवर, मैं यह स्पष्ट कर देना चाहूँगा कि ईराक सरकार एक विदेशी सरकार है और वह क्या करे, यह सुनिश्चित करना भारत सरकार का काम नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – यदि ईराक सरकार ऐसा ही करती रही तो क्या भारत सरकार इस देश में बदले की कार्यवाहियाँ करेगी ?

माननीय सर औब्रे मेटकाफ – मान्यवर, यह एक काल्पनिक प्रश्न है ।

सर कावसजी जहांगीर – क्या मैं पूछ सकता हूँ कि क्या भारत सरकार ऐसे कदम

उठायेगी जिनसे ईराक में भारतीयों और अन्य विदेशियों के बीच भेदभाव न किया जाये जो ईराक में रहने वाले अन्य विदेशियों के साथ अपनाया जाता हो ? निश्चित रूप से सरकार का यह कर्तव्य है कि वह विदेशों में निवास कर रहे भारतीयों को सुरक्षा प्रदान करे और देखे कि दूसरे विदेशियों की तुलना में उनके साथ दुर्व्यवहार न किया जाये ।

माननीय सर औब्रे मेटकाफ – मान्यवर, मैं कम से कम आधा दर्जन बार यह कह चुका हूँ कि अन्य विदेशियों की अपेक्षा भारतीयों के साथ किसी प्रकार का भिन्न बर्ताव करने का कोई प्रस्ताव (वहाँ) कभी नहीं उठा ।



जंजीबार में बसे भारतीयों की स्थिति

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) इस सदन द्वारा गत सितम्बर माह में पारित इस प्रस्ताव के क्रियान्वयन हेतु सरकार ने क्या कार्यवाही की है, जिसमें सरकार से अनुरोध किया गया था कि जंजीबार में बसे भारतीयों के हित में और उनकी स्थिति का समर्थन करने के लिए, वह प्रभावी कदम उठाये?

(ख) जंजीबार की सरकार से इस विषय में हुए उसके पत्राचार की एक प्रतिलिपि पटल पर रखने की कृपा सरकार करेगी?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – श्री सत्यमूर्ति के प्रश्न संख्या 61 के भाग (ग) के जवाब में दिनांक 5 फरवरी, 1936 को दिये गये मेरे उत्तर की ओर माननीय सदस्य का ध्यान आकर्षित किया जाता है । सम्राट की सरकार (हिज मेजेस्टीज गवर्नमेंन्ट अर्थात् ब्रिटिश सरकार) को और भी पत्र भेजे जा चुके हैं ।

(ख) सरकार को खेद है कि पत्राचार की प्रतिलिपि सदन के पटल पर रखने में वह असमर्थ है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – भारत सरकार के प्रतिवेदनों में लिखित बातों से बचने के लिए जंजीबार की सरकार ने अपने आदेशों में से किसी को समाप्त अथवा संशोधित किया है?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – नहीं श्रीमन् । अभी तो नहीं किया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – असेम्बली में पिछला प्रस्ताव पारित होने के बाद, क्या उन्होंने प्रतिबन्ध की अवधि बढ़ायी है?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – इस मामले पर एक प्रश्न बाद में भी पेश होगा, किन्तु मैं इसका उत्तर अभी दे सकता हूँ । प्रतिबन्ध की अवधि जून, 1936 के अंत तक के लिए बढ़ा दी गयी है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इन पत्रों के द्वारा भारत सरकार जंजीबार में बसे भारतीयों को किस प्रकार की राहत दिलवाने में सफल हो सकी है?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – जहाँ तक लौंग उद्योग का प्रश्न है, अपने माननीय मित्र को मैं पहले ही स्थिति स्पष्ट कर चुका हूँ । कर्ज कानून के बारे में भारत ने पत्र अभी हाल में ही लिखा है ।



तारांकित प्रश्न संख्या 847, दिनांक 26 फरवरी 1936

जंजीबार में भारतीयों की कठिनाइयाँ

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या यह सच है कि जंजीबार में बसे भारतीयों के घोर कष्ट के प्रत्येक मामले में उन्हें समुचित राहत देने पर कृपापूर्वक विचार करने का "सेक्रेटरी आफ स्टेट फार द कालोनीज" द्वारा आश्वासन दिये जाने के बावजूद:

(1) 150 व्यापारियों को अपना व्यापार ठप करके जंजीबार छोड़ना पड़ा है,

(2) 80 को अपना व्यापार पूरी तरह समेटना पड़ा है,

(3) 90 दीवालिया हो गये हैं और

(4) कई सम्मानित व्यापारी अत्यन्त कठिन परिस्थितियों में हैं?

(ख) क्या सरकार को यह विदित है कि अपना उधार न वसूल पाने के कारण 'पेम्बा' में एक व्यापारी ने आत्महत्या कर ली, यद्यपि उसे जो रकम प्राप्त होनी थी वह देनदारी से अधिक थी?

(ग) क्या सरकार को विदित है कि "भू स्वामित्व हस्तान्तरण आदेश" (लैन्ड एलियनेशन डिक्री) के चलते कुछ व्यापारियों, जिनके व्यवसाय कुछ समय पहले तक जंजीबार में फल–फूल रहे थे, को अपने प्राणों का जोखिम उठाकर वहाँ से देशी नावों से भागना पड़ा क्योंकि वे अपनी यात्रा के लिए जहाजों का किराया नहीं चुका सकते थे?

(घ) क्या यह सच है कि लौंग के भारतीय निर्यातकों की संख्या इकतीस से घटकर तीन रह गयी है और व्यापार लाइसेंस शुल्क चुकाने में असमर्थता के कारण, अस्सी भारतीय अपना व्यापार नहीं चला पा रहे हैं?

(ङ) क्या यह सच है कि लौंग उत्पादकों के संघ को एकाधिकार प्रदान किये जाने से पूर्व तीस भारतीय लौंग का भण्डार (स्टाक) रखते थे और एकाधिकार दिये जाने के बाद एक भी भारतीय ऐसा नहीं बचा है जो लौंग का भण्डार रखता हो?

(च) क्या यह सच है कि भूस्वामित्व हस्तान्तरण आदेश लागू होने के बाद भारतीयों की एक सौ पचास सम्पत्तियाँ गैर–भारतीयों को बेच दी गयीं, जबकि उन भारतीयों, जो भूमि खरीदने के इच्छुक थे, में से कुछ को ऐसा करने की अनुमति नहीं दी गयी

तारांकित प्रश्न संख्या 848, दिनांक 26 फरवरी 1936

यद्यपि ऐसे भारतीयों की संख्या साठ से अधिक नहीं थी?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – (क) से (च) तक : भारत सरकार को बम्बई के "इम्पीरियल इण्डियन सिटिजनशिप एसोसियेशन" से इस आशय के पत्र प्राप्त हुए हैं ।

श्री टी०एस० अविनाशलिंगम चेट्टियार – इन पत्रों पर उसने क्या कार्यवाही की?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी—हमने वहाँ की सरकार को पत्र लिखा है ।

श्री टी०एस० अविनाशलिंगम् चेट्टियार – इस विषय की क्या उन्होंने जाँच की?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – हाँ, वे तथ्यों की जाँच कर रहे हैं ।

जंजीबार में लौंग के निर्यात में कमी आने के कारण आर्थिक खतरे

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार को विदित है कि भूस्वामित्व हस्तान्तरण से सम्बन्धित तथा दूसरे अन्य आदेशों ने जंजीबार में जनजीवन और सामान्य आर्थिक स्थिति को अस्त-व्यस्त करके उनके सामने खतरा पैदा कर दिया है?

(ख) क्या यह सच है कि गत एक अगस्त को जंजीबार में लौंग का अनबिका भण्डार अधिकतम था जो एक वर्ष पूर्व की अपेक्षा लगभग दो गुना था?

(ग) क्या यह सच है कि इन आदेशों के जारी करने के बाद के एक वर्ष में जंजीबार से हुआ लौंग का निर्यात उन्हें जारी होने से पूर्व के वर्ष की अपेक्षा मात्रा में लगभग एक तिहाई कम था, जब कि इसी अवधि के मेडागास्कर से हुए निर्यात के तुलनात्मक आंकड़े, काफी बढ़ोत्तरी दिखाते हैं?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – (क) सरकार को इस आशय के पत्र मिले हैं ।

(ख) एवं (ग) बम्बई की इम्पीरियल इंडियन सिटिजेनशिप ऐसोसियेशन, जिसका जिक्र मैं पहले ही कर चुका हूँ, ने अपने पत्र में हमें ऐसा लिखा है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार ने इस तथ्य की ओर जंजीबार की सरकार का ध्यान आकर्षित किया है कि उसका अपनी वर्तमान नीतियों को जारी रखना, स्वयं उसके अपने हितों की दृष्टि से भी आत्मघाती होगा?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – मेरे माननीय मित्र अपनी राय व्यक्त कर रहे हैं, और निःसंदेह इसे सदन के अनेक माननीय सदस्यों की भी ऐसी ही राय है । किन्तु हम जंजीबार की सरकार से पत्राचार नहीं करते, बल्कि सम्राट की सरकार से करते हैं ।

●

तारांकित प्रश्न संख्या 849, दिनांक 26 फरवरी 1936

जंजीबार के भारतीयों को राहत

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) जंजीबार में बसे दुर्भाग्यशाली भारतीयों को राहत दिलाने के लिए भारत सरकार ने कौन से कदम उठाये है?

(ख) निजी मामलों में राहत देने के अपने आश्वासन के अनुसार जंजीबार की सरकार द्वारा उठाये गये कदमों संबंधी प्रतिवेदन सरकार क्या पटल पर रखेगी?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – (क) भूस्वामित्व के हस्तान्तरण सम्बन्धी आदेश तथा भारतीयों की लेनदारी वाले वर्तमान कर्जों से सम्बन्धित समस्याओं पर पत्र लिखे गये हैं । आशा की जाती है कि लौंग कानून के मामले में शीघ्र ही और पत्र भी लिखे जायेंगे ।

(ख) सरकार ने पूछ–ताछ की है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या घोर कष्ट के निजी मामलों की ओर भारत सरकार ने जंजीबार की सरकार का ध्यान आकर्षित किया है?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – घोर कष्ट के निजी मामलों में कष्टनिवारण के आश्वासन को क्रियान्वित करने का आग्रह हमने सम्राट की सरकार से किया है । श्री तैयब अली जब यहाँ आये हुए थे, तब उनके परामर्श से हमने इन मामलों की छानबीन भी की थी । जंजीबार से हमने कुछ विवरण और मांगे हैं, उनके मिल जाने पर हम सम्राट की सरकार को पुनः लिखेंगे ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इन प्रतिवेदनों का क्या कोई उत्तर मिला?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – हम समझते हैं कि सम्राट की सरकार (ब्रिटेन) ने जंजीबार के रेजीडेन्ट को पत्र लिखा है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – सम्राट की सरकार (ब्रिटेन) ने अब तक इस सरकार को क्या कोई उत्तर नहीं दिया?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – जहाँ तक निजी कष्टों का प्रश्न है, सम्राट की सरकार ने अब तक कोई उत्तर इस सरकार को नहीं दिया है ।



तारांकित प्रश्न संख्या 850, दिनांक 26 फरवरी 1936

अधिस्थगन की अवधि में वृद्धि और भूस्वामित्व का हस्तान्तरण डिक्री में संशोधन

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या इस रिपोर्ट में कोई तथ्य है कि जंजीबार की सरकार अधिस्थगन (मोरेटोरियम) की अवधि अगली जुलाई तक बढ़ा देने का इरादा रखती है?

(ख) 'कर्जदारी आयोग' (इण्डेटेनेस कमीशन) की सिफारिशों को स्वीकार कर लेने की वांछनीयता पर क्या सरकार ने जंजीबार की सरकार पर कोई प्रभाव डाला है?

(ग) क्या जंजीबार की सरकार ने, जैसा कि उसने वचन दिया था, भूस्वामित्व आदेश को इस प्रकार संशोधित कर दिया कि कम से कम उसके स्वरूप से द्वेषकारी जातीय भेदभाव के लक्षण समाप्त हो गये हों?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – (क) भूस्वामित्व (प्रतिबन्ध एवं प्रमाण) आदेश की धारा 19 का क्रियान्वयन, 1935 के आदेश संख्या 10 द्वारा, 31 जुलाई, 1936 तक बढ़ा दिया गया है ।

(ख) एवं (ग) मैं माननीय सदस्य को उनके प्रश्न संख्या 850 भाग (क) के मेरे उत्तर के प्रथम भाग का हवाला देना चाहूँगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि जंजीबार के भारतीयों ने अधिस्थगन की अवधि बढ़ाने पर असंतोष व्यक्त किया है और यह उनकी घोर दुर्दशा और हानि का कारण रहा है?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – जहाँ तक दुर्दशा का प्रश्न है, मेरे विचार से यह बात निर्विवाद है कि अपने कर्जों को वसूल कर पाने में असमर्थ हो जाने के कारण किसी सीमा तक उनकी दुर्दशा हुई है । किन्तु पिछले दिसम्बर में हमसे मिलने आये प्रतिनिधि मंडल से हमने इस मामले पर विचार-विमर्श किया था । उन्होंने यह तो नहीं कहा कि अधिस्थगन से आमतौर पर भारतीय सन्तुष्ट हो गये हैं लेकिन प्रतिनिधि मंडल के अनुसार भारतीयों को बहुत प्रसन्नता होगी यदि कर्जदारी का प्रश्न, बढ़ी अवधि समाप्त होने के पूर्व ही निपटा दिया गया ।

तारांकित प्रश्न संख्या 851, दिनांक 26 फरवरी 1936

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – कर्जदारी आयोग की अध्यक्षता क्या जंजीबार के प्रधान न्यायाधीश द्वारा की गयी और क्या इसमें जंजीबार निवासी एक अफ्रीकी को भी सम्मिलित किया गया?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – जहां तक मुझे याद है इस आयोग में जंजीबार के प्रधान न्यायाधीश अध्यक्ष थे, एक सदस्य भारतीय और एक सदस्य अफ्रीकी था और एक प्रशासनिक अधिकारी था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या उसकी रिपोर्ट सर्वसम्मत थी?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – रिपोर्ट तो सर्वसम्मत थी, किन्तु कुछ अतिरिक्त सिफारिशें भी थीं जिन्हें रिपोर्ट के साथ प्रकाशित नहीं किया गया था और वह सर्वसम्मत नहीं थी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या आयोग सर्वसम्मति से इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि भारतीयों के विरुद्ध लगाये गये "जालबट्टे" के सारे लांछन पूरी तरह निराधार हैं ।

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – मेरी याददाश्त के अनुसार रिपोर्ट यह है कि आयोग ने जालबट्टे के आरोपों की उतनी जांच-पड़ताल नहीं की जितनी इस आरोप की कि भारतीयों ने जंजीबार में बड़ी संख्या में लौंग के वृक्ष और अपने अनुपात से अधिक भूभाग प्राप्त कर लिये हैं । यह एकदम सच है कि आयोग इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यह आरोप उचित नहीं है ।

●

भारतीय कपड़ा उद्योग सम्बन्धी टैरिफ बोर्ड की रिपोर्ट ट्रांसवाल भूमि व्यवस्था संशोधन विधेयक

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार ट्रान्सवाल भूमि व्यवस्था विधेयक 1936 की एक प्रतिलिपि सदन के पटल पर रखने की कृपा करेगी?

(ख) क्या सरकार ने इस विषय में ट्रान्सवाल की सरकार से कोई अभ्यावेदन किया है? यदि हाँ, तो क्या उसकी एक प्रतिलिपि वह पटल पर रखेगी?

(ग) गत वर्ष कितने व्यक्तियों के विरुद्ध ट्रान्सवाल में लाइसेन्स ऐक्ट आर्डिनेन्स लागू किया गया और उनमें से कितने व्यक्ति भारतीय थे?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – (क) ट्रान्सवाल एशियाटिक भूमि व्यवस्था (लैण्ड टेन्योर) संशोधन विधेयक, 1936 की एक प्रतिलिपि सदन की लाइब्रेरी में रख दी गयी है ।

(ख) "यूनियन आफ साउथ अफ्रीका" में भारत के एजेन्ट जनरल को निर्देश दिये गये हैं कि उसे संघीय सरकार से इस विषय में क्या अभ्यावेदन करने हैं । खेद है कि सरकार निर्देशों की प्रति सदन के पटल पर रखने में असमर्थ है ।

(ग) माननीय सदस्य सम्भवतः ट्रान्सवाल में रहने वाले भारतीयों को लाइसेन्स न दिये जाने की कथित घटना का हवाला दे रहे हैं । जैसा कि श्री मुथुरंगा मुदलियार के प्रश्न संख्या 341 के उत्तर में सदन को 12 फरवरी को बता चुका हूँ, अफ्रीका में एजेन्ट जनरल से इस बारे में रिपोर्ट मांगी गयी है ।

●

तारांकित प्रश्न संख्या 852, दिनांक 27 फरवरी, 1936

मलाया के भारतीयों में पुरुषों से महिलाएँ कम

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या यह सच है कि मलाया संघ राज्यों में पुरुषों की अपेक्षा भारतीय स्त्रियों का अनुपात बहुत कम है? क्या वहाँ से घरेलू झगड़ों की अनेक शिकायतें प्राप्त हुई हैं कि इसी कारण वहाँ किसी हद तक नैतिक, जो इस बात का संकेत है, शैथिल्य है?

(ख) मलाया क्या अब तक भारतीय पंजीकरण नियम (इन्डियन रजिस्ट्रेशन रूल) के नियम 23 से मुक्त रखा गया है?

(ग) मुक्ति की अवधि क्या वर्ष 1935 के अन्त में समाप्त होने वाली है?

(घ) क्या सरकार इस मुक्ति को समाप्त करके मलाया में भी उक्त नियम लागू करने जा रही है?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – (क) मलाया में रहने वाले भारतीयों में वर्ष 1934 में लिंग का अनुपात मोटे तौर पर 2.14 पुरुषों के मुकाबले एक स्त्री का था । उस वर्ष श्रम कार्यालयों द्वारा घरेलू झगड़ों और पारिवारिक अलगावों के सात सौ पैंतिस मामले निपटाए गए ।

(ख) एवं (ग) हाँ । यह अवधि 31 जनवरी, 1936 तक बढ़ा दी गयी थी ।

(घ) मामला विचाराधीन है ।

●

तारांकित प्रश्न संख्या 853, दिनांक 27 फरवरी, 1936

केन्या में भारतीयों की संख्या में कमी

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि पिछले पांच वर्षों में केन्या में भारतीयों की संख्या बहुत ही कम हो गयी है?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – वर्ष 1930 के अन्त में केन्या में भारतीयों की संख्या अनुमानतः 39,594 थी और 1934 के अन्त में 34,955 ।



तारांकित प्रश्न संख्या 854, दिनांक 27 फरवरी, 1936

भारतीयों द्वारा फिजी में चुनाव कराये जाने की मांग

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या भारतीयों द्वारा चुनाव कराये जाने की मांग के बारे में हाल ही में सरकार ने कोई अभ्यावेदन किया है, जिसके विरुद्ध फिजी की सरकार कथित रूप से सक्रिय प्रचार कर रही है?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – माननीय सदस्य सम्भवत: फिजी विधान परिषद के लिए नामांकनों के स्थान पर प्रस्तावित चुनाव की मांग का जिक्र कर रहे हैं । श्री श्री सत्यमूर्ति के 6 फरवरी, 1936 के तारांकित प्रश्न संख्या 100 के भाग (ग) के जवाब में दिये गये उत्तर की ओर उनका ध्यान आकृष्ट किया जाता है ।



तारांकित प्रश्न संख्या 855, दिनांक 27 फरवरी, 1936

विदेशों में बसे भारतीयों के हितार्थ एक अलग समुद्रपारीय विभाग हो

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या यह सच है कि विदेशों में बसे भारतीयों की कठिनाइयाँ और असमर्थताएँ कई देशों में लगातार बढ़ती जा रही हैं?

(ख) विदेशों में बसे भारतीयों के हितों की देखरेख के लिए एक अलग समुद्रपारीय विभाग की स्थापना करने के सम्बन्ध में सरकार ने क्या कोई निर्णय किया है ।

(ग) हाल के घटनाक्रम को देखते हुए, सरकार ऐसे विभाग की अविलम्ब स्थापना के लिए क्या सरकार तैयार है?

सर गिरिजा शंकर बाजपेयी – (क) जंजीबार और केन्या में हुई घटनाओं के अलावा, जिन्हें माननीय सदस्य जानते हैं, माननीय सदस्य द्वारा इंगित किन्हीं घटनाओं से सरकार अवगत नहीं है ।

(ख) एवं (ग) माननीय सदस्य का ध्यान 25 फरवरी, 1936 को पूछे गये श्री अखिल चन्द्र दत्ता के प्रश्न सं० 797 के भागों (ख, ग) और (घ) के मेरे द्वारा दिये गये उत्तरों की ओर आकर्षित किया जाता है ।



तारांकित प्रश्न संख्या 856, दिनांक 27 फरवरी, 1936

आई०सी०एस० परीक्षा के नियमों में संशोधन

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) भारत में होने जा रही इंडियन सिविल सर्विस की प्रतियोगितात्मक परीक्षा के नियमों और इसी सेवा के लिए चुने गये अभ्यर्थियों की "यूनाइटेड किंगडम" में परिवीक्षा (प्रोबेशन) के विनियमों में क्या "सेक्रेटरी आफ–स्टेट–इन–काउन्सिल" ने हाल ही में संशोधन कर दिये हैं?

(ख) संशोधन की एक प्रतिलिपि सरकार क्या पटल पर रखेगी?

(ग) ये संशोधन क्या "गवर्नर–जनरल–इन–काउन्सिल" को यह अधिकार देते हैं कि प्रतियोगितात्मक परीक्षा के परिणाम के बाद नियुक्ति के लिए चुन लिए जाने के बाद भी किसी अभ्यर्थी को अयोग्य घोषित कर दें?

(घ) क्या ये संशोधन तत्काल प्रभावी हो जायेंगे?

(ड) ये संशोधन करने आवश्यक क्यों समझे गये और इसमें शीघ्रता की आवश्यकता क्या थी?

सर हेनरी क्रेक – (क) हाँ ।

(ख) माननीय सदस्य का ध्यान मैं गृह विभाग की अधिसूचना संख्या एफ 75/35-ई०एस०टी०एस० दिनांक 5 दिसम्बर, 1935 की ओर आकर्षित करना चाहूँगा ।

(ग) भारत में आयोजित इस परीक्षा के नियम 24 में किये गये संशोधन के अन्तर्गत परिवीक्षावधि (प्रोबेशन) प्रारम्भ होने के पूर्व किसी अभ्यर्थी को गवर्नर-जनरल-इन काउन्सिल द्वारा अयोग्य घोषित किया जा सकता है ।

(घ) हाँ ।

(ड) उन अभ्यर्थियों, जिनके चुन लिये जाने के बाद उनकी योग्यता असंतोषजनक पायी जाय, को इण्डियन सिविल सर्विस में नियुक्त होने से रोकने के लिए ये संशोधन सेक्रेटरी आफ स्टेट इन काउन्सिल द्वारा किये गये हैं ।

श्री लालचंद नवलराय – (ग) के सम्बन्ध में माननीय सदस्य क्या यह बताने की कृपा करेंगे कि किसी अभ्यर्थी को अयोग्य घोषित करना उनके विवेकाधीन है या किन्हीं आधारों पर ही उसे अयोग्य ठहराया जा सकेगा?

सर हेनरी क्रेक – जब तक किसी निश्चित अयोग्यता की मौजूदगी न पायी गयी हो तब तक उसे अयोग्य नहीं ठहराया जा सकेगा ।

तारांकित प्रश्न संख्या 908, दिनांक 27 फरवरी, 1936

श्री लालचंद नवलराय – उसके, इन प्रतियोगितात्मक परीक्षा में सफलता प्राप्त कर लिये जाने के बाद, कौन से ऐसे कारण हो सकते हैं? ।

सर हेनरी क्रेक – सरकार की जानकारी में बाद में भी कुछ तथ्य आ सकता है। उदाहरणार्थ, एक मामले में मुझे याद है कि एक अभ्यर्थी ने जिसे सफल घोषित किया जा चुका था, जानबूझकर अपनी आयु गलत अंकित की थी और यह पाया गया कि वास्तव में उसकी आयु निर्धारित अधिकतम आयुसीमा से अधिक थी। उसने एक फर्जी दस्तावेज पेश किया था और इसे ही, उसे अयोग्य ठहराने का पर्याप्त कारण समझा गया।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – ये नियम क्या भारत में भर्ती हुए भारतीयों पर ही लागू होते हैं, न कि इंग्लैंड में भर्ती हुए यूरोपीय अथवा ब्रिटिश अभ्यर्थियों पर?

सर हेनरी क्रेक – ये नियम विशेष भारत में हुई प्रतियोगितात्मक परीक्षाओं से सम्बन्धित हैं। जहाँ तक मुझे याद आता है, इसके समतुल्य नियम भी हैं जो इंग्लैंड में हुई परीक्षाओं पर लागू होते हैं, जिनके अन्तर्गत अयोग्य ठहराने का अधिकार गवर्नर–जनरल–इन–काउन्सिल के बजाय सिविल सर्विस कमिश्नरों को होता है।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – ये समतुल्य नियम हाल ही में बनाये गये हैं अथवा वे पहले से ही बने थे?

सर हेनरी क्रेक – मूल नियम तो बहुत पहले से चले आ रहे हैं। किन्तु प्रश्नगत संशोधन गत दिसम्बर माह में ही हुए हैं।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या 'यूनाईटेड किंगडम' में भर्ती हुए ब्रिटिश अभ्यर्थियों को प्रभावित करने वाले कोई संशोधन हाल में किये गये हैं?

सर हेनरी क्रेक – इसके लिए मैं नोटिस दिये जाने की माँग करता हूँ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त—क्या यह सच है कि प्रतियोगितात्मक परीक्षा में प्रवेश की अनुमति देने के पूर्व अभ्यर्थियों से अनेक प्रमाण–पत्र लिये जाते हैं और अत्यंत सावधानी से छानबीन करायी जाती है?

सर हेनरी क्रेक – क्या भारत में?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – हाँ।

सर हेनरी क्रेक – नियमावली मेरे पास मौजूद है। इसे पढ़ने में मुझे थोड़ा समय लगेगा। अभ्यर्थियों को लोक सेवा आयोग को सन्तुष्ट करना होता है कि उसका चरित्र ऐसा है कि वह 'इंडियन सिविल सर्विस' के योग्य हैं और इसके लिए बेशक उसे कुछ प्रमाण–पत्र प्रस्तुत करने होते हैं।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – अयोग्य ठहराये जाने से पूर्व क्या इन व्यक्तियों को लोक सेवा आयोग से अपने मामलों की छानबीन कराये जाने का अवसर दिया जायगा?

सर हेनरी क्रेक – ऐसा ही किया जाता है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या उनके विरुद्ध आरोप पत्र तैयार करके उनसे उचित स्पष्टीकरण माँगा जायगा?

सर हेनरी क्रेक – ऐसा तो मैं निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि औपचारिक आरोप लगाये जाते हैं मगर प्रत्येक मामले में पूरी तरह जाँच पड़ताल की जाती है और अभ्यर्थी को आरोपों का खण्डन करने की पूरी छूट है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या ग्रेट ब्रिटेन में 'इम्पीरियल सर्विसिज' की भर्ती लागू होने वाले ऐसे समतुल्य नियम हैं, जो सेक्रेटरी आफ स्टेट को यह अधिकार देते हों कि किसी परिवीक्षणाधीन व्यक्ति (प्रोबेशनर) को इस सेवा की परीक्षा में सफल हो जाने और उसे इस कैडर में शामिल कर लिये जाने के बाद वह उसे सेवा से निष्कासित कर सके?

सर हेनरी क्रेक – मेरे ख्याल से ऐसा है, किन्तु मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या माननीय सदस्य मेरे इस वक्तव्य का खंडन करेंगे कि "यूनाइटेड किंगडम" में 'इम्पीरियल सर्विसिज' की भर्ती पर लागू होने वाले ऐसे कोई नियम नहीं हैं?

सर हेनरी क्रेक – माननीय सदस्य किन 'सर्विसिज' की बात कर रहे हैं?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इण्डियन सिविल सर्विस और इण्डियन पुलिस सर्विस ।

सर हेनरी क्रेक – निश्चित रूप से । मान्यवर, यदि ऐसे तथ्य प्रकाश में आ जाते हैं जो किसी व्यक्ति को सेवा का उपयोगी सदस्य होने के अयोग्य ठहराते हों तो चाहे वह प्रोबेशन के रूप में स्वीकृत भी हो गया हो, सेक्रेटरी आफ स्टेट उसे नौकरी से निकाल सकते हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या अब तक अब कोई भी अभ्यर्थी निकाला गया है?

सर हेनरी क्रेक – हाँ, मेरी जानकारी के अनुसार कई अंग्रेज और भारतीय दोनों ही ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पंत– 'हाउस आफ कामन्स' में इस आशय का प्रस्ताव स्वीकार हो जाने के बाद कि बराबर के अनुपात को अब पूरी कड़ाई से लागू किया जायगा, आई०सी०एस० और अन्य अखिल भारतीय सेवाओं में हाल में ही शुरू हुई भारतीयों की भर्ती का जहाँ तक सम्बन्ध है, क्या इन दिनों इंग्लैन्ड में नियमों को कठोर बनाने

की प्रवृत्ति नहीं है?

सर हेनरी क्रेक – "नियमों को कठोर बनाने की प्रवृत्ति" से माननीय सदस्य का क्या आशय है, उसे मैं ठीक से समझ नहीं सका ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मेरा आशय वही है जो शब्दों से प्रकट होता है – जिससे कि वह भारतीयों के लिए और कठिन तथा साम्राज्यीय हितों की दृष्टि से अधिक उपयोगी बनाया जा सके ।

सर हेनरी क्रेक – जहां तक मेरी जानकारी है, इंग्लैंड में परीक्षा के माध्यम से भारतीयों की आई०सी०एस० में भर्ती पात्रता के नियमों में हाल में किसी प्रकार का भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ है ।



इटली पर लगे प्रतिबन्धों का भारतीय निर्यात व्यापार पर प्रभाव

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) इटली के विरुद्ध प्रतिबन्ध लगाये जाने का क्या प्रभाव रहा है? इस देश के व्यापार पर इसका क्या प्रभाव हुआ?

(ख) इटली को निर्यात होने वाली वस्तुओं के अन्यत्र कहीं निर्यात की सरकार ने कोई चेष्टा की है?

(ग) इटली को होने वाले वार्षिक निर्यात का मूल्य क्या था और ऐसी वस्तुओं के उत्पादकों और निर्यातकों की सरकार क्या सहायता करने जा रही है?

सर औब्रे मेटकाफ – (क) इटली पर प्रतिबन्धों के लगाये जाने का सामान्य प्रभाव क्या रहा है, यह बता पाने की स्थिति में भारत सरकार नहीं है । जहाँ तक भारत का प्रश्न है, भारतीय व्यापार पर इन प्रतिबन्धों का क्या प्रभाव पड़ा है, उसका निर्धारण करना अभी जल्दबाजी होगी । (ख) एवं (ग) प्रतिबंधों का सामान्य प्रभाव क्या हुआ है, भारत सरकार इसका इस दृष्टिकोण से अध्ययन कर रही है कि यदि इटली को होने वाले निर्यातित माल को अन्य देशों में बाजार नहीं मिलता तो क्या कार्यवाही की जानी चाहिए । जहाँ तक भारत से इटली को होने वाले वार्षिक निर्यात के मूल्य का प्रश्न है, माननीय सदस्य को "ब्रिटिश भारत के नौगमन और समुद्र के रास्ते होने वाले व्यापार" (सी बर्न ट्रेड एण्ड नेवीगेशन आफ ब्रिटिश इण्डिया) से संबंधित वार्षिक प्रतिवेदन तथा समुद्र मार्ग से होने वाले ब्रिटिश भारत के व्यापार के हिसाब (सी बर्न ट्रेड एकाउन्ट्स आफ ब्रिटिश इण्डिया) से संबंधित मासिक प्रतिवेदन देखना चाहिए, जिनकी प्रतिलिपियाँ सदन के पुस्तकालय में मौजूद हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि व्यापार का संतुलन जो कई करोड़ रुपयों से हमेशा भारत के ही पक्ष में रहा है?

माननीय सर मुहम्मद जफरुल्ला खाँ – हाँ, मैं यह तो नहीं जानता कि इससे कई करोड़ रुपयों का व्यापार भारत के पक्ष में रहता था, कहा जा सकता है या नहीं, लेकिन रहता आया है यह भारत के ही पक्ष में ।

तारांकित प्रश्न संख्या 910 दिनांक 27 फरवरी, 1936

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच नहीं है कि इटली को निर्यात पर लगे प्रतिबन्धों के फलस्वरूप उन वस्तुओं का उत्पादन करने वालों के लिए बाजार संकुचित हो गया है ।

माननीय सर मुहम्मद जफरुल्ला खाँ – निश्चित रूप से ऐसा हुआ है । यह बताने की तो जरूरत भी नहीं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – भारत के लिए बन्द बाजारों के विकल्प में सरकार क्या दूसरे बाजारों की तलाश नहीं कर रही है?

सर औब्रे मेटकाफ – मान्यवर, जैसा कि मैंने पहले ही कहा है, इटली के साथ होने वाले निर्यात व्यापार का स्थान अन्य देशों को होने वाले निर्यात व्यापार द्वारा न लिये जाने पर, क्या कार्यवाहियाँ यदि कोई ली जानी हों, की जानी चाहिए, इस पर वह विचार कर रही है । प्रभाव क्या होगा, यह कहना अभी जल्दबाजी होगी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इस प्रतिबन्ध से इटली को हो रहा हमारा निर्यात व्यापार प्रभावित हुआ है, इसमें भी सरकार को क्या कोई संदेह है?

सर औब्रे मेटकाफ – मैंने 'प्रभावित' नहीं कहा । मेरा कहना था कि यदि 'इटली के साथ होने वाले निर्यात व्यापार के बदले अन्य देशों के साथ व्यापार नहीं बढ़ता ।'

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या एक दो वर्ष बीत जाने पर, संकलित सूचनाएँ देखने के बाद ही सरकार इस मामले पर विचार करेगी?

श्री बी० दास – क्या मैं विदेश सचिव अथवा माननीय वित्त सदस्य से पूछ सकता हूँ कि जबकि इटली को निर्यात बन्द है, दूसरे देशों को हो रहे निर्यात को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार के पास क्या तरीके अथवा योजनाएं हैं?

माननीय सर जेम्स ग्रिग – यह बहस का विषय है ।

श्री सामी वेंकटाचलम चेट्टी – क्या यह सच नहीं है कि 'लीग आफ नेशन्स' के किसी समझौते के अन्तर्गत इटली के साथ व्यापार बन्द करने वाले अन्य देशों को मुआवजा मिल रहा है?

सर औब्रे मेटकाफ – नहीं, इस समय तो नहीं मिल रहा है ।

●

वित्त विभाग में अधिकारियों का प्रशिक्षण

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या नया संविधान लागू होने के बाद प्रान्तों के वित्तीय विभागों में नियुक्ति हेतु सरकार ने कुछ अधिकारियों को प्रशिक्षण के लिए चुना है?

(ख) उनकी संख्या क्या है?

(ग) उनमें से कितने भारतीय हैं और कितने इण्डियन सिविल सर्विसेज के ?

माननीय सर जेम्स ग्रिग – (क) नहीं, किन्तु हमारे सुझाव पर प्रान्तीय सरकारों ने उनके चुनाव किये हैं?

(ख) और (ग) दस, जिनमें से छः भारतीय हैं और दस में से नौ इण्डियन सिविल सर्विस के अधिकारी हैं ।

श्री टी०एस० अविनाशलिंगम चेट्टियार – छः भारतीयों में से तीन क्या पहले से ही वित्तीय सेवा में नहीं थे?

माननीय सर जेम्स ग्रिग – इस बारे में मैं कुछ नहीं जानता । हमने प्रान्तीय सरकारों को सुझाव दिया था कि वे कुछ अधिकारियों को वित्त विभाग के कार्यों में प्रशिक्षित करवा सकती है । उन्होंने दस का चुनाव किया जिनमें से छः भारतीय हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – यह पूछते हुए मैं कोई आक्षेप नहीं कर रहा कि भारत सरकार के वित्त विभाग ने इस आशय का कोई सुझाव दिया था कि यदि वे इण्डियन सिविल सर्विस के अधिकारियों को प्राथमिकता दे सकें तो ज्यादा अच्छा रहेगा?

माननीय सर जेम्स ग्रिग – मुझे पता नहीं । इसके लिए मैं नोटिस चाहूँगा । मुझे यदि थोड़ी सूचना और देने की अनुमति हो तो मैं कहना चाहूँगा कि कांग्रेस पार्टी के कुछ पत्रों ने यह अनुमान लगाया था कि हमने स्वयं ही चालीस अधिकारियों का चुनाव कर लिया है जिनमें से केवल दो भारतीय हैं । अगले दिन ही इसका खण्डन दिया गया था किन्तु उन्हीं में से कुछ पत्र पहली कहानी को ही लगातार दुहराये चले जा रहे हैं ।

तारांकित प्रश्न संख्या 911, दिनांक 27 फरवरी, 1936

श्री टी०एस० अविनाशलिंगम चेट्टियार – क्यों इतने अधिक यूरोपियन चुने गये और भारतीय केवल छः?

माननीय सर जेम्स ग्रिग – माननीय सदस्य अत्यन्त दुर्भावनापूर्वक वही आक्षेप दुहरा रहे हैं जो कांग्रेस पार्टी के पत्रों द्वारा लगाया गया था । मैंने कहा कि दस व्यक्ति चुने गये, जिनमें से छः भारतीय थे । इसका अर्थ यह है कि यूरोपियन केवल चार चुने गये ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या माननीय सदस्य द्वारा दुर्भावना का आरोप लगाया जाना उचित है?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – माननीय सदस्य कृपया उस शब्द को वापस लें ।

माननीय सर जेम्स ग्रिग – मैं शब्द 'दुर्भावनापूर्वक' को वापस लेता हूँ ।

●

भारतीय परिसीमन समिति की रिपोर्ट पर असेम्बली कमेटी की रिपोर्ट

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या सरकार ने इस सदन द्वारा भारतीय परिसीमन समिति की रिपोर्ट पर विचारार्थ बनायी गयी समिति की रिपोर्ट के पैरा 13 पर विचार किया है?

(ख) क्या सरकार को ज्ञात है कि असेम्बली कमेटी की उपरोक्त सिफारिशें, जो कि इस सदन द्वारा स्वयं स्वीकृत तथा संपुष्ट की जा चुकी हैं, भारतीय मताधिकार समिति के इस विषय पर प्रस्तावों से पूरी तरह मेल खाती है?

(ग) क्या सरकार ने इस संबंध में कोई निर्णय लिया है? यदि हाँ तो क्या?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – (क) सरकार के समक्ष संदर्भित रिपोर्ट है और इस पर सामान्य प्रक्रिया के अन्तर्गत विचार किया जायेगा, जैसा कि खंड (ग) के उत्तर में स्पष्ट किया गया है ।

(ख) हाँ

(ग) यह ऐसा विषय है जो कौंसिल के चुनाव सम्बन्धी आदेशों में नहीं शामिल है । इसलिए यह पहली बार के चुनाव के सिलसिले में गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट की पाँचवीं अनुसूची के पैरा 20 के अन्तर्गत गवर्नर द्वारा निर्मित नियमों से विनियमित होगा और उसके बाद प्रान्तीय विधान सभाओं के अधिकार क्षेत्र में आ जायेगा । गवर्नर द्वारा निर्मित नियमों का उल्लिखित मसौदा प्रान्तों से प्राप्त हो जायेगा तब सरकार द्वारा एसेम्बली कमेटी की सिफारिश पर विचार किया जायेगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार इसे ध्यान में रखने का कष्ट करेगी कि जहाँ तक केन्द्रीय विधान मंडल के लिए निचले सदन के चुनावों का प्रश्न है, प्रांतीय कौंसिल भी इसके मतदाता समूह (इलेक्टोरल कालेज) की भूमिका निभायेगी और मतदान का यह ढंग केन्द्रीय विधायिका के निचले सदन के गठन को प्रभावित करेगी?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – हाँ, मान्यवर, सरकार इस बात को ध्यान में रखेगी?

---

22 अप्रैल 1936 को पूछा गया तारांकित प्रश्न

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार को इस तथ्य की जानकारी है कि असेम्बली कमेटी ने अपना मत प्रकट किया कि हैमण्ड समिति द्वारा सुझायी गयी प्रक्रिया गोपनीयता और 'मत-स्वातन्त्र्य' दोनों के ही लिए घातक है?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – हाँ श्रीमान् ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार यह ध्यान रखने का कष्ट करेगी कि यदि हैमण्ड समिति द्वारा सुझाये गये तरीकों को अपनाया गया, तो इससे निरक्षर मतदाताओं की स्थिति वर्तमान स्थिति से भी अधिक कष्टप्रद हो जायेगी?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – यह एक ऐसा पहलू है जिस पर निश्चितरूप से विचार किया जायेगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार इस संबंध में बनाये गये नियमों पर विचार करेगी और इन्हें अंतिम रूप से स्वीकार करने से पहले अपने निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण संबंधी अधिकार का उपयोग करेगी?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – यह लगभग परिकल्पनात्मक बात है, क्योंकि गवर्नर जनरल इन कौंसिल प्रस्तावित नियमों के मसौदे पर विचार करने के बाद इस पर हस्तक्षेप करना उचित समझती है या नहीं, इस संबंध में मेरे द्वारा इस सदन में कोई संकेत देना असामयिक होगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार यह ध्यान में रखेगी कि यह अत्यंत आवश्यक और लगभग मूलभूत महत्व का प्रश्न है और प्रान्तों तथा कुछ सीमा तक केन्द्र में भी सदन का प्रतिनिधिमूलक स्वरूप इस बात पर निर्भर होगा कि प्रान्तीय कौंसिल के मतदाता कितनी आजादी के साथ अपने प्रतिनिधि का चयन करते हैं?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – इस मत के गुण दोष पर कोई राय न प्रकट करके ... अपने माननीय मित्र को यह आश्वासन देना चाहता हूँ कि मैं सहमत हूँ कि यह विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार को इस तथ्य की जानकारी है कि संयुक्त प्रान्त में कोई बहुसदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र नहीं है और दलित वर्गों को छोड़कर कोई भी ऐसा निर्वाचन क्षेत्र नहीं है जो प्रांतीय लेजिस्लेचर कौंसिल के लिए एक से अधिक सदस्य चुने?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मैं अपने माननीय मित्र की यह बात स्वीकार करने को तैयार हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार यह विचार करने का कष्ट करेगी कि जिन प्रांतों में बहुसदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र हैं उनकी अपेक्षा जहाँ अधिकतर एक

सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र हैं रंगीन बक्सों द्वारा चुनाव कराना अधिक सुगम हैं?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – इन प्रश्नों से जो बातें सामने आयी हैं, उन्हें ध्यान में रखा जायेगा । वे रिकार्ड में सम्मिलित हो गयी हैं और उन पर विचार होगा ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या सरकार सभी प्रांतों में गुप्त मतदान की सुरक्षा को सर्वोपरि आवश्यकता मानती है? क्या माननीय सदस्य द्वारा सुझाये गये उपायों के अतिरिक्त वे कुछ अन्य उपायों पर भी विचार कर रहे हैं, ताकि इन सभी चुनावों में मतों की गोपनीयता सुरक्षित की जा सके?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – उत्तर नहीं में हैं, इन अर्थों में कि अभी इस पर वे विचार नहीं कर रहे हैं । लेकिन वे प्रश्नों और पूरक प्रश्नों में आज सुझाये गये विषयों सहित सभी प्रासंगिक विषयों पर सही समय पर विचार करेंगे । सही समय से मेरा तात्पर्य है जब हमें नियमों का मसौदा मिल जायेगा ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – इन सारे विषयों पर सही समय पर विचार करने के बाद क्या सरकार इस बात की गारंटी देगी कि वे जिन भी परिणामों तक पहुँचेंगे वे मतों की पूरी गोपनीयता, विशेषकर निरक्षर मतदाताओं के, को बनाये रखने की दिशा में होगी?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – नहीं समझता कि इस मामले में किसी प्रकार का विवाद है क्योंकि यह वह लक्ष्य है जिसकी सुरक्षा की जानी है । इसे कैसे प्राप्त किया जाय, इस बारे में अलग–अलग मत हो सकते हैं, लेकिन विषय के महत्व तथा गोपनीयता को बरकरार रखने की जरूरत के बारे में, दो राय नहीं हो सकती ।

श्री एस० सत्यमूर्ति – क्या सरकार ने हैमंड समिति की सिफारिश पर विचार किया है जिसके अनुसार निरक्षर मतदाता को अपना मतपत्र उम्मीदवार के प्रतिनिधि को दिखाने की छूट होगी और क्या यह मतपत्र की गोपनीयता बनाये रखने के प्रयास को क्षति नहीं पहुँचायेगी?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – जैसा कि मैंने अपने माननीय मित्र को बार–बार आश्वासन दिया है कि हैमंड समिति मताधिकार समिति, असेम्बली का प्रस्ताव और अन्य सभी जरूरी बातों पर सही समय पर विचार किया जायगा । किसी भी विचार के गुण दोष पर कोई राय व्यक्त नहीं की जा रही है ।

श्री बी० दास – क्या सरकार इस तथ्य पर विचार करेगी कि उड़ीसा के राज्यपाल द्वारा चार सदस्यों के मनोनयन संबंधी अधिकार से संघीय सदन में उड़ीसा से होने

वाले चुनाव दुष्प्रभावी होंगे?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – जो प्रस्ताव का अंग है उसे तो पढ़ना ही पड़ेगा, लेकिन हमसे और क्या करने की आशा की जाती है?

श्री बी० दास – क्या वे उड़ीसा लेजिस्लेटिव असेम्बली में मनोनयन संबंधी प्राविधानों को परे कर देंगे ताकि संघीय सभा के लिए जो सदस्य चुने जायें वे उड़ीसा असेम्बली के द्वारा चुने जायें?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मैं उस प्रश्न के बिना पूरी जानकारी के तत्काल उत्तर नहीं दे सकता ।

श्री बी० दास – क्या आप ध्यान में रखेंगे और इस पर विचार करेंगे?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – यह बात मेरे दिमाग मे निकल भी सकती है ।

(हँसी)



विधान सभाओं का चुनाव

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— क्या प्रान्तीय लेस्लिेटिव असेम्बली के गठन के बाद संघीय लेस्लिेटिव असेम्बली (फेडरल लेजिस्लेटिव असेम्बली) के चुनाव होने की कोई संभावना अगले पाँच वर्षों में है? क्या प्रान्तीय असेम्बलियों के गठन के पाँच वर्ष के भीतर उनके हो जाने की संभावना है?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार— यह पाँच वर्ष भी हो सकता है, अधिक भी हो सकता है, कम भी हो सकता है, हमें आशा है कि यह कम होगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— क्या यह संभव है कि यह अवधि कम हो?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार— हां बिल्कुल ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— तो फिर क्या प्रांतीय असेम्बली फेडरल असेम्बली के लिए प्रतिनिधियों को चुनेगी?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार— बिल्कुल ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— फिर तो प्रांतीय असेम्बली की संरचना और गठन निश्चित रूप से केन्द्रीय विधायिका की संरचना को प्रभावित करेंगे?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार— निश्चित रूप से ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— क्या यह सच नहीं है कि संयुक्त प्रान्त में बिहार और मद्रास की भांति एकनिष्ठ अथवा पिछड़े क्षेत्र नहीं हैं?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार— मैं माननीय सदस्य की यह बात मान लेता हूँ । मैंने इस पर ध्यान नहीं दिया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— क्या यह सच है कि संयुक्त प्रान्त के ग्रामीण इलाकों के लोग बिहार के या मद्रास की उन्नत प्रेसीडेन्सी के लोगों से अधिक पिछड़े नहीं हैं?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मान्यवर, मैं मनोमालिन्य उत्पन्न करने वाली किसी प्रकार की तुलना नहीं करना चाहता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— मैं आपसे कहलाना चाहता था कि उनकी स्थिति अच्छी है ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार— यह अपनी–अपनी राय की बात है ।

---

21 सितम्बर 1936 को पूछा गया पूरक प्रश्न ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— क्या कोई ऐसा तथ्य है, जो यह बताता हो कि संयुक्त प्रान्त के ग्रामीण अंचल के लोग रंगों के प्रति दृष्टिहीनता के शिकार हों?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार— संयुक्त प्रान्त की ग्रामीण जनता के बारे में मुझे अत्यन्त अल्प जानकारी है और मैंने कभी भी उनकी दृष्टि का परीक्षण नहीं किया है ।



भावी सुधारों के अन्तर्गत चुनाव सम्पन्न कराने सम्बन्धी नियम

श्री एम० अनंतशयनम् आयंगर (श्री सत्यमूर्ति के स्थान पर) – क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि : (क) क्या चुनाव कराये जाने के संबंध में राज्यपाल की नियमावली के दूसरे खंड का मसविदा भारत सरकार को प्राप्त हो गया है?

(ख) क्या ये नियम सुस्पष्ट रूप से सरकारी कर्मचारियों और स्थानीय निकायों के कर्मचारियों पर चुनाव में प्रत्यक्ष या खुले तौर पर या गुप्त रूप से अप्रत्यक्ष, किसी भी प्रकार से भाग लेने पर रोक लगाते हैं?

(ग) यदि नहीं तो क्या वे इस आशय का नियम बनाने के लिए कोई सुझाव देने को तैयार हैं?

माननीय सर फ्रैंक नोयेस – (क) हाँ, और कुछ प्रान्तीय सरकारों ने इन नियमों को प्रकाशित भी कर दिया है ।

(ख) नहीं ।

(ग) माननीय सदस्य द्वारा सुझाये गये प्राविधानों को शामिल करने का कोई विचार नहीं है । जहाँ तक सरकारी कर्मचारियों का प्रश्न है, इसका प्राविधान पहले से ही सरकारी कर्मचारियों के आचरण संबंधी नियमावली में है, जिसकी प्रतियाँ सदन के पुस्तकालय में रखी हैं जहाँ तक स्थानीय निकायों के कर्मचारियों का सम्बन्ध है, यह मसला मुख्य रूप से गवर्नर जनरल इन कौंसिल से संबंधित नहीं हैं ।

श्री एम० अनंतशयनम् आयंगर— मान्यवर, ये मुख्य रूप से गवर्नर-जनरल-इन कौंसिल से संबंधित मसले क्यों नहीं हैं?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – इस विषय पर हम पहले ही तीन दिन की बहस कर चुके हैं ।

प्रोफेसर एन०जी० रंगा – खंड (क) से संबंधित बहस नहीं हुई है? यह पूरी तरह अलग मामला है?

---

12 अक्टूबर 1936 को श्री एम० अनंतशयनम् आगकर द्वारा पूछे गये प्रश्न सं० 1149 के तारतम्य में पंत जी द्वारा पूछा गया पूरक प्रश्न ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – बहस का यदि कुछ निष्कर्ष निकला है तो यह इन नियमों को शामिल करने की जरूरत है । क्या सरकार इस तथ्य से अवगत है कि बावजूद इन नियमों के सरकारी कर्मचारियों के आचरण संहिता में शामिल करने से इनका उल्लंघन अधिक होता है, अनुपालन कम?

माननीय सर फ्रैंक नोयेस – नहीं, मान्यवर । मुझे विश्वास है कि ऐसा नहीं है ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यह बहस की विषय–वस्तु है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – यदि सरकार इन नियमों को चुनाव नियमावली में सम्मिलित करने को तैयार नहीं है तो क्या वे इन नियमों की प्रति हर सरकारी कर्मचारी के पास मतदान के दो महीने पूर्व भेज देंगे?

माननीय सर फ्रैंक नोयेस – मैं समझता हूँ कि सभी प्रान्तीय सरकारों का ध्यान सरकारी कर्मचारियों के आचरण संहिता की ओर आकर्षित किया गया है और सभी सरकारी कर्मचारियों के पास इन नियमों को भेजने का निर्णय करना स्पष्टतः प्रान्तीय सरकारों पर निर्भर करता है । मैं यह मानकर चलता हूँ कि सभी सरकारी कर्मचारियों को इससे स्वयं अवगत होना पड़ता है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या भारत सरकार प्रान्तीय सरकारों को निर्देश देगी कि इन नियमों की प्रति हर कर्मचारी को व्यक्तिगत रूप से जारी करे?

माननीय सर फ्रैंक नोयेस – नहीं श्रीमान, यह प्रान्तीय सरकारों के विधेयक का मामला है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – भारत सरकार को इस बात में क्या आपत्ति है कि चुनाव में सरकारी कर्मचारियों के आचरण संबंधी नियमों को जो चुनाव को लेकर उनके आचरण से सम्बन्धित हैं,चुनाव नियमावली में शामिल किया जाय?

माननीय सर फ्रैंक नोयेस – जैसा कि मैंने कहा यह प्रान्तीय सरकारों का मसला है और मैंने जो उत्तर पहले दिये हैं, उनमें मुझे कुछ और नहीं जोड़ना है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या भारत सरकार को इस तथ्य की जानकारी नहीं है कि सभी प्रान्तीय विधायिकायें (लेजिस्लेचर), संघीय संविधान के अन्तर्गत लेजिस्लेटिव असेम्बली के लिए चुनाव मंडल (इलेक्ट्रोरल कालेज) होंगी?

माननीय सर फ्रैंक नोयेस – मुझे विश्वास है कि ऐसा है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – तो फिर क्या यह भारत सरकार की चिंता का विषय नहीं होना चाहिए कि समुचित रूप से इसका गठन हो?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – मैं वास्तव में आगे और प्रश्नों की अनुमति इस विषय पर नहीं दे सकता, जिस पर पूरी बहस हो चुकी है ।

●

रिजर्व बैंक आफ इंडिया के डिप्टी गवर्नर पद से सिकन्दर हयात खान का त्यागपत्र

श्री अखिल चन्द्र दत्त— (अ) क्या यह सच है कि सर सिकन्दर हयात खान 26 सितम्बर, 1936 को अपने पद से त्यागपत्र दे रहे हैं, जैसा कि 6 सितम्बर, 1936 के "स्टेट्समैन" में प्रकाशित हुआ है ।

(ब) यदि ऐसा है तो क्या गवर्नर जनरल इन कौंसिल को रिजर्व बैंक एक्ट के प्राविधानों के अनुसार रिजर्व बैंक के बोर्ड आफ डायरेक्टर्स की कोई संस्तुति प्राप्त हुई है?

(स) इस पद को भरने के लिए सरकार ने क्या तत्काल प्रबंध किये हैं?

(द) पद के तकनीकी स्वरूप को देखते हुए, क्या सरकार इस पद पर किसी बैंकिग उद्योग के विशेषज्ञ की नियुक्ति प्रस्तावित कर रही है?

माननीय सर जेम्स ग्रिग— (अ) मैं श्री सत्यमूर्ति के प्रश्न सं० 699 के खंड (द) पर ध्यानाकर्षित करना चाहूँगा ।

(ब) नहीं ।

(स) और (द) यह मसले मुख्यतः रिजर्व बैंक के सेंट्रल बोर्ड से संबंधित हैं ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या रिजर्व बैंक के माननीय डिप्टी गवर्नर जनरल को यह आश्वासन दिया गया था कि उन्हें पंजाब की नई सरकार में शामिल होने के लिए समय से पदमुक्त कर दिया जायगा?

माननीय सर जेम्स ग्रिग – पूरक प्रश्नोत्तर के दौरान इस प्रश्न पर पूरी तरह विचार किया जा चुका है

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – यह सुविदित तथ्य है ।



श्री अखिल चन्द्र के तारांकित प्रश्न संख्या 1150, दिनांक 12 अक्टूबर 1936 के तारतम्य में पंत जी का पूरक प्रश्न ।

प्रान्तों में मतदान की प्रक्रिया का निर्धारण

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या कोई संभावना कि अगले वर्ष प्रांतीय विधान सभाओं के गठन के बाद उनसे संघीय (फेडरल) लेजिस्लेटिव असेम्बली के सदस्य चुनने को कहा जायगा?

(ख) क्या सरकार ने प्रान्तीय विधान सभाओं के आगामी चुनाव में मतों की स्वतंत्रता तथा गोपनीयता को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक कदम उठाये गये हैं?

(ग) क्या इस विषय पर कोई नियम बनाये गये हैं या प्रान्तीय सरकारों को कोई निर्देश दिये गये हैं? क्या सरकार उसकी एक प्रति सदन के पटल पर रखने का कष्ट करेगी?

(घ) क्या हर प्रान्त के लिए मत प्रक्रिया अंतिम रूप से तय कर ली गयी है? यदि हाँ, तो क्या सर्वत्र एक सरीखी होगी? यदि नहीं तो, हर प्रान्त में क्या तरीका होगा, और इस अन्तर के क्या कारण हैं?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – (क) अभी सरकार इस संबंध में कोई बयान देने की स्थिति में नहीं है ।

(ख) मसला मुख्यत: प्रान्तीय सरकारों से सम्बद्ध है और मुझे कोई संदेह नहीं कि वे मत की गोपनीयता और स्वतंत्रता को सुनिश्चित रखने के लिए सभी आवश्यक कदम उठायेंगी ।

(ग) और (घ) मत प्रक्रिया गवर्नर की नियमावली द्वारा निर्देशित है । ये नियम अब तक सात प्रान्तीय सरकारों द्वारा प्रकाशित किये जा चुके हैं और निकट भविष्य में शेष प्रान्तीय सरकारों द्वारा प्रकाशित कर दियें जायेंगे । चूँकि प्रान्तवार परिस्थितियाँ भिन्न हैं इसलिए यह संभावित नहीं हैं कि मतदान की प्रक्रिया हर जगह एक सी होगी ।



तारांकित प्रश्न संख्या 1270, दिनांक 15 अक्टूबर 1936

मतदान केन्द्रों के संबंध में निर्देश

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त—क्या सरकार ने स्थानीय (प्रान्तीय) सरकारों को मतदान केन्द्रों के संबंध में कोई निर्देश जारी किये हैं? यदि हाँ, तो क्या उसकी एक प्रति पटल पर रखेंगे?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार—इसका उत्तर नकारात्मक है।



तारांकित प्रश्न संख्या 1271, दिनांक 15 अक्टूबर 1936

रुहेलखंड और कुमायूँ रेलवे का राज्य द्वारा अधिग्रहण

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— (क) क्या सरकार ने रेल के राज्य द्वारा अधिग्रहण के मामले में कोई निर्णय लिया है? यदि नहीं तो रुहेलखंड और कुमायूँ रेलवे को कब तक नोटिस देने का विचार है?

(ख) इस अधिग्रहण के लिए कंपनी को अनुमानतः कितनी धनराशि देनी होगी?

(ग) क्या रुहेलखंड और कुमायूँ रेलवे हिस्सेदारों को लाभांश बांटती रही है? यदि हाँ, तो किस दर पर?

(घ) क्या एकसा भुगतान पिछले पाँच वर्षों में किया गया है?

माननीय सर मुहम्मद जफरूल्ला खाँन—

(क) प्रश्न अभी भी विचाराधीन है ।

(ख) लगभग 2.17 करोड़ रुपया ।

(ग) और (घ) रुहेलखंड और कुमायूँ रेलवे कंपनी द्वारा पिछले पाँच वर्षों के दौरान घोषित लाभांश (बोनस सहित) निम्नवत् है:–

वर्ष	लाभांश (प्रतिशत)
1931	15
1932	15
1933	15
1934	16
1935	16

मैं यह बताना चाहूँगा कि कंपनी का सामान्य (लाभकारी) पूँजीनिवेश केवल चार लाख पौंड है, जबकि सम्पूर्ण पूँजीनिवेश लगभग पन्द्रह लाख पौंड है, शेष अधिमान पूँजी तथा ऋणपत्रों आदि के रूप में है ।

●

तारांकित प्रश्न संख्या 1272, दिनांक 15 अक्टूबर 1936

रुपये या स्टर्लिंग में ऋण लेने की व्यवस्था

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त— भारत सरकार ने अभी हाल में रुपये या स्टर्लिंग का जो ऋण प्राप्त किया है उसकी ब्याज दर क्या है?

माननीय सर जेम्स ग्रिग — चालू वर्ष में सरकार ने केवल 2.75 प्रतिशत की दर से रुपये में सममूल्य पर कर्ज जारी किया है। पिछले वर्ष के ऋण का ब्यौरा वित्त सचिव के ज्ञापन (मेमोरेंडम) में छिपा हुआ है, जो माननीय सदस्यों के बीच बजट के कागजातों के साथ वितरित किया जा चुका है।



तारांकित प्रश्न संख्या 1273, दिनांक 15 अक्टूबर 1936

प्रान्तों के आगामी चुनाव की मतदान तिथियों का निर्धारण

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (क) क्या विभिन्न प्रान्तों के चुनाव की तिथियाँ तय कर ली गयी हैं? यदि हाँ, तो क्या सरकार यह बताने का कष्ट करेगी कि ये क्या हैं?

(ख) क्या सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में सभी प्रान्तों के चुनाव एक ही दिन होंगे? यदि नहीं तो चुनाव को सम्पन्न होने में कितना समय लगेगा और इसके लिए प्रान्तों में विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों का प्रबन्ध कैसे होगा?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – (क) प्रान्तों में मतदान की तिथियाँ स्थानीय (प्रान्तीय) सरकारों द्वारा निश्चित की जायेंगी और समय आने पर उन्हें प्रकाशित कर दिया जायेगा ।

(ख) सरकार के पास कोई सूचना नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या इन तिथियों के बारे में भारत सरकार की सलाह नहीं ली जाती?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मैं समझता हूँ कि अंतिम रूप से तय किये जाने के पूर्व सूचनार्थ भारत सरकार के पास भेजी जायेंगी, लेकिन अभी वैसी स्थिति नहीं आयी है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या मैं माननीय विधि सदस्य को यह बता सकता हूँ कि वास्तव में कुछ प्रदेशों में तारीखें पहले ही तय की जा चुकी हैं और विज्ञप्ति भी जारी की जा चुकी है?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मैं अपने कथन को सुधार लूँगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या मैं जान सकता हूँ कि (सेंट्रल) असेम्बली का अगला सत्र चुनाव समाप्ति के बाद शुरू होगा? मेरे प्रान्त में परसों जारी की गयी एक विज्ञप्ति के अनुसार मतदान की तिथियाँ 8 और 9 फरवरी हैं ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – अगले सत्र की तिथियाँ अभी तय नहीं की गयी हैं लेकिन संभावना है कि असेम्बली की बैठक 8 या 9 फरवरी के पहले होगी ।

तारांकित प्रश्न संख्या 1351, दिनांक 15 अक्टूबर 1936

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार को जानकारी है कि अधिकांश प्रान्तों में फरवरी के प्रथम पखवारे में चुनाव होने वाले हैं?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – हाँ, मैं यह जानता हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार इस बात पर ध्यान देगी कि चूंकि अधिकांश असेम्बली सदस्यों को इन चुनावों में रुचि होगी इसलिए अगला सत्र चुनाव के बाद ही बुलवाना उचित होगा?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – सरकार को इस बात पर यकीन है कि उनकी दिलचस्पी उन्हें मतदान केन्द्रों तक ले जायेगी और हमें उम्मीद है कि अधिकांश सदस्य यहाँ होंगे ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इस सदन के अधिकांश सदस्य अगले चुनाव में व्यस्त रहेंगे । वास्तव में आम चुनाव में आम दिलचस्पी पैदा करने वाले होते हैं ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – माननीय सदस्य मुझसे क्या प्रश्न पूछ रहे हैं?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मेरा प्रश्न है कि सरकार, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि असेम्बली के बहुत से सदस्यों की चुनाव में रुचि होगी, क्या असेम्बली का अगला सत्र प्रान्तों में चुनाव समाप्ति के बाद रखा जायेगा ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मैं कोई आश्वासन नहीं दे सकता कि ऐसा हो जायेगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – अगला सत्र कब शुरू होने की संभावना है?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – मैं इस बारे कोई निश्चित घोषणा नहीं कर सकता लेकिन निश्चित रूप से यह 8 या 9 फरवरी के पहले शुरू होगा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह जनवरी में शुरू होगा ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – इस समय में अधिक से अधिक यही कह सकता हूँ कि यह 25 या 26 जनवरी के आसपास शुरू होगा । यह एक अस्थायी प्रस्ताव है और मैं कोई पक्का बयान नहीं दे सकता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या यह सच है कि इस वर्ष असेम्बली की बैठक 2 फरवरी को ही शुरू हुई थी? क्या यह भी सत्य है कि इस वर्ष शिमला अधिवेशन हर वर्ष की तुलना में अधिक लम्बा चला?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – यह ऐसे तथ्य हैं, जिनके बारे में सभी को जानकारी है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इन तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए क्या सरकार अगले सत्र को जहाँ तक संभव हो जनवरी में न शुरू करके फरवरी में शुरू करने के सुझाव

पर विचार कर सकती है?

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – इस पर विचार करने के मामले में सरकार पर किसी प्रकार की रोक नहीं है, लेकिन मैं इस सदन से यह तथ्य नहीं छिपाना चाहता कि ऐसा हो पाना संभव नहीं है ।

सर मोहम्मद याकूब – क्या सरकार को ज्ञात है कि पिछले दिल्ली अधिवेशन के दौरान, असेम्बली की बैठक 23 अप्रैल तक काफी गर्म मौसम में हुई थी और तब कार्य सूची में शामिल कुछ मुद्दों पर विचार पूरा नहीं हो सका और तब कुछ माननीय सदस्यों द्वारा यह कहा गया था कि जब सत्र समाप्त होने वाला हो तो असेम्बली में विचार-विमर्श के लिए किसी महत्वपूर्ण विषय को नहीं प्रस्तुत करना चाहिए ।

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार – जनवरी में दिल्ली बहुत ठंडी और अप्रैल में बहुत गर्म होती है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – क्या सरकार सर मोहम्मद याकूब के इस विचार से सहमत हैं कि असेम्बली के सदस्यों को जहाँ तक संभव हो सके, प्रान्तीय चुनाव के परिदृश्य से जहाँ उनकी उपस्थिति उम्मीदवारों के लिए उपयोगी होगी- दूर रखना चाहिए ।

(कोई उत्तर नहीं)

●

चुनाव सभा में कथित मौजूदगी के कारण अलीगढ़ जिले के कुछ पटवारियों का निलम्बन

अध्यक्ष (सर अब्दुर्रहीम) – मुझे तीन कार्यस्थगन प्रस्ताव प्राप्त हुए हैं, जो ऊपरी तौर पर एक ही मुद्दे से संबंधित हैं ।

पहला प्रस्ताव मोहनलाल सक्सेना का है । वे चाहते हैं :

"असेम्बली के कार्यस्थगन का प्रस्ताव अत्यावश्यक सार्वजनिक महत्व के एक विशेष मामले से संबंधित है जो इस प्रकार है, उत्तर प्रदेश सरकार और उसके अधिकारियों की आगामी प्रान्तीय चुनाव में दखलंदाजी को रोकने में भारत सरकार की असफलता, जिसका प्रमाण सरकार द्वारा ग्यारह पटवारियों और अदालत के दो चपरासियों का खैर–अलीगढ़ में इस कारण निलंबन किया जाना है कि वे पंडित जवाहर लाल नेहरू की चुनाव सभा में मौजूद थे और इस तरह उन्हें आगामी चुनाव के विभिन्न पार्टियों के चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों के बीच चयन के अधिकार तथा स्वतंत्रता से भी वंचित किया गया है । यह समाचार 13 अक्टूबर के "हिन्दुस्तान टाइम्स" में प्रकाशित हुआ था ।"

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (रुहेलखंड और कुमायूँ मंडल गैर मुस्लिम–ग्रामीण) यह वक्तव्य सही है । मैंने अलीगढ़ कांग्रेस कमेटी के सचिव को निलंबित किये गये पटवारियों और चपरासियों के नाम बताने के लिए तार भेजा था, और उन्होंने मुझे निम्न नाम भेजे हैं:–

1- राधेश्याम 2- प्यारे लाल 3- चंदनलाल 4- रामस्वरूप 5- ज्वाला प्रसाद 6- हर नरायन 7- हीरालाल 8- रामसरन 9- रामसरन 10 छेदालाल 11- भूरा सिंह 12- श्याम बिहारी । ये सब पटवारी हैं । दो चपरासी हैं–छेदालाल और जहीर अहमद ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – मैं निश्चित सूचना चाहता हूँ । इससे तो समाचार–पत्रों में दी गयी जानकारी से आगे की जानकारी नहीं मिलती है । मैं जानना यह चाहता हूँ कि माननीय सदस्य के पास निलंबन संबंधी आदेश की कोई प्रति या ऐसा कुछ है ।

---

15 अक्टूबर 1936 को श्री मोहन लाल सक्सेना द्वारा प्रस्तुत कामगेको प्रस्ताव के तारतम्य में ।

श्री मोहनलाल सक्सेना – अब तक यह प्रचलन रहा है कि यदि आप समाचार–पत्र की किसी रिपोर्ट के बारे में संतुष्ट होते हैं कि वह सही है, तो आप स्थगन प्रस्ताव को स्वीकार करने की कृपा करते हैं ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – मैं नहीं जानता कि सरकार तथ्यों को स्वीकार करती है या नहीं ।

माननीय सर हैनरी क्रेक (गृह सदस्य) कार्यस्थगन प्रस्ताव में जैसा आशय व्यक्त किया गया है उससे नहीं ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – तथ्य क्या है?

माननीय सर हैनरी क्रेक तथ्य यह है कि स्थानीय सरकार का कोई आदेश नहीं था, यहाँ तक कि कलक्टर का भी आदेश नहीं था, लेकिन सब–डिवीजन आफिसर का आदेश इन अधीनस्थ कर्मचारियों के निलंबन के संबंध में मुख्यत: इस आधार पर था कि वे अपने कार्यस्थल से बिना अवकाश लिए अनुपस्थित थे । बिना अवकाश की उनकी अनुपस्थिति के बारे में संदेह है कि पंडित जवाहर लाल नेहरू की सभा में भाग लेने गये थे । अभी इस प्रश्न पर छानबीन चल रही है, लेकिन उनके निलंबन का मुख्य कारण नौकरी से बिना अवकाश अनुपस्थित रहना है । मामलों के बारे में जाँच-पड़ताल चल रही है और मेरा मत है कि किसी भी तरह से अत्यावश्यक सार्वजनिक महत्व का मामला नहीं माना जा सकता ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – जहाँ तक इस मामले के तात्कालिक सार्वजनिक महत्व का प्रश्न है, इसमें कोई संदेह नहीं है । उनके साथ यह बर्ताव इसलिए किया गया क्योंकि वे एक सभा विशेष में उपस्थित थे और यह तात्कालिक सार्वजनिक महत्व का मामला है । जहाँ तक इस बात का सवाल है कि इन लोगों को इस सभा विशेष में भागीदारी करने के कारण नहीं, बल्कि किसी अन्य कारण से निलंबित किया गया है, तब यह ऐसा मसला है जिस पर अध्यक्ष को गंभीरता से विचार करना होगा । लेकिन तथ्य सहज स्वीकृत है, मैं यह कहना चाहता हूँ ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यदि आप कोई सरकारी आदेश इस आशय का दिखा सकें कि उन्हें सभा विशेष में भागीदारी के कारण निलंबन किया गया है तो मैं इसे प्रमाण के रूप में मान लूँगा । लेजिस्लेटिव असेम्बली की कार्यवाही खंड 3, भाग 7 के पृष्ठ 4680 पर यह कहा गया है :

"जहां तक हमारा प्रश्न है एसोसिएटेड प्रेस एक निजी संस्था है और जब तक इसे किसी ऐसे सरकारी आदेश का जो कि यहाँ या इंग्लैण्ड में दिया जा चुका है– का माध्यम नहीं बनाया जाता, मैं नहीं समझता कि इसे प्रामाणिक माना जा सकता है । मुझे आशंका है कि माननीय सदस्य जो कुछ भी प्रस्तावित करना चाहते हैं, उसके लिए मैं समाचार–पत्रों को विश्वसनीय आधार नहीं मान सकता ।"

अध्यक्ष का आगे कहना है:–

"माननीय सदस्य ने कोई नयी सूचना मुझे दी हो, ऐसा नहीं लगता । विचाराधीन मामला यही है । हमने पहले ही पूरे तौर पर केन्या में भारतीयों की स्थिति पर विचार-विमर्श किया है । भारत सरकार ने जो संदेश गृह विभाग को दिया है वह इस विषय पर इस असेम्बली की सुविचारित राय को व्यक्त करता है और आज दोपहर सिर्फ एक ही तरीके से कार्यस्थगन का प्रस्ताव लिया जा सकता है, वह यह है कि कोई ऐसी गंभीर महत्व की नयी सूचना मिले जिस पर पहले विचार नहीं हुआ है । मुझे डर है कि मैं दो निजी टेलीग्रामों को गंभीर महत्व की बात नहीं मान सकता ।"

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मान्यवर, अब हम ऊहापोह के शिकार हैं । यदि हम उसी दिन कार्यस्थगन प्रस्ताव नहीं पेश कर देते जिस दिन समाचार प्रकाशित हुआ है तो इसे यह कहकर अस्वीकार कर दिया जायेगा कि मामला तात्कालिक महत्व का नहीं है, क्योंकि हमने इसे उसी दिन नहीं रखा, जिस दिन यह समाचार–पत्रों में आया । किसी को भी आंखों देखी जानकारी नहीं प्राप्त हो सकती, हमें अखबारी खबरों पर भरोसा करना पड़ता है । इसलिए हम कार्यस्थगन सम्बन्धी सूचना उसी दिन दे सकते हैं, जब अखबारों में समाचार छपे ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – मैं नहीं सोचता कि यह इसलिए अस्वीकृत कर दिया गया कि सूचना उसी दिन नहीं दी गयी, जिस दिन अखबारों में समाचार छपा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – यदि अनुमति हो तो मैं सादर निवेदन करूं कि यहाँ तक कि अध्यक्ष महोदय ने इस आधार पर प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया है कि समाचार (प्रस्ताव प्रस्तुत करने से) एक दिन पहले छप चुका था ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – आपका तात्पर्य है कि जब सूचना घटना के कुछ दिनों बाद दी गयी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – इस मामले में विषय तात्कालिक सार्वजनिक महत्व का है । मैं तथ्य रूप में यह जानता हूँ कि नेशनल एग्रीकल्चरिस्ट पार्टी द्वारा पटवारियों और अन्य सरकारी कर्मचारियों को सभायें बुलाने के लिए इस्तेमाल किया गया है ।

माननीय सर हैनरी क्रेक – मैं इसे अस्वीकार करता हूँ ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – नेशनल एग्रीकल्चरिस्ट पार्टी द्वारा संबोधित की जाने वाली सभाओं में पटवारियों को गाँववासियों को लाने के काम में लगाया जाता है । मेरा कहना है कि हमारे द्वारा लगाये गये आरोप, दूसरे पक्ष द्वारा लगाये गये आरोपों से कहीं अधिक प्रामाणिक हैं ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – उन्हें चुनाव सभा में भाग लेने के कारण निलम्बित किया गया है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं स्पष्ट रूप से यह स्वीकार करता हूँ कि हम लोगों ने आदेश नहीं देखे हैं । जो अखबारों में छपा, उसी पर हमारी सूचनायें आधारित हैं । उसके बाद हम लोगों ने स्थानीय लोगों से पूछा कि क्या यह सही है और उन्होंने हमें बताया है कि यह सही है । हम उनसे पूरा ब्यौरा चाहते थे और उन्होंने हमें यह भेजा है । आप समझ सकते हैं कि हम गैर–सरकारी लोग सम्भवतः सरकारी आदेश नहीं जुटा सकते और यदि इन बेचारे पटवारियों ने आदेश की प्रतियाँ स्वयं हमें दीं तो वे सभी जिन कठिनाइयों में हैं, उससे अधिक कठिनाइयों में फँस जायेंगे ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यदि तथ्य स्वीकार किये जायें तो कोई कठिनाई नहीं होगी, लेकिन मुझे माननीय गृह सदस्य का यह बयान स्वीकार करना पड़ रहा है कि इन लोगों को, या इनमें से कुछ लोगों को कार्यस्थगन से अनुपस्थित रहने के कारण निलंबित किया गया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मान्यवर, क्या मैं सादर निवेदन कर सकता हूँ कि माननीय गृह सदस्य से सरकार या उसके अधीनस्थ अधिकारी द्वारा दिये गये आदेश को प्रस्तुत करने को कहा जाय?

माननीय सर हैनरी क्रेक – मैंने कहा था कि सरकार का कोई आदेश नहीं है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मान्यवर, स्वीकृत तथ्य इस प्रकार है : पहला कि 11 पटवारी और दो चपरासी निलंबित किये गये । दूसरा यह कि उन्हें पं० जवाहर लाल नेहरू की सभा के बाद निलंबित किया गया । तीसरे यह कि उन्हें इस संदेह के आधार पर निलंबित किया गया कि शायद वे ऐसी सभा में उपस्थित थे । (सरकारी बेंचों से, "नहीं, बिल्कुल नहीं" की आवाजें) गृह सदस्य ने कहा कि उनका निलंबन मुख्यतः सभा में भाग लेने के कारण नहीं हुआ लेकिन . . . . .

माननीय सर नृपेन्द्र सरकार– (सदन के नेता) उन्होंने यह नहीं कहा ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं माननीय विधि सदस्य से निवेदन करूंगा कि वे अपने सहयोगी की इस समझदारी पर भरोसा रखेंगे कि वे एक मिनट पहले कही गयी बात को भूल नहीं जायेंगे । मुझे उनका यह कथन याद है कि वह मुख्यतः इसी कारण नहीं हुआ । यदि वे यह कह दें कि उन्होंने नहीं कहा तो मैं स्वयं को सही कर लूँगा ।

माननीय सर हैनरी क्रेक– मैंने कहा था कि उनके निलंबन का प्राथमिक कारण ड्यूटी पर से उनकी अनुपस्थिति थी ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – प्राथमिक कारण ड्यूटी से अनुपस्थिति थी लेकिन इसके अतिरिक्त कुछ और भी ऐसा था, जिसने इसे प्रभावित किया । मैं चाहता हूँ कि सरकार दोनों में से कोई एक स्थिति स्वीकार करे, यदि वे ऐसा करते हैं तो हम प्रस्ताव पर जोर नहीं देंगे । या तो वे यह कहें कि सरकार कर्मचारी दलों को सभी सभाओं में उपस्थित होने के लिए स्वतंत्र हैं......

माननीय सर हैनरी क्रेक – मान्यवर, व्यवस्था के प्रश्न पर, मैं यह कहना चाहता हूँ कि माननीय सदस्य एक ऐसे प्रश्न के गुण-दोष पर बहस कर रहे हैं, जिसे स्वीकार ही नहीं किया गया है ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं गुण दोष पर बहस नहीं कर रहा हूँ, मैं बहस को संक्षिप्त करना चाहता हूँ ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – तथ्य यह है कि सरकारी कर्मचारियों द्वारा चुनाव में हस्तक्षेप के प्रश्न पर बहस तीन दिन तक चलती रही है । मुझे जो कुछ भी देखना है वह यह है क्या मेरे समक्ष कोई प्रामाणिक सूचना है कि उनका निलंबन चुनाव सभा में हिस्सेदारी के कारण हुआ? सरकार ने जो स्वीकार किया है– मैं मानकर चलता हूँ कि उनके पास आधिकारिक सूचना है–वह यह है कि वे इसलिए निलंबित किये गये, क्योंकि वे ड्यूटी पर से अनुपस्थित थे । प्रामाणिक तौर पर यही, मैं समझता हूँ कि, वह आधार है जिसके कारण उन्हें निलंबित किया गया । यदि माननीय सदस्य कल यह आधिकारिक सूचना पेश कर सकें कि उन्हें चुनाव सभा में भागीदारी के कारण निलंबित किया गया है तो मैं उसे एक उचित प्रमाण के रूप में स्वीकार कर लूँगा । लेकिन मैं यह नहीं कहता कि मैं प्रस्ताव को तब भी मान लूँगा, जब यह अन्य आधारों पर मान्य नहीं होगा ।

●

भारत और यूरोप के बीच भारतीय-स्वामित्व की जहाजरानी सेवा पर कार्य-स्थगन प्रस्ताव

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त का एक कार्यस्थगन प्रस्ताव हैं। वे सदन की कार्यवाही स्थगन संबंधी प्रस्ताव लाने की अनुमति चाहते हैं ताकि एक अत्यन्त आवश्यक सार्वजनिक महत्व के विषय पर विचार हो सके। विषय है भारत सरकार द्वारा भारतीय स्वामित्व की जहाजरानी सेवा को भारत और यूरोप के बीच विकसित करने संबंधी योजना को मदद करने से इंकार, जैसा कि कल के हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित सेठ बालचन्द हीराचन्द के बयान से सुस्पष्ट है।

मैं जानना चाहूँगा कि यह मसला आवश्यक कैसे है।

डा० जियाउद्दीन अहमद (संयुक्त प्रान्त दक्षिणी मंडल : मुस्लिम ग्रामीण) – मान्यवर, क्या मैं आपसे निम्न निवेदन कर सकता हूँ, कि क्या इसे सोमवार तक स्थगित कर देना संभव नहीं होगा?

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – नहीं मैं यह नहीं कह सकता। लेकिन मैं यह जानना चाहूँगा कि इस मसले को आवश्यक कैसे माना जा सकता है।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (रोहिलखंड और कुमायूँ मंडल : गैर मुस्लिम ग्रामीण): मान्यवर, कल के "हिन्दुस्तान टाइम्स" में जो कि सेठ बालचन्द हीराचन्द के नाम से एक अधिकृत है, वक्तव्य प्रकाशित हुआ है, जो कि भारत और यूरोप के बीच समुद्र सेवा स्थापित करने वाली संस्था "हिन्द लाइन्स" के प्रर्वतक हैं, में उन्होंने कहा है कि उन्होंने भारत सरकार से सहायता प्राप्त करने की कोशिश की, लेकिन वे अपने प्रयास में असफल रहे। यह तथ्य मेरी और जनता की जानकारी में अभी कल ही आया जब यह बयान समाचार पत्रों में छपा और ज्यों ही मैंने इसे देखा मैंने इस प्रस्ताव की नोटिस दे दी...........

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – प्रश्न पुराना है।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – (सरकार द्वारा) अस्वीकार करने की घटना अभी ताजी है।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या नीति में कोई परिवर्तन है।

---

22 अक्टूबर 1936 को अपने कार्य-स्थगन प्रस्ताव पर बोलते हुए।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – भारत सरकार सभी तरह के भारतीय उद्यमों के प्रति उदासीन है और जहां तक इस विशेष मसले का प्रश्न है, इसमें सरकार की घोषित नीति का उल्लंघन है.........

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – ऐसा कब किया गया ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – भारतीय व्यापारिक नौपरिवहन समिति की रिपोर्ट प्राप्त होने के तुरन्त बाद भारत सरकार ने अपनी नीति घोषित की थी ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – ऐसा कब किया गया ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – 1923 में । मैं बताऊँगा कि उल्लंघन कैसे हुआ । उस सिोर्ट में भारत सरकार ने यह बचन दिया था कि वे भारतीय व्यापारिक नौपरिवहन सेवा के विकास में देश की मदद करेंगे । उसके बाद, हाजी का बिल आया, जिसकी जानकारी आपको है........... ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – आपका तात्पर्य तटीय व्यापार से है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – हाँ, मान्यवर । उसके बाद 1930 में जहाजरानी सम्मेलन हुआ । उसके बाद भारत सरकार ने इस आशय की एक विज्ञप्ति जारी की कि भारत सरकार विदेशों में भारतीय व्यापार सहित भारतीय जहाजरानी की स्थापना और विकास के लिए अपने दायित्व का अहसास करती है और साथ ही उन्होंने पक्के तौर पर यह कहा कि इस मामले में वे अपना दायित्व स्वीकारती हैं । मान्यवर, आप जानते हैं कि इस सदन में कई प्रश्न रखे गये थे और वास्तव में यह सर्वोपरि प्रश्नों में से एक था और सदन में इसे लगातार उठाया गया...... ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – बजट सत्र के दौरान ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – हाँ मान्यवर, लेकिन भारत सरकार किसी न किसी बहाने टाल मटोल करती रही है । मान्यवर, मैं आपको सूचित कर दूँ कि भारत सरकार के प्रमुख और हिन्द लाइन्स के प्रवर्तक के बीच कुछ पत्राचार भी हुआ था । यह कम्पनी 9 सितम्बर,1936 को की गयी थी और वहाँ........

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – कम्पनी कब स्थापित की गयी थी?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त इसकी स्थापना 9 सितम्बर 1936 को हुई थी । इस कम्पनी के प्रवर्तक और भारत सरकार के प्रमुख के बीच पत्राचार हुआ था और उन्हें सूचित कर दिया गया था.....।

माननीय अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – क्या कोई आवेदन किया गया था?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – आवेदन किया गया था कि यह कंपनी दस करोड़ की अधिकृत पूँजी से शुरू की जा रही है और विक्टोरिया और लुसितानिया प्रकार के

जहाजों को चलाने के लिए दो करोड़ 20 लाख रुपयों की आवश्यकता थी ताकि जहाज के निर्माताओं को और दूसरी वस्तुओं को खरीदने हेतु भुगतान किया जा सके । और इस संबंध में 3 प्रतिशत ब्याज और दस वर्ष के अन्दर भुगतान की गारंटी पर भारत सरकार से 2 करोड़ 20 लाख का कर्ज मांगा था । लेकिन न तो माननीय वाणिज्य सदस्य और न ही वित्त सदस्य ने कोई सुनवाई की तब प्रवर्तक भारत सरकार के प्रमुख रूप में महामहिम गवर्नर जनरल से आवेदन किया....... ।

माननीय सर मुहम्मद जफरूल्ला खान (वाणिज्य और रेल सदस्य) – जब माननीय सदस्य कहते हैं कि कोई निश्चित सुनवाई नहीं हुई तो क्या उनका तात्पर्य है कि जो आवेदन किया गया था, उसे स्वीकार नहीं किया गया?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – हाँ, आवेदन स्वीकार नहीं किया गया था ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यह कब हुआ?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – मैं समझता हूँ कि यह अगस्त से कुछ पहले हुआ था ।

माननीय सर मुहम्मद जफरूल्ला खान – मान्यवर, यह पिछली सर्दियों में हुआ था ।

"हिन्दुस्तान टाइम्स" का कहना है कि यह पिछले वर्ष हुआ था ।

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – पिछला साल स्वयं में एक अस्पष्ट अभिव्यक्ति है । कुछ भी हो, कंपनी के प्रर्वतकों ने इसे अंतिम शब्द न माना और उन्होंने भारत सरकार के सर्वोच्च व्यक्ति से सम्पर्क स्थापित किया और महामहिम वायसराय के निजी सचिव ने 16 अगस्त,1936 को इस मामले में लिखा ।

माननीय सर मुहम्मद जफरूल्ला खान – महोदय, क्या भारतीय सदस्य द्वारा उस पत्र का पढ़ना नियमानुकूल है जो गवर्नर जनरल की तरफ से निजी सचिव द्वारा लिखा गया समझा जाता है?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – वे भारत सरकार के राज्य प्रमुख हैं और उन्होंने यह उत्तर प्राप्त आवेदन के संदर्भ में दिया था ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – यह भारत सरकार की ओर से है गवर्नर जनरल की ओर से?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – पत्र की सामग्री स्पष्ट रूप से बताती है कि यह भारत सरकार के प्रमुख द्वारा लिखा गया था । यह कहता है:

"आपकी या सिंधिया कम्पनी की भागीदारी होते हुए भी महामहिम ने वाणिज्य विभाग से भारतीय कंपनी को वित्तीय सहायता देने के प्रश्न पर पुनर्विचार करने को पहले ही कहा है ।"

यह समुद्र व्यापार के संबंध में दिये गये प्रतिवेदन के बारे में है । यह उस प्रतिवेदन

के जवाब में था जो सरकार के प्रमुख को संबोधित किया गया था तथा जिसमें इस मामले के सम्पूर्ण इतिहास का उल्लेख था तथा ऐसी वित्तीय सहायता मांगी गयी थी, जो सरकार देने को तैयार थी और इसी के जवाब में वह पत्राचार हुआ था तथा साक्षात्कार किये गये थे । मैं जिस बात से सम्बन्धित हूँ वह यह है कि यह पत्र 16 अगस्त को भेजा गया था जिसमें कहा गया था कि महामहिम ने वाणिज्य विभाग को वित्तीय सहायता के बारे में पुनर्विचार करने को कहा था । इस प्रकार, मान्यवर, यह सिलसिला लगातार चालू रहा है । महामहिम ने वाणिज्य विभाग के मसले पर पुनर्विचार के लिए कहा था । उसके बाद 23 सितम्बर को दूसरा पत्र लिखा गया, जिसमें कहा गया था, "उन्होंने आपके पत्र की प्रतिलिपि वाणिज्य विभाग को भेजने को कहा है, और वे समझते हैं कि विभाग उस प्रतिवेदन पर सहर्ष विचार करेगा जिसे आप उसे भेजना चाहेंगे ।" यह 23 सितम्बर की बात है और उनसे कहा गया है कि वे इस मामले के संबंध में जो प्रतिवेदन चाहें, वाणिज्य विभाग को भेज सकते हैं और उनसे वाणिज्य विभाग से संपर्क करने के लिए कहा गया ।

माननीय सर मुहम्मद जफरूल्ला खान – क्या माननीय सदस्य तारीख के बारे में आश्वस्त है कि 23 सितम्बर ही थी?

पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त – हाँ । फिर 29 सितम्बर को वाणिज्य सचिव ने श्री बालचन्द हीराचन्द को सूचित किया कि कोई वित्तीय सहायता नहीं दी जा सकती और 30 सितम्बर को कंपनी के प्रवर्तकों ने वाणिज्य सदस्य से संपर्क किया । उन्हें बताया गया कि आवेदन स्वीकार नहीं किया जा सकता । पहली तारीख को यह बात समाचार–पत्र में आ गयी । मैं इससे अधिक सतर्क नहीं रह सकता था और मैं सदन का स्थगन तब तक प्रस्तावित नहीं करना चाहता था, जब तक सारे उपाय आजमा न लिये जाते ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – निःसन्देह यह सार्वजनिक महत्व का प्रश्न है, लेकिन इस स्थगन प्रस्ताव द्वारा उठाया गया प्रश्न निश्चित रूप से पुराना है । इस सदन में पहले भी कई प्रश्न उठे हैं और इस विषय पर बहस भी हुई है अब जिसे हाल का मामला बताया जा रहा है वह वाणिज्य सदस्य का कुछ प्रतिवेदनों के संबंध में दिया गया जवाब है और मैं समझता हूँ कि उन्होंने निवेदन पर विचार करने से इंकार कर दिया था......... ।

माननीय सर मुहम्मद जफरूल्ला खान – भारत सरकार के पूर्व निर्णय पर फिर से विचार करने के लिए ।

अध्यक्ष (माननीय सर अब्दुर्रहीम) – संदेह नहीं कि जहां तक माननीय सदस्य पंडित पंत का संबंध है, के इस सदन में यह प्रस्ताव उस बयान पर आधारित करकें

लाये हैं जो अभी 30 सितम्बर को ही छपा है और उस सीमा तक उन्हें इस बात के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता कि उन्होंने मसले पर देर की लेकिन मुझे सारी परिस्थिति के तथ्यों का अवलोकन करना है और कोई सन्देह नहीं कि यह नहीं कहा जा सकता कि मामला अभी हाल का है। न ही इसे नियमों और वर्तमान आदेशों के अन्तर्गत अत्यावश्यक प्रश्न माना जा सकता है । इसलिए मैं इस प्रस्ताव को नियमान्तर्गत नहीं मानता ।